आकर ग्रंथमाला ८

नागरीदास

(ग्रंथावली)

[प्रथम खंड : पदावली]

ग्रंथमाला-संपादक-मंडल

कृष्णदेवप्रसाद गौड़, हरवंशलाल शर्मा, सुरेश अवस्थी,
करुणापति त्रिपाठी, सुधाकर पांडेय, भोलाशंकर व्यास,
शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र' (संयोजक)

संपादक

डॉ० किशोरीलाल गुप्त

नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

प्रकाशक : नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी
मुद्रक : भोलाप्रिंटिंग वर्क्स, वाराणसी
संवत् : मार्गशीर्ष २०२२ वि०, प्रथम संस्करण, १६०० प्रतियाँ
मूल्य : [illegible]

नागरीदास पर प्रथम शोध निबंध प्रस्तुत करने वाले,

नागरीप्रचारिणी सभा काशी के प्रथम सभापति

गोलोकवासी राधाकृष्णदास जी

को

साहित्यिक-श्राद्ध-स्वरूप

आकर ग्रंथमाला का परिचय

नागरीप्रचारिणी सभा ने अपनी हीरकजयंती के अवसर पर जिन भिन्न-भिन्न साहित्यिक अनुष्ठानो का श्री गणेश करना निश्चित किया था, उनमे से एक कार्य हिंदी के आकर ग्रंथों के सुसंपादित संस्करणो की पुस्तकमाला प्रकाशित करना भी था। जयंतियो अथवा बड़े-बड़े आयोजनो पर एकमात्र उत्सव आदि न कर स्थायी महत्व के ऐसे रचनात्मक कार्य करना सभा की परम्परा रही है; जिनसे भाषा और साहित्य की ठोस सेवा हो। इसी दृष्टि से सभा ने हीरक जयंती के पूर्व एक योजना बनाकर विभिन्न राज्य सरकारों और केन्द्रीय सरकार के पास भेजी थी। इस योजना मे सभा की वर्तमान विभिन्न प्रवृत्तियो को संपुष्ट करने के अतिरिक्त कतिपय नवीन कार्यो की रूपरेखा देकर आर्थिक संरक्षण के लिये सरकारो से आग्रह किया गया था, जिनमे से केन्द्रीय सरकार ने हिंदी शब्दसागर के संशोधन परिवर्धन तथा आकर ग्रंथों की एक माला के प्रकाशन मे विशेप रुचि दिखलाई और ६-३-५४ को सभा की हीरकजयंती का उद्घाटन करते हुए राष्ट्रपति देशरत्न डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने घोषित किया—'मै आपके निश्चयों का, विशेषकर इन दो (शब्दसागर संशोधन तथा आकर ग्रंथमाला) का स्वागत करता हूँ। भारत सकार की की ओर से शब्दसागर का नया संस्करण तैयार करने के सहायतार्थ एक लाख रुपए की सहायता, जो पांच वर्षो में, बीस बीस हजार करके दिए जायँगे, देने का निश्चय हुआ है। इसी तरह से मौलिक प्राचीन ग्रंथों के प्रकाशन के लिए पचीस हजार रुपए की, पाँच वर्षो मे पाँच पाँच हजार करके, सहायता दी जायगी। मै आशा करता हूँ कि इस सहयता से आपका काम कुछ सुगम हो जायगा और आप इस काम मे अग्रसर होगे।'

केन्द्रीय शिक्षामंत्रालय ने ११-५-५४ को एफ ४-३-५५ एच ४ संख्यक एतत्संबंधी राजाज्ञा निकाली। राजाज्ञा की शर्तो के अनुसार इस माला के लिये संपादक-मंडल का संघटन तथा इसमे प्रकाश्य एक सौ उत्तमोत्तम ग्रंथों का निर्धारण कर लिया गया है। संपादक-मंडल तथा ग्रंथसूची की संपुष्टि भी केन्द्रीय शिक्षामंत्रालय ने कर दी है। ज्यों ज्यो ग्रंथ तैयार होते चलेंगे, इस माला मे प्रकाशित होते रहेगे। हिंदी के प्राचीन साहित्य को इस प्रकार उच्च स्तर के विद्यार्थियो, शोधकर्ताओ तथा इतर अध्येताओं के लिए सुलभ करके केन्द्रीय सरकार ने जो स्तुत्य कार्य किया है, उसके लिये वह धन्यवादार्ह है।

—:o:—

प्रकाशकीय वक्तव्य

अपनी स्थापना के समय से नागरी लिपि एवं हिंदी साहित्य के उन्नयन एवं विकास के विभिन्न विधायक संकल्पोंके साथ ही नागरीप्रचारिणी सभा ने हिंदी के युगनिर्माता मूर्धन्य साहित्यस्रष्टाओं की ग्रंथावलियों का प्रकाशन भी आरंभ किया। हिंदी के सुप्रसिद्ध गंभीर शीर्ष विद्वानों का सहयोग इस क्षेत्र में सभा को सतत मिलता रहा। फलतः तुलसी ग्रंथावली, सूरसागर, भूषण ग्रंथावली, भारतेंदु ग्रंथावली, रत्नाकर (कवितावली), पृथ्वीराज रासो, बाँकीदास ग्रथावली, व्रजनिधि ग्रंथावली और श्रीनिवास ग्रंथावली आदि का प्रकाशन सभा ने किया।

अपनी हीरक जयंती के अवसर पर सभा ने इस दिशा में केन्द्रीय सरकार की सहायता से योजनाबद्ध रूप से नूतन प्रयत्न आकर ग्रंथमाला के रूप में आरंभ किया। इस ग्रंथमाला में अब तक भिखारीदास ग्रथावली, मान राजविलास, गंग कवित्त, पद्माकर ग्रंथावली, मतिराम ग्रंथावली और मधुमालती वार्ता का प्रकाशन सभा कर चुकी है। इधर धनाभाव के कारण यह कार्य कुछ शिथिल था, किंतु ग्रंथमाला का कार्य चलता रहा। जसवंतसिंह ग्रंथावली यंत्रस्थ है और शीघ्र ही प्रकाशित हो रही है।

दादूदयाल ग्रंथावली (सं०-पं० परशुराम चतुर्वेदी), बोधा ग्रथावली (सं०-पं विश्वनाथप्रसाद मिश्र), एवं ठाकुर ग्रंथावली (सं०-श्री चंद्रशेखर मिश्र) को संवत् २०२२ तक प्रकाशित करने का हमारा संकल्प है। केन्द्रीय सरकार के शिक्षा विभाग की आर्थिक सहायता से यह संकल्प मूर्त हो रहा है। इसके लिये सभा सरकार के प्रति कृतज्ञ है और हमें विश्वास है कि शीघ्र ही इस दिशा में उसका स्वप्न पूर्णतः साकार होगा।

इस ग्रंथमाला के आठवें एवं नवें पुष्पों के रूप में नागरीदास ग्रंथावली का प्रकाशन हो रहा है। डा० किशोरी लाल गुप्त ने इस ग्रंथावली का मनोयोग पूर्वक संपादन किया है। साथ ही मुद्रण संबंधी भार भी अपने ऊपर लेकर सभा की सहायता की है। इस महत्वपूर्ण कवि की इस ग्रंथावली के शोधपूर्ण संपादन में जो निष्ठा और श्रम श्री गुप्त ने किया है, निश्चय ही उससे हिंदी का हित हुआ है। विश्वास है कि अपने गुण-धर्म के कारण यह ग्रंथावली समादृत होगी।

सुधाकर पांडेय
प्रकाशन मंत्री
नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी।

मार्गशीर्ष, कालभैरवाष्टमी, २०२२ वि०,

संपादकीय वक्तव्य

नगरीदास के काव्य से मेरा प्रथम परिचय १९३०-३१ ई० मे हुआ, जब मैं हिंदी मिडिल की सातवीं कक्षा का विद्यार्थी था और लाला भगवानदीन जी द्वारा संकलित संपादित 'हिंदी फाइनल रीडर' हमारी पाठ्य पुस्तक थी। इसमे कालक्रम से चंदबरदाई से लेकर मैथिलीशरण गुप्त तक की रचनाएँ संकलित थीं। यह संकलन १९१६ ई० का है और इसके द्वारा हिंदी साहित्य के इतिहास की एक झलक विद्यार्थियों को प्रदान की गई है। इसमे नागरीदास का भी परिचय एवं उनके काव्य का नमूना दिया गया है। उस अल्पवय मे अधिक से अधिक यही वोध हो सका कि नागरीदास हिंदी के बडे कवियो मे है, इसीलिए इनको इस संग्रह मे स्थान मिला है। उक्त पोथी मेरे पास अब भी है और मैंने अब जो नागरीदास का जीवन परिचय इसमे पढा तो देखा कि इसमे अत्यंत संक्षेप मे सारी बाते सुव्यवस्थित एवं सुष्ठु ढंग से समुपस्थित की गई है। इसमे 'नागर समुच्चय' का भी परिचय है और नागर समुच्चय से ही तीन अवतरण दिए गए है। प्रथम अवतरण 'विरक्ति' शीर्षक से है। इसमे 'छूटक दोहा' के १२, १३, १८, २३, २६, ४८ संख्यक ६ दोहे संकलित है। दूसरा अंश 'तीर्थानंद' (छंद २९-३२) से है, इसका शीर्षक है 'साधुओं का सत्संग'। तीर्थों का आनंद लेते हुए नागरीदास जी वृंदावन पहुँचे। साधुओं ने जब सुना कि किसन गढ के राजा सावंत सिंह आए हुए , तब उन्होंने कोई उत्सुकता नही प्रकट की; वे उदासीन भाव से दूर ही खडे रहे। ...व उन्हे यह ज्ञात हुआ कि यही महाराज नागरीदास है, तब वे साश्रुनयन हो दौडकर गले से लग गए और जब तक इनके दो चार पद सुन नही लिए, हटे नही। इस प्रकरण मे एक दोहा तदनंतर पद्धरि की पाच अर्द्धालिया है। तीसरे अवतरण का शीर्षक 'चंद्रोदय' है, यह 'विहार चंद्रिका (छंद ५-१०) से संकलित है और इसमे रोला के २२ चरण है। ये पंक्तियाँ नंददास के रास पचाध्यायी की याद दिला देती है।

प्रायः बीस वर्षों के लंबे अर्से के वाद १९५१ मे काशी स्थित वेंकटेश्वर प्रेस बंबई वाले खेमराज श्री कृष्णदास की दूकान मे ज्ञान सागर प्रेस बंबई से प्रकाशित नागरीदास जी की समस्त रचनाओं का संकलन नागर समुच्चय' देखने को मिल गया और मैंने इस अमूल्य ग्रंथ को दो रुपये मात्र मे खरीद लिया। मैंने नागरीदास की रचनाओ का अध्ययन किया और इनकी रचनाओं से तीन संकलन तयार किए—(१) नागरीदास दोहावली, (२) नागरीदास कबित्तावली, (३) नागरीदास पदावली। ये संकलन

१९५१ तक तयार हो गए थे। इनमे छंद-न्यास विषय-क्रम से था। नवंबर १९५१ में मेरे खड़ी बोली के कवित्त सवैयो का संग्रह 'शपा' नाम से प्रकाशित हुआ। इसके आवरण पर मेरे अप्रकाशित ग्रंथों की सूची भी दी गई है। जिस समय यह ग्रंथ प्रकाशित हुआ, ठीक उसी अवसर पर आचार्य पंडित विश्वनाथ प्रसाद जी मिश्र मेरे आमंत्रण पर शिवली कालेज में व्याख्यान देने के लिए आजमगढ़ पधारे और आवरण पृष्ठ का प्रूफ उन्होंने स्वयं देखा। इससे उन्हें नागरीदास के प्रति मेरी अभिरुचि का पता चला और उन्होंने कुछ ही दिनो बाद १९५५ ई० में काशी नागरी प्रचारिणी सभा की 'आकर ग्रथमाला' के लिए नागरीदास ग्रथावली का संपादन करने का लिखित प्रस्ताव सभा की ओर से भेजा, जिसे मैंने तत्काल स्वीकार कर लिया। पर इस समय मैं शिवसिंह सरोज में दिये गए कवियो की जीवन संबंधी तिथियो एवं तथ्यो की छान बीन मे लग गया था, अतः इस कार्य में दो वर्ष तक हाथ नही लगा सका। नवंबर १९५७ मे मैं लखनऊ ग । और डा० भवानीशकर जी याज्ञिक के यहाँ से नागरीदास जी के ग्रंथो के दो हस्तलेख लाया। इसी समय मैं मथुरा संग्रहालय के तत्कालीन क्यूरेटर श्री कृष्णदत्त वाजपेयी के यहाँ से शिवसिंह सरोज का खंडित द्वितीय संस्करण भी लाया था और शीघ्र ही सरोज का प्रथम सस्करण भी मुझे काशी से मिल गया था। मुझे वाजपेयी जी की प्रति शीघ्र लौटा देनी थी, अतः पहले मैं शिवसिंह सरोज' के संपादन मे लग गया, इसमे प्रायः एक वर्ष लग गया और मैं नागरीदास के संपादन का कार्य १९५९ मे प्रारंभ कर सका। इसी वर्ष इसका दो भागो मे संपादन करके मैंने सभा को प्रेस-प्रति दे दी। प्रायः ५ वर्षों तक अर्थाभाव के कारण पुस्तक सभा मे पड़ी रही और अब जनवरी १९६५ में मुद्रणार्थ प्रेस मे जा सकी।

जून ६५ के द्वितीय सप्ताह में, जब नागरीदास के दोनों भाग प्रकाशन-पथ पर पर्याप्त अग्रसर हो चुके थे, मेरे मन में आया जिस महामना की रचनाएँ प्रकाशित होने जा रही है, एक बार उसकी लीला-भूमि के दर्शन कर लिए जायें। यह यात्रा महाराज नागरीदास के संप्रदाय-निर्णय के विशेष उद्देश्य से की गई। नागरीदास जी वल्लभ संप्रदाय के अनुयायी स्वीकृत है, पर १९९७ वि०मे 'निंबार्क माधुरी' मे नागरीदास जी को भी सकलित करके ब्रह्मचारी विहारीशरण जी ने इनको निंबार्क संप्रदाय का अनुयायी बना लिया और एक वितंडा खडा कर दिया। चैत्र सं० २० ३ मे निंबार्क संप्रदाय के मासिक मुख पत्र 'सर्वेश्वर' का 'वृंदावनांक' निकला। निंबार्क माधुरी मे तो विवाद के लिए अवकाश छोड दिया गया था, पूर्ण रूप मे घोषणा नही की गई थी कि नागरीदास जी निंबार्क सप्रदाय के ही है, वल्लभ संप्रदाय के नही है। सर्वेश्वर के वृंदावनांक मे तो पूर्ण निश्चितता एवं असंदिग्ध-चित्तता से नागरीदास जी को निंबार्क सप्रदायानुयायी घोषित कर दिया गया है। ऐसी स्थिति मे यह आवश्यक हो गया कि नागरीदास जी का संप्रदाय-निर्णय हो जाय तो अच्छा।

जयपुर मे कृष्णदास पयअहारी का गलता-स्थित आश्रम एवं आमेर मे दादू-द्वारा का दर्शन और आमेर के किले के भीतर-स्थित बिहारी द्वारा वर्णित शीश महल का अवलोकन करके मैं सीधे अजमेर गया। रास्ते मे मदन गंज पडा, जिसे नया किसन-गढ कहा जा सकता है। मदन गंज मे बस से उतर कर एक जलजीरावाले से पूछा, "किसनगढ मे देखने लायक क्या क्या है?" उसने कहा, "श्रीनाथ जी का मंदिर।" मैने पूछा--'श्रीनाथ जी का यह मन्दिर कहाँ है?' उसने कहा--'किले के भीतर।' जिस प्रश्न के समाधान के लिए मै निकला था, उसका जवाब जलजीरावाले ने दे दिया। श्रीनाथ जी का मन्दिर अर्थात् वल्लभ संप्रदाय का मन्दिर। उस दिन शाम हो गई थी और मेरा गंतव्य अजमेर था, अतः मै सीधे अजमेर चला गया।

दूसरे दिन अजमेर एवं पुष्कर का दर्शन हुआ। साहित्यिक दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण दर्शन अजमेर-स्थित ऋषि-उदयान का रहा। यह स्वामी दयानद सरस्वती का स्मारक है और सत्यार्थ प्रकाश की स्वामी जी द्वारा लिखी हुई मूल पांडुलिपि यहाँ प्रदर्शित है, जो दो जिल्दो मे है। कुछ लोग कहते हैं सत्यार्थ प्रकाश मूलतः गुजराती मे लिखा गया था, हिन्दी मे सुलभ सत्यार्श प्रकाश गुजराती का अनुवाद है। इस पांडुलिपि के देखने से स्पष्ट हो जाता है कि स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश को हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि मे ही लिखा था।

१४ जून को प्रातः अजमेर से चलकर प्रायः १० बजे के लगभग किसनगढ़ पहुँचा। बस ने एकदम किले के फाटक पर पहुँचा दिया। मै सीधे द्वारपाल के पास पहुँचा और कहा कि मै किला देखना चाहता हूँ, कोई दिखानेवाला है? उसने कहा कि यहाँ दिखाने वाले की कोई व्यवस्था नही है। ऐसा कोई आदमी शहर से लेना होगा।

किले के फाटक पर ही एक जन-पुस्तकालय है। मैं किसी व्यक्ति की खोज में पुस्तकालयाध्यक्ष के पास पहुँचा और नागरीदास के संबंध में जाँच पडताल प्रारंभ की। पुस्तकालयाध्यक्ष नौजवान थे। उन्होंने कहा—"मुझे कोई विशेष जानकारी नही है। आप डा० फैयाज अली से मिलें। वे आपको सब कुछ बताएँगे। फैयाज अली साहब ने नागरीदास पर शोध प्रबंध लिखकर राजस्थान विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की है।"

मैने फैयाज अली साहब का नाम सुना था और जानता था कि इन्होने भी नागरीदास ग्रंथावली का संपादन किया है, जिसे केन्द्रीय सरकार प्रकाशित करने जा रही है। मुझे आश्चर्य था कि एक मुसलमान ने नागरीदास के ग्रन्थों का संपादन किस रूप मे किया होगा। फैयाज अली साहब कहाँ के है, क्या हैं, इसका पता मुझे न था। पुस्तकालयाध्यक्ष जी से यह जानकर कि फैयाज अली जी किसनगढ़ के हैं और उन्होने

नागरीदास जी पर डाक्टरेट की उपाधि प्राप्ति की है, जहाँ मेरे आश्चर्य का शमन हुआ वही उनसे मिलने की आनन्द-मिश्रित उत्सुकता भी बढ़ी। पुस्तकालयाध्यक्ष जी एक लडके को मेरे साथ कर दिया और कहा इन्हे डाक्टर फैयाज अली जी के यह पहुँचा आओ।

सौभाग्य से डाक्टर साहब घर पर ही मिल गए। वे हिन्दी और अंग्रेजी के एम० ए० हैं। पहले वे किसनगढ इन्टर कालेज मे प्रिंसिपल थे, अब उस पद से वे सेवा-मुक्त हो चुके हैं। बीच में वे कुछ दिनो तक अलीगढ विश्वविद्यालय मे डिप्टी रजिस्ट्रार भी रह चुके हैं। आजकल वे वनस्थली विद्यापीठ मे अंग्रेजी के प्रोफेसर हैं। वनस्थली विद्यापीठ जयपुर राज्य के अंतर्गत महिलाओ का महाविद्यालय है। डाक्टर साहब के सुपुत्र को चित्रकला से शौक है। जब मै उनके यहाँ पहुँचा, तब यही लगा कि जैसे किसी चित्रकार के यहाँ पहुँच गया हूँ।

मैने उलट पलटकर डाक्टर साहब का शोध प्रबंध देखा और उससे प्रभावित भी हुआ। डाक्टर साहब ने बताया, "मैने नागरीदास ग्रन्थावली की पाडुलिपि केंद्रीय सरकार के पास भेजी थी। सरकार ने उसका प्रकाशन स्वीकार कर लिया है। पर उसने पाडुलिपि यह कह कर लौटा दी है कि टंकित प्रति भेजिए। टंकण की सुव्य-वस्था नही हो पाई है और पाडुलिपि अभी यही पडी हुई है।"

उन्हे जानकर प्रसन्नता हुई कि मेरे द्वारा संपादित नागरीदास ग्रंथावली नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा शीघ्र ही प्रकाशित हो रही है। मेरे पास उसके कुछ छपे फर्मे भी थे, उन्हे देखकर उन्होने संतोष प्रकट किया। नागरीदास जी के संप्रदाय के संबंध मे बात चली तो उन्होने उनका वल्लभ संप्रदाय ही मे दीक्षित होना स्वीकार किया और उनके दीक्षा गुरु का नाम गो० रणछोड लाल जा बताया। पुरानी मान्यता पर वे दृढ रहे और उन्हे यह जानकर संतोष हुआ कि मेरी भी मान्यता यही है।

डाक्टर फैयाज अली जी के यहाँ नागरीदास जी का प्रामाणिक चित्र देखने मे आया। इसमे नागरीदास जी बैठे हुए श्री नाथ जी की पूजा करते हुए दिखाए गए है और उनके पिता श्री महाराज राज सिंह खडे है। यह नागरीदास जी के युवराज काल का चित्र है और अत्यत दिव्य है। नागर समुच्चय मे जो चित्र प्रकाशित है और जो अब नागरीदास के चित्र के रूप मे प्रचारित प्रसारित है, वह अप्रामाणिक है। उन्होने बताया कि उक्त चित्र काल्पनिक है और किसनगढ मे वह भी है। वह वस्तुत: एक बडा चित्र है, जिसमे खपरैल का घर है और संभवत: उसमे उनकी पासवान (रक्षिता) बनी ठनी जी भी है। उस समूचे चित्र को न देकर नागर समुच्चय मे उसका केवल वह अंश दिया गया है, जिसमे नागरीदास चित्रित है। चित्र मे खपरैल का जैसा घर बना हुआ

है, वैसे खपरैल के घर यहाँ किसनगढ़ में होते नहीं। अतः यह चित्र अप्रामाणिक है। यह चित्र बाद का भी है, नागरीदास जी के जीवन काल का नही है।

डाक्टर फैयाज अली के यहाँ पद मुक्तावली के मूल हस्तलेख का नमूना देखने मे आया। नागरीदास जी ने अपनी रचना मे स्वयं यत्रतत्र संशोधन भी किया था, यह भी देखने मे आया।

डा० फैयाज अली जी के यहाँ दो और हस्तलेखो के फोटो देखने में आए, जो किसनगढ़ की चित्रकला के नमूने है। एक फोटो 'इश्कचमन' के एक पृष्ठ का है। इसमे क्यारियाँ बनी हुई है, जैसी कि चमन में होती हैं। एक एक क्यारी मे एक एक दोहा लिखा है। दो दो क्यारियों के बीच जल-प्रणाली है। ऊपर दो बड़ी बड़ी आँखें बनी हुई हैं, जिनसे अश्रु प्रवाहित हो रहा है। यही अश्रु जल-प्रणालियों मे बह रहा है, जिनसे इश्क चमन की क्यारियाँ सिंचित हो रही हैं। यह चित्र-लेख 'इश्क चमन' के निम्नांकित दोहे के आधार पर बना है--

चस्मौं के चस्मां झरैं, झरनां आब फिराक
इश्क चमन तब सब्ज रहै, दिल जिमीन होय पाक ४२

दूसरा फोटो 'रैन रूपारस' के एक पृष्ठ का है। इसमे बड़ी बड़ी, रात की जगी, अलसाई, आँखें वनी है और एक एक आँख मे एक एक दोहा हैं। सब आँखों का करिश्मा है। नागरीदास जी के काव्य मे भी आँखों के अनेक शब्द चित्र हैं।

बात करने से ज्ञात हुआ कि डा० फैयाजअली ने नागरीदास ग्रंथावली का जो संपादन किया है, उसमे उन्होने पुनरुक्ति बचाई है। नागरीदास मे एक ही छंद अनेक ग्रन्थो मे अनेक स्थानों पर मिलता है। दोहो संबंधी १६ ग्रन्थों मे से १६ ग्रन्थ तो पद मुक्तावली में अंतर्भुक्त है ही। मेरे द्वारा प्रस्तुत इस ग्रन्थावली मे ऐसा नही है, इसमे सभी रचनाएँ अपने अपने स्थान पर हैं। इसलिए यह ग्रंथावली वडी हो गई है। साथ ही पद मुक्तावली मे मैंने कोई कांट छाँट नही की है, प्राय: ६० पूर्ववर्ती एवं समकालीन भक्त कवियों के जो पद नागरीदास जी ने संकलित कर दिए थे, उन्हें भी मैंने रहने दिया है। इससे जहाँ एक ओर संकलयिता की रुचि का पता लगता है, वहीं ६० पुराने कवियो की ऐसी रचनाओ का संरक्षण भी हो जाता है, जिनमे से अधिकांश आज दुर्लभ क्या अलभ्य है। इस संकलन में संग्रहीत होने से इन मे से अज्ञात कवियों के जीवन-काल की अधोरेखा निश्चित हो जाती है।

प्राय: एक घंटे तक बातें कर लेने के अनंतर हम लोग किले मे आए। डाक्टर फैयाज अली साहब ने कल्याण राय एवं नृत्य गोपाल जी के मंदिर का प्रांगण दिखा

दिया। इस समय मंदिर बंद था, संध्या समय चार बजे खुलनेवाला था। डाक्टर साहब ने कहा—शाम को आइए तो दर्शन भी हो जायें। मैंने कहा—अब आना सम्भव नहीं है। मै यहाँ से लौटकर मदनगंज मे भोजन करूँगा और सलेमावाद चला जाऊँगा। वहाँ से लौटकर आज ही रात की ट्रेन से आगरा के लिए प्रस्थान कर दूँगा। अस्तु, बारह बजे दोपहर मे मै किसनगढ से मदनगंज आ गया, अपने हृदय पर यह प्रभाव लेकर कि फैयाज अली जी रहीम और रसखान की परंपरा को आज भी जीवित किए हुए है।

सलेमावाद निंवार्क संप्रदाय की सबसे बडी गद्दी है। यह किसन गढ़ राज्य का ही एक अंग है और अजमेर से प्रायः १५ माल दूर है। यह मदन गंज से १० मील दूर है। किसी मुसलमान फकीर की गुंडागर्दी से सोमनाथ, द्वारका, प्रभास क्षेत्र जाने वाले तीर्थ यात्रियो का रास्ता बंद सा हो गया था। हिंदुओ के आग्रह पर वृंदावन के निंवार्क संप्रदाय के श्री हरिव्यासदेवाचार्य ने अपने प्रमुख शिष्य परशुरामदेवाचार्य को उस सूफी संत को सुधारने के लिए भेजा। अपनी सिद्धि से परशुरामदेवाचार्य जी ने उस संत को ठीक किया और सलेमावाद को निवार्क संप्रदाय की गद्दी बनाया। इसी गद्दी के आचार्य वृंदावनदेव जी थे, जिनके शिष्य प्रसिद्ध आनंदघन जी थे। इसी गद्दी का शिष्य नागरीदास जी को भी अब बताया जाने लगा है। इसी दृष्टि से मेरा सलेमावाद जाने का कार्यक्रम पूर्व निश्चित था।

मदनगज वापस आने पर सलेमावाद जाने के लिए साधन ढूंढने लगा। पता चला कि सलेमावाद के लिए अपराह्न मे चार बजे एक बस जाती है। रूपनगर (रूपनगढ़) के दिए प्रायः घंटे घंटे पर बसें छूटती हैं। रूप नगर वाली बस से ६ मील जाकर उतर जाने पर प्रायः ४ मील पैदल जाने पर सलेमावाद पडेगा। रास्ते में न कोई गाँव गिराँव है, न छाया के लिए पेड़ पौधे। लोगो ने बताया कि सलेमावाद आज ही जाकर लौटा नही जा सकता। चार बजे वाली बस सलेमाबाद जाती है, उससे जाकर रात भर वहाँ रहा जाय, प्रभात में वह बस वापस होगी, उसीसे लौट आया जाय। पर मेरे पास समयाभाव था। एक दूकानदार ने बताया कि पास ही सलेमावाद गद्दी के अधिकारी भी रहते है, मैं उनसे मिलूँ, वे ठीक ठीक बता सकेंगे।

मैं अधिकारी जी से मिला। वे श्री वियोगी विश्वेश्वर के नाम से प्रख्यात हैं। बडे भव्य पुरुष हैं, दाढी बढ़ी हुई। जैसा उनका दिव्य शरीर है, वैसा ही उनका दिव्य व्यवहार भी मिला। उन्हें यह जानकर प्रसन्नता हुई कि मैंने नागरीदास ग्रंथावली का संपादन किया है और उक्त नागरीदास ग्रंथावली नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा शीघ्र प्रकाशित हो रही है। नागरीदास के संप्रदाय के संबंध में बात चली और उन्होंने जिज्ञासा की, कि आप नागरीदास को किस संप्रदाय का मानते हैं। मैंने स्पष्ट

रूप से स्वीकार किया कि मैं पुरानी मान्यता को ही स्वीकार करता हूँ और उन्हें वल्लभ संप्रदाय का ही अनुयायी मानता हूँ। मेरे उत्तर से अधिकारी जी के चेहरे पर रंच भी सिकन नही आई और न मेरे प्रति व्यवहार में कोई अंतर ही आया। मैं इसीको उनकी शालीनता एवं सौम्यता मानता हूँ। अधिकारी जी से पता चला कि वृंदावन से एक नागरीदास ग्रंथावली का प्रकाशन इधर निंबार्क संप्रदाय की ओर से हुआ है। मैं उसे भी देखूँ — ऐसी सलाह अधिकारी जी ने मुझे दी। उन्होंने कहा — मैं एक पत्र वृंदावन लिखे दे रहा हूँ, उसकी एक प्रति मुझे जमानियां भेज दी जायगी। सलेमावाद की चर्चा चलने पर उन्होने भी वताया कि आज जाकर वापस आना संभव नही। मैं पत्र लिखे दे रहा हूँ। आप चार बजे वाली वस से सलेमावाद जाइए, वहीं रात भर गद्दी का आतिथ्य स्वीकार कीजिए, श्री जी का दर्शन कीजिए और कल प्रातः कल इसी वस से वापस आ जाइए। मैंने समयाभाव के कारण असमर्थता प्रकट की। अस्तु।

मेरे पास सारा दिन पडा हुआ था। आगरा आनेवाली ट्रेन रात में १० वजे मिलने वाली थी। अतः मैने तै किया कि पुनः किसन गढ चला जाय और श्रीनाथ जी के दर्शन कर लिए जायँ। फलतः मैं चार वजे सायंकाल पुनः किसन गढ गया। यहाँ अनेक दिव्य भक्तो के दर्शन हुए। यहाँ मंदिर के दो प्रकोष्ठ हैं। पहले प्रकोष्ठ में कल्याण राय जी का स्वरूप है। इन्हीं कल्याण राय जी को जनता सामान्यत श्रीनाथ जी के नाम से जानती है। वगल मे महाप्रभु वल्लभाचार्य जी का चित्र है, जिसका ऐतिहासिक महत्व है। इसी मंदिर के द्वार-देश वाली दीवार मे महाराज नागरीदास का श्रीनाथ जी की पूजा करनेवाला चित्र लगा हुआ है, जिसकी प्रतिच्छवि मैने पूर्वाह्न में डा० फैयाज अली के यहां देखी थी। ऊपर वाले प्रकोष्ठ मे नृत्यगोपाल जी का मंदिर है, जहां बलराम एवं श्याम की मूर्तिया है। मुझे चार और छह वजे के वीच तीन तीन झांकियो के दर्शन का सौभाग्य मिला।

प्रत्येक झांकी के समय कीर्तनिया द्वारा मृदंग के साज पर कीर्तन भी सुनने को मिला। कीर्तनिया के पास दो बड़ी बडी हस्तलिखित पोथियां थी। मैंने इन्हे भी उलट पलट कर देखा। ये पोथियां कीर्तन संग्रहो की थी। एक एक प्रसंग के पद एक जगह संकलित थे। इनमे महाराज नागरीदास के पद तो थे ही, अन्य अनेक भगवदीयों के भी पद संकलित थे। एक पोथी में एक स्थल पर प्रसिद्ध अष्टछापी कवि गोविंद स्वामी के पद संकलित थे। गोविंद स्वामी के पदो की संख्या परंपरा से २५२ प्रसिद्ध हैं। विद्या विभाग कांकरोली द्वारा प्रकाशित 'गोविंद स्वामी' में ५७४ पद है। मुझे देखकर आश्चर्य हुआ इस पोथी में गोविन्द स्वामी के संकलित पदों की संख्या २५२ ही है। इन पोथियों के आलोडन से अनेक नए भक्त कवियों का पता लग सकता है और पुराने

ज्ञात भक्त कवियों के अनेक नवीन पद प्राप्त हो सकते हैं। इस दृष्टि से इनका सदुपयोग वाञ्छनीय है।

झाँकियों के बीच जो भी अवकाश मुझे मिला, झांकी का दर्शन करने वाले जो चार छह नैष्ठिक भक्त जन थे, उनसे बातें करने में और तरह तरह की सामग्री संकलन में लगाया। किसनगढ के राजाओ की वंशावली, कल्याण राय जी के मंदिर का इतिहास, नागर समुच्चय और नागरीदास जी का संप्रदाय ही वार्ता के प्रमुख विषय थे।

इन महानुभावों में से एक एक लंबी नई पोथी लिए हुए आए थे। उस पर कागज का आवरण चढा हुआ था। मुझे ऐसी प्रतीति हुई कि यह वृंदावन से सद्यः प्रकाशित नागरीदास ग्रंथावली है। मैं अपना कुतूहल न रोक सका और उन महानुभाव से देखने के लिए उक्त पोथी मांग ली। मुझे देखकर आश्चर्य हुआ कि मेरी प्रतीति ठीक थी। मैं इस पोथी को उलट पलट गया। यह नागरीदास ग्रन्थावली नाम का कोई स्वतंत्र ग्रंथ न होकर निंबार्क संप्रदाय के मासिक मुख पत्र 'सर्वेश्वर' का 'नागरीदास अंक' है। इसमें प्रारंभ मे नागरीदास संबंधी कतिपय लेख हैं, जिनमें से एक लेख मे नागरीदास जी के पूर्वजो की कविताओ के नमूने भी हैं। इस विशेषांक मे नागरीदास जी के ५२ ग्रंथ भी पर्याप्त मोटे टाइप में मुद्रित हैं। न जाने क्यो सारे ७९ ग्रंथ इसमें नही हैं।

जमानियाँ वापस आ जाने पर मैने वियोगी विश्वेश्वर जी को उनके आदेशानुसार सकुशल पहुँच का पत्र लिखा और उसमें सर्वेश्वर के नागरीदास अंक के लिए स्मरण भी दिला दिया। उनका उत्तर भी मेरे पास आया कि मैने एतदर्थ वृंदावन पत्र भेज दिया है। पर दुर्भाग्य से सर्वेश्वर का उक्त अंक मुझे आज तक नही मिल पाया और यह ग्रंथ प्रकाशित भी हो गया।

'नागरीदास' दो भागो में प्रकाशित हो रहा है। पहले भाग मे पदावली जा रही है, जिसमें कुल ८ ग्रन्थ हैं। दूसरे भाग में नागरीदास जी के शेष ग्रंथ संकलित हैं। प्रथम भाग में जो भूमिका जा रही है, वह मुख्यतया जीवन संबंधी है। दूसरे भाग के प्रारंभ में जो भूमिका जा रही है वह मूल्यांकन संबंधी है। उसमें नागरीदास जी के काव्य की संक्षिप्त आलोचना प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

मूल ग्रंथो के साथ दोहरी पाद टिप्पणियाँ दी जा रही हैं। कोष्टबद्ध छंदांकों के साथ दी गई टिप्पणियाँ पाठांतर संबंधी है अथवा अन्य सूचना देने वाली है। कोष्ट रहित छंदाको की टिप्पणिया शब्दार्थ संबंधी हैं। आकर ग्रन्थमाला में शब्दार्थ प्रायः ग्रन्थ के अन्त में परिशिष्ट रूप मे 'अभिधान' के अंतर्गत दिया गया है। पर मेरा ऐसा खयाल है कि इस 'अभिधान' का समुचित सदुपयोग नही हो पाता। जिज्ञासा होने पर भी पाठक उसे उलट पलट कर देखने का कष्ट नही उठाना चाहता। इसीलिए इस

ग्रन्थ में आवश्यक शब्दों के अर्थ संबंधित पृष्ठ पर दे दिए गए हैं, जिसे पाठक अवश्य देख लेंगे। कुछ शब्दों के अर्थ प्रयास करने पर भी पाद टिप्पणी के अंतर्गत नहीं दिए जा सके हैं। ऐसे स्थलों पर शब्द लिखकर प्रश्न वाचक चिह्न लगा दिया गया है। हो सकता है कुछ शब्दों का ठीक पाठ न प्रस्तुत किया जा सका हो और कुछ शब्दों का ठीक अर्थ न दिया जा सका हो। सबकी शक्ति सीमित है—साधन सीमित हैं। सीमित शक्ति और साधन के द्वारा जो कुछ भी संभव हो सका है, किया गया है।

इस ग्रंथ के प्रस्तुत करने में जिन लोगों से भी प्रेरणा, सहायता, सम्मति, संवर्द्धना मिली है, उन सबके प्रति मैं धन्यवाद प्रकट करता हूँ, विशेष करके गुरुवर आचार्य पंडित विश्वनाथ प्रसाद मिश्र एवं डा० भवानी शंकर याज्ञिक के प्रति।

किशोरीलाल गुप्त

जमानियाँ — आचार्य

पितृपक्ष २०२२ वि० — हिंदू डिग्री कालेज जमानियाँ

आत्म-परिचय

जाति के हैं हम तो ब्रजवासी,
सु नाहिं रही और जाति की बाधा।
देस हैं बोग, न चाहत मोष कौ;
तीरथ श्री जमुना सुख साधा
संतति कौ सतसंग अजीवका,
कुंज-विहार अहार अगाधा
'नागर' के कुल-देव गोवर्द्धन,
मोहन मंत्र रु इष्ट हैं राधा

— छूटक कवित्त, ६८

प्रशस्ति

(१)

सुत को दै युवराज, आप वृंदाबन आये
रूप नगर पति, भक्ति वृंद बहो लाड लड़ाये
सूर बीर गंभीर रसिक रिझवार अमानी
संत चरनामृत नेम, उदधि लौं गावै वानी
नागरीदास विदित सो, कृपा ढार नागर ढरय
सावंत सिंह नृप कलि विषे, सत त्रेता विध आचरिय

—वृंदावन मे नागरीदास जी की छतरी का लेख।

(२)

परम धर्म प्रतिपाल, समर पंडित अति भारी
गुन मंडित, मन विमल, भक्ति नवधा अधिकारी
रसिकनि मन कौ मंत्र, विमोहित सिंह बहादर
स्यामा स्याम सनेह, गेह करि राख्यो उर वर
धुर धरनि भान ससि सप्त रिसि, चिरंजीव जौ लौं सुखद
नृपराज राज-मृगराज-सुव, धन्य धन्य जग जस विसद

—नागरीदास जी के भतीजे विरद सिंह (पदमुक्तावली में संकलित)

(३)

वल्लभ पथहिं दृढाइ, कृष्णगढ राजहि छोड्यो
धन जन मान कुटुंबहि, बाधक लखि मुख मोड्यो
केवल अनुभव सिद्ध गुप्त रस चरित वखाने
हिय सँजोग उच्छलित, और सपनेहु नहि जाने
करि कुटी रमण रेती बसत, संपति भक्ति कुबेर भे
हरि-प्रेम-माल रस-जाल के, नागरिदास सुमेर भे

—भारतेंदु हरिश्चन्द्र (भक्तमाल उत्तरार्द्ध)।

भूमिका

१. महाराज नागरीदास के पूर्ववर्ती 'उभै नागरीदास'

हिंदी साहित्य मे नागरीदास नामक कई कवि है। इनके अलग-अलग व्यक्तित्व का ज्ञान न रहने से एक की रचना दूसरे की समझी जा सकती है। यह भ्रम लोगो को बरावर होता भी रहा है। नागरीदास नामक ४ भक्त कवियो का अभी तक पता चला है। इनमे कृष्णगढ़ नरेश सावंत सिह हरि-संबंध-नाम नागरीदास सर्वाधिक प्रसिद्ध है। यह तीसरे नागरीदास है। इनके पहले दो नागरीदास और भी हुये है, जिनका संकेत स्वयं इन तीसरे नागरीदास ने स्व-रचित 'पद प्रवोध माला' (रचनाकाल सं० १८०५) के प्रथम पद मे इस प्रकार किया है :—

मेरे एई वेदव्यास

श्री हरिवंश रु व्यास गदाधर परमानँद नँददास

+ +

तुलसीदास, मीरां, माधव रु **उभै नागरीदास**

आसकरन, नरसी, वृंदावन, रुचि माधुरी सुखरास

सवसे पहले हम इन 'उभै नागरीदास' पर विचार करेंगे। इन दोनों नागरीदासों मे से एक का संबंध स्वासी हरिदास के सखी संप्रदाय से है और दूसरे का हित हरिवंश के राधा वल्लभ संप्रदाय से। ए दोनों नागरीदास समकालीन है।

आचार्य नागरीदास

सुप्रसिद्ध स्वामी हरिदास के टट्टी संप्रदाय मे आठ आचार्य हुये है :—

(१) स्वामी हरिदास—जन्मकाल भाद्रपद शुक्ला ८, सं० १५३७ वि०
मृत्युकाल—सं० १६३२ आश्विन पूर्णिमा।

(२) विहारनिदेव जी—आचार्यकाल—सं० १६३२-५६ वि०

(३) नागरीदेव जी—आचार्यकाल—सं० १६५६-७० वि०

(४) सरसदेव जी—आचार्यकाल—सं० १६७०-८३ वि०

(५) नरहरिदेव जी—आचार्यकाल—सं० १६८३-१७४१ वि०

(६) रसिकदेव जी—आचार्यकाल—सं० १७४१-५८ वि०

(७) ललित किशोरीदेव जी—आचार्यकाल—सं० १७५८-१८२३ वि०

(८) ललित मोहिनीदेव जी—आचार्यकाल—सं० १८२३-५८ वि०

हरिदासी सम्प्रदाय के उक्त तीसरे आचार्य नागरीदेव जी ही हिंदी के प्रथम 'नागरीदास' है। चौथे आचार्य श्री सरसदेव जी इनके सगे छोटे भाई थे। यह गौड़ ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम शुक्लावरधर था। यह विहारीदास या विहारनिदेव के शिष्य थे। स्वर्गीय रत्नाकर जी के काव्यगुरु मथुरावासी नवनीत चतुर्वेदी ने 'हरिदास-वशानुचरित्र' नामक ग्रन्थ लिखा है। इसमें इन आचार्यों का परिचय एवं इनकी रचनाओं का उदाहरण दिया गया है। यह ग्रंथ १६१० ई० में ब्रह्म प्रेस इटावा में छप कर प्रकाशित हुआ था। इस ग्रन्थ के अनुसार इनका जन्म सं० १६०० मे माघ शुक्ल ५ को हुआ था। यह अपने गुरु विहारीदास की मृत्यु के पश्चात् सं० १६५६ में हरिदासी संप्रदाय के आचार्य हुये। इनका देहावसान ७० वर्प की वय मे सं० १६७० में वैशाख सुदी ६ को हुआ था।

नवनीत जी ने इस ग्रंथ में इनकी १२ साखियाँ, १० पद तथा सिद्धांत सवैया के चार छंद उद्धृत किये है। उदाहरणार्थं यहाँ कुछ छंद प्रस्तुत किये जा रहे है :—

दो साखियाँ

(१) लै करवा कौपीन कामरी, कुञ्जनि कूल विलासि
तव मिलिहै मित मुदित विहारी; विहारनिदास खवास २

(२) गुन धन हीन सुदीन प्रेम, उर राखत गुन गंभीरा
नागरीदास यो वसत छिपावत, ज्यो गृदर मे हीरा ५

एक पद—

आवत रग भरे दोउ गावत
कुज कुज रस पुंज प्रिया पिय, प्रेम परस्पर मोद वढावत
हँसत, सप्त सुर उमँगि उमँगि उर, तान तरंग रंग उपजावत
पुलकि पुलकि तन उदित मगन मन, सहज मधुर वर रीझि रिझावत
सुखद सुरति रति, अति अनूप गति, रसिक सखी हित सुख वरसावत
श्री विहारी विहारनिदास सुखद रँग, नवल 'नागरीदास' मन भावत १

सिद्धात सवैया का एक छंद—

सुख संतोप गहै करवा कर
कटि कौपीन कामरी वाँधे, फूले फरै हरिदास विपुल वर
निज वन धर्म धाम वृंदावन, सेवत दास विहारिन के घर

अमनेंकु अनन्य धनी निहकाम, रहै गर्व गरवाने प्रेम भर
'नागरिदास' उदास भयो जग, सुख संताप गहै करवा कर १

मेरा ऐसा खयाल है कि राधा वल्लभीय नेही नागरिदास से अपने को भिन्न संकेतित करने के लिये यह अपने को नवल नागरीदास कहते थे और पदो मे भी कभी कभी यह छाप रखते थे। ऊपर उद्धृत प्रथम पद मे 'नवल नागरीदास' आया भी है। हरिदास-वंशानुचरित्र के एक और पद मे 'नव नागरीदास' छाप है :—

बलि बलि नव नागरीदास, कुंजबिहारी सुख की रास,
रीझि ललित श्री हरिदास तन मन धन वारैं

किसनगढ नरेश महाराज नागरीदास कृत पद मुक्तावली मे पुराने कवियों के भी पद प्रचुर परिमाण में उद्धृत है। इनमे से अनेक पदों में 'नवल नागरीदास' छाप है। हो सकता है ये पद इन्ही हरिदासी नागरीदास के हों। पर यह सब अभी अनुमान ही है। इन नागरीदास की समस्त रचनाओ का अध्ययन करके ही कोई सुनिश्चित निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

खोज मे इन नागरीदास के ए दो ग्रंथ मिले हैं :—

(१) नागरीदास की वानी—१९०५।३१; १९२३।२९१
(२) स्वामी हरिदास जी को मंगल—१९०५।४०

ऊपर उद्धृत दोनों साखियाँ 'वानी' की २ और ६ संख्यक साखियाँ हैं। रिपोर्ट मे ७ साखियाँ एवं सिद्धान्त सवैया के दो पद उद्धृत है। साखियों में से ६ हरिदास-वंशानुचरित्र मे भी है।

१९०९ की रिपोर्ट मे २०३ संख्या पर 'नागरीदास के पद' नामक ९ पन्ने के एक ग्रन्थ के उद्धरण है। इनसे स्पष्ट है कि यह रचना इन्हीं नागरीदास की है। प्रारम्भ मे स्पष्ट शब्दों में लिखा है—

"श्री बिहारिनदास जी के शिष्य श्री नागरीदास जी तिनके पद लिख्यते।"

अन्त वाले अंश मे भी कवि छाप के साथ इनके गुरु का नाम संलग्न है—

बढ़त अति अनुराग छिनु छिनु, करत नव नित रङ्ग
रास रत सागर मधुर जोरी, सहज सङ्ग तिभङ्ग
तैसियै सुख बिहार स्वामिनि दास नागरि संग
तोरि तृन बलि जाय छबि पर, वारत कोटि अनंग

पर प्रमाद से उक्त रिपोर्ट मे यह ग्रन्थ किसनगढ नरेश नागरीदास जी का मान लिया गया है।

इन नागरीदास एवं इनके अनुज सरसदास का उल्लेख ध्रुवदास जी ने भी 'भक्त नामावली' के निम्नांकित दोहे में किया है :—

कहा कहौ मृदुल सुभाव अति, सरस नागरीदास
श्री बिहारी बिहारनि को सुजस, गायौ हरसि हुलास

भक्तमाल में इनके सम्बन्ध मे यह छप्पय है :—

श्री बिहारीदास गुरु कृपा, महा वैराग प्रेम हद
विपुन सहज अनुराग, विलोकत बर बिहार सद
गाई अद्भुत केलि, झेलि रस रहत मगन मन
अरुझी स्याम तमाल, वेलि कल कनक सार कन
श्री नागरीदास भीज्यो हियो, कुंज बिहारी सर गँभीर
अनन्य नृपति श्री हरिदास कुल, भयो धुरधर धर्म-धीर

राधाकृष्णदास जी ने प्रमाद से स्वामी हरिदास के जन्मकाल सं० १५३७ को उनका लीला-संवरण काल मान लिया है। महती का काल वीस-वीस वर्ष का मान कर उन्होंने इन नागरीदास का समय संवत् १५७७ दिया है।[1] यह सभी भ्रामक एवं भ्रांत हैं। राधाकृष्णदास जी ने बाबू गदाधर सिंह के आर्य भाषा पुस्तकालय में इनके एक हस्तलिखित ग्रंथ होने का उल्लेख किया है, जिसमे इनके कुल १२८ पद हैं। उक्त पुस्तकालय ही अब सभा का पुस्तकालय है। हो सकता है उक्त हस्तलेख सभा मे सुरक्षित हो।

सभा के हस्तलिखित संक्षिप्त विवरण मे एक और नागरीदास का उल्लेख है, जिन्हे प्रसिद्ध महाराज नागरीदास का परवर्ती कहा गया है। उक्त विवरण में इनके संबंध मे यह लेख है।

"नागरीदास (४)—कृष्णदास के गुरु। निवार्क संप्रदाय के वैष्णव।
स० १८५२ के पूर्व वर्तमान। १२/६७

इस आधार पर १९०२ वाली रिपोर्ट मे ६७ सख्या उलटने पर कृष्णदास का विवरण मिलता है, जिन्हे निवार्क संप्रदाय का वैष्णव, किसी नागरीदास का शिष्य और मिरजापुर निवासी कहा गया है। इनके एक ग्रंथ का नाम है, 'कृष्णदास के मगल'। इस हस्तलेख का प्रारंभिक अंश इस प्रकार है :—

"अथ श्री कृष्णदास जी श्री नागरीदास जू की कृपा को सुखसार, तिन कृत्य (कृत) मंगल।"

---

(१) राधाकृष्णदास ग्रन्थावली, भाग १, पृष्ठ १७०

इस अंश से कृष्णदास का नागरीदास का शिष्य होना सिद्ध है। इस ग्रंथ के दो पद उद्धृत है—दोनों के अन्तिम चरणो मे बिहारनिदास का नाम आया है :—

(१) जै श्री वरु बिहारनिदास कृपा तै हरसि मंगल गाइहौं १
(२) जै श्री वरु बिहारनिदास कृपा तै मन मनोरथ सब भए ११

यह बिहारनिदास जी हरिदास संप्रदाय के द्वतीय आचार्य है। संप्रदाय मे यह गुरुदेव के नाम से प्रसिद्ध है और इन्हे अत्यन्त गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है। इन्हीं बिहारनिदास के शिष्य नागरीदास थे, जिनके शिष्य यह कृष्णदास थे। अतः स्पष्ट है कि यह नागरीदास कोई भिन्न व्यक्ति नहीं है। ऐसी दशा मे कृष्णदास का भी समय संवत १६५६–७० वि० के आसपास होना चाहिए।

कृष्णदास के नाम पर इसी रिपोर्ट मे ६७ वी संख्या पर 'माधुर्य लहरी' नामक ग्रंथ का विवरण है। इस ग्रन्थ की रचना संवत् १८५२–५३ मे हुई।

अष्टादस सत लीजियै, संबत बावन संग
भाद्र मास सुख सिंधु श्री, जन्मारंभ तरंग ४९
तिरपन संबत कौ यमल, अति बैसाख सुमास
लहरि माधुरी सुख लह्यो, संपूरन मन आस ५०

ग्रन्थ की रचना गिरजापत्तन मे हुई, जो विंध्य के निकट, गंगा के किनारे स्थित है—

विंध निकट, तट सुरधुनी, गिरजापत्तन ग्राम
हरि भक्तन के आश्रै, कृष्णदास विश्राम ४७
ग्रंथ माधुर्या सु लहरि, अस कहियै जाकौ नाम
कृष्णदास मुख श्री कृपा, प्रगट भयो ता ठाम ४८

विद्वानों ने 'गिरजापत्तन' को मिरजापत्तन माना है। 'म' का 'ग' हो गया है और इसीलिए इन्हे मिरजापुर निवासी स्वीकार किया गया है।

यह कृष्णदास ललित मोहिनी देव के शिष्य प्रतीत होते है। ललित मोहिनी देव का आचार्यकाल सं० १८२३-५८ है और उक्त ग्रंथ का रचना-काल सं० १८५२-५३। इसी से यह निष्कर्ष निकाला गया। ग्रंथ मे गुरु के लिए 'ललिता' शब्द का प्रयोग हुआ भी है।

(१) जो श्री ललिता उर कृपा, मोपै है लवलेस
तो भाखौ याके गुनैं, पावै तहां प्रवेस ४६

(२) "इति श्री ललिता प्रसाद लब्ध जुगलानद समुद्र
माधुर्य लहरि नाम समाप्तोयं ग्रन्थ ।"

यो 'ललिता' शब्द से ललित किशोरीदेव (आचार्यकाल सं० १७५२–१८२३) का भी बोध हो सकता है।

'कृष्णदास के मंगल' और 'माधुर्य लहरी' के कर्ता यदि एक ही है, तो 'मंगल' के आदि में प्रयुक्त 'नागरीदास जी की कृपा को सुखसार' उसी प्रकार प्रयुक्त हुआ समझा जाना चाहिये, जिस प्रकार उक्त मगल मे वार-वार विहारनिदास का उल्लेख हुआ है।

अस्तु १६१२।६७ ए, वी विवरण के आधार पर इन नागरीदास से भिन्न किसी अन्य नागरीदास की उद्भावना सभव नही। इसी आधार पर मुनि काति सागर जी 'चरणदासी सम्प्रदाय का अज्ञात हिन्दी साहित्य' शीर्षक लेख मे १६ वी शती मे विहारिनदास के शिष्य और कृष्णदास के गुरु एक और नागरीदास की मिथ्या कल्पना कर वैठे हैं।[१]

विनोद मे ८७० संख्या पर एक नागरीदास वृन्दावन वाले है। इनके ग्रन्थ का नाम 'स्वामी जी के पदन की टीका' और समय सं० १८२० दिया गया दै। लिखा गया है कि इस ग्रन्थ में स्वामी हरिदास, विट्ठल विपुल, विहारनिदास, सरसदास, नरहरिदास तथा स्वयं इनके पदो की टीका विस्तृत रूप से की गई हैं। इनका समय जांच से मिला कहा गया है और 'हरिदास जी को मंगल' को इन्ही की कृति माना गया है।

उक्त ग्रंथ में हरिदासी सम्प्रदाय के प्रथम आचार्य स्वामी हरिदास, द्वितीय आचार्य विहारनिदास, चतुर्थ आचार्य सरसदास और पंचम आचार्य नरहरिदेव के पद हैं। बीच में तीसरे आचार्य नागरीदास का नाम छूट गया है, और इस ग्रन्थ में नागरीदास के भी पद होने की सूचना दी गई है। अत. यह नागरीदास यही तृतीय आचार्य है। ऐसा लगता है टीका कर्ता कोई दूसरे व्यक्ति हैं। कही कोई त्रुटि अवश्य है। जो हो इस विवरण के आधार पर भी हरिदासी सम्प्रदाय के तीसरे आचार्य नागरीदास से भिन्न, उसी सम्प्रदाय में किसी अन्य नागरीदास का अस्तित्व स्वीकार नही किया जा सकता।

नेही नागरीदास

नेही नागरीदास हित हरिवंश जी के राधा वल्लभ संप्रदाय में दीक्षित थे। यह

---

(१) भारतीय साहित्य—पृष्ठ ८७, पंक्ति २२-२३

गो० हित हरिवंश जी के ज्येष्ठ पुत्र गो० वनचन्द्र जी के शिष्य थे। यह जाति के पँवार क्षत्रिय थे। इनका जन्म-स्थान बुन्देलखंड के अंतर्गत बेरछा नामक गांव है। बाल्यावस्था से ही भक्ति की ओर इनका झुकाव था। एक बार राधावल्लभीय चतुर्भुजदास घूमते घामते इनके गांव की ओर आ निकले। नागरीदास जी उक्त चतुर्भुजदास की कथा-वार्ता सुन अत्यंत प्रभावित हुये और वृन्दावन चले आये। यहां आकर गो० हित हरिवंश जी के ज्येष्ठ पुत्र गो० वनचन्द्र जी से इन्होने राधावल्लभ संप्रदाय की दीक्षा ले ली। आपके साथ आपकी भाभी भागमती जी भी आई थी। उन्होने भी उक्त संप्रदाय मे दीक्षा ली थी। श्री भगवत मुदित जी ने 'अनन्य रसिक माल' मे (१ दोहा आदि मे, ३४ चौपाइयां कुल १३६ चरण मध्य मे, १ दोहा अंत मे) आप का वृत्त दिया है। उक्त ग्रंथ से ये सभी सूचनाये मिलती है :—

धर्मी श्री हरिवंश के, तिनकौ रह्यो जु संग
रसिक नागरीदास उर, चढौ प्रेम कौ रंग
नागरी दास बेरछा रहते
हरिजन निरखि दौर पग परते
पावन छत्री कुल जु पवार
चाहत गुरु कीनौ निरधार
भागन चत्रभुजदास जु मिले
चरचा करि रस-रंग मे झिले
संगति करि वृन्दाबन आये
श्री वनचंद्र के पग लपटाये
भागमती भावज हू आई
दुहुन एक सँग दीक्षा पाई[1]

खोज रिपोर्ट[2] के अनुसार यह ओरछा के निकट पलेहरा नामक गांव के रहने वाले थे और ओरछा के राजा के वंशज थे। हो सकता है कि ऊपर के छंद मे आया 'बेरछा' ओरछा या 'वोरछा' ही हो। एक खोज रिपोर्ट के अनुसार तो यह 'बेरछा' के राजा थे।[3]

चतुर्भुजदास जी हित हरिवंश जी के देहावसान के अनंतर सं० १६१० के बाद गौड़ देश वापस गये थे। इसी के पश्चात् किसी समय उनकी भेंट नागरीदास जी से

(१) राधा वल्लभ संप्रदाय और साहित्य, पृष्ठ ४७२
(२) खोज रिपोर्ट १६४१/५१०
(३) ,, १६१२/११६

हुई रही होगी। डा० विजयेन्द्र स्नातक का अनुमान है कि यह भेंट सम्वत १६१५ के आसपास हुई रही होगी और यदि उस समय इन नागरीदास की आयु २५ वर्ष की रही हो, तो उनका अनुमित जन्म काल सं० १५९० हो सकता है। हरिदासी संप्रदाय के नागरीदास जी बडे नागरीदास कहे जाते थे।

शिष्य विहारिन दास के बड़े नागरीदास
—निज मत सिद्धान्त

और बडे नागरीदास का जन्म संवत् १६०० मे हुआ था। अतः नेही नागरीदास का जन्म-काल सं०१६०० के पश्चात ही होना चाहिए और नेही नागरीदास तथा चतुर्भुजदास की भेट १६२५ वि० के आसपास हुई रही होगी। जो हो, यह संवत् १६५० के आसपास उपस्थित थे, ऐसा सहज ही अनुमान किया जा सकता है। राधाकृष्णदास जी ने इनका समय सं० १५५० से १६०० माना है,[४] जो ठीक नही।

भक्त नामावली में हित ध्रुवदास ने इनके सवंध मे ये दो दोहे दिये है—

नेही नागरिदास अति, जानत नेह की रीति
दिन दुलराई लाडिली, लाल रँगीली प्रीति
व्यास नंद पद कमल सो, जाके दृढ विश्वास
जेहि प्रताप यहि रस कह्यो अरु वृंदावन वास

चाचा हित वृंदावनदास ने इनके सम्वन्ध मे लिखा है—

नमामि श्री हरिवंश रीति रस प्रीति आगरी
श्री हरिवंश सरोज चरन रति दास नागरी

यह नागरीदास जी नेही नागरीदास के नाम से प्रसिद्ध थे। इन्हें हित-वाणी एवं नित्य-विहार से अनन्य निष्ठा थी। हित वाणी के सामने भागवत भी इन्हें फीका लगता था। यह एकांतवास की इच्छा से वृंदावन छोड़कर बरसाना चले गये थे। यहा इन्होने राधा जी की वर्ष गाठ मनाने का आयोजन किया, जो अव तक धूम धाम से मनाई जाती है।

नेही नागरीदास ने निम्नांकित सवैया मे आत्म परिचय दिया है :—

सुंदर श्री वरसानौ निवास औ वास वसौं श्री वृंदावन धाम है
देवी हमारै श्री राधिका नागरी, गोत सो श्री हरिवंश कौ नाम है
देव हमारै श्री राधिका वल्लभ, रसिक अनन्य सभा विश्राम है
नाम है नागरीदास अली, वृषभान लली की गली कौ गुलाम है

(४) राधाकृष्णदास ग्रन्थावली, पृष्ठ १७१

इन नेही नागरीदास का साहित्य प्रर्याप्त विस्तृत है। खोज मे इनके निम्नलिखित ग्रंथ मिले है :—

(१) अष्टक (हिताष्टक)—१६१२।११६ ए। जैसा कि नाम से ही प्रकट है, यह हित हरिवंश की प्रशंसा मे लिखित आठ छन्दो का ग्रन्थ है। रिपोर्ट मे इसके प्रथम एवं अन्तिम छन्द दिए गये है—

रसिक हरिबंस सरबंस श्री राधिका,
राधिका सरबंस हरिबंस वंसी
हरिबंस गुरु सिस्य हरिवंश प्रेमावली
हरिबंस धन धर्म राधा प्रसंसी
राधिका देह, हरिबंस मन राधिका,
राधिका हरिवंश मम श्रुतवतंसी
रसिक जन मननि आभरण हरिबंस हित,
हरिवस आभरण कलहंस हंसी १

\+ × ×

रसिक रस सरस सर हंस हरिबंस जू
केलि मुक्ता चुगत मन नैन दीनै
प्रानन के प्रान सु मेरे प्रान जीवन सु धन
दृष्टि प्रति दृष्टि आलिंगन नवीनै
सकल सुख धाम बिसराम वन बिलासी हंस
यमुन कल कूल अंग अरगजनि भीनै
दिब्य आभरण वसन ललित अग माधुरी
प्रेम परजंक अंकनि मे लीनै ८

(२) नागरी दास की बाणी—१६१२।११६ बी

(३) नागरी दास के दोहे—१६१२।११६ सी

ये दोनो वस्तुतः एक ही ग्रन्थ है। रिपोर्ट मे 'बानी' के प्रारम्भ के निम्नलिखित तीन दोहे उद्धृत है :—

जव लगि सहज न बदलई, फुरै न जहँ तहँ भाव
पंथ पावनो कठिन है, कीनै कहा बनाव १
पावन प्रवल प्रताप वलु, डारौ इन्द्री वारि
फिरि ढँग लागै भजन कै, औघट घाट सुधारि २

इन्द्री सबते रोकि कै, भजन माहि मुकराइ
जैसे ही जैसें सधै, तै मोही दै दाइ ६

'दोहे' के प्रारम्भ के केवल दो छन्द उद्धृत हैं, जो ऊपर उद्धृत प्रथम दो दोहो से अभिन्न है।

'वानी' के मध्य के निम्नांकित दो दोहे उद्धृत हैं :—

वानी श्री हरिवंस जी, उर धर पूरनकाज
जगत निंवा दिल स्वाद तै, पलटि परै सब साज

विमल भक्ति तन मन खच्यौ, छाडि लोक उपहांस
तासौ नेह निरंतरौ, जा उर भजन प्रकास

'दोहा' के मध्य के तीन उद्धृत छन्द ए हैं :—

जहाँ निखालिस सुहृदता, कठिन भजन को ठौर
श्री रसिक सिरोमनि चाल कल, गाढै मन की दौरि

वचन रचन महिमा महा, को कहि सकै अपार
श्री वृन्दावन निधि सोभियै, भरि वानी भरमार

नातौ श्री हरिवस कौ, मानें ललना लाल
श्री व्यास-सुवन-पद-सरन जे, करहिं सदा प्रतिपाल

'वानी' का अन्तिम अंश यह है —

"माडि मंडनी मुह मिला, सुहृद विना प्रभु दूरि
भए वीच के वाइदै, मरिहै विलपि विसूरि ३७

चपिहौ दविहौ कहूँ नहिं, विना भाय अनुराग
ताही सौं मिलि विरमिहौ, जहा हिये की लाग ३८"

'दोहा' का अन्तिम अंश यह है :—

छैल छवीलौ भजन है, औ हठी हठीली वानि
सुजन सजाती भजन विनु, औरनि सौं न पिछानि ३३

सुहृद सनेहिनि को भजन, भजन सुजन सौं मेलि
वस्त प्रगट सब गुननि सो, संगम सुखनि सुहेलि ३४

संगम सुखनि सुहेल है, सुजन भजन इक तोक
मुदित परस्पर मिलि चले, डारे विमुख वराक ९३३
इति श्री नागरीदास जी कृति दोहा संपूर्ण"

जैसा कि ऊपर अनुमान किया गया है, दोनों एक ही ग्रन्थ है। 'बानी' खंडित प्रतीत होती है। इसमे केवल ३३ पन्ने हैं। अन्त मे समाप्ति-सूचना नही दी गई है। ३७ और ३८ संख्याएँ भी अधूरी है। इनके पहले सैकडे का अंक ६ नही लिखा गया है, जैसा कि 'दाहा' मे भी ३३, ३४ के पहले सैकडे का अंक ६ नहीं दिया गया है, अन्तिम दोहे के साथ है। 'दोहा' मे कुल १८३ पन्ने है।

डा० विजयेन्द्र स्नातक के अनुसार इन नागरीदास का एक ग्रन्थ 'सिद्धांत दोहावली' है, जिसमे ६३५ दोहे है। स्पष्ट है कि रिपोर्ट मे उल्लिखित 'दोहा' ग्रन्थ, सिद्धांत दोहावली है और 'वाणी' उसी का खण्डित रूप।

(४) नागरीदास के पद—१६१२। ११६ डी। यह ६७ पन्ने की पुस्तक है। रिपोर्ट मे इसके आदि, मध्य एवं अन्त के एक एक पद उद्धृत है।

आदि—

श्री राधावल्लभो जयति

अथ श्री नागरीदास के पद सिद्धांत लिखते

रामकली

स्वाहा शक्ति भौमि की जैसै, ऐसै ही रति दंपति जानि
आकरषति निज अलि समाज, सुख राखत उर अभिअन्तर आनि
ऐसै ही उनमान जानि जिय, जैसै पीजत पानी छानि
नागरीदास गुरु पद प्रसाद तै, परै जिय सरल सलौनी वानि १

मध्य—

सुनि प्यारी प्रीतम बस तेरे
सहज मान धरि लेतहिं जिय मे, आतुर प्रणय करत हरि तेरे
इनके सर्वस प्रान तुमहि गति एक गाठि सो फेरै
उमंग भई, अंसन भुज दीने, नागरीदास कुंज तबही हसि हेरे

अन्त—

बिना कृपा राधा रानी की, क्यो 'ब सरन हित जू की पावै
जाको नाम सुनत परबस ह्वै, स्याम सहित स्यामा उर आवै

दंपति रूप रसासव पीवत घर्मी, घर्म विनु और न भावै
नागरीदासि श्री व्यास सुवन वल, नित्य विहार औरनि दरसावै ३०
इति श्री नागरीदास जी की वाणी पद संपूर्णम् ।

१६४१ की खोज मे भी नागरीदास की वाणी एवं नागरीदास के पद मिले हैं, जिनका विवरण ५१० क और ५१० ख पर उक्त रिपोर्ट में है।

डा० स्नातक के अनुसार इन नागरीदास जी के चार ग्रन्थ हैं—एक प्रकाशित है। इसका नाम हिताष्टक हैं। यह १६१२ की खोज में मिल चुका है। तीन अप्रकाशित है। ए निम्नांकित है :--

(१) सिद्धात दोहावली—६३५ दोहे

(२) पदावली—१०२ पद

(३) रस पदावली (स्फुट पद सहित)-कुल संख्या २३२

डा० स्नातक के अनुसार इन नागरीदास ने हरिवश जी की वाणी का गुणगान ही अधिकांश दोहो एवं पदो मे किया है।

इनकी रचनाओं का एक लघु अंश 'श्री नागरीदास जी की वाणी' नाम से वृंदावन से सं० २००६ मे प्रकाशित हुआ। इसका प्राप्ति स्थान है—शिव लाल गोवर्द्धनदास शाह; पुराना शहर वृन्दावन। इसका मूल्य न्यौछावार मात्र छह पुराना पैसा है। इसमे एक पृष्ठ मे इनका जीवन चरित्र भी दिया गया है। इसके अनुसार इनका जन्म सं० १६१० के लगभग हुआ था। इस वाणी मे ४३ पद और ८७ दोहे संकलित है। डा० स्नातक ने भी 'राधा वल्लभ संप्रदाय सिद्धांत और साहित्य' मे इनके १६ पद दिए हैं। वीच-वीच मे भी उन्होने इनके २६ पद और दोहे उद्धृत किए है। खोज रिपोर्ट से ऊपर उद्धृत रचनाओ, प्रकाशित हिताष्टक एवं नागरीदास की वाणी तथा डा० स्नातक के ग्रन्थ में उद्धृत छन्दो की सहायता से नेही नागरीदास की रचनाओं का कुछ अनुमान लगाया जा सकता है। गोस्वामी ललिता चरण जी ने 'श्री हित हरिवश गोस्वामी : संप्रदाय और साहित्य' मे पृष्ठ ४२१ पर इनके ६३७ दोहो एवं ३२१ पदो के देखने का उल्लेख किया है। यही इनका साहित्य-परिमाण समझना चाहिए।

नेही नागरीदास का साहित्य परिमाण में पर्याप्त एवं प्रचुर है; पर हित-गुणगान की वहुलता के कारण यह संप्रदाय के भीतर ही समादृत हो के रह गया। यदि इन्होने भी केवल राधा कृष्ण का गुण गान किया होता, वहुत सम्भव है कि संप्रदाय के वाहर भी इन्हें सुख्याति मिली होती।

२. क्या महाराज नागरीदास के पूर्व कोई तीसरे नागरीदास भी हुए हैं ?

बाबू राधाकृष्ण दास जी ने चार नागरीदासो की स्थिति स्वीकार की है। इन चारों मे से तीन महाराज नागरीदास के पूर्ववर्ती कहे गये हैं। इन तीनो मैं से दो तो स्वामी हरिदास एवं हित हरिवंश के संप्रदायों मे दीक्षित नागरीदास हैं, जिनका वर्णन पीछे किया जा चुका है। राधाकृष्ण दास के अनुसार एक और भी नागरीदास थे, जो इन दोनों से भी पूर्ववर्ती थे। उन्होने इनका यह वर्णन दिया है—

"नागरीदास नाम के चार महात्मा हुए हैं। सबसे प्रथम श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के शिष्य आगरा मे रहते थे, जिनकी कथा 'चौरासी वैष्णवो की वार्ता' मे है और जिनके विषय मे गोस्वामी श्री हित हरिवंश जी के शिष्य श्री ध्रुवदासजी ने अपने ग्रन्थ 'भक्त नामावली' में लिखा है :

"नेही नागरीदास अति, जानत नेह की रीति
दिन दुलराई लाडिनी, लाल रँगीली प्रीति"

\+ \+ \+

इन्ही बड़े नागरीदास जी के विषय मे भारतेन्दु श्री हरिश्चन्द ने अपने उत्तरार्द्ध भक्तमाल' मे लिखा है :—

हिय गुप्त वियोगहि अनुभवत, बडे नागरीदास हे
वार-वधू ढिग बसत, सबै कछु पीयो खायो
पै छनहूँ हिय सो नहिं, सो अनुभव विसरायो
सुनतहि बिट्ठलनाथ भक्त मुख श्रवन मझारी
प्रान तज्यो कहि अहो, पजी सुधि तिन्हैं हमारी
दरसन ही दै हरि भक्त, अपराध कुष्ट जन दुख दहे

महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य का जन्म सम्वत् १५३५ में हुआ था, अतएव उसी के लगभग इनका भी काल है।"

नागर समुच्चय के अंतर्गत राधाकृष्णदास कृत नागरीदास की जीवनी के अतर्गत इन नागरीदास के संबन्ध मे यह पाद-टिप्पणी दी गई है—

"इन नागरीदास का नाम चौरासी वैष्णवो की वार्ता मे तथा दो सौ बावन वैष्णवो की वार्ता मे नही मिला। परन्तु ग्रन्थकर्ता बाबू राधाकृष्णदासजी के लिखने से लिखा।"

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र को सबसे पहले इन वल्लभ संप्रदाय वाले नागरीदास का भ्रम हुआ। इस भ्रम को ढोया उनके फुफेरे भाई बाबू राधाकृष्णदासजी ने। उसी को दुहराया मिश्रबन्धुओं ने—

"इस नाम के चार पांच कवि व्रज मण्डल में हुए हैं। इनमें से एक श्री वल्लभाचार्य संप्रदाय के, एक स्वामी हरिदास जी की सम्प्रदाय के, एक गोस्वामी हित हरिवंश जी की संप्रदाय के और एक हमारे चरित्रनायक महाराज नागरीदासजी वल्लभीय संप्रदाय के थे।"

बाबू राधाकृष्णदास के कथन पर मुझे निम्नांकित बातें कहनी हैं—

(१) महाप्रभु वल्लभाचार्य का नागरीदास नामक कोई शिष्य नहीं हुआ। चौरासी वैष्णवन की वार्ता मे किसी भी नागरीदास की वार्ता नहीं है।

(२) ध्रुवदास ने उद्धृत दोहे मे नेही नागरीदास का वर्णन किया हैं, जो राधावल्लभ सप्रदाय के अनुयायी थे और गोस्वामी वनचदजी के शिष्य थे।

(३) हरिदासी संप्रदाय के आचार्य नागरीदासजी वड़े नागरीदास के नाम से प्रख्यात थे, क्योंकि वे अपने समकालीन हित हरिवंश सप्रदाय के नेही नागरी दास से वय में वड़े थे।

(४) महाराज नागरीदास ने 'उभै' नागरीदास का उल्लेख किया है, जो सत्रहवीं शती में उपस्थित थे। सोलहवी शती में कोई नागररीदास नहीं हुआ।

यही भूल आगे चलकर ब्रह्मचारी विहारीशरण जी ने भी की है।

३. एक परवर्ती नागरीदास : विप्र नागरीदास

विप्र नागरीदास ने भागवत का अनुवाद किया है। इस अनुवाद की दो प्रतियाँ खोज में मिल चुकी है।[१] १९१७ वाली प्रति खण्डित है और १९२९ वाली पूर्ण। इधर इसी भागवत का विवरण आगरा विश्वविद्यालय हिन्दी विद्यापीठ के मुख पत्र 'भारतीय साहित्य' के प्रथम अक (जनवरी १९५६) मे मुनि काति सागर ने 'चरणदासी संप्रदाय का हिंदी साहित्य' शीर्षक लेख के अन्तर्गत दिया है। जिसे मुनि जी ने नई शोध समझा है, उसका पता उनकी शोध के ४० वर्ष पहले हिन्दी साहित्य को लग गया था। हिन्दी साहित्य के इतिहासो मे सभी कवियों को न तो स्थान दिया गया है और न सब के स्थान पाने का अवकाश ही है। मिश्रवन्धु विनोद हिन्दी कवियो का विशालतम कवि-वृत्त-संग्रह है। इसमे भागवत के अनुवादक नागरीदास का उल्लेख ६६२ संख्या पर हुआ है। इनका समय सं० १७९० दिया गया है। विवरण अपर्याप्त है और समय भी ठीक नहीं है। इतने पुराने ग्रन्थ मे कवि और उसकी कृति का उल्लेख हो गया है, यही क्या कम है? इन्हें वृन्दावन-वासी कहा गया है और १६१ पदो के एक ग्रन्थ वानी का उल्लेख हुआ है। हो सकता है ए रचनाएँ भागवत के अनुवादक नागरीदास से भिन्न किसी अन्य नागरीदास की हों।

विप्र नागरीदास चरणदासी सप्रदाय के प्रवर्तक चरणदास जी के शिष्य थे। चरण दास के ५२ प्रख्यात शिष्यो की सूची मे इनका भी नाम है। इन्होने भागवत का अनुवाद

---

[१] —खोज रिपोर्ट १९१७/ ११८; १९२९/२४१

राजगढ़ के राजा राव प्रताप सिंह के दीवान छाजूराम के लिये किया था। प्रताप सिंह के पिता का नाम मुहब्बत सिंह एवं प्रपितामह का नाम जोरावर सिंह था। यह सूचना कवि ने स्वयं दे दी है। इसी प्रकार उसने अपने आश्रयदाता छाजूराम के पिता बालकृष्ण एवं पितामह फकीरदास का भी उल्लेख किया है।

राजवंश वर्णन—

कूरम कुल मवि प्रगट, नृपनि जोरावर सिंह वर
अंबरीष ज्यों भक्ति, दीन जिनमे करुणाकर
भए मुहब्बत सिंह, पुत्र तिनकैं सु महारथ
राजा राव प्रताप सिंह, तिनि सुत सम पारथ
अरि प्रबल निवल कीनैं जु निसि, निज भुजदण्ड प्रताप करि
भनि 'नागर' अटल सुरेश ज्यौ, रहौ सदा सिर छत्र धरि ३४

दीवान वंश वर्णन—

साह फकीर जु दास के, बालकृष्ण सुत जान
तिनके छाजूराम जू, हरिजन-माझ प्रधान ३५

छाजूराम ने भागवत और अन्य अनेक पुराण विप्र नागरीदास से सुने थे और इन्हें पर्याप्त पुरस्कार भी दिया था। इन्हीं के लिये इस ग्रन्थ की रचना की गई—

छाजूराम दिवान, राव राजौ के प्रतिनिधि
दई कृपा करि तापि, भक्त लखि ईस सकल सिधि
दाता करन समान, सूर जोहर जग गायो
गोदानन के काज, मनौ नृग फिरि धर आयौ
तिनि बहु पुरान मोसौं सुने, अमन बसन बहु भेट दिय
तिहि हेत सु तौ भागवत मैं, छन्द रीति भाषा करिय ३६

छाजूराम जी हलदिया कुल के थे—

तिहि प्रतिनिधि दीवान जो, साह सु छाजूराम
गोत हलदिया तास वर, सकल सुवनि को धाम

ग्रन्थ की रचना सम्वत १८३२ में वैशाख सुदी ३ को प्रारम्भ हुई थी—

संवत अष्टादस सु सत, पुनि बत्तीस प्रमान
तृतिया सुदि वैसाख की, ग्रन्थारंभ सु मानि ११

कवि ने चरण दास एवं उनके गुरु सुखदेव का भी उल्लेख किया है—

श्री सुक चरननदास के, चरन सरोज मनाय
आमय श्री भागवत मैं, भाषा कीयो गाय १९

उक्त छाजूराम जी मृत्यु संवत १८४५ में हुई। संभवतः इस समय के कुछ पहले ही यह अनुवाद पूर्ण हो गया रहा होगा। ये सभी उद्धरण 'भारतीय साहित्य' में प्रकाशित लेख से दिये गए हैं। इनमे से प्रथम तीन खोज रिपोर्ट १९२९। २४१ मे भी हैं। अन्तिम उद्धरण रिपोर्ट १९१७। ११८ मे भी है। प्राप्त प्रतियो का प्रतिलिपि काल सम्वत १८५८ है।

४. महाराज नागरीदास का जीवन परिचय

पूर्वज

कृष्णसिंह

जोधपुर के राठौर राजा उदयसिंह मोटा राजा के नाम से प्रख्यात थे। इनके १२ पुत्र थे। शूरसिंह ज्येष्ठ पुत्र थे और कृष्णसिंह दूसरे। दोनों सहोदर भाई थे। मोटा राजा उदयसिंह ने अपने द्वितीय पुत्र कृष्णसिंह को आसोप नामक गाँव १६५१ वि० मे दे दिया था। परन्तु अग्रज शूरसिंह ने राजा होने पर आसोप जप्त कर लिया और दूदोड़ नामक एक दूसरा गाँव इन्हे दिया। पर शूरसिंह के मन्त्री गोइन्दास भाटी से अनबन होने के कारण इन्होने दूदोड़ स्वय छोड दिया। १६५४ वि० मे हिंडोण का परगना इन्हे दिल्लीश्वर की ओर से मिला। यही किसनगढ राज्य का स्थापन-काल है। सं० १६६८ मे माघ शुक्ल ५ को कृष्णसिंह ने किसनगढ को अपने नाम पर बसाया और यही नगर उक्त राज्य की राजधानी हुआ। कृष्णसिंह जी अकबर के दरबारी नरवरगढ के कछवाहा राजा आसकरन सिंह के भानजे थे और अपने मामा के ही समान वल्लभ-कुल के अनुयायी थे। महाराज कृष्णसिंह के चार पुत्र हुए—(१) सहस मल्ल, (२) जग मल्ल, (३) भारमल्ल (४) हरिसिंह। इनमे केवल तृतीय पुत्र भारमल्ल का वंश चला, शेष तीनो नि.सन्तान रहे।

रूपसिंह

भारमल्ल के पुत्र हुए रूपसिंह। इन्ही रूपसिंह ने १७०५ वि० मे रूप नगर की स्थापना की और राजधानी रूप नगर हो गई। रूप सिंह जी ने संवत १७०४ वि० मे गोपीनाथ दीक्षित से वल्लभ-सम्प्रदाय की दीक्षा ली थी। उक्त गोपीनाथ जी महाप्रभु वल्लभाचार्य के प्रपौत्र, गोसाईं विट्ठलनाथ के पौत्र एवं गिरिधर जी के तृतीय पुत्र थे। इनका जन्मकाल संवत १६३४ पौष कृष्ण ४ है। रूप सिंह जी को गोपीनाथ जी से ही कल्याणराय जी का स्वरूप प्राप्त हुआ था। रूपसिंह जी कवि भी थे। यह नागरीदास जी के प्रपितामह थे। मुगल बादशाह शाहजहाँ के आदेश पर रूपसिंह बलख बुखारा फतह करने के लिए गए थे। उस समय अपने प्रभु के वियोग मे इन्होने यह पद रचा था—

प्रभु जू इहाँ रहैं कछु नाईं
करियैं गवन भवन दिसि अपनैं, सुनिये अरज गुसाईं

देखी बलख, वरफ हू देखी, अवम असुर अवलोके
मध्यम देस, बेस हू मध्यम, इहाँ कहाँ लै रोके
भक्त-वछल करुणामय सुख-निधि, कृपा करो गिरधारी
'रूपसिंह' प्रभु विरद लजत हैं, व्रज लैं बसो बिहारी

रूपसिंह का एक दूसरा पद देखें –

कैसे आऊँ दामिनि मोहि डरावत
जब जब गवन करी दिसि प्रीतम, चमकनि चक्र चलावत
वे चातुर आतुर अति सजनी, रजनी यौं विरमावत
गाजत गगन पवन चलि चञ्चल, अञ्चल रहन न पावत
सुनि पिय वचन चतुर चलि आए, भामनि सौ मन भावत
'रूपसिंह' प्रभु नगधर नागर, मिलि मलार सुर गावत

मानसिंह

रूपसिंह के पुत्र महाराज मानसिंह हुए। इनके समय मे औरङ्गजेब की मन्दिर एवं देव मूर्ति विध्वंस नीति से त्रस्त होकर गोवर्द्धन स्थित श्रीनाथ जी की मूर्ति मेवाड़ गई। मूर्ति के साथ साथ महावन की रहनेवाली गङ्गाबाई भी थी, जो गोसाईं विट्ठलनाथ जी की शिष्या थी और जिसने अपने समस्त पदो मे अपने गुरु विट्ठलनाथ जी की ही छाप रखी है, अपना नाम कही नही आने दिया है। उक्त छाप है 'बिट्ठल गिरिधरन' की। यह घटना सम्वत १७६२ वि० की है। महाराज मानसिंह ने अपने राज्य में ४० दिन तक श्रीनाथ जी का आतिथ्य किया था। श्रीनाथ जी का यह आतिथ्य किसनगढ़ से आधा कोस दक्षिण मे स्थित पीताम्बर की गार (पर्वत की घाटो) में हुआ था। महाकवि वृन्द के वंशज जयलाल कवीश्वर ने इस घाटी का बडा सुन्दर वर्णन निम्नांकित सवैया मे किया है—

शृङ्ग उतङ्ग सुढङ्ग सुराजत, स्वच्छ सिलातल है बहु ठामा
कीर मयूर सुशब्द, समीर सुगन्धित शीतल मन्द ललामा
निर्झर कूप मनोहर हैं 'जय', वृच्छ अनेक लसैं अभिरामा
छाई कदम्ब कुरंबनि सौं, सु पहार की गार पीताम्बर नामा

राजसिंह

मानसिंह जी के पुत्र राजसिंह जी हुए। जो नागरीदास जी के पिता थे। मानसिंह जी की कछवाई रानी के गर्भ से चार पुत्र उत्पन्न हुए :—१. सुखसिंह, २. फत्तेसिंह, ३. सावन्तसिंह, ४. बहादुरसिंह। और रानी बांकावती से बीरसिंह उत्पन्न हुए। बांकावती जी कवयित्री थी। इन्होंने श्री मद्भागवत का व्रजभाषा में पद्यानुवाद किया था। सुखसिंह योगी हो गए। फत्तेसिंह पिता के जीवनकाल ही मे युद्ध में खेत रहे थे। अतः सम्वत १८०४ में इनके देहावसान के अनन्तर सावन्त सिंह ही रूपनगर की गद्दी के अधिकारी

हुए। यही सावन्तसिंह हिन्दी साहित्य में नागरीदास के नाम से प्रख्यात हैं। महाराज राजसिंह को दिल्ली के बादशाह मुहम्मद शाह ने संवत १७७७ में सतहजारी मनसब प्रदान किया था। राजसिंह भी अच्छे कवि थे। इन्होंने सुबाहुविलास और रुक्मिणी विवाह चरित्र नामक दो ग्रन्थ लिखे थे। इनके अतिरिक्त फुटकर पद भी बहुत रचे थे। 'पद मुक्तावली' में इनके कई पद संकलित हैं। इस प्रकार नागरीदास जी को साहित्य-प्रेम, काव्य रचने की शक्ति एवं कृष्ण-भक्ति परम्परा से ही प्राप्त हुआ।

राजसिंह जी के दो पद देखें—

(१)

ए अँखियाँ हमारो जुलुम करैं
ए महरेटी, लाज लपेटी, झुकि झुकि घूमैं, भूमि परैं
नगधर प्यारे होहु न न्यारे, हा हा तोमों कोटि ररैं
'राजसिंह' को स्वामी श्री नगधर, ता बिन देखैं दिन कठिन भरैं

(२)

जैसे हो मोहन तुम चातुर, ऐसी न मिली कोऊ तुम्हें नारि
यह महरेटी, लाज लपेटी, कोऊ छछंदनि गोप कुँवारि
नैन बैन तुम बाढत, परत न काहू के फंद
जदपि चकोरी, ए सब गोरी, आप प्रकासी चंद
रीझ भीज करि दया छबीले, तरफत हैं ब्रज-बाल
'राजसिंह' को स्वामी श्री नगधर, कहियत है प्रतिपाल

सुंदर कुँवरि

महाराज राजसिंह की बेटी सुंदर कुँवरि भी सुकवि थी। यह वीर सिंह की सगी बहन थी और रानी बाँकावती जी के गर्भ से सं० १७९१ में उत्पन्न हुई थी। यह महाराज नागरीदास की सौतेली बहन थी। इन्हें सलेमाबाद की निंबार्क गद्दी के तत्कालीन आचार्य वृंदावन देव जी से दीक्षा दिलाई गई थी। उस समय यह केवल ५ वर्ष की थी। यह वही वृंदावन देव हैं, जो प्रसिद्ध कवि घनानंद जी के दीक्षा गुरु थे। सुंदर कुँवरि जी ने निम्नांकित १२ ग्रंथ रचे हैं—

(१) नेह निधि — सं० १८१७ (२) वृंदावन गोपी माहात्म्य—सं० १८२३
(३) संकेत युगल— सं० १८३० (४) रस पुंज — सं० १८३४
(५) सार संग्रह — सं० १८४५ (५) भावना प्रकाश — सं० १८४५
(७) रंग झर — सं० १८४५ (८) गोपी माहात्म्य — सं० १८४६
(९) प्रेम संपुट — सं० १८४८ (१०) राम रहस्य — सं० १८५३
(११) मित्र-शिक्षा — सं० १८६२ (१२) पद तथा फुटकर कबित्त

सुंदर कुँवरि बाई अत्यन्त कुशल कवयित्री हैं। इनमें नागरीदास एवं घनानंद जैसा काव्य-सौष्ठव है। उदाहरणार्थ दो तीन छंद लें—

(१)

स्याम रूप सागर में नैन वार पार थके,
नाचत तरंग अंग अंग रंगमगी है
गाजन गहर धुनि, बाजन मधुर बैन,
नागिन अलक जुग सोधे सगमगी है
भँवर त्रिभंताई, पान मैं लुनाई,
तामे मोती मणि जालन की जोति जगमगी है
काम पौन प्रबल धुकान लोपी लाज तातें
आज राधे लाज की जहाज डगमगी है

(२)

प्याय महा मदिरा निज माधुरी, लोचन लोभिन लायो हवेसा
चेटक ज्यों सुख स्वाद लुभाय, बढाय बिसास हुलास बिसेखो
लै ललचाय भुराय दुराय, सुहाय बिहाय जुगौ अब मेखो
जान परी निठुरान की बान, पै रीझ के आगे न सूझै परेखो

(३)

जो भय मूर महा भवसागर, तामे जहाँ जसु जन्म लहा है
दाँव कुदाँव अथाह बहै बिच धार कै, ना उपचार रहा है
वार न पार, मझार थकी, झकझाक सो जात न धीर गहा है
है निरधार अधार तुही, अब ए रे मलाह सलाह कहा है

पूर्वजों का वंश-वृक्ष

वृक्ष रूप में नागरीदास जी के पूर्वजो को यों प्रस्तुत किया जा सकता है—
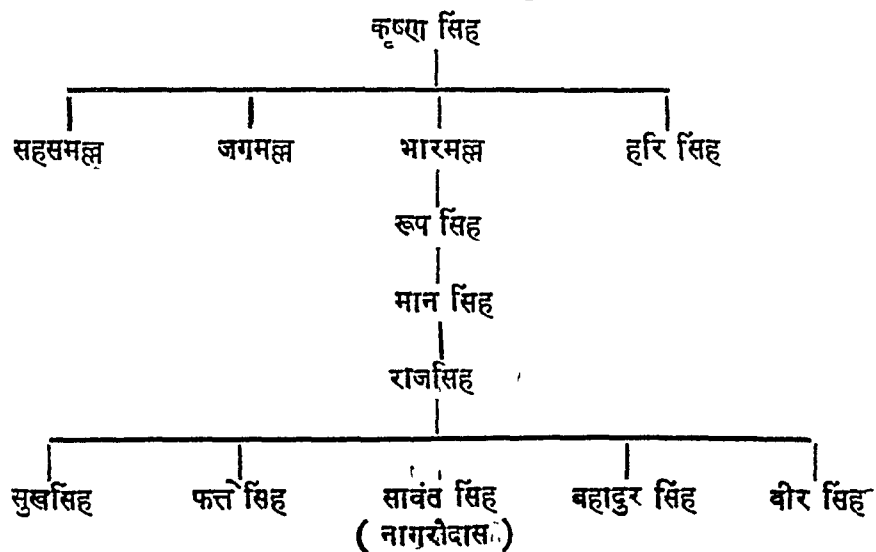
जीवन परिचय

जन्म-काल

महाराज नागरीदास जी का जन्म संवत् १७५६ में पौष वदी द्वादशी को हुआ था। यह महाराज राजसिंह के पुत्र, मानसिंह के पौत्र और रूपसिंह के प्रपौत्र थे।

विवाह और संतान

नागरीदास जी का विवाह २१ वर्ष की वय में भानगढ के राजा राजावत (कछवाहों की एक शाखा विशेष) यशवत सिंह जी की कन्या से सं० १७७७ की ज्येष्ठ सुदी ६ को हुआ था। इस विवाह से इन्हें चार संताने हुईं—दो पुत्र और दो पुत्रियां। प्रथम पुत्र सं० १७८३ मे उत्पन्न हुआ था, जो बाल्यावस्था ही में दिवंगत हो गया था। दूसरे पुत्र सरदार सिंह का जन्म सं० १७८७ भाद्रपद शुक्ल २ को हुआ था। यही नागरीदास जी के उत्तराधिकारी हुये थे। पहली पुत्री किशोर कुँवरि जी का विवाह बूँदी के हाडा दीप सिंह जी से हुआ था। दूसरी पुत्री गोपाल कुँवरि का संबंध जयपुर के महाराज श्री माधो सिंह से तै हुआ था। पर विवाह होने के पहले ही उनका सुरलोक-वास हो गया और गोपाल कुँवरि ने भगवद्भक्ति में अविवाहित जीवन विता दिया।

वीरता

सावत सिंह जी संस्कृत और फारसी के अच्छे ज्ञाता थे। यह संगीत एवं चित्र कलाओं में भी निष्णात थे। यह अत्यंत साहसी एवं शस्त्र विद्या में निपुण थे। संवत १७६६ में १० वर्ष की वय मे ही, दिल्ली दरवार से लौटते समय एक दिन इन्होने अपने ऊपर आक्रमण करने वाले विगड़ैल हाथी को तलवार के एक हाथ से पछाड दिया था। उस समय का चित्र किसनगढ़ दरवार में सुरक्षित है। इस घटना का वर्णन किसी कवि ने निम्नांकित कवित्त मे किया है :—

दिली के वजार वीच जूथ उमरावनि कौ
सूर समरथ्थ जीत रूप तहवरी कौ
संग गडदार, पीलवान कै न हाथ गज,
आवत भयंकर भौ समै तिहि घरी कौ
साहस कै, सूरता सम्हारि, करवार गहि,
सांवत महीप धीर जैतवार अरी कौ

करी न अबेर, सब देखत ही तिहि बेर,
मारि समसेर, मुँह फेर दीनो करी को
—सभा का याज्ञिक संग्रह ५०/१०, पृष्ठ ६२ छंद ४१

सं० १७६६ मे केवल १३ वर्ष की वय मे इन्होंने बूँदी के हाड़ा जैतसिंह को मारा था। संवत १७७४ में १८ वर्ष की वय में थूण की गढ़ी, भरतपुर के जाट राजा वदन सिंह से, दिल्ली के बादशाह फर्रुखसियर के लिये, जीती थी। इन विजयों का उल्लेख किसी कवि ने निम्नांकित छंद मे किया है :—

घाव लगे तन हाड़ा कौ मारयो, औ घायल थूंन के जुद्ध की औरे
फेर ह्वै सांवत सेर लथोबथ, घायल ह्वै कै हन्यौ भुज जोरै
ओप चढ़ी रजपूती की यों, नर लोहू की रैनी में अङ्ग झकोरैं
ज्यौं पट मैं अति ही चटकीलो चढ़ैं रँग तीसरी वार के बौरैं
—वही हस्तलेख, पृष्ठ ५५, छंद २६

इस हस्तलेख में इनकी प्रशंसा का एक छंद और है :—

वंस वल, वंघु वल, गढ़नि के गर्व बल,
गनत न काहू विजै समर की भीर मै
धरम तैं लुंज पुंज, पाप ही के लोभी अति,
बाट के वटोही हति डारैं कूप नीर मैं
सांवत महीप तिन्है दै कैं दंड-अंजन कौ,
खोले चख अंध हुते महा मद वीर मैं
बांह गहि आने, तब बकरे (से) बिललाने,
अँकरे फिरत जिन्है जकरे जंजीर मे
—पृष्ठ ६३-४, छंद ४२

इसी प्रकार सं० १७७१ मे, जब यह १५ वर्ष के थे, एक वार एक सर्प इनके जामा के दामन में न जाने कैसे आ गया। इन्होने उसके फन को पकड़कर मसल दिया और चुपचाप बाहर जा उसे फेंक आए तथा किसी को कानोकान खबर नहीं होने दी। संवत १७६६ मे वीस वर्ष की वय मे इन्होने अकेले सिंह का शिकार किया था। इसका चित्र किसनगढ़ दरबार मे है। संवत १७६३ में मराठे मल्हारराव ने इनके राज्य पर आक्रमण किया। लड़ाई हुई। पर इन्होंने कर न दिया। इस पर बाजीराव पेशवा ने मल्हारराव से इनकी प्रशंसा की थी। इस प्रसंग का यह दोहा प्रसिद्ध है :—

बाजीराव मल्हार सौं, कहतो गयो कथाह ।
और राव सब राव है, सांवत बात अथाह ॥

गृह-कलह

संवत १८०४ मे वैसाख सुदी ५ को, नागरीदास जी रूप नगर की गद्दी पर बैठे। इनके छोटे भाई बहादुर सिंह को राज्य की हविश थी। इन्हे एक वर्ष भी सिंहासन पर बैठे नही हुआ था कि एक बार यह दिल्ली गये। इसी बीच बहादुर सिंह ने रूपनगर के राज्य पर अधिकार कर लिया। राज्य की पुनः प्राप्ति के लिये नागरीदास मरहठो से सहायता लेने के लिये कुमाऊँ की मुहिम में शामिल हुये थे। मराठो की सहायता से रूपनगर का आधा राज्य इन्हे सं० १८१३ में मिला। इस कौटुंबिक युद्ध का संचालन इनकी ओर से इनके पुत्र सरदार सिंह जी ने किया था। यह वृंदावन मे ही रह गये थे। सं० १८१२ के फाल्गुन मे इन्होने कुटुब-यात्रा की। संवत १८१४ मे आश्विन शुक्ल १० (विजय दशमी) को अपने पुत्र सरदार सिह को इन्होने कृष्णगढ का युवराज बनाया और दूसरे दिन एकादशी को वृंदावन के लिए प्रस्थान कर दिया।

निधन

अहमद शाह दुर्रानी के हमले के समय नागरीदास के कुटुम्ब वालों ने इन्हे रूप नगर बुला लिया था। ६ महीने वहां रह कर यह वृंदावन पुनः वापस आ गये थे। यही सं० १८२१ मे भादों सुदी ३ को इनका देहावसान हुआ। वृंदावन मे इनकी समाधि बनी हुई है। उस पर यह अभिलेख है :—

"श्री नाथ जी
श्री राधाकृष्ण गोवर्धनधारी। वृंदावन जमुना तटचारी।
ललितादिक बल्लभ बिठलेस। मोहन करो कृपा आवेस।

छप्पय

सावंत सिंह नृप कलि विषे, सत त्रेता सम आचरी
सुत को दै युवराज आप वृंदावन आये
रूपनगर पति, भक्ति वृंद बहो, लाड लडाये
सूर बीर गम्भोर, रसिक रिझवार अमानी
संत चरनामृत नेम, उदधि लौं गावै बानी
नागरीदास विदित सो, कृपा ढार नागर ढरिय
सावंत सिंह नृप कलि विषे, सत त्रेता विध आचरिय
संवत १८२१ भादो सुदी ५ को महाराज नागरीदास जी
श्री वृंदावन पाए।"

कवि-मित्र

महाकवि आनन्दघन से नागरीदास जी की मित्रता थी। श्री राधाकृष्णदास

जी के यहाँ एक अत्यन्त प्राचीन चित्र था, जिसमे घनानन्द जी और नागरीदास एक साथ विराजमान थे। कुछ पता नही, चित्र अब भी उनके परिवार मे सुरक्षित है अथवा नही।

नागरीदास जी के दरबार मे प्रसिद्ध कवि वृंद, हरिचरणदास, हीरालाल, मुंशी कन्हीराम, कल्लाह पन्ना लाल जी, वैष्णव विजयचन्द जी, दाहिवाँ विजय राम जी आदि कवि थे। इनकी उपपत्नी वनी ठनी जी इनके साथ ही वृंदावन मे रहती थी और रसिक विहारी उपनाम से कविता करती थी।

वंशज

१८०५ वि० मे जो गृह-युद्ध प्रारंभ हुआ, उसकी समाप्ति १८१३ वि० मे हुई और रूपनगर का राज्य दो हिस्सो मे बँट गया। नागरीदास की ओर से इनके पुत्र सरदारसिंह लड़ रहे थे। स्वयं नागरीदास जी तो वृंदावन मे अशरण-शरण की शरण मे पडे हुए थे। रूपनगर की गद्दी पर सरदारसिंह जी बैठे और वहादुर सिंह को पुरानी राजधानी किसनगढ़ को अपनी राजधानी वनानी पडी। दैवयोग से सरदार सिंह निःसंतान थे और इनका देहांत अपने पूज्य पिता नागरीदास जी की मृत्यु के प्रायः ढाई वर्ष बाद ही सं० १८२४ मे वैशाख की अमावस्या को हो गया। मरने के पहले इन्होने अपने चचा वहादुर सिंह के ही पुत्र विरद सिंह को गोद ले लिया था। अतः रूपनगर और किसनगढ के दोनों राज्य पुनः एक हो गए और अब राजधानी किसनगढ़ ही वनी रही। वहादुर सिंह का वंश वृक्ष यह है —
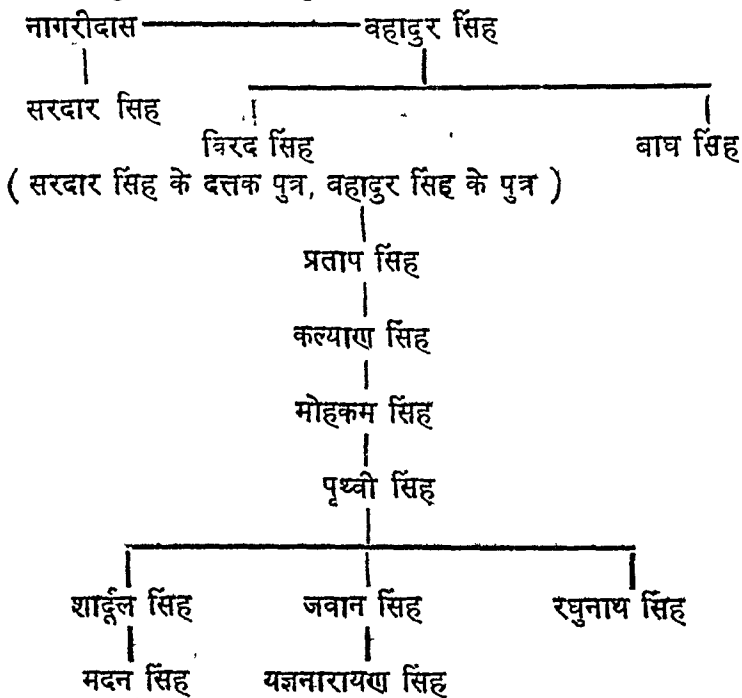
महाराज शार्दूल सिंह १८६८ ई० मे किसनगढ़ के राजा थे। इन्होंने आर्थिक सहायता देकर 'नागर समुच्चय' का प्रकाशन कराया था।

५. किसनगढ़ की पंचनिधियाँ

किसनगढ़ की पंचनिधियाँ ये है—(१) कल्याण राय का स्वरूप, (२) दाऊ जी का स्वरूप, (३) कृष्ण का स्वरूप, (४) महाप्रभु वल्लभाचार्य का चित्र, (५) शालिग्राम का एक मूर्ति। इन पाँचो का इस राज्य एवं महाराज नागरीदास से अत्यत घनिष्ट संबंध है। अत: यहाॅ इनका संक्षिप्त इतिहास दे देना अत्यंत आवश्यक है।

१. कल्याण राय

संवत् १७०४ मे महाराज रूप सिंह जी ने गोसाईं विट्ठलनाथ के ज्येष्ठ पुत्र गिरिधर जी के तृतीय पुत्र दीक्षित गोपीनाथ जी से वल्लभ संप्रदाय की दीक्षा ली। स्वप्न मे श्रीनाथ जी ने इन्हे आदेश दिया कि तुम अपने घर मे मेरा स्वरूप प्रतिष्ठित करो। रूप सिंह जी ने अपने स्वप्न की चर्चा निज गुरुदेव गोपीनाथ जी से की। तब उन्होंने कल्याण राय जी का स्वरूप रूप सिंह जी के सिर पर पधरा दिया और दामोदर भट्ट को सेवा के निमित्त साथ कर दिया। पहले इन्हें दरमज मे रक्खा, फिर मांडल गढ में। संवत् १७११ मे माघ वदी प्रतिपदा को पाटोत्सव मनाया गया। दामोदर भट्ट को मांडल गढ़ परगने के अंतर्गत भटखेड़ी नामक गांव दे दिया गया।

२-३. नृत्य गोपाल

नृत्य गोपाल के दो स्वरूप है— वलराम के और श्याम के। इन दोना स्वरूपो को किसनगढ राज्य के संस्थापक महाराज कृष्ण सिंह ने अपने सिर पर पधराया था। कृष्ण सिह के पट्टो और परवानो पर 'श्री गोपाल सहाय' लिखा जाता था। अकवरी दरवार के सभासद, वल्लभ संप्रदाय के अनुयायी, नरवर गढ के कछवाहा राजा आसकरन जी कृष्ण सिंह के मामा (या मातामह) थे। उन्ही की कृपा से इस वंश मे भी वल्लभ संप्रदाय का प्रवेश हुआ। संवत् १७११ तक नृत्य गोपाल की सेवा इसी प्रकार होती रही। सं० १७११ मे महाराज रूप सिंह के समय मे उनके गुरु दीक्षित गोपीनाथ जी ने नृत्य गोपाल जी को कल्याणराय की गोद मे पधरा दिया। तव से यह गोद के ठाकुर कहे जाने लगे। रूप सिंह, मान सिंह एवं राज सिंह के समय तक यही स्थिति रही। सं० १८०४ मे नागरीदास जी जव दिल्ली गए, तव नृत्यगोपाल जी भी उनके साथ गए और उनकी मृत्यु तक यह बरावर उन्ही के साथ रहे और प्राय: रूपनगर के वाहर ही रहे। सं० १८२१ में यह पुनः रूपनगर वापस आए।

१८२५ मे चैत्र बदी ५ को कल्याणराय एवं नृत्यगोपाल जी की मूर्तियाँ रूपनगर से किसनगढ़ लाई गईं और किले के भीतर उस स्थल पर रखी गई, जो हरी सिंह के दालान के नाम से प्रसिद्ध था। पर कुछ ही दिन बाद वहाँ अग्नि का प्रकोप हुआ और स्वरूप पुनः रूप नगर पहुँचा दिए गये। १८२५ मे चैत्र शुक्ल ६ को किसनगढ के दुर्ग में मंदिर की नीव पडी। १८२६ फागुन सुदी ६ बुधवार को महाराज बहादुर सिंह इन स्वरूपो को रूपनगर से किसनगढ पुनः लाए और नवीन मंदिर मे इनकी प्रतिष्ठा हुई। तबसे ये स्वरूप वही बने हुए है।

४. महाप्रभु वल्लभाचार्य का चित्र

दिल्ली के सुलतान सिकंदर लोदी ने संवत् १५६८ मे अपने चित्रकार होनहार को ब्रज मे भेजकर महाप्रभु वल्लभाचार्य का यह चित्र बनवाया था। बलख की मुहिम से जीतकर लौटने पर शाहजहाँ ने महाराज रूप सिंह से कुछ उपहार मागने के लिए कहा था। तब उन्होने महाप्रभु वल्लभाचार्य का यह चित्र मांग लिया था। यह चित्र भी पहले रूपनगर मे था और स्वरूपो के साथ १८२६ वि० मे किसनगढ आया। यह कल्याण राय जी के मंदिर में प्रतिष्ठित है। इस चित्र के कारण ही किसनगढ वल्लभ संप्रदाय वालों के लिए तीर्थ जैसा मान्य हो गया है।

५. शालिग्राम जी

यह रूप सिंह जी के सेव्य ठाकुर थे। महाराज राज सिंह के दफ्तर मे इनका नाम 'सुदर्शन' लिखा मिलता है। इस वंश के राजा लोग जब बाहर जाते थे, तब नृत्यगोपाल जी की गोद में यह भी साथ ही जाया करते थे।

६. महाराज नागरीदास का संप्रदाय-निर्णय

कृष्णगढ नरेश सावंत सिह हरि-संबध-नाम नागरीदास की समस्त रचनाओ का संकलन 'नागर समुच्चय' नाम से १८९८ ई० मे बंबई से प्रकाशित हुआ। इसके प्रारंभ मे राधाकृष्णदास जी द्वारा लिखित 'श्रीनागरीदास जी का जीवन चरित्र' संलग्न है, जो कुछ ही दिनो पहले सं० १९५४ मे नागरीप्रचारिणी पत्रिका भाग २ मे प्रकाशित हुआ था। इसमे राधाकृष्णदास जी ने महाराज नागरीदास जी को बल्लभ संप्रदाय का अनुयायी कहा है।

इधर संवत् १९९७ वि० मे, उक्त नागर समुच्चय के प्रकाशन के ४२ वर्ष वाद, ब्रह्मचारी विहारीशरण जी ने 'निंबार्क माधुरी' नामक ग्रंथ प्रस्तुत किया। यह निंबार्क संप्रदाय में दीक्षित कवियों की कविताओं का संकलन है। कवियों का परिचय भी दिया

गया है। इस संग्रह में इन महाराज नागरीदास जी को भी संकलित कर लिया गया है और चार पृष्ठो में इन्हे निंवार्क संप्रदाय का अनुयायी प्रमाणित करने का प्रयत्न किया गया है। 'निंवार्क माधुरी' के प्रकाशन के १६ वर्ष बाद निंवार्क संप्रदाय के मुख पत्र 'श्री सर्वेश्वर' के वृंदावनाक में, चैत्र संवत् २०१३ वि० में, नागरीदास को पुनः निंवार्क संप्रदाय का अनुयायी कहा गया। इधर मार्च १९६५ मे इन्हे निंवार्क संप्रदाय का ही अनुयायी मानकर उक्त सर्वेश्वर का नागरीदास-अंक निकला है।

ऐसी स्थिति मे यह आवश्यक हो जाता है कि तटस्थ भाव से दोनो पक्षों के प्रमाण प्रस्तुत कर दिए जायँ और निर्भ्रान्त निष्कर्ष पर पहुँचा जाय कि नागरीदास जी वल्लभ संप्रदाय के अनुयायी थे अथवा निंवार्क संप्रदाय के। नागरीदास जी वल्लभ संप्रदाय के अनुयायी थे, यह स्थापना पुरानी है; वे निंवार्क संप्रदाय में दीक्षित थे, यह मान्यता नयी है।

नागरीदास के वल्लभ कुल का अनुयायी होने के प्रमाण

अतः साक्ष्य

नागरीदास जो ने स्वरचित 'उत्सव माला' में १६ उत्सवो का वर्णन किया है। इन १६ उत्सवो मे से एक महाप्रभु वल्लभाचार्य का जन्मोत्सव है और एक गोसाईं विट्ठलनाथ जी का जन्मोत्सव।

[क] अथ श्री महाप्रभु जी को उत्सव

(१) राग

राधाकृष्ण गोवर्द्धनधारी। वृंदावन यमुना-तट-चारी
ललितादिक वल्लभ विठलेस। मो मन करो कृपा आवेस
श्री नगेंद्रधर नागर नायक। निज वल्लभ रस पुष्टि प्रदायक
तस्य कृपा व्रजभक्त उदासी। 'सावतेस' वृंदावन-वासी

(२) राग

प्रगटे हैं श्री वल्लभ देव
वहो जीवन के भये सगुन सुभ, सो समुझो मैं भेव
गोकुल हरष, हरष गिरिराजहिं, ह्वै ही वृज वैभव सुख सेव
'नागरीदास' गोवर्द्धनधारी, हरषे नेह लाड़ की टेव

(३) छप्पय

समैं घोर कलिकाल, धर्म पद छेदन कीनो
विफल क्रोध कंदर्प, जीति जीवनि कौं लीनौ
लोभ मोह तै करी, प्रवर्ति मारग मति पंगो
चित चंचल अति अजित, नीच सगी वहो रंगी
'नागरीदास' न और कछु, त्रिविध ताप सीतल करन
प्रगटित वल्लभ वदन तिहि सरन मंत्र की हौं सरन
इति श्री महाप्रभु जी को उत्सव।

—यही ग्रंथ पृष्ठ २०६-२०

[ख] अथ श्री गुसाईं जी को उत्सव

या पद की अलापचारी में देने ये दोहा
परम पुष्टि रस जल अमित, उर्मी प्रेमावेस
'नागर' प्रगटि अनंद निधि, बल्लभ-सुत-बिठलेस ॥१॥
वल्लभाचारज कलपतरु, फल लाग्यो बिठलेस
या फल को रस रूप है, गोकुलनाथ ब्रजेस ॥२॥
धन वल्लभ, बिठलेस धन, धन्य सात सुत वंस
भव निस्तारन हित प्रगटि, 'नागर' जक्त प्रसंस ॥३॥

१. राग

श्री बल्लभाचारिज कुमार कुमुद कुल निसेस
भक्तजन प्रसंसित श्रीमत विठलेस
विष्णुस्वामि संप्रदाय चूरामणि चार
'नागर' प्रणमाम्यहं अंघ्रि कल्हार

२. पद चर्चरी, यथा समै राग

वेई गाय गोप वृंद गोकुल मधि संतत सुख,
संपदानि घोष मोष पगनि पेलि डारी
वेई नंद वल्लभ सुत भए है प्रगट वल्लभ ग्रह,
सोभित द्विज कुल ललाम धन वृज विहारो
वेई प्रेम परिकर निति गोविंद कुंभनादि संग,
ललित लुब्ध लीला रस पुष्टि-कोप-तारी
वेई 'दास नागर' के प्रेरक मन मनुष वेस,
वेई विठलेस वेई गोवर्द्धनधारी

३. राग

प्रगटि विठलेस दिनकर किरन स-सुत,
भक्त कुल के वल आनंद-दयने
नरनि उर अघनि विध्वंसि मंगल करन,
कृष्ण प्रतिबिंब जगमगत नयने
विटप खंडन कठिन काठ मायावाद,
पुष्ट रस वरसही विमल वयने
'नागरीदास' द्विजराज जानी वेई,
समै सुरराज गिरिराज लयने

४. छप्पय

धनि श्री वल्लभ विदित, धन्य धनि कुँवर विभूपन
विट्ठलेस सुत सात धन्य, हरि अस वंस धन
धन चौरासी भक्त जक्त, हित पुरुप रूप छित
धनि गोविंद कुंभनादि, प्रीति गिरिधरन अपरमित
धन्य भान भुव भागवत, 'नागरिया' हिय-तम-हरन
धन्य धन्य फिर धन्य है, महामंत्र केवल सरन
इति श्री गुसाईं जी को उत्सव

—यही ग्रंथ पृष्ठ १६२-४

यदि नागरीदास जी वल्लभ संप्रदाय मे न दीक्षित होते, तो यह 'श्री महाप्रभुजी को उत्सव' और 'श्री गुसाईं जी को उत्सव' लिखने की उन्हें क्या पड़ी थी। महाप्रभु वल्लभाचार्य वाला छप्पय उत्सवमाला के अतिरिक्त नागरीदास जी के एक अन्य ग्रंथ 'कलि वैराग्य वल्ली' मे भी है। इस छप्पय के अंतिम चरण में तो उन्होंने स्पष्ट रूप से महाप्रभु वल्लभाचार्य (वल्लभ संप्रदाय) की शरण मे जाने का उल्लेख किया है—

प्रगटित वल्लभ वदन तिहि सरन मंत्र की हौं सरन

विट्ठलनाथ वाले छप्पय के भी अंत में उन्होने शरण जाने को ही महामंत्र कहा है।

'व्रज लीला' की पहली पंक्ति भी इनके वल्लभ संप्रदाय के अनुगामी होने की सूचना देती है :—श्री वल्लभ कुल वंदौ। करि ध्यान परम आनंदौ।

इन रचनाओं से स्पष्ट है कि नागरीदास जी वल्लभ संप्रदाय के अनुयायी थे। इन पदों के सहारे वल्लभ संप्रदाय के अनुयायी किसी अन्य नागरीदास की कल्पना नहीं

की जा सकती, क्योंकि श्री महाप्रभु जी के उत्सव वाले प्रथम पद में कवि ने अपना नाम सावंतसिंह (सांवतेस) भी दे दिया है—

तस्य कृपा व्रज भक्त उपासी
सांवतेस वृंदावन बासी

इन पदों को ध्यान मे रखते हुए श्री ब्रह्मचारी विहारीशरण जी लिखते है—

"इन्होने ग्रन्थारंभ मे किसी भी संप्रदाय के आचार्यों का स्वाचार्य दृष्टि से वंदना नही की है, दो चार मंगल बधाई के पद अवश्य उपलब्ध होते है, जो प्राय: अन्य कवियों के भी सम्मिलित हो गए है। नागरीदास नाम के चार कवि हैं ही। अथवा निष्पक्ष कवि महानुभाव दूसरे के आग्रह से उसके उत्सव मनाने के लिए पद निर्माण भी कर दिया करते हैं। इन्होंने स्वनिर्मित ग्रन्थो मे अपने दीक्षा प्राप्त गुरु की वदना नाम लेकर नही की हे, न कही नाम ही उल्लेख किया है, दो चार आचार्य वंदना के सिवाय। ग्रथ मे सांप्रदायिको द्वारा साप्रदायिक ढंग से सपादित कर बहुत कुछ निर्मित कर मिला भी दिए जाते हैं, यह आजकल के साप्रदायिकों की पद्धति है। नागर समुच्चय मे जय कवि कृत पद बहुत से सम्मिलित है, और आन कवि कृत भी, वैसे ही दो चार आचार्य बधाई मिल जाना संभव है, अथवा विरक्त होने से प्रथम ही निर्माण किये हो।"

—निबार्क माधुरी, पृष्ठ ६१३

ब्रह्मचारी जी कहना चाहते है :—

(क) ये पद किसी दूसरे नागरीदास के हो सकते है।

विहारी शरण जी ने इन नागरीदास से पहले तीन नागरीदास माने है, एक हैं राधा वल्लभ सप्रदाय के नेही नागरीदास, दूसरे है निवार्क संप्रदाय के स्वामी हरिदास की शिष्य परंपरा मे आचार्य नागरीदास या बड़े नागरीदास। संभवत. बाबू राधाकृष्णदास के आधार पर वे एक तीसरा नागरीदास भी मानते है, जो वल्लभ संप्रदाय के थे। इन तीसरे नागरीदास का अस्तित्व प्रमाणो से नही सिद्ध होता, जैसा कि पीछे हम देख आए है। स्वयं महाराजा नागरीदास ने अपने से पहले के केवल दो नागरीदास माने है :—

तुलसीदास मीरां, माधव रु **'उभै नागरीदास'**

—पद प्रबोध माला (सं० १८०५)

ये पद न तो राधावल्लभी नागरीदास के है, और न हरिदासी नागरीदास के। ये वल्लभ संप्रदाय के ही नागरीदास के है और इन्हीं महाराज नागरीदास के है, क्योकि इनमें इनका वास्तविक नाम सावंत सिंह भी सांवतेस के रूप मे आ चुका है।

(ख) दूसरे के कहने से दूसरे के उत्सव के लिए नागरीदास जी ने ये पद रच दिए होंगे।

यदि ऐसा है तो स्वयं अपने कहने से उन्हें निंबार्क संप्रदाय के आचार्यो की भी स्तुति करनी ही चाहिए, पर इन्होंने किया नहीं है।

(ग) दूसरो ने विशेष कर के जयलाल कवि ने जाल करके नागरीदास के नाम पर ये पद जोटकर लिख दिए होंगे।

इस सम्बन्ध मे निवेदन है कि नागर समुच्चय का प्रकाशन तत्कालीन किसनगढ़ नरेश शार्दूलसिंह की आज्ञा से, उनके ही व्यय से, उन्ही के राजकवि जयलाल द्वारा संशोधित होकर, उन्हीं की प्रजा सलेमाबाद निवासी किसन लाल गौड़ द्वारा बम्बई से हुआ। मूल प्रति जिसके आधार पर ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ, किसनगढ़ के राज पुस्तकालय की प्रति है। अतः यह जाल संभव नही। फिर बेचारे जयलाल को निराधार बेईमान बनाने से क्या लाभ। पदमुक्तावली में अन्य कवियो की भी रचनाएँ है, पर वहाँ स्पष्ट रूप से उनके 'आन कवि कृत' होने का उल्लेख कर दिया गया है।

(घ) ब्रह्मचारी जी का चौथा अनुमान है कि ये रचनाएँ नागरीदास जी की प्रारंभिक रचनाएँ हो सकती है।

निश्चय ही ब्रह्मचारी जी का यही अनुमान ठीक है, पर अंशतः। अंशतः इस अर्थ में कि यह नागरीदास जी की प्रारंभिक कृति ही है, इसका कोई प्रमाण सुलभ नही। यह बाद की भी कृति हो सकती है। उत्सवमाला का रचना काल नहीं दिया गया है।

एक और अंतः साक्ष्यः 'मानस हंस बँधाए'

हम तो नकल भक्ति की ल्याए
कबहु न सांची भक्ति करी, मन इंद्रिनि हाथ बिकाए
कपट चतुरई वेष देखिकै, संत मंहथ लुभाए
बानाधारी बधिकनि पै ज्यौं, मानस हंस बँधाए
स्वाग धरै हूँ सब फल प्रापत, भक्ति महातम जात न गाए
'नागरिया' नकलो कौ हरि, प्रिय वृंदा विपुन बसाए

—छूटक पद १४२

महाराज नागरीदास ने इस पद के चतुर्थ चरण में वैष्णव का बाना धारण करने वाले बधिक (असली वैष्णव नही, नकली वैष्णव) के हाथों में मान सरोवर के हंस के बंदी बन जाने की कथा की ओर संकेत किया है। अनेक अंतर्कथाएँ है, जिनका उल्लेख भक्त कवि बराबर करते आए है। पर इस कथा की ओर संकेत अन्य किसी भक्त कवि के काव्य में देखने में नही आया। संभवतः इस कथा का पता भी बहुतो

को नहीं था। वस्तुतः यह कथा वल्लभ संप्रदाय की है। यह कथा दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता मे है और यह १८९ वें वैष्णव की वार्ता है। इस पद से स्पष्ट है कि नागरीदास जी वल्लभ संप्रदाय के थे और उन्हें जहाँ ८४ वैष्णवन की वार्ता का पता था—

धन चौरासी भक्त, जक्त हित पुरुप रूप छित
धनि गोविंद कुँभनादि, प्रीत गिरधरन अपरिमित
—उत्सवमाला, छप्पय ११४.

वही उन्हे २५२ वैष्णवन की वर्ता का भी पता था।

उक्त वार्ता यह है—

"अब श्री गुसाईं जी के सेवक हंस हंसनी, मानसरोवर मैं रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत है —

भाव प्रकाश—ये दोऊ सात्विक भक्त हैं। लीला में इनको नाम 'हंसा' और 'शिवा' हैं। ये दोऊ 'श्रीदामा' तें प्रगटी है, तातें उनके भाव रूप है।

वार्ता प्रसंग १.

सो एक दिन श्री गुसाईं जी आप मानसरोवर मे संध्यावंदन करत हते। सो तहाँ एक हंस-हंसनी कौ जोडा श्री गुसाईं जी के आगे आइ कै जल पीवत हतो। तब आपने कृपा करिके वाकौं नाम सुनायौ। सो वे मान सरोवर के रूखन पर रहतें। तब एक पारधी आयो। तव हंस हंसनी कों वान मारे। सो सब दिन पच्यो। परि इनके वान न लागे। तब संध्या को घर गयो। तब फेरि सबेरे मन मे कही, जो याके बान क्यों न लागे?

सो वे हंस हंसनी व्रज यात्रा मे वैष्णव आवते, सो मानसरोवर पै जब वैष्णव आवते, पाछे मानसरोसर मे न्हाते। तब वैष्णवन के पाँवन की रज मे लोटते। तब पारधी ने जान्यो, जो ये वैष्णवन की रज मे लोटत हैं। सो मैं वैष्णवन को स्वाग करिकैं जाऊँ। सो मेरे पाँवन की रज मे लोटेंगे। तब मैं पकरि लेउँगो। तब याने वैष्णवन कौ स्वांग लै कै वैष्णवन के संग मे यह चल्यो आयौ। तब हंस बोल्यो, जो यह कौन है? ताकों जानो हो? तब हंसनी बोली, जो यह पारधी है। जाने अपनकों बान मारे हते। सो वह वैष्णवन को स्वांग लै कै वैष्णवन के सँग आवत है। सो याके पाँवन की रज मे कैसे लोटे? तब हंस बोल्यो, जो आगे आपुन श्री गुसाईं जी के सेवक ब्राह्मन ब्राह्मनी हते, और श्री ठाकुर जी की सेवा करत हते। जो महाप्रसाद अपुन वैष्णवन को लिवावत हते, सो ब्राह्मन वैष्णवन को आदर करि लिवावत हते।

औरन को साधारन पच्छ करि कै लिवावत हुते। सो ता अपराध सों अपुन हंस हंसनी भए हैं। और वैष्णव को वानो लै कै पारधी आयो है। सो याके पावन की रज में लोटेंगे। और यह पकरि कै मारेगो तो सुखेन मारो। एक वार मरनो है। पाछें फेरि वे आए। तव वैष्णवन की पाँवन की रज मे लोटे। पाछें पारधी के पाँवन की रज में लोटे। तव पारधी पकरिवे लग्यो। तव हंस हंसनी दोऊन की पाख पारधी कों लागी। सो परस मात्र तें पारधी की वुद्धि निर्मल होइ गई। तव पारधी ने कही जो अव मैं वैष्णव होऊँ तो भलो है। सो उन हंस हंसनी के संग तें पारधी भलो वैष्णव भयो।

सो वे हंस हसनी मानसरोवर के वृच्छन ऊपर वैठे रहते। सो जो कोई वैष्णव आवतो, ताकी पाँवन के रज मे लोटते। ऐसे सदैव करते। पाछे हंस हंसनी की देह छूटी। तव भगवद्चरनारविंद को प्राप्त भए।

भाव प्रकाश—या वार्ता को अभिप्राय यह है, जो वैष्णव के संग तें वुद्धि निर्मल होत है। तातें वैष्णव को संग अहर्निश करनो। और वैष्णव भाव मे जाति को विचार नाही है। काहे तें, जो वैष्णव को स्वरूप ही महा अलौकिक है। चुद्रहू जो वैष्णव होइ तो ताको आदर करनो। वाको अपने ते वड़ो जाने। यह सिद्धान्त जताए। सो वे हंस हंसनी श्री गुसाईं जी के ऐसे परम कृपापात्र भगवदीय हुते। तातें इनकी वार्ता कहाँ ताईं कहिए ॥१८९॥

वल्लभ संप्रदाय और गोवर्द्धन

वल्लभ संप्रदाय के इष्ट श्रीनाथ जी हैं, जिनका मंदिर गोवर्द्धन पर्वत पर जतीपुरा मे है। वल्लभ संप्रदाय के भक्त कवियो ने वरावर अपने पदो में कृष्ण के गिरवर नाम की छाप अपने नाम की छाप से मिलाने का प्रयास किया है और उन्होने गोवर्द्धन धारण का वर्णन भी तल्लीनता से किया है। यह विशेषता निवार्क संप्रदाय, चैतन्य के गौडीय संप्रदाय, हित हरिवंश के राधा वल्लभ संप्रदाय और स्वामी हरिदास के सखी संप्रदाय के पद-साहित्य मे नही पाई जाती। नागरीदास ने वल्लभ विट्ठल संवंधी पदो में छह वार गोवर्द्धन-धर संवंधी पदावली का प्रयोग किया है—

(१) वेई 'दास नागर' के प्रेरक मन, मनुप वेस, वेई विठलेस वेई **गोवर्द्धनधारी**

—उत्सवमाला ११२

(२) 'नागरीदास' ब्रुजराज जानौं वेईं समै सुरराज **गिरिराज लयने**

—उत्सवमाला ११३

(३) धनि गोविंद कुंभनादि प्रीत **गिरधरन** अपरमित —उत्सवमाला ११४
(४) राधाकृष्ण **गोवर्द्धनधारी** —उत्सवमाला २२६
(५) श्री **नगेन्द्रधर** नागर नायक —उत्सवमाला २२९
(६) 'नागरीदास' **गोवर्द्धनधारी** हरपे नेह लाड की टेव —उत्सवमाला २३०

नागरीदास जी ने गोवर्द्धन धारण पर भी रचना की है—

सजनी निरखि नंद कुमार
धरै गिरि कर बढी छबि, लखि मदन बहो बलिहार
ललित अंग तृभंग, कटि तट कनक किंकनि जाल
बंक भुव दृग अलक परसत. चरन परसत माल
उदित विच ब्रजचंद पूरन, तिमर मेट्यो घोर
तहाँ गोपी गन तरइयाँ, भान कुँवरि चकोर
उहाँ बाहिर इंद्र बरसत, प्रलय घन लियें संग
'दास नागर' गोवर्द्धन तर, इहाँ बरसत रंग
—पद प्रबोध माला ३५, उत्सवमाला १००

उत्सवमाला मे 'गोवर्द्धनोत्सव' का पूरा एक प्रकरण ही है, जिसमे चार दोहे और ६ पद है।

जे बंसी के भार सौ, झुके जात सुकुवार
तिन प्रिय ब्रजजन के लियै, कर पर धरचौ पहार

नागरीदास के १६ कवित्त ग्रंथों मे से एक है—'गोवर्द्धन धारण के कवित्त', जिसमे ७ कवित्त है।

यही नही उन्होने गोवर्द्धन का स्तोत्र भी लिखा है—

जयति गिरराज कृत छत्र ब्रजराज सुत
सहज सुर-राज-गति-गर्व-हारी
वर्य हरिदास जन, घोष सुख रास हितु,
सर्वदा हरित हुल्लासकारी
सकल रस वर्द्धनं, देव गोवर्द्धनं,
प्रणत इंद्रादि सुरलोक चारी
विपुन मधिनायकं, भूमि छवि भायकं
पायकं नील मणि पीत प्यारी
परम प्रिय हेत संकेत सुख कंदरा
तहाँ निस दिवस बिहरत विहारी

उपसहार—

भापा वाती नेह जुत, लोय श्लोक प्रकास
ग्रंथ 'भक्ति मग दीपिका', कियो नागरीदास २०१

फलश्रुति—

पढे सुनै या ग्रंथ कौं, मन दैं सरस सुठीन
भक्ति पंथ सूझै तिन्है, पहुँचै प्रीतम भौन २०२

रचनाकाल—

समत अष्ट दस सत जु द्वे, क्वार तीज गुरुवार
रूप नगर बिच, कृष्ण पछ, भयो ग्रंथ विस्तार २०३

(१२) पद प्रबोध माला—(१८०५ पौप)

मंगलाचरण—

मेरे येई वेद व्यास
श्री हरिवंस 'रु व्यास, गदाधर परमानंद नँददास १

रचनास्थान—

इंद्रप्रस्थ जमुना निकट, भवन पुलिन ढिग चार
तिहि ठा पद रचना करा, मो मति कै अनुसार ३८

रचनाकाल—

अष्टादस सत पंच है, वरस पौप सुदि मास
पद प्रवोध माला कियो, ग्रंथ 'नागरीदास' ३६

(१३) श्रीरामचरित्र माला—(सं० १८०६)

मंगलाचरण—

सियाराम पद ध्याय कैं, कोमल कमल नवीन
रामचरित माला रचूँ, चुनि चुनि पद प्राचीन १

फल-श्रुति—

पढै सुनै यां ग्रंथ कूं, घरी एक दिन जाम
जाके हिय-नित प्रति वसो, सियाराम अभिराम

रचनाकाल—

संमत अष्टदस सत जु पट, हिंडनि सलिता तीर
'नागर' पद चुनि चुनि कियो, ग्रंथ रत रघुवीर

१४) फाग विहार—(सं० १८०८ चैत्र)

मंगलाचरण—

फाग बावरे दिननि के, रूप बावरे छैल
रंग भरे रस बरसिए, मो रसना की गैल १

विषय प्रवेश—

नव मैं मुख्य सिंगार रस, रसिकनि हिये सुहात
सो मतवारे फाग मै, ताकी बरनौ बात २

उपसंहार—

जाकौ इहि रस फाग सौ, तनकहु हुवो न हेत
खाल ओढ सो मनुष की, भयो मुलम्मा प्रेत ४४

रचनाकाल—

संमत अष्टदस सत जु पुन, अष्ट वर्ष मधु मास
ग्रंथ गंग-तट कृष्ण पच्छ, कियो 'नागरीदास' ४८

(१५) जुगल भक्त विनोद—(सं० १८०८ माघ)

मंगलाचरण—

भक्तनि कौ अति हरिहि प्रिय, हरिही प्रिय निज भक्त
सिर नाऊँ तिनके चरन, हरन दुसह दुख जक्त १

विषय-प्रवेश—

कृष्ण भक्त-वत्सल प्रगटि, भक्त हेत अवतार
तिनकौ, तिनके भक्त कौ, कहूँ सुजस श्रुत-सार २

उपसंहार—

अंतर की जानत सबै, सुदर परम प्रवीन
क्यो विसरै ऐसो प्रभू, भक्त जनन आधीन १६

रचनाकाल—

अष्टादस सत अष्ट पुन, संबत माघ सु मास
जुगल भक्त गुन ग्रंथ यह, कियो नागरीदास २०

रचना-स्थान—

निकट कमाऊँ परवतनि, विकट विटप की भीर
ग्रंथ रचना भई, नदी कौसकी तीर २१

(१६) वन विनोद—(सं० १८०६ चैत्र)

मंगलाचरण—

श्री नंदलाल गोपाललाल जयति
ब्रज वासनि की पद राज ध्याऊँ
नंद कुँवार कतूहल गाऊँ

उपसंहार—

मथुरा लीला द्वारका, डारी मन पग पेलि
वसो 'नागरीदास' हिय, ए ब्रज ग्वैई केलि २०

रचनाकाल—

संमत अठारा सै जु नव, कृष्ण पच्छ, मधु मास
'वन विनोद' कल ग्रथ यह, कियो 'नागरीदास' २१

(१७) बाल विनोद—(सं० १८०६ आश्विन)

मंगलाचरण—

हिय धरि नंद कुँवार, वरनौं वाल विनोद इक
नंद महर के द्वार, चहल पहल नित खेल की १

उपसंहार—

वाल केलि कहँ लगि कहौं, जे जे करत गुपाल
ब्रह्मादिक पछतावही, हम न भए ब्रज ग्वाल ३३
नंद गाँव ब्रज वालकनि, देखत बढ़्यो हुलास
कीनौं 'वाल विनोद' यह, ग्रंथ 'नागरीदास' ३४

रचना काल—

समत अष्टदस सत जु नव, मास अस्विन भृगुवार
तिथि पष्ठी अरु सुकल पख, रच्यौ ग्रन्थ विस्तार ३५

(१८) वन-जन-प्रशंसा—(सं० १८०६ माघ)

मंगलाचरण—श्री वृंदावन स्तुति

जैति वृंदा विपुन विस्व वंदन मही—१

रचनाकाल—

अष्टादस सत दस जु नव, संवत माघ सुमास
वन जन प्रसंस कल ग्रन्थ यह, कियो नागरीदास ७१

(१९) तीर्थानन्द—(सं० १८१० माघ)

प्रस्तावना—

परसाए ब्रज आदि दै, कहूँ 'तीरथानंद'
जन 'भिलाष पूरन करन, पूरन श्री ब्रजचंद ३

कामना—

गउर सांवरे रसिक दोउ, यह दीजै सुखरास
कबहुं 'नागरीदास' अब, तजै न ब्रज को बास २१२

रचनाकाल—

माघ कृष्ण दस सत जु दस, बिच वृंदाबन वास
ग्रन्थ 'तीरथानंद' यह, कियो 'नागरीदास' २१३

(२०) सुजनानंद—(सं० १८१०)

मंगलाचरण और प्रस्तावना—

श्री नंद-नंदन वृषभान-नंदिनी जयतां

वंदौं ब्रज के चंद द्वै, गौर स्याम सुखरास
सिगरो ब्रज जगमग रह्यो, जिनकैं रूप उजास १
इनही के परकर सबैं, ए ब्रजवासी जानि
तिनकी इच्छा तैं कहूँ, ग्रंथ श्रवन-सुखदानि २

ब्रज-वासिनि की पद-रज ध्याऊँ
ब्रज ही की कछु लीला गाऊँ
जो देखी मैं अपने नैना
सो 'ब जथामति बरनौं बैना ३

उपसंहार—

यह उच्छव अद्भुत रच्यो, धन्य धन्य अनुराग
भली करी संपति सफल, 'रूपराम' बड़ भाग ३२
सब विधि नाही कहि सक्यो, वहुत रही अवसेस
कही जथामति रीझ बस, 'नागर' उत्सव देखि ३२

रचनाकाल—

समत अष्टदस सत जु दस, बरसाने के बास
ग्रंथ सु 'सुजनानंद' यह, कियो 'नागरीदास' ३४

ये २० रचनाएँ ऐसी हैं जिनमें ग्रंथ के लक्षण घटते हैं और इनमें से अधिकांश को कवि ने स्वयं ग्रंथ संज्ञा दी है। इनके अतिरिक्त भी कुछ रचनाएँ ऐसी है, जिन्हे ग्रन्थ कहा जा सकता है।

हमने नागरीदास की समस्त रचनाओं को ६ विभागों में विभक्त किया है। प्रथम विभाग पदावली का है। इसमे कुल ८ ग्रन्थ है। इन आठो मे से निम्नांकित चार ऊपर के २० ग्रन्थों मे है—

(१) पद प्रबोध माला, (२) वन-जन प्रशंसा, (३) गोपी-प्रेम प्रकाश, (४) श्री रामचरित्र माला।

निम्नांकित ४ शेष रह जाते है—

(१) व्रज लीला, (२) छूटक पद, (३) उत्सवमाला, (४) पद मुक्तावली। ये चारों ग्रंथ कहे जाने योग्य हैं। व्रजलीला के प्रारंभ में यह लेख है—

"श्री नंद-सुत गोपीजन-वल्लभो जयति
दसम स्कंध के पूर्वार्द्धानुसार श्री व्रज-लीला"

इस ग्रंथ मे स्पष्ट ही सुव्यवस्था है। इसमे २१ वडे पद है। कृष्ण भक्त कवियों के पदो का विभाजन दो प्रकार से किया जाता है—(१) वर्षोत्सव के पद, (२) नित्य कीर्तन के पद। 'उत्सवमाला' में नागरीदास जी के वर्षोत्सव के पद संकलित है और 'पद मुक्तावली' मे नित्य कीर्तन के। दोनो का आकार भी नागरीदास की समस्त रचनाओं से वडा है। अतः इन्हें ग्रन्थ संज्ञा दी जा सकती है। 'छूटक पद' फुटकर पदो का ऐसा संग्रह है, जिसमे लीला-गान नही है। इसमें प्रायः शांत रस की रचनाएँ है; नीति है, वैराग्य है। पद संख्या भी १५५ है। अतः इसे भी ग्रन्थ संज्ञा दी जा सकती है।

दूसरा विभाग दोहावली का है। इसमें कुल १६ रचनाएँ है। इनमें से एक मनोरथ मंजरी ऊपर के बीस ग्रंथो में सम्मिलित है। निम्नांकित १६ तो वस्तुतः विभिन्न शीर्पको पर छोटी छोटी रचनाएँ है, जिनमे से प्रायः सभी 'पद-मुक्तावली' मे अंतर्भुक्त है। ये भिन्न भिन्न अनुक्रमो के प्रारंभ में दी गई है।

१. प्रात रस मंजरी	१७	२. भोजनानंद अष्टक	८
३. जुगल रस माधुरी	१२	४. फूल विलास	१२
५. गोधन आगम	११	६. दोहनानंद अष्टक	९
७. लगनाष्टक	८	८. फाग विलास	३०
९. ग्रीपम विलास	२१	१०. पावस पचीसी	२५
११. गोपीवैन विलास	४६	१२. रास-रस-लता	२७

१३. रास अनुक्रम के दोहा	६	१४. रैनि रूपारस	२५
१५. सीत-सार	१४	१६. इश्क चमन	४५

इन सोलहो की सम्मिलित दोहा-संख्या ३१६ है। इन्हे ग्रंथ की संज्ञा देना ठीक नहीं। दोहो के दो ग्रन्थ शेष रह जाते है—(१) छूटक दोहा—७५ दोहा; (२) छूटक दोहा मजलस मंडन—१२२ दोहा। ये दोनों संग्रह ग्रंथ है। छूटक दोहा मे नोति, भक्ति आदि के फुटकर दोहे हैं और छूटक दोहा मजलस मंडन मे शृंगार ही विशेष रूप से है। 'मजलस मंडन' का अर्थ है 'सभा शृंगार' या 'सभा विलास'। इस ग्रंथ का नाम केवल मजलस मंडन रहे तो ठीक, एक ग्रन्थ का नाम छूटक दोहा पहले ही से हैं। अतः इसके नाम मे भी 'छूटक दोहा' का योग ठीक नहीं। इन दोनों को ग्रंथ कहा जा सकता है।

तोसरा विभाग है कबित्तावली का। इसमें कुल १६ ग्रन्थ है। जिनमें से १५ तो विभिन्न शोर्षको पर छोटो छोटी रचनाएँ हैं। इन्हे ग्रंथ नहीं कहा जा सकता—

१. श्री ठाकुर जी के जन्मोत्सव के कवित्त	८
२. श्री ठकुरानी जी के जन्मोत्सव के कवित्त	१७
३. सांझी के कवित्त	४
४. सांझी फूल बीननि समै संवाद अनुक्रम	११
५ रास के कवित्त	१७
६. रास अनुक्रम के कवित्त	४
७. चाँदनी के कबित्त	५
८ दिवारी के कवित्त	४
९. गोवर्द्धन धारण के कबित्त	७
१० वसंत वर्णन के कबित्त	३
११. होरी के कबित्त	२३
१२. फाग खेल समै संवाद अनुक्रम	११
१३ फाग गोकुलाष्टक	८
१४. हिंडोरा के कवित्त	७
१५. वर्षा के कवित्त	९
	१३८

इन १५ मे छठाँ है 'रास अनुक्रम के कवित्त'। जिसमे ४ कवित्त हैं। ये सभी 'रास के कवित्त' मे अंतर्भुक्त है। इसीलिए इस ग्रंथ को स्वतन्त्र रूप से 'कवित्तावलो' के अन्तर्गत नही दिया गया है।

'छूटक कवित्त' मे १०६ छंद हैं, जो भिन्न भिन्न विषयो पर रचे गए फुटकर कवित्तो का संग्रह है। जिस प्रकार 'छूटक पद' और 'छूटक दोहा' तथा 'छूटक दोहा मजलस मण्डन' को ग्रथ स्वीकार किया गया है, उसी प्रकार छूटक कवित्त को भी ग्रंथ माना जा सकता है।

चौथा विभाग है—एक छंद रचनावली। इसमे निम्नाकित ७ रचनाएँ हैं—

१. वैराग्य वटी	९ माझ छद
२. सदा की माझै	१० माझ छन्द
३. वर्षा ऋतु की मांझै	६ मांझ छद
४. सरद को माझ	१ माझ छंद
५. होरी की माझै	५ मांझ छंद
६. अरिल्लाष्टक	८ अरिल्ल छंद
७. अरिल्ल पच्चीसी	२५ अरिल्ल छंद
	५६ छंद

ये सभी विभिन्न शीर्षको पर रचित फुटकर रचनाएँ है। इनमें से किसी को ग्रन्थ की संज्ञा नहीं दी जा सकती।

पांचवां विभाग है—बहु-छन्द-रचनावली। इसमें कुल १७ रचनाएँ हैं, जिनमें से १४ बीस वाली सूची में हैं। केवल निम्नाकित ३ रह जाती हैं—

१. गोविंद परचई
२. भोर लीला
३. देह दसा

इन तीनो को भी लघु ग्रन्थ की संज्ञा दी जा सकती है। भोर लीला और देह दसा में तो आदि मे मंगलाचरण एवं अंत में फल-श्रुति एवं उपसंहार भी हैं।

भोर लीला

मंगलाचरण—

प्रेमानन्द सरूप श्री, गुरु पद पंकज वंद
दंपति लीला भोर की, कछु वरनों रस कंद १.

उपसंहार—

हरि गुन संतनि की कृपा, दीनौं प्रेर हुलास
लीला भोर सुहावनी, कही 'नागरीदास' २६

फल-श्रुति—

दंपति लीला भोर की, पढ़ै सुनै जो भोर
जाके हिय निस दिन रहैं, झलकत जुगल किशोर

देह-दसा

मंगलाचरण —

श्री गुरु के पद पंकज ध्याय
देह दसा बरनौं चित लाय
उपजन हित वैराग नरन कौं
गेह मगन नहिं नरक परन कौं १

फल-श्रुति —

सुनै सुनावै जो कोऊ, यह गाथा चित लाय
'दास नागरी' जासु के, परै स्याम मग पाय २४

उपसंहार—

'देह दसा' बरनी इहै, मो मति कैं अनुसार
संत विवेकी सुनि सुकवि, लोज्यौ याहि सुधारि २७.

परिचई शीर्षक अनेक ग्रन्थ है। अनन्तदास विरचित परचई ग्रन्थ विशेष रूप से प्रख्यात है। 'गोविंद परिचई' को उसी परम्परा का एक लघु ग्रन्थ माना जा सकता है।

छठा विभाग है—गद्य रचनाओं का। ये दो हैं। इनमे से एक २० की सूची में है, दूसरा 'पद प्रसंग माला' है। इसमे पुराने भक्त कवियो के पदों के सम्बन्ध में प्रसिद्ध अनेक कथाएँ गद्य मे सकलित है। यह बड़ी रचना है और सुनियोजित है। अतः इसे भी ग्रन्थ संज्ञा देनी चाहिए।

इस छानबीन से सिद्ध हुआ कि नागरीदास की कम से कम निम्नांकित ३१ रचनाएँ ग्रंथ नाम की अधिकारिणी हैं, शेष ४४ विभिन्न शीर्षकों पर लिखित लघु रचनाएँ है। इन ३१ मे से २० का तो कवि ने रचनाकाल भी दिया है।

(१) पदावली—

१. पद प्रबोध माला
२. वन-जन प्रशंसा
३ व्रज लीला
४ गोपी-प्रेम प्रकास
५. श्रीराम चरित्र माला
६. छूटक पद
७. उत्सवमाला
८. पद मुक्तावली

(२) दोहावली —

१. मनोरथ मंजरी　　२. छूटक दोहा

३. मजलस मंडन

(३) कवित्तावली—

१. छूटक कवित्त

(४) बहु छंद रचनावली—

१. जुगल भक्त विनोद　　२ वन विनोद

३. बाल विनोद　　४. सुजनानन्द

५ गोविंद परचई　　६. तीर्थानन्द

७ व्रज वैकुंठ तुला　　८. व्रजसार

९. विहार चंद्रिका　　१०. भोर लीला

११. फाग विहार　　१२. निकुंज विलास

१३. भक्ति-मग-दीपिका　　१४. देह-दसा

१५. रसिक-रतनावली　　१६. कलि-वैराग्य-वल्ली

१७. भक्ति-सार

(५) गद्य रचनाएँ—

१. पद-प्रसंग-माला　　२. श्रीमद्भागवत-पारायण-विधि-प्रकाश

११. नागरीदास का पदावली-साहित्य

सामान्यतया नागरीदास जी के समस्त ग्रंथ पद-सागर, वैराग्य-सागर एवं शृंगार-सागर नाम से तीन खंडों में विभक्त किये जाते है। कुछ कहा नही जा सकता यह विभाजन स्वयं महाराज नागरीदास कर गये थे अथवा बाद में किसी दूसरे ने किया। जिसने भी किया हो यह विभाजन बहुत ठीक नही है। उदाहरण के लिए पद-सागर में वन-जन प्रशंसा, उत्सवमाला और पद-मुक्तावली ये तीन ग्रंथ संकलित है। इस ग्रन्थ मे उनके सभी पद संबन्धी ग्रंथ संकलित होने चाहिये थे, जब कि छूटक पद, रामचरित्र माला और पद-प्रबोध-माला, ये तीन ग्रंथ वैराग्य-सागर मे एवं ब्रज-लीला तथा गोपी-प्रेम-प्रकाश नामक दो ग्रथ शृंगार-सागर में संकलित हो गये है। यह विभाजन एक और दृष्टि से भी दूषित है। वैराग्य सागर एवं शृंगार-सागर का नामकरण चित्त की वृत्ति के अनुसार किया गया है, जब कि पद-सागर का नामकरण इसी आधार पर किया गया नही कहा जा सकता। पद-सागर के अंतर्गत यदि भक्ति-संबंधी रचनाओ का संकलन माना जाय, तो भी ठीक नहीं, क्योंकि वैराग्य-सागर एवं शृंगार-

सागर की रचनाएँ भी भक्ति संबंधी ही हैं। नागरीदास जी भक्त कवि थे और उन्होने लौकिक श्रृंगार की सृष्टि नही की है।

महाराज नागरीदास की रचनाएँ पर्याप्त विस्तृत है और इन्हें एक ही जिल्द मे प्रस्तुत करना सुकर नही। प्रस्तुत खंड पद-साहित्य प्रस्तुत किया जा रहा है। इसमें उपर्युक्त प्राचीन विभाजन का सारा पद-सागर एवं वैराग्य-सागर के छूटक पद, पद-प्रबोध-माला और राम चरित्र माला तथा श्रृंगार-सागर के व्रज-लीला एव गोपी-प्रेम-प्रकाश नामक ग्रंथ संकलित हैं। इस प्रकार इसमें कुल ८ ग्रंथ संकलित है। इनके दो ग्रंथ अप्राप्त कहे जाते है और चार 'नागर समुच्चय' को सूची मे नही है। पीछे सिद्ध किया जा चुका है कि ये छहो ग्रंथ 'पद-मुक्तावली' मे अंत-र्भुक्त हैं। इस प्रकार महाराज नागरीदास के ७५ ग्रंथो मे से १४ 'नागरीदास' के इस प्रथम खंड मे संकलित है।

१२. संपादन-विचार

संपादन-सामग्री

'नागरीदास' के संपादन मे जिस सामग्री का उपयोग हुआ है, उसका संक्षेप मे आवश्यक उल्लेख मु, स, या और य नाम से हुआ है। इनका विवरण नीचे दिया जा रहा है।

मु—मु 'मुद्रित' का संक्षिप्त रूप है। इसका अर्थ है मुद्रित प्रति। नागरीदास जी की समस्त रचनाओं का प्रकाशन १८६८ ई० में बंबई से 'नागर समुच्चय' नाम से हुआ था। यही मुद्रित प्रति या 'मु' आदि से अंत तक 'नागरीदास' के संपादन का प्रमुख आधार रही है।

स—काशी नागरी प्रचारिणी सभा के आर्य-भाषा-पुस्तकालय मे सुरक्षित ४६३।१० संख्यक हस्तलेख को 'सभा' के नाम पर 'स' के द्वारा संकेतित किया गया है। इसमे नागरीदास जी द्वारा संकलित 'पदमुक्तावली' है।

या—यह उक्त सभा के याज्ञिक संग्रह का ५१।१० संख्यक हस्तलेख है। 'या' याज्ञिक संग्रह का संक्षिप्त रूप है। यह बड़ा संग्रह है। इसमे व्रजलीला, गोपी प्रेम प्रकाश, छूटक पद आदि रचनाएँ है।

य—यह उक्त सभा के याज्ञिक संग्रह का ५०।१० संख्यक हस्तलेख है। इसमे केवल कवित्त ग्रन्थ संकलित है। यह 'या' से लघुकाय है। अतः इसका संकेत 'य' के द्वारा किया गया है।

(१) पद-प्रबोध-माला

इस ग्रन्थ का संपादन 'नागर समुच्चय' के अंतर्गत मुद्रित ग्रन्थ के आधार पर किया गया है। इस ग्रंथ की कोई हस्तलिखित प्रति नहीं सुलभ हो सकी। गद्य में लिखित विवरणात्मक शीर्षक मूल ग्रंथ मे दिए हुए हैं, उन्हे यहाँ उद्धृत कर दिया गया है। प्रत्येक विवरण के प्रारभ मे 'अथ' और पद के अंत में 'इति' दिया हुआ है; इस 'अथ' और 'इति' को छोड़ दिया गया है।

(२) वन-जन-प्रशंसा

वन जन प्रशंसा की भी कोई हस्तलिखित प्रति नही सुलभ हो सकी। इसका भी संपादन 'नागर समुच्चय' के अंतर्गत मुद्रित ग्रन्थ के आधार पर किया गया है।

(३) व्रज-लीला

'व्रज-लीला' की हस्तलिखित प्रति सभा में सुरक्षित याज्ञिक संग्रह की ५।१।१० संख्यक ग्रंथावली में पृष्ठ २८—३४ पर है। याज्ञिक जी ने हस्तलेख के आदि मे संलग्न स्वरचित सूची मे इस ग्रन्थ का नाम 'श्रृंगार सार' दिया है, जो ठीक नही; ग्रन्थ का नाम व्रज-लीला ही है। इस ग्रन्थावली का नाम यद्यपि 'वैराग्य सागर' है, पर इसमें श्रृंगार सागर भी है। श्रीमद्भागवत-पारायण-विधि-प्रकाश 'वैराग्य सागर' का अंतिम एवं 'व्रज-लीला' 'श्रृंगार सागर' का प्रथम ग्रन्थ है। इस हस्तलेख मे इन दोनों ग्रन्थो के क्रमशः अंत एवं आदि मे अथवा दोनो के मध्य मे पृष्ठ २८ पर यह लेख है—

"इति श्री मद्भागन्त पारायन विधि प्रकास ग्रंथ संपूर्णम्।

(यह एक ग्रंथ की समाप्ति की सूचना देता है।)

श्री राधावल्लभ जयति (।) अथ सिंगार सार लिख्यते ॥ श्री नंद सुत गोपी जन वल्लभ जयति (।) ग्रंथ दसम स्कंध के पूर्वार्द्धनुसार श्री व्रजलीला (।) प्र (थ) मा नंद ग्रहौ जन्मोत्सव खड लिख्यते (।) राग सोरठा (।) पद ॥"

'व्रजलीला' के अत मे यह लेख है "ईति श्री वृजलीला पद प्रबंध संपूर्ण।"

स्पष्ट है ग्रथ का नाम 'व्रजलोला' ही है। 'सिंगार सागर' के स्थान पर प्रमाद से 'सिंगार सार' लिख उठा है, सागर का 'ग' छूट गया, और 'सागर' 'सार' हो गया।

'नागर समुच्चय' के अंतर्गत प्रकाशित 'व्रजलीला' और इस हस्तलिखित ग्रन्थ मे अद्भुत साम्य है। ऊपर जो अंश दिया गया है, वह मुद्रित प्रति में इस प्रकार है—

"श्री नंदसुत गोपीजन वल्लभो जयति

अथ

सिंगार सागर लिख्यते

व्रजलीला ग्रंथ

अथ दसम स्कंध के पूर्वार्द्धानुसार श्री व्रजलीला
प्रथम नंद गृह जनमोत्सव खंड लिख्यते।

राग सोरठ

पद ॥...... ...."

इन दोनो प्रतियो मे शब्दो की वर्तनी एक सी है, जैसे 'बहु' के लिए 'बहौ', 'पुहुप' के लिए 'पोहोप' आदि। हस्तलेख में जहाँ कुछ अंतर हो गया है, वह लेख-दोष के कारण है। पाठांतर केवल तीन है, जो मूल ग्रन्थ के साथ आगे पाद टिप्पणी मे दे दिए गए हैं। हस्तलेख के निम्नाकित पदो में कोष्टकातर्गत पंक्ति प्रमाद से लिखने से छूट गई है :—

५ (८), ७ (१०), ८ (६, १०), ६ (८), १४ (१०)' २६ (१०)।

(४) गोपी-प्रेम-प्रकाश

याज्ञिक संग्रह की ५१।१० जिल्द मे 'गोपी प्रेम प्रकाश' भी है। इस ग्रंथ के संपादन का आधार यह हस्तलेख और नागर समुच्चय रहा है। दोनो प्रतियों मे कोई अंतर नही है। हस्तलेख मे 'प्रथम प्रयोजन' को 'प्रयोयन' लिखा गया है, जो किसी भी प्रकार शुद्ध नही है। हस्तलेख में यत्र तत्र छूट है। पाठांतर पाद-टिप्पणी मे दे दिया गया है। ए पद सूरसागर के पदो से बहुत भिन्न है। सूरसागर के पाठांतर यत्र तत्र ही दिए गए है। इस ग्रन्थ मे सूरदास के अनेक पद है, जो सूरसागर मे सुलभ नही है। सूर के पदों के संपादन मे इस ग्रंथ का उपयोग आवश्यक है। इस ग्रंथ के संपादन मे सूरसागर का उपयोग दाल मे नमक के बराबर ही करना उचित है। और वही यहाँ किया गया है।

(५) रामचरित्र माला

इस ग्रंथ का कोई हस्तलेख मुझे सुलभ नही हो सका। इसके संपादन का आधार मुख्यतया 'नागर समुच्चय' रहा है। 'तुलसी' और 'सूर' के पदों का पाठ ठीक करने के लिए 'गीतावली' एवं सूरसागर नवम स्कंध का भी उपयोग किया गया है। इस ग्रंथ मे उद्धृत इनके पद उक्त ग्रंथों मे उद्धृत पदो से पर्याप्त पार्थक्य रखते हैं, पर पाठ हस्तलेख वाला ही दिया गया है। पाद टिप्पणी में उक्त ग्रंथो में दिया हुआ इन

पदों का क्रमांक दे दिया गया है। उत्सुक सज्जन दोनों को मिलाकर अंतर मे अवगत हो सकते है। प्राय: पंक्ति की पक्ति छोड दी गई है, बदल गई है, तुक भिन्न हो गए हैं। पाद टिप्पणी मे आवश्यक निर्देश दे दिया गया है।

(६) छूटक पद

इस ग्रंथ का आधार मुख्यतया 'नागर समुच्चय' ही है। ५१/१० संख्यक हस्तलेख में 'छूटक पद' भी है, पर न जाने क्यो यह ग्रंथ उक्त संग्रह में पूरा पूरा नही दिया गया है। हस्तलेख मे केवल प्रथम २७ पद है। मुद्रित प्रति से इसका अत्यधिक और आश्चर्यजनक साम्य है। यहाँ तक कि दोनों में छठें पद के पश्चात 'अथ राधावल्लभो जयति' लिखा हुआ है, और इसके बाद के पदो की क्रम संख्या पुनः एक दो से प्रारंभ की गई है। प्रथम २७ पदों के संपादन मे इस सामग्री का सदुपयोग कर लिया गया है और पाठांतर पाद-टिप्पणी मे दे दिए गए है।

(७) उत्सवमाला

इस ग्रंथ का संपादन 'नागर समुच्चय' के अंतर्गत प्रकाशित उत्सवमाला के आधार पर किया गया है। इस ग्रंथ की कोई हस्तलिखित प्रति सुलभ नही हो सकी। यह २५४ पदो का बड़ा ग्रंथ है। इसके ६७ पद 'पद-मुक्तावली' में भी उद्धृत है। पद-मुक्तावली की हस्तलिखित प्रति के आधार पर इन पदो का पाठ-शोधन कर दिया गया है और आवश्यक पाठातर भी पाद-टिप्पणी में दे दिए गए है। इन पदों को तुलनात्मक सूची आगे दी जा रही है।

पहले अंक उत्सवमाला के है, दूसरे पद मुक्तवाली के।

३८/४५	३९/४०	४०/४३,८२
४१/१३८	४२/१३९	४३/१८१
४४/१९०	४५/१९१	४६/२१७
४७/५८५	४८/२१७	६५/३७६
६६/३७७	६७/४५०	६८/४५३
६९/४५५	७०/४५९	७१/४६०,
७२/३८३	७३/२४८	७४/२४९
७६,९१/३१८	७७/३२०	७८/३२१
७९/६०३	८०/३८२	८१/३८१
८२/३८५	८३/५५०	८४/५५१
८५/६०१	८६/९४	८७/९५, ३७२

८८/३०५	८६/६०७	६२/३६५
६३/३६४	६४/३३६	१०१/७३२
११०/५११	१३६/६७	१८६/५४०
१६४/६००	२०५/४८	२११/४४४
२१३/४४८	२१४/४८४	२१५/४७९
२२१/४८३	२२२/४८५	२३०/६७२
२३४/६८३	२३५/६७४	२३६/६७४
२३८/६७७	२४२/६८२	२४३/६७६
२४४/६८०	२४५/६८१	२४६/६८६
२४८/६८४	२४६/६६७	२५०/६६८
२५१/६७०	२५३/६६६	२५४/६८७

पद-प्रबोध-माला के निम्नाकित सात पद उत्सवमाला मे भी हैः—

६१/२८, ६१/२६, ६३/३०, ६४/३१, ७०/३६, ७१/३७, १००/३५।

प्रथमांक उत्सवमाला के है और द्वितीयाक 'पद-प्रबोध-माला' के।

इसी प्रकार राम-चरित-माला के भी प्रथम एवं द्वितीय पद इस उत्सवमाला में २२७, २२८ संख्याओं पर दुहरा उठे हैं।

इस प्रकार ६७+७+२=७६ पदो का संपादन कर दिया गया है और २५४ पदों मे से १७८ पद ही असंपादित जा रहे है। पर इनके अर्थ आदि पर भली भाँति विचार कर लिया गया है।

(८) पद-मुक्तावली

पद मुक्तावली नागरीदास जी का सबसे बड़ा ग्रंथ है। 'नागर समुच्चय' के अंतर्गत प्रकाशित 'पद-मुक्तावली' के अतिरिक्त इसकी एक हस्तलिखित प्रति भी प्राप्त है। यह मयाशंकर जी याज्ञिक की प्रति है और सभा के याज्ञिक संग्रह मे ४६३/१० संख्या पर निबंधित है। इस जिल्द में नागरीदास जी का एक और ग्रंथ 'निकुंज विलास' भी है। प्रति ७½ इंच लंबी और ५ इंच चौडी है। लाल स्याही की दुहरी लाइन से चारो ओर हाशिया छोडकर बीच मे बारीक कलम से लिखा गया है। लिखे गए अंश की लंबाई चौड़ाई ५½ इंच × ३ इंच है। प्रत्येक पृष्ठ में १८ पंक्तियाँ हैं। प्रति की लिखावट तो साफ है ही, शुद्ध भी बहुत है। जहाँ कही कुछ छूट हो गई है, हंसपाद लगा दिया गया है और हाशिये पर छूटा अंश दे दिया गया है। हंसपाद

: पर, नीचे या दोनो स्थलो पर लगाया गया है। यत्र तत्र हल्‌तल का भी प्रयोग हुआ है।

वर्तनी के संबंध मे दो तीन बातें ध्यान आकृष्ट करती हैं। 'व' को सर्वत्र 'व' लिखा गया है, कही भी पेट नही फारा गया है। 'व' ध्वनि की सूचना देने के लिए 'व' के नीचे विंदु लगा कर इस प्रकार 'व़' लिखा गया है।

अनुस्वार का प्रयोग बहुत हुआ है। जहाँ जहाँ लिखित प्रति में अनुस्वार है, वहाँ वहाँ मुद्रित प्रति में भी है। दोनों मे एक ही नियम स्वीकार किया गया है। चंद्र-विंदु का प्रयोग न तो हस्तलेख में है और न मुद्रित प्रति में। अनस्वार प्रयोग के जो सामान्य नियम प्रयुक्त प्रतीत हुए हैं, वे ए हैं—

(१) सानुनासिक वर्ण के पहले प्रयुक्त दीर्घ स्वरात वर्ण में—जैसे स्याम, वैन, रैन, लपटांनि, तांन, सुजान।

(२) सानुनासिक वर्ण के पहले ह्रस्व उकारांत में—जैसे सुंनि सुंनि; गुंनि गुंनि, धुंनि।

(३) शब्दात में यदि मानुनासक वर्ण केवल स्वर 'अ' से युक्त है, तो उसे अनुस्वार हीन रखा गया है, जैसे स्याम, नैंन। पर यदि ए दीर्घ स्वरों से युक्त हो गए है, तो इन्हे अनुस्वार से युक्त कर दिया गया है, जैसे—स्यांमा, नैंनां, नवीना।

वर्णों के जो रूप आज प्रचलित है, इस हस्तलेख में कुछ वर्णों के रूप उनसे भिन्न हैं। मात्राओ के लगाने का ढंग भी यत्र तत्र भिन्न है। 'ध' और 'ह' में 'उ' की मात्रा उस प्रकार लगाई गई है, जिस प्रकार हम 'र' में लगाते है—'रु'। 'झ' का रूप उलटे त (ꣳ) से बहुत मिलता जुलता है, अंतर केवल यह है कि ऊपर से नीचे आने वाली पाई 'ड' की भाँति जरा सी टेढी है। 'क' मे जव 'उ' की मात्रा लगती है, तब उसका रूप बहुत बदल जाता है। गोलाई का नीचे वाला हिस्सा गायब हो जाता है और आगे वाला अश र मे लगनेवाली छोटे 'उ' की मात्रा के समान न रह कर र मे ही लगनेवाली बडे 'ऊ' की मात्रा के समान हो जाता है। इसी प्रकार त मे जब उ की मात्रा लगती है, तब 'त' 'त्र' के रूप में रह जाता है। सुच्छ और पच्छ मे 'छ' मे 'च' नहीं मिलाया गया है। इन्हे 'सुछ' 'पछ' ही लिखा गया है। उच्चारण के अनुसार समझने की आवश्यकता है। भ का मत्था ऊपर न फोड कर बाईं ओर ही फोड दिया गया है 'न'। 'ढ' और 'ढ' में कोई भेद नहीं किया गया है। 'ड' और 'ड़' मे यत्र तत्र अंतर किया गया है। आजकल जैसा 'ड' लिखा जाता है, यहाँ वह रूप 'ढ' का है और 'ड' के लिए दूसरा रूप प्रयुक्त है। यह 'म' के समान है। आगे वाली पाई शिरोरेखा से नही मिली है, केवल नीचे मुड़ी है, ऊपर नहीं।

ग्रंथ में प्रतिलिपिकाल नहीं दिया गया है, पर प्रति पर्याप्त पुरानी प्रतीत होती है। नागरीदास जी का देहावसान सं० १८२१ मे हुआ था। हो सकता है कि यह प्रति उसी समय के आस-पास की हो। पुष्पिका मे प्रतिलिपिकर्ता का नाम नहर चंद दिया हुआ है। प्रतिलिपि स्वयं रूप नगर मे की गई। संपूर्ण पुष्पिका यह है—

"इति श्री पुस्तक श्री महाराजकुंवार श्री सांवत सिंघ जी दुतीय हरि समंध नाम श्री नागरीदास जी कृत पद मुक्तावली संपूर्ण ॥ लिखावंत कवर जी श्री सीताराम चिरंजोव। लिखतं मथे नहर चंद बासी रूप नगर मध्ये ॥"

मुद्रित एवं हस्तलिखित प्रति मे बडा अन्तर है। हस्तलिखित प्रति मे दूसरे भक्त कवियों की भी रचनाएँ प्रचुर मात्रा मे उद्धृत है। मुद्रित प्रति मे नागरीदास जी से संबंधित रसिक बिहारी (बनी ठनी जी, नागरीदास की उपपत्नी), राजसिंह (नागरीदास के पिता) और रूप सिंह (रूप नगर के संस्थापक, नागरीदास जी के पूर्वज) की रचनाएँ रहने दी गई है। इनकी रचना देने के पहले 'आन कवि कृत' लिख दिया गया है, शेष लोगो की रचनाएँ छांट दी गई है। प्रमाद से छँटने से पातीराम की एक रचना रह भी गई है—

'मेरो कह्यौ मान माननी'

यह इस ग्रन्थ मे ६०८ संख्या पर है। और 'नागर समुच्चय' मे पृष्ठ ४५८ पर। इन सब बातों से स्पष्ट है कि 'पद मुक्तावली' की मूल प्रति मे बहुत से कवियो की रचनाएँ थीं, 'नागर समुच्चय' के संपादक ने उन्हे निकाल दिया है। पर मै इन्हें निकाल देना ठीक नहीं समझता। इसके दो कारण है, एक तो ये रचनाएँ स्वयं नागरीदास द्वारा संकलित हैं, इसलिए इनका संकलन-मूल्य है। साथ ही इसमे ९६ अन्य भक्त कवियो की रचनाएँ संकलित है, जो अन्यत्र सहज-सुलभ नही। पान के साथ पलाश-पत्र भी राजा के हाथ पहुँच जाय, तो क्या बुरा है ? किंतु ये रचनाएँ पलाश-पत्र के समान तुच्छ नहीं हैं, इनका काव्यगत मूल्य अत्यधिक है। नागरीदास जी ने इन्हे साधारण रचनाएँ समझकर नहीं एकत्र किया है, और न ये साधारण रचनाएँ है हीं। इनमें प्रख्यात कवियों के भी अनेक नए पद है, जो अन्यत्र नही सुलभ हैं। इस दृष्टि से भी इनका मूल्य है। इन ९६ कवियों की रचनाएँ 'पद मुक्तावली' मे संकलित है, अतः ये सभी कवि या तो नागरीदास के पूर्ववर्ती है या सम-सामयिक। यह निर्णय भी इन रचनाओं के सहारे निकाला जा सकता है। अतः हर दृष्टि से इन रचनाओ को बने रहने देना ही समीचीन प्रतीत होता है, इनकी छँटनी ठीक नहीं।

हस्तलिखित और मुद्रित दोनों प्रतियो मे कोई नया प्रकरण प्रारंभ करने के पहले कुछ दोहे दिए गए है और दोहो के पहले यह लिख दिया गया है—"या अनुक्रम की

अलापचारी मे दै नै ए दोहा।" हस्तलिखित प्रति में दो अनुक्रमों के बीच कुछ स्थान निश्चित रूप से रिक्त छोड़ दिया गया है, मुद्रित प्रति में ऐसा नहीं किया गया है। मैंने विभिन्न अनुक्रमो को स्पष्ट रूप मे अलग प्रकट करने के लिए इनको विभिन्न अंक प्रदान कर दिए हैं और उनका नामकरण भी कर दिया है। कभी कभी नामकरण का आधार स्वयं इन प्रतियो में सुलभ है। जैसे छठे अनुक्रम के प्रारंभ मे यह लेख है –"इन दानलीला के पद के अनुक्रम की अलापचारी मैं दै नै ये दोहा।" स्पष्ट ही यह 'दानलीला संबंधी अनुक्रम है। अतः मैंने इसका नाम 'दान' रख दिया है। इन अनुक्रमो के प्रारंभ में जो दोहे दिए गए हैं, वे प्रायः नागरीदास जी के अन्य दोहा वाले ग्रंथो के है। उन ग्रन्थो के नाम पर भी मैंने अनेक बार इन अनुक्रमों का नामकरण कर दिमा है, जैसे 'प्रात रस मंजरी' (१, २, ३, ४), भोजनानन्द (१०), जुगल रस माधुरी (११, १३), दोहनानन्द (१७), फूल विलास (२०, २५), गोवन आगम (२४) आदि। प्रायः एक ही ग्रन्थ के दोहे अनेक अनुक्रमो के प्रारंभ में दिए गए हैं, ऐसी स्थिति में उन सभी अनुक्रमो का नाम भी मैंने एक ही रखा है, जैसे एक से लेकर चार तक के चारो अनुक्रमो का नाम मैंने 'प्रात रस मंजरी' ही रखा है। यहाँ यह स्पष्ट रूप से निर्देश कर देना उचित होगा कि एक अनुक्रम के सभी पद एक हो प्रसंग के नही है, यद्यपि होना यही चाहिए। हस्तलिखित प्रति में अनुक्रमों के प्रारंभ में जो दोहे दिए गए है, मुद्रित प्रति में भी वे हो हैं। कभो कभी कुछ दोहे छोड भी दिए गए है। जो दोहे छोडे गए हैं, वे नागरीदास के नहीं हैं और जान बूझकर निकाल दिए गए हैं। ए दोहे बिहारी के है। इन सब का निर्देश यथा-स्थान पाद टिप्पणी मे कर दिया गया है।

पद मुक्तावली की हस्तलिखित और मुद्रित प्रतियो में एक और भी बहुत बड़ा अन्तर है। यह अन्तर क्रम का है। मैंने हस्तलेख के ही क्रम का निर्वाह किया है। दोनो प्रतियो में अनुक्रम १ से २८ तक साम्य है। २९ वाँ अनुक्रम मुद्रित प्रति में नही है। तीसवें और इकतीसवें अनुक्रम फिर मिलते है। पर इकतीसवें अनुक्रम का उत्तरार्द्ध इसमें नही है। यह मुद्रित प्रति में अधूरा ही हैं। मुद्रित प्रति मे पद २९७–३०६ इकतीसवें अनुक्रम के अन्त मे नहीं है। पुनः ३२ से लेकर ४९ तक के अनुक्रम मुद्रित प्रति में नही है। पचासवाँ अनुक्रम मुद्रित प्रति में है, पर यह अधूरा है। इसमें न तो प्रारभ के दोहे है और न.४५० संख्यक पद। ४५३ वाँ पद और आगे के अंश इसमे हैं। इकतीसवें अनुक्रम का उत्तरार्द्ध इस प्रति में नही है, उसी प्रकार पचासवें अनुक्रम का पूर्वार्द्ध इसमें नही है। ऐसा प्रतीत होता है कि मुद्रित प्रति का आधार जो भी प्रति रही हो, वह बीच से खंडित थी। पुन. ५१ वाँ अनुक्रम मुद्रित प्रति मे नही है। इसके स्थान पर ६९ वाँ अनुक्रम आ गया है। इसके आगे दोनों

प्रतियो मे क्रम एक सा है। ६१ वे अनुक्रम के ५४३, ५४४ संख्यक पद तथा ६२ वें अनुक्रम के प्रारंभ के तीसों दोहे भी मुद्रित प्रति मे नही हैं। संभवत: यहाँ पुनः मूल प्रति के एक दो पन्ने खडित है।

६६४–६७ संख्यक चार पद ६७ वें अनुक्रम के अन्त मे मुद्रित प्रति मे है। पर हस्तलेख मे इनके ठीक पहले नए दोहे देकर नया अनुक्रम प्रारंभ कर दिया गया है। संपादित प्रति मे मैने यहाँ मुद्रित प्रति के अनुकूल इन चारो पदों को ६७ वे अनुक्रम के अन्त मे रखा है।

६७ वें अनुक्रम के पश्चात् जो ६८ वाँ अनुक्रम है, वह हस्तलेख के ही क्रम के अनुसार है। मुद्रित प्रति मे इसका स्थान ५१ वें अनुक्रम के पश्चात् है।

हस्तलेख मे अनुक्रम ६८, ६९ के बीच दोहे नही दिए गए है। पर मुद्रित प्रति मे वही दोहे है, जो हस्तलेख मे ६६४ वें पद के पहले हैं। इस प्रति मे वे दोहे पद ६७१ के पहले दिए गए है, ऐसा मुद्रित प्रति के आधार पर कर दिया गया है।

७४ वाँ अनुक्रम रेखता जुबान के ध्रुवपदो एवं दोहो का है। इसके अन्त मे स्पष्ट शब्दो मे ग्रन्थ समाप्ति की सूचना दी गई है। यह समाप्ति-सूचना मुद्रित प्रति मे भी है। हस्तलिखित प्रति की पुष्पिका पीछे उद्धृत की जा चुकी है। हस्तलिखित प्रति मे इसके आगे एक प्रकरण और है जिनमें तीन दोहे एवं सात पद हैं। तीनो दोहे एवं प्रथम तथा अन्तिम पद उत्सवमाला के अन्तर्गत श्री गुसाईं जी के उत्सव के प्रारम्भ के दोहे एवं पद (संख्या १११, ११२) हैं। इस प्रकरण का दूसरा पद भी उत्सवमाला का ९० संख्यक पद है। इस प्रकरण के भी अन्त में 'इति संपूर्ण ॥ श्री ॥ श्री ॥" आदि अनेक "श्री" लिखा गया है। यह अंश मुद्रित प्रति में भी है। पर प्रकरण प्रारम्भ करने के पहले नागरीदास जी की प्रशस्ति मे इनके भतीजे विरद सिंह का लिखा हुआ एक छप्पय दिया गया है। यह छप्पय पीछे प्रशस्ति उद्धृत किया जा चुका है। यहाँ सातवें पद के पश्चात इति संपूर्ण नहीं लिखा है। यहाँ पर एक सिलसिले से ४३ संख्या तक पद और दोहो का अंक दिया गया है; फिर नये सिरे से संख्या प्रारम्भ करके ५२ तक चलाया गया है; तदनंर फिर एक नया सिलसिला "श्री कृष्णाय नम:" लिखकर प्रारम्भ किया गया है। इस तीसरे सिलसिले के पद और दोहे वर्णानुक्रम से प्रस्तुत किए गए है। यहाँ भी एक क्रमांक २२ तक चला है, फिर नए सिरे से १ से १९८ तक दूसरा क्रमाक चला है। और तब "इती श्री नागरीदास जी कृत पद मुक्तावली संपूर्ण" लिखा गया है। इस प्रकार जहाँ हस्तलेख मे १० छन्दो के पश्चात केवल 'इति संपूर्ण' लिखा गया था, वहाँ मुद्रित प्रति मे ४३ + ५२ + २२ + १९८ = ३१५ छंदो के पश्चात यह "संपूर्ण" है। इतना ही नहीं इसके भी आगे तीन पद और चार दोहे है। इनका क्रमांक

इनसे भिन्न एवं परस्पर असंबद्ध है। सबके अन्त में समाप्ति की सूचना नहीं दी गई है।

हमने ७४ वें अनुक्रम के पश्चात वाले समापन को ही प्रमाण माना है और हस्त-लेख के आधार पर यहीं तक इस ग्रन्थ में स्वीकार किया है। इसके पश्चात मुद्रित प्रति में जो कुल ३२२ छंद आए हैं, उनमें १८६ पद हैं। और १३६ दोहे। इन १८६ पदों में से केवल ३८ नए हैं. शेष १४४ पद मुक्तावली में और ४ अन्य ग्रन्थों* में आ चुके हैं। इनमें से अधिकांश पद अनुक्रम ३२-४६ के भीतर आए हैं। हमने पद मुक्तावली के अन्त में इन ३८ पदों को 'शेपाश' शीर्षक के अन्तर्गत दे दिया है। १३६ दोहों में से भी अधिकांश पहले आ चुके हैं। जो दोहे एकदम नए हैं, उन्हें नागरीदास के द्वितीय खंड में दोहावली खंड के अन्त में 'शेपाश' शीर्षक से दे दिया गया है। प्रस्तुत ग्रन्थ केवल पदावली से संबधित है, अत इन्हे यहाँ स्थान नही दिया जा रहा है।

१३. पद-मुक्तावली में पूर्ववर्ती नागरीदासों के पद

पद-मुक्तावली में अन्य प्राचीन कवियो के पद भी संकलित हैं। इनमें नेही नागरीदास और आचार्य नागरीदास के भी कुछ पद संकलित हैं। पर जब तक इन दोनों पूर्ववर्ती नागरीदासो की समस्त रचनाओं का सुसंपादित संस्करण नहीं निकल जाता, यह निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता कि इनमें से कौन कौन रचनाएँ नेही नागरीदास और आचार्य नागरीदास की हैं।

शेपाश में संकलित निम्नलिखित दो पद नेही नागरीदास के हैं। श्री विजयेन्द्र स्नातक ने 'राधा वल्लभ संप्रदाय : सिद्धांत और साहित्य' (पृष्ठ ४८२) में इन्हें नेही नागरीदास की रचना के उदाहरण में उद्धृत किया है—

(१)

मेरी झूमत हथिया मद को
पिय हिय हिलग परी पग साँकल, मैमत अपनी सद को
सुरत नदी मरजादा ढाहति, मान गुमान अनुराग जलद को
'नागरीदास' विनोद मोद मृदु, आनँद वर विहार वेहद को

---

*१. मान कियौ चहँ पान न खात — छूटक कवित्त ५६
२. नागरि हसौंहैं मुख सौंहैं, रिसौहैं बार— ,, ४७
३. छीन कटि छूटे बार — रास अनुक्रम के कवित्त ६
४. मोर हूँ आया न भायो दुहूनि को विहार चंद्रिका ८२

(२)

मो पर करत हैं सखि नेहु
हौं तो जब उर धरौ मृदुल पद, मानत धनि करि देहु
तू कहि मो अनुचर आतुर कौं, अधर सुधा दै लेहु
'नागरीदास' अकुलाय अंक भरि, अँखियन बरस्यौ मेहु १७

इसी प्रकार निम्नांकित दो पद आचार्य नागरीदास के हैं। श्री नवनीत चतुर्वेदी ने इन्हे 'हरिदास-वंशानुचरित्र' नामक ग्रन्थ में (पृष्ठ ७३) आचार्य नागरीदास की कविता के रूप मे उद्धृत किया है।

(१)

प्रात समै दोउ उठे परजंक पर, सौरभ सरस स्वाद लपटात
लोचन ललित अरुन निसि जागे, सुरति अंत पुनि पुनि ललचात
अति रस मत्त सुरति सुख सागर, बचन रचन कहि मृदु मुसकात
'नागरीदास' दंपति रति बिलसि बिलसि सुख, ए न अघात

—शेषांश ६

(२)

अलमस्त रहैं अलबेले लाल, लाडली के रस माते
छकी छबि सों पलकै बर बरुनी, नैनन मे मुसकाते
मुख-अंबुज पर स्याम-मधुप, मकरंद पियत न अघाते
'दास नागरी' रूप रंग रस, अंग पियाले राते

—पद मुक्तावली ५८०

'हरिदास-वंशानुचरित्र' मे इन पदो का पाठ पर्याप्त भ्रष्ट है।

१४. नागरीदास की रचनाओं में पदों की पुनरावृत्ति

नागरीदास जी की रचनाओ मे पदों की पुनरावृत्ति भी प्रचुर मात्रा मे पाई जाती है। मेरा विचार था कि इन पदों की जहाँ जहाँ भी पुनरावृत्ति हो, वहाँ वहाँ पूरे पद न देकर केवल प्रथम चरण उद्धृत करके, जहाँ वे पहले आ चुके है, उसका निर्देश कर दिया जाय। पर माला संपादक से परामर्श करने पर यही निश्चित हुआ कि ग्रन्थो को ज्यों का त्यो दिया जाय। इस काट छांट से कोई विशेष लाभ नहीं।

यहाँ ऐसे पदो की दो सूचियाँ प्रस्तुत की जा रही हैं। पहली सूची ग्रंथ-क्रम से है और दूसरी पदो के वर्णानुक्रम से।

(१) ग्रंथानुसार पुनरावृत्त पदों की सूची

(पहली संख्याएँ पहले एवं दूसरी दूसरे ग्रंथ की हैं ।)

पद-प्रबोध-माला और छूटक पद—

१।२४, ५।२२, ६।५१, ७।४८, ८।५२, ९।२८, १०।१०,
११।४९, १२।४६, १३।४४, १४।२५, १५।२६, १६।४३, १७।२७,
१८।३८, १९।३९, २०।४०, २२।२३ =कुल १८ पद

पद-प्रबोध-माला और ब्रजलीला—

३२।७, ३३।८ =कुल २ पद

पद-प्रबोध-माला और उत्सवमाला—

२८।६१, २९।६२, ३०।६३, ३१।६४, ३५।१००, ३६।७०, ३७।७१
=कुल ७ पद

पद-प्रबोध-माला और पद मुक्तावली—

२७।२०२ =कुल १ पद

वन-जन-प्रशंसा और छूटक पद—

५७।१३७, ५९।११९, ६०।१२१, ६१।७४, ६२।११५,
६३।११८, ६४।८१, ६५।११६, ६६।१२२, ६७।८६, ६८।१३५ =कुल १७ पद

वन-जन-प्रशंसा और पद-मुक्तावली—

१।७२९, ६८।९१, ६९।९०, ७०।९२ =कुल ४ पद

राम-चरित्र-माला और उत्सवमाला—

१।२२७, २।२२८ =कुल २ पद

छूटक पद और पद-मुक्तावली—

३२।७३९ =कुल १ पद

छूटक पद और गोपी प्रेम प्रकाश—

१।४९, ४।४८, ५।४७ =कुल ३ पद

उत्सव-माला और पद-मुक्तावली—

३८।४५, ३९।४२, ४०।४३, ८२, ४१।११८, ४२।११९, ४३।१८१,
४४।१९०, ४५।१९१, ४६।१९२, ४७।५८५, ४८।२१७, ६५।३७६,
६६।३७७, ६७।४५०, ६८।४५३, ६९।४५५, ७०।४५९, ७१।४६०,
७३।२४८, ७५।२४९, ७६।३१८, ७७।३२०, ७८।३२१, ७९।६०३,
८०।३८२, ८१।३८१, ८२।३८५, ८३।५५०, ८४।५५१, ८५।६०१,

८६|९४, ८७|९५, ३७२, ८८|३०५, ८९|६०७, ९१|३१८, ९२|३९५, ९३|३९४, ९४|३३६, १०१|७३२, ११०|५११, १३९|६७, १८९|५४०, १९४|६००, २०५|४८, २११|४४४, २१३|४७८, २१४|४८४ २१५|४७६, २२१|४८३, २२२|४८५, २३२|६७२, २३४|६८३, २३५|६७४, २३६|६७५, २३८|६७७, २४२|६८२, २४३|६७९, २४४|६८०, २४५|६८१, २४६|६८६, २४८|६८४, २४९|६६७, २५०|६६८, २५१|६७०, २५३|६६९, २५४|६८७,

=कुल ६६ पद

उत्सवमाला और उत्सवमाला

७६|९१ =कुल १ पद

पद मुक्तावली और पद मुक्तावली—

९५।३७२, १३२।३११, १८९।२०८, ३०३।३१३, ३०४।३१४, ३२६।३३२, ३४५।४०१, ३४६।४०३, ३४७।४०२, ३५९।३६५, ३६०।७२५, ३७४।७२६, ४२४।५२६, ६४३।६५०, =कुल १४ पद

(२)

दुहराए पदों के प्रथम चरणों की वर्णानुसारी सूची

[संख्याओं के पहले प्रयुक्त अक्षरों का संकेत यह है—

प्र=पद प्रबोध माला छू=छूटक पद

व्र=व्रज लीला उ=उत्सवमाला

वन=वन जन प्रशंसा राम=राम चरित्र माला

गो=गोपी प्रेम प्रकाश

[जहां संख्याओं के पहले कोई संकेत नहीं है, वहां पद मुक्तावली समझना चाहिए]

नागरीदास

१. अब जिय काहे कूँ दुख पावे — प्र ८, छू ५२
२. अब तो यही बात मन मानी — वन ६१, छू ७४
३. अरी प्यारी राधा गति लेत अलबेलिय सुजान — ६०७, उ ८९
४. अरी रास मैं रंग भरी नचत सरस स्यामा प्यारी — उ ९२, ३९५
५. अवधपुर बाजत आज वधाई, — राम २, उ २२८
६. आजु राधे जू मोहन संग रंग भरी गावै — ३०३, ३१३
७. आजु सखी प्यारी जू स्यामहिं सिखावही — ६०३, उ ७९
८. आजु सखी रसिक सिरमौर नाचत भलै — ३८३, उ ७२
९. उतरे भूले तै सोभा सिंधु झकोझोरे से — ६८०, उ २४४

१५. देर आयद दुरुस्त आयद

मूल ग्रंथों की पाद-टिप्पणी मे अनेक शब्दों का अर्थ नही दिया जा सका है और अर्थ के स्थान पर प्रश्नवाचक चिह्न लगाकर छोड़ दिया गया है। कुछ स्थलो पर जो अर्थ दिया गया है, मुझे उस पर संतोष नहीं रहा है। अतः ग्रंथ के समग्र

रूप से छप जाने के पश्चात ऐसे दोनों प्रकार के शब्दो पर पुर्नविचार आवश्यक हो गया है।

१. वकुल—(पद प्रवोध माला २४; पृष्ठ १२)

छाक लीला का प्रसंग है। दोपहर मे घर से भोजन की सामग्री चरवाहो के खाने के लिए आ गई है। ग्वाल-वाल मंडलाकार वैठ गए है। उस समय—

कइक छीकानि, कइ फूल फल सिलनि पर,
कइक दधि मधु धरनि वकुल कल लैन गे।
किसलै दल, कदलि दल, जलज दल, जघनि पर,
धरत व्यंजन विविध, परम कौतुक पगे॥

'वकुल' शब्द ने पर्याप्त मंथन कराया है। आपटे के आधार पर पहले इसका अर्थ 'एक प्रकार का पेय' किया गया, पर तोष न हो सका। अतत: इसका एक दूसरा प्रयोग स्वय नागरीदास मे अन्यत्र (नागरीदास द्वितीय भाग के अंतर्गत भक्तिसार छंद ३, पृष्ठ ३४०) मिल गया, जो अर्थ को पूर्णतया खोल देता है—

सेवत विषम वन, वसन वकुल अंग,
भोग सौ उदास महा, जोग दरसावही।

स्पष्ट है यह 'वकुल' 'वल्कल' का तद्भव है। इसका अर्थ है पेड़ की छाल। कुछ ग्वाल वाल दधि और मधु रखने के लिए पेड़ो की छाल लेने गए।

२. नाट—(पृष्ठ २०, वन जन प्रशंसा, पद १७)

धन धन वृंदावन के भाट
'नागरीदास' बड़े घर के ए, कौन कर सकै नाट

नाट का अर्थ नाट्य दिया गया है, जो ठीक नहीं। यह नाट नटना से वनता है, जिसका अर्थ है अस्वीकार करना।

३. भुरट

कृष्ण कृपा गुन जात न गायो
गृह व्योहार भुरट को भारो, सिर पर सौ उतरायो

—वन जन प्रशंसा, पद ५८, पृष्ठ २८
—छूटक पद १३६, पृष्ठ १११

पृष्ठ २८ पर कोई अर्थ नही दिया गया है, पृष्ट १११ पर इसका अर्थ 'व्यर्थ' किया गया है। यह शब्द 'शब्द-सागर' तक मे नही है। विचार विमर्श से तै हुआ कि यह 'भृत्य' का तद्भव है और इसका अर्थ है सेवक। घर का काम काज हम स्वामी भावना से करते है, पर वस्तुत: वह भृत्य का काम है। प्रसाद जी ने 'स्कंद गुप्त' मे स्कंद गुप्त के द्वारा पहले ही कथनोपकथन में कुछ ऐसा ही भाव व्यक्त किया है।

४. पघर

हरि जू अजुगत जुगत करैंगे
मैन तुरंग चढे पावक बिच, नाहीं पघर परैंगे

—छूटक पद ८८, पृष्ठ १००

पहले मैन तुरंग का अर्थ कामदेव का घोडा समझकर 'पघर' का अर्थ 'प्रग्रह, पकड़ किया गया था। पर छप जाने मर 'मैन तुरंग' पर जब विशेष ध्यान गया, तब लगा यह तो मोम का घोड़ा है और 'पघर परैंगे' है 'पिघल पडेंगे।' मोम के घोड़े पर चढे हुए पावक में प्रवेश कर जायँ, फिर भी पिघलेंगे नही, वह प्रभु इस 'अजुगत' को भी 'जुगत' कर सकता है।

५. बाष

चकसोली के चना चुराए
गारी दै दौरी रखवारनि, ग्वारनि सहित गुपाल भजाए
हरे बूट दाबै बगलनि मैं, स्वास भरे बन गहवर आए
कहत आतुरे बोल, लोल दृग, हसत हसत सब बाष चढ़ाए

—छूटक पद १०६, पृष्ठ १०४

'बाष' शब्द का ठीक अर्थ न लगने के कारण मूल मे हस्तलेख के अनुसार ही मूर्धन्य 'ष' ही लिखा गया है, और अभिधान टिप्पणी मे इसे उचित ही 'बाख' कर दिया गया है। पर अर्थ के अभाव मे प्रश्नवाचक चिह्न लगाकर छोड़ दिया गया है। विचार विमर्श करने पर 'बाष' 'वक्ष' का तद्भव सिद्ध हुआ।

वक्ष > बक्ख > बाख।

यह शब्द 'शब्द-सागर' मे नही है।

चकसोली बरसाना के पास एक गाँव है। गोचरण करते समय गोपाल कुछ ग्वाल बालो के साथ इस गाँव मे चना उखाड़ने चले गए। कुछ लोग गायों की रखवारी करने के लिए बन मे ही रह गए। चना तो इन लोगो ने उखाड़ लिया, पर खेत की रखवालिन भी सचेत थी। उसने दौड़ाया और बाल गोपाल भाग चले। दौड़ने से उनकी सांस फूलने लगी, पर वे अपने साथियों के पास पहुँच ही गए और उन्होने 'शाबास जवान' कह कर इन चना-चोरो को हँसते हँसते उठाकर अपने वक्षों पर चढ़ा लिया—कंधे पर नही, पीठ पर नही, वक्ष पर, बाष पर।

६. **झकझोर** (पृष्ठ १११, छूटक पद १३८)।

इस शब्द का अर्थ छपने से छूट गया है। इसका अर्थ है किसी को पकड़ कर झकझोर देना, हिला देना।

७. घोलियाँ

तुझपर घोलियाँ वो, जसोदे घोलिया दँ सुनाय

—उत्सवमाला पद ११, पृष्ठ १२०

घोलियाँ का अर्थ प्रश्न-वाचक चिह्न लगाकर छोड़ दिया गया है। इसका अर्थ राजस्थानी कोश मे मिला। यह 'घोली' का बहुवचन है। घोली का अर्थ है 'निछावर'। कृष्ण जन्म का समाचार सुनकर गोपियाँ यशोदा को बधाई देने आई है और कहती है—अरी यशोदा, 'आज का दिन धन्य है, सभी वस्त्र आभूषण आज तुझपर निछावर है।

८. कलगा

सोहै मुख कमल पै भौहै लट भृग पांति,

नैन अलसौंहै कलगा की जनु पतियाँ

—उत्सवमाला ५०, पृष्ठ १३७

कलगा का अर्थ 'पुष्प विशेष' दे दिया गया है। अन्यत्र इसी ग्रंथ में इस शब्द का ठीक अर्थ मोर (मयूर) दिया गया है।

९-१०. दुदांमी इकतई

दुदांमी इकतई पोसे बसंती फेंटा कजबंद

—उत्सवमाला १४८, पृष्ठ १७७

दुदामी और इकतई दोनो को प्रश्नवाचक लगाकर छोड दिया गया है। दुदामी का अर्थ है दुसुत्ती, दुहरे सूत का बिना हुआ वस्त्र। और इकतई का अर्थ है एक तह वाला, वस्त्र जो दुपत्ता न गया हो।

११. मरवारि

रंग सांवला, जर्द दुपट्टा, उर मरवारि दा हार

—उत्सवमाला १४९, पृष्ठ १७८

'मरवारि' को टिप्पणी में प्रश्न-चिह्न लगाकर छोड़ दिया गया है। धोखा संबंध कारक के पंजाबी 'दा' (=का) के कारण हुआ। अर्थ हुआ कृष्ण के उर पर 'मरवारि' का हार है। वस्तुतः यहाँ पंजाबी 'दा' ही नही है, राजस्थानी 'री' (=का) भी है और मूल शब्द 'मरवा' मात्र है। मरवा मरुआ है, जिसे यहाँ काशी में दौना कहते है। दौना संस्कृत के 'दमनक' का तद्भव रूप है। यहाँ भी तुलसी और दौने के पत्तों की माला मेले ठेलो में पहनने को मिल जाती है। अस्तु, वनमाला धारण करने वाले वनमाली आज मरुआ के पत्तो की माला पहने हुए है।

१२. कूड़ो

बिच बृज नारयां रे झुंड, राधा रूप है कूड़ो
देखि छक्या पिय 'रसिक बिहारी', रह्या धीर धरि कूड़ो
—उत्सवमाला १८९, पृष्ठ १६४
—पद मुक्तावली ५३७, पृष्ठ ४२६

पृष्ठ १६४ पर कूड़ो को प्रश्न-चिह्न के साथ छोड़ दिया गया है। पृष्ठ ४२६ पर राजस्थानी शब्द कोश के आधार पर 'खलिहान में पड़ा अनाज का ढेर' अर्थ दिया गया है और कोष्टक मे लिख दिया गया है (यहाँ रूप-राशि)। अपने यहाँ भी 'कूरा' शब्द प्रचलित है, जिसका अर्थ है भाग, हिस्सा। किसी चीज जैसे अनाज, फल आदि के जब कई हिस्सेदार होते है, तब उनका हिस्सा बाँटकर अलग कर दिया जाता है। प्रत्येक भाग या हिस्सा 'कूरा' कहा जाता है। व्रज-बालाओं के बीच राधा का रूप सबसे सुदर है। अपने इस कूरे को, राधा को, देखकर रसिक बिहारी कृष्ण छक गए, मस्त हो गए और उस समय उन्होने किसी प्रकार अपने को सँभाल रखा।

यहाँ थोड़ा दूरान्वय दोष है—'पिय रसिक विहारी कूड़ो देखि छक्या, धीर धर रह्या।'

पहले मैने अन्न की राशि को लक्षणा के सहारे 'रूप राशि' मे परिवर्तित कर लिया था, पर अब तो बाँट बखरा लगकर सब ठीक हो गया है।

१३. तोत

स्वेद, कंप, रोमांच ह्वै, जान परत कछु तोत
झुकि झुकि झोटा मैं मिलै, हँसि कुवरि लजौंही होत
—उत्सवमाला पृष्ठ २१२, दोहा १६५ (पद २३४)
—पद मुक्तावली, पद ६८३, पृष्ठ ४७७

चौपरि मिस संकेत रचि, करत झगरई तोत
हित पक्के नाहीं हटै, फिर फिर कच्चे होत
पृष्ठ ३९३, दोहा १

बोल चलावति मुरलिया, कहा सुहाग को तोत
तोसो पिय टेढ़े रहत, हमसौं सूधे होत
—पृष्ठ ४३१ दोहा १२

पृष्ठ २ २, ४७७, ३९३, ४३१ पर मैने तोत का अर्थ क्रमशः टोटका; वहाना; ढेर, राशि; व्यंग दिया है। शब्द सागर मे इसके दो अर्थ दिए गए है—(१) खेल, (२) ढेर। ढेर अर्थ मे 'तोत' फारसी 'तोदह' का तद्भव रूप है। ऊपर के प्रथम दो उद्धरणों में 'खेल' से काम चल जायगा और तीसरे उद्धरण में ढेर या आधिक्य से। अतः टोटका, बहाना, व्यंग आदि का वहाना अब ठीक नही।

१४. भयानैं

लरिका बोलि सम्हारि और कोउ मांही इहां राधेजू आपी
सकल भयानि को राजा वृषभान नृपति जाको वापै
—पृष्ठ २३८, पद मुक्तावली, पद ४०

देख भयानौ भान को, ताको बाँह बसै व्रजराय
यह बास रखायौ रावरे, तहाँ सुख चरती गाय
—पृष्ठ २९७, पद १८८

प्रथम स्थल पर मैंने भयानै का अर्थ 'स्थान विशेष' और दूसरे स्थल पर 'वृषभानु का राज्य' किया है, जो ठीक ही है। पर यह भयान (भयानक) भयानै' या 'भयानौं' अन्यत्र कहीं देखने सुनने में नही आया। विचार विमर्श से स्वीकार हुआ कि आज का बयाना जो भरतपुर के पास नगर और रेलवे स्टेशन है, यही भयाना है। यह व्रज मंडल के अंतर्गत है। संभवतः इसीको पुराकाल मे वृषभानु का राज्य भयाना कहा जाता था।

१५-१६. कमली, पैरणां

मैं की जाणू कमली पैरणां, वो इस्क कहर दरियाव
—पद मुक्तावली ५४, पृष्ठ २४१,

पद मुक्तावली में नागरीदास एवं अन्यों के भी अनेक पंजावी में रचित पद रचित है, जो थोड़ी सी कठिनाई प्रस्तुत करते है। इनका अर्थ करने में निम्नांकित शब्दावली से पर्याप्त सहायता मिलती है—

असाढ़ी = हमारी	तुसाढ़ी = तुम्हारी
मैंड़ा = मेरा	तैंड़ा = तेरा
असानूं = हमको	मैंनूं, मुजनूं = मुझको
तु जनूं = तुझको	यननूं = इनको
वेखन = देखना	आखां = कहा
गल = बात	गल्लां = बातें
जित्थूं = जहाँ	तित्थूं = तहाँ
इत्थूं = यहाँ	कित्थू = कहाँ
हुण = अब	नी = री, अरी
दा, दी, दे = का, की, के।	नूं = की

क्रिया मे ता, ती, ते के स्थान पर दा, दी, दे रूप मिलता है, जैसे खाता = खादा। न का ण प्रायः मिलता है। इस सामान्य अभिज्ञता से मैंने आरंभ किया, पर इससे ही काम न चला। कुछ शब्दों का अर्थ संभव न हो सका। इसी प्रकार के दो शब्द हैं कमली

और पैरणां । कमली को तो मैने प्रश्न चिह्न के साथ छोड़ दिया और पैरणां का अर्थ तैरना कर लिया, क्योकि यहाँ दरिया है ही । पर जांच पड़ताल से यह अर्थ अशुद्ध निकला । 'पैरणां' पंजाबी मे बहन को कहते है । और 'कमली' पगली को । अब उद्धृत चरण का अर्थ हुआ—हे बहन, मै पगली भला क्या जानूं क यह इश्क विपत्ति का समुद्र है ।

१७ अमां

अमा नीधड़क मैनूं बावल मारै, भाई दै दै गाल

—पृष्ठ २४६, पद ५८

'अमा नीधड़क' का अर्थ किया गया हैं 'मनमानी और निधडक ।' 'अमां' का निधड़क 'मनमानी' अर्थ करना मनमानापन ही है । अमां अम्मा या मां ही है । इसका वही अर्थ है जो अपभ्रंश की 'अम्मीए' अथवा व्रजी को 'माई' का है । अतः यह अमा सखी के अर्थ मे प्रयुक्त हुआ—हे सखी, बाप निधड़क मारता है और भाई गालियाँ देता है ।

१८. सांनू

अन्दर गए, हुये अन्दर दे, सांनू ज्वाब न स्वाल —पृष्ठ २४६, पद ५६

'सानू' पंजाबी शब्द है । इसका अर्थ है 'हमसे' । इसे प्रश्न-चिह्न लगा कर छोड़ दिया गया है ।

१६. बूड़े, भावन, नाल

बूडे उलंभे लांवां लोकां, भावन इश्क सरांही
'चंद' गोविंद नाल जिंदलगी, रँगी प्रेम रँग माही

—पृष्ठ २४७, पद ६३

बूड़े को प्रश्न-चिह्न लगाकर छोड दिया गया है और भावन को सरल समझ कर । वस्तुतः 'बूडे' 'बुडे' है । यही छंद की गति के भी अनुकूल है । इसलिए शुद्धिपत्र में 'बूडे' 'बुड़े' कर दिया गया है । बुडे का अर्थ है बुरे और भावन का अर्थ है भले । बुरे लोग इश्क का उपालंभ देते है और भले लोग उसकी सराहना करते है । 'नाल' का अर्थ 'लिए' किया गया है, जो अन्दाजिया था । इसका अर्थ होता है साथ । मेरे प्राण गोविंद के साथ है, वे प्रेम के रंग मे रँगे हुए हैं ।

२२. सोफी नूं की खबर असाढ़े गाढ़े इस्क असर दी

—पृष्ठ २५३, पद ७६.

'नूं' को प्रश्न-चिह्न के साथ छोड दिया गया है। इस पंक्ति का अर्थ है—सूफी को हमारे गाढ़े इस्क के असर की क्या खबर ? भगवान के प्रेम में डूबे रहने

वाले सूफी भी हमारे प्रेम की इस प्रगाढ़ता का अनुभव नहीं कर सकते । नूं = को । की = क्या ।

२३. जो मुड़ि वेखै तोसी जीवां —पृष्ठ २५३, पद ८०

तोसी को प्रश्न-चिह्न के साथ छोड़ दिया गया है । यह पंजाबी तुसी है जिसका अर्थ है आप । हे मेरे महबूब, तदि आप मेरी ओर मुड़कर देख लें, तो मैं जी जाऊँ ।

२४. लावनि

लावनि ढिग चमकत जरी पायजेब पन्नानि

—पृष्ठ ३१७, दोहा ४

यहाँ लावनि लावण्य के अर्थ में नहीं है । यह शब्द नागरीदास में अन्यत्र भी प्रयुक्त हुआ है । इसका अर्थ घांघरे का घेरा प्रतीत होता है ।

२५. सारँग-रिपु

मेरे लोचन लालची भये

सारँग-रिपु के रहत न रोके, हरि सरूप गिधए

—पृष्ठ ३२८, पद २७९.

सूर के इस पद में आए सारँग-रिपु का अर्थ पहले नहीं दिया जा सका । सारँग के अनेक अर्थ हैं । यहाँ यह दीपक के अर्थ में प्रयुक्त है । दीपक का रिपु है नारी का अञ्चल । नारी जिस अंचल की ओट में रखकर दीपक की रक्षा करती है, उसी अंचल से वह उसे बुझा भी देती है । अतः सारंग रिपु हुआ अंचल । लक्षणा से अंचल से अभीष्ट हुआ घूंघट ।

२६. चनक

आधी रात चनक मूंदि, विकल चंद्र चंद्रिका मैं,

ह्वै रही थकित कुंज कोकिला लजावैं ।

—पृष्ठ ३३३, पद २९३

शब्द कोषों में चनक का केवल 'चना' अर्थ दिया हुआ है । नागरीदास ने कई स्थलों पर इसका प्रयोग आंखो की पुतली के अर्थ में किया है, मैंने सर्वत्र यही अर्थ दिया है । पर चनक का यह अर्थ निकला कैसे ? इस पर विचार विमर्श से निश्चय हुआ कि चनक कनक से बना है । कनक और कनीनिका आँख की पुतली के अर्थ में संस्कृत के शब्द है ।

२७. जील

'नागरिया नागर' के जील की तरंगनि सों

रंग भरे वृंदावन मोर कुहकावे —पृष्ठ ३३३, पद २९३

जील का अर्थ 'संगीत की तरंग' दिया गया है । यह फारसी 'जीर' से बना है ।

इसके दो अर्थ 'शब्द सागर' मे दिये गए है—(१) धीमा शब्द, मध्यम स्वर, नीचा सुर। (२) तबले या ढोल का बायां। यहाँ प्रसंग से दूसरा अर्थ ही ठीक प्रतीत होता है। बाये तबले की जोर की ध्वनि को सुनकर वन-मोरो को घन-गर्जन का भ्रम हो जाता है और वे कुहकने लगते है।

२८ बायक

'नागरिया' ढिग आय कहत पिय, परम प्रेम भीजे वायक

—पृष्ठ ३५६, पद ३५७

शब्द-कोष के अनुसार इसका अर्थ वाचक, कहने वाला, दूत दिया गया है। पर प्रसंग से इसका अर्थ 'वचन' 'बात' ही सुसंगत प्रतीत होता है।

२९-३०. आँखाँ, गल्लां

कठिन लगनि दा हाल नी मैंनूं आंखां
मोहन दी गल्लां विन कहियां घूंट घुटण दी चाखां

—पृष्ठ ३६८, पद ३८७

'नी मैंनू आखां' का अर्थ किया गया है—'री मैन ऑक (समझ) लिया है।' पंजाबी मे आखना क्रिया का प्रयोग कहने के अर्थ मे होता है। मैंनूं आंखां का अर्थ हुआ 'मैने कहा।' गल्लां को प्रश्न-चिह्न लगा कर छोड़ दिया गया है। गल्लां गल्ल का बहुवचन है। इसका अर्थ हुआ बातें।

३१-३२. सतेसा मैंन

मृगमद आड़ लिलाट तिय, कीनी है छवि ऐंन
बदन रूप-सर-बीचि मैं, मनूं सतेसा मैंन

—पृष्ठ ३७४, दोहा ५.

मैंन को कामदेव समझकर छोड़ दिया गया है और सतेसा को प्रश्न-चिह्न लगाकर। शब्द कोष के अनुसार सतेस का अर्थ फुरती, शीघ्र है। मैंन मछली को कहते है।

चंद बरदाई ने इस अर्थ इस में शब्द का यह प्रयोग किया है—

वर्षत सोभा नैंन मैन जनु मुदित सरित सर

—पृथ्वीराज रासो समय ६, छंद २, पृष्ठ २९९
(नागरी प्रचारिणी सभा संस्करण)।

पाइअ सद्द महाण्णव में पृष्ठ ८३४ पर मैन का अर्थ मीन दिया भी हुआ है। सतेसा मैन का अर्थ हुआ चंचल मछली।

३३. अदन

अदन पान मैं सखियनि आँनी —पृष्ट ३८०, पद ४२६

अदन को प्रश्न-चिह्न लगा कर छोड दिया गया है। यह संस्कृत का शब्द है। इसका अर्थ है भोजन। सखियाँ हाथ पर (थाल में) भोजन लाईं।

३४. चिरता

चिरता लीतै नंद-कुंवर मनमोह्यो हे कांमणगारी

—पृष्ठ ४१४, पद ५०२

चिरता को प्रश्न-चिह्न लगाकर छोड़ दिया गया है। यह संस्कृत के चिर अर्थ में ही प्रयुक्त है। हे कांमणगारी (वशीकरण करने वाली), तूने नंद-कुंवर के मन को चिरकाल के लिए मोहित कर लिया है। इसी पद में 'सैण रे' शब्द का अर्थ प्रमाद से 'इशारे के' लिख दिया गया है, प्रसंग के अनुकूल इसका अर्थ 'शयन के' सोने, के लिए होना चाहिए।

३५. परसाने

लाखन हू की भीर लगि रही मन लोचन परसाने पैं

—पृष्ठ ४४८, पद ५९७

'परसाने' को छोड दिया गया है। यह 'स्पर्श' से संबंध रखता है।

३६. असा

चस्म जरव सौं क्या रहै, दीन गरव की वात
छूटि गिरै सव पास तैं, तसवी, असा किताव

दीन, मजहव, धर्म से असा का क्या संवंध? इसी दृष्टि कोण से असा पर प्रश्न-चिह्न लगा कर छोड़ दिया गया था। यह अरवी शब्द है और इसको हिंदी में 'आसा' के रूप में ग्रहण किया गया है। इसका अर्थ है सोटा। आसा सोटा शब्द साथ-साथ भी प्रयुक्त होते हैं।

३७. पाज

सुनि री आई धुनि है वन वंसी वाजै
रुक्यो पवन अरु गवन चंद, थिर जमुना उलहत पाजैं—पृष्ठ ३८४, पद ७०६

पाज का अर्थ होता है वाध। यहाँ कूल, वेला के अर्थ में यह शब्द प्रयुक्त है। यमुना का जल वेला को लांघ रहा है, उद्वेलित हो रहा है।

अस्तु, भूल चूक लेनी देनी। देर आयद दुरुस्त आयद।

इत्यलम्।

———

नागरीदास

(पदावली)

ग्रंथ-सूची

—:o:—

तथाकथित अप्राप्त ग्रंथ

—:o:—

(१) पद प्रबोध माला

[मंगलाचरन, हरि सुजस प्रचुर कीर्तन कर्ता भक्त जनन प्रति स्तुति]

मेरे ग्रेई वेदव्यास
श्री हरिवंश 'रु व्यास, गदाधर, परमानँद, नँददास
श्री हरिदास, विहारनिदास, विट्ठल विपुल सुजान
रामदास, नाभा, दामोदर, अलि भगवान, सखी भगवान
चतुर्भुजदास, दास मेहा, पुनि श्रीभट, चतुर विहारी
प्रीतम रसिक, रसिक वल्लभ अरु ध्रुव रस रीति उचारी
तुलसीदास, मीरां, माधव, अरु उभै नागरीदास
आसकरन, नरसी, वृन्दाबन, रुचि माधुरी सुख रास
कृष्णदास, सूर, गोविंद अरु कुंभन, छीत स्वामि अनुरक्ता
श्रुति पुरान मेरै इनके पद, हौ श्रोता ए वक्ता
तजि इनके पद अर्थ, सुनै को नाना मत विभचार
मूल सास्त्र सिध[1] क्यों हेरैं, पद छाड़ि अमृत फल सार
रसना श्रवननि मै इनके पद, रहो हिय मै निर्दूपन
'नागरिया' इनकी पद रज, सो होहु भाल मो भूषन ॥ १ ॥

[हरि बिस्मरन कर्ता नर, बाल अवस्था वर्नन]

...आय, इंद्र पच्छ को दुख भूल्यो
सब दुख बड़े क... धि केसव, बाल केलि रस भूल्यो
... कबहुँ मिलि, सिसु मति मूढ़ महा
भली बु... मैं हू समभत नाहीं, हरि गुन लहै कहा
बालापन सब योही बीतत, नाहिं स्याम सुधि आवै
'नागर' होय तरुन, तरुनी सँग, फिरि हरि कूँ बिसरावै ॥ २ ॥

[तरुन अवस्था]

तरुन भयो तरुनी सँग राच्यो
धन कैं कारन धन उपजावत, विविधि भाँति नट-कपि ज्यों नाच्यो

---

(१) रुचि माधुरी सुखरास=कवि माधुरी प्रकास (छूटक पद ३४) ।
१. सिध=सिधि, सिद्धि ।
२. जनमत जनमत को=जन्म लेते ही जन्म लेते समय का ।

मोह मगन, विषया रस लंपट, निसि दिन जात न जानैं
तनकैं जोर मरोर मत्त मन, देह अमर ज्यौं मानैं
स्वारथ हेत तज्यौ परमारथ, निज गृह काज प्रवीन
अपनौ कियो वृथा, मानत सब 'नागर' हरि-आधीन ॥ ३ ॥

[वृद्ध अवस्था]

जीवत मृतक ह्वै गयो वृद्ध
होत नहीं स्वारथ परमारथ, इहिं जीबे मैं कहा सिद्ध
उगलत कफ, खाँसत, तन काँपत, देह बुद्धि बल नास्यो
सब इंद्रिनि की सक्ति घटि गई, तन बहु रोग प्रकास्यो
लेख्यो रहैं प्रजक द्वार बिच, उदर अहार न पचहीं
जरा जरत मृत्यागम आयो, तऊ न हरि सौं रचहीं
पहिलैं साधन कीनो नाहीं, रहि साधन के संग
'नागरिदास' लगैं अब कैसे, कृष्ण भक्ति को रंग ॥ ४ ॥

[मरन गति देखि बिस्मरन दसा]

कहाँ वे सुत नाती हय हाथी
चले निसान बजाय अकेले, तहाँ कोउ संग न साथी
रहे दास दासी मुख जोवत, कर मींड़ैं सब लोग
काल गह्यो तब सबहिन छाड़्यो, धरे रहे सब भोग
जहाँ तहाँ निसि दिन बिक्रम को भट्ट थट्ट बिरदत्त
सो सब बिसरि, लगैं एकै रट, राम नाम कहैं सत्त
बैठ न देत हुते माखीहू, चहुँ दिसि चँवर सचाल
लयै हाथ मैं लट्ठा ताको कूटत मित्र कपाल
सौंधै भीनौ गात जारि कै, करि आए बन ढेरी
घर आयैं ते भूलि गए सब, धनि माया हरि तेरी
'नागरिदास' बिसरिए नाहीं यह गति अति असुहाती
काल व्याल कौ कष्ट निवारन, भजि हरि जनम सँगाती ॥ ५ ॥

---

३. धन कैं कारण = धन्या (स्त्री) के लिए । तनकैं = तनिक, थोड़ा सा ।

४. सिद्ध = प्राप्त, लाभ । रचहीं = अनुरक्त होते है । साधन = साधना । साधन = साधुन, साधुओं ।

५. निसान = नगाडा । भट्ट = भट, वीर । थट्ट=थाट बाट, शोभा, सजावट, भीड़ । बिरदत्त=बिरद, प्रशंसा । सत्त=सत्य । माखीहू=मक्खी भी । लट्ठा=लट्ठ, लाठी । सौंधैं भीनौं=सुगंधि-सिक्त । ढेरी=ढेर, एक स्थान पर राशीकरण ।

[या भाँति तीन्यूँ अवस्था सतसंग विन विषयानन्द की
आसा ही आसा मैं खोई, तहाँ पर पद]

नर को जनम बिगारत आसा

स्वारथ दाव अठारैं चहियतु, तीन परत बिच पासा
यह जग है चौपर को बाजी, अपनैं बस नहिं ख्याल
'नागरिदास' करो सतसंगत, छाड़ि जगत जंजाल ॥ ६ ॥

करियतु वृथा मन की दौर

जिय चाहत इत और ही, उत होत और की और
छीन आयुस होत नित, तन काल व्याल को कौर
'दास नागर' ह्वै निवृत बस, बास तीरथ ठौर ॥ ७ ॥

[जब आसा पूरन होत नाहीं, जब जिय अति दुख कौ परास होय, तहाँ पर सिछया]

अब जिय काहे कूँ दुख भोवै

कबहुँक हरप, सोक कबहूँ ह्वै, कबहुँ हसै, कबहूँ रोवै
या जग मैं है यही तमासा, ऐसैं ही नित होवै।
'नागरिदास' भजहु नँद-नंदन, जनम वृथा मति खोवै ॥८॥

[जद्यपि आसाहू धनादिक करिकैं पूरन होय 'अरु सबतैं बडो कहावै, तउ सतसंग विन सुख नाहिं; ज्यौं अधिक बड़ो होय, त्यौं दुखहू अधिक, बड़ो होत जाय, इंद्र पर्यंत। तहाँ पर पद]

सब दुख बड़े कहायैं होय

इन्द्र सब मैं बड़ो कहियतु, रहत निति दुख भोय
उग्र तप रिषि करत, सुनि कैं लुटत सेज अँगार
असुर डर अमरावती तजि, भजत बारबार
ब्रह्म-हत्या तैं पलानै, दुरे कँवल मृनाल
अंग भग मंडित भयो, गिरि गए वृषण बिहाल

---

६. अठारह दाँव=जीत का दाँव। तीन पासा=हार का दाँव। बाजी=दाँव।
ख्याल=खेल।

७. आयुस=आयुष्य, आयु।

८. भोवै=भींगा रहे, लिप्त रहे।

बुझ्यो दीपक बढो जैसैं, बड़ो कहियतु भूल
मानि लघु हरि सरन 'नागर' रहैं, सो सुख मूल ॥९॥

[यातैं सर्वथा सतसंग करि हरि सरन रहिये, तहाँ पर पद]

सब सुख स्याम सरनैं गयैं
और ठौर न कहूँ आनँद, इन्द्रहू कें भयैं
दुख मूल एक प्रवर्त्त मारग, कहि न मानत कोय
सुख पग्यो जिहि निर्वर्ति को, मन जानिहै दुख सोय
सतसग अंबुज, ब्रज सरोवर, कीरतन-सुख बास
कीजिए हरि बेगि तिनको भँवर 'नागरिदास' ॥१०॥

[बिन सतसंग मन बस होत नाहीं। यह मन महा चंचल नीच है। तहाँ पर मन-निंदा]

मन यह नीच, संगी नीच
उच्च पद कौ चढ़त नाहीं, जदपि नियरी मीच
नवन पाय कैं गवन करिही ज्यौं ब नीर उलैंड़
प्रबल अति, नहिं रुकत रोकैं ग्यान धूरि की मैंड़
मिलत जाही रग आपुन, होत वाही रंग
देहु 'नागरिदास' कौं, यातैं प्रभू सतसंग ॥११॥

बिन सतसंग मति बेढंग
फिरत डाँवाडोल मन, ज्यौं बिन लगाम तुरग
कबहुँ गिरि गिरि उठत अति श्रम, चढ़त क्रोधि उतंग
कबहुँ मूरख भ्रमत आतुर, उपज अंग अनंग
कहा तप व्रत दान संजम, कहा न्हायैं गंग
'दास नागर' बिना साधन, सकल साधन भंग ॥१२॥

---

(११) पाय कैं - पाप कौं (मु)।

९. लुटत=लोटता। भग=योनि, स्त्री की जननेंद्रिय। वृषण=अंड कोश, पोता। बुझ्यो दीपक बड़ो जैसे=जिस प्रकार दीपक को 'बुझना' न कहकर 'बढ़ना' कहा जाता है।

१०. प्रवर्त मारग=प्रवृत्ति मार्ग। बास=सुगंध।

११. नवन=ढाल। गवन=गमन। उलैंड़=(पानी) गिराना। मैंड़=डांड़; लघु बांध।

१२. साधन=साधुओं। साधन=उपाय। भंग=असफल, व्यर्थ।

[यातैं सर्वथा साधन को सतसंग कीजे। तहाँ पर पद]

सदा सुख हरि भक्तनि के माहिं
दसरथ सुत अरु नँद-नंदन की बातनि समै बिताहिं
विविध कलेस 'रु कलह कलपना तिनमैं उपजत नाहिं
'नागरिया' ब्रह्मानँदहू तैं भजनानँद अधिकाहिं ॥१३॥

जिहि जन भक्ति-सुधा-रस पियो
स्वर्ग, राज-सुख, गेह काज फिरि मन कबहूँ न दियो
बेद-कलपतरु-फल माधव तजि, जग विष फल नहिं छियो
'नागर' और संग नहिं राचैं, साध संग तिन कियो ॥१४॥

जब लग ही जग को सुख पागै
तब लगि जिय हरि भक्त संग कौं रंग नहीं कछु लागै
गृह व्योहार खेल गुड़ियन को जब लगि ही जिय भावै
तब नव जोबन ह्वै मदिरामय तिय पिय कंठ लगावै
तिन चाख्यौ अति स्वाद अलौकिक स्याम मधुर रस पाक
'नागरिदास' लगत जाकौं फिरि और वस्तु सब आक ॥१५॥

[सो जानैं या रस को स्वाद पायो, ताकौ संसार सुख न भायो। तहाँ पर पद]

जिनकौं झूठ लग्यो संसार
जग सौ निसप्रह, सतसंगति करि, लेत सदा सुख सार
ते कलेस मैं परत न कबहूँ, सार असार बिचार
'नागरिदास' कुसंगति करिकैं कौन भयो नहिं ख्वार ॥१६॥

[कुसंगति करिकैं मनुष्य होय ख्वार, बढ़ैं दुख विस्तार। तहाँ पर पद]

कलि के जनम बिगारत लोग
मूरख महा, दोऊ वे खोवत, हरि की भक्ति, बिषै सुख भोग
कलह कलेस करत दिन बितवत, विविध बिपति आस्वादी
ऐसेहीं सब आयु बितावत, टेव तजत नहिं बादी

---

१३. कलपना = बिलखना, क्रंदन।
१४. छियो = छुआ।
१५. ही = हृदय। आक = अर्क, मंदार।
१६. निसप्रह = निस्पृह, अलोभी। ख्वार = नष्ट।

दासी दास कुटुंब मित्र सब, याही दुख रस पगे
'नागर' कोउ नाहिं समुझावत, सब स्वारथ के सगे ॥१७॥

[कुसंग फल दसा]

कलि में ते क्यो भक्त कहावैं
वृद्ध होय ले विमुख संग, फिरि देस-देस उठि धावैं
होत निरादर दुख नहिं मानत, नींव देत अति औंडी
चेतत नहीं, बजत सिर ऊपर यह घरियाल काल की डौंड़ी
बिन जमुना परसैं क्यौं उतरत स्वेन कचनि बिच धूर
'नागर' स्याम वैठि नहिं सुमिरत ब्रज की जीवन-मूर ॥१८॥

[कुसंगीनि की दसा]

कलि के लोग कुमंत्री सिगरे
देत कुमत्र, बिगारत मन कौं; आपुन मन के बिगरे
एक पेट के काजहिं खोवत दोऊ लोक, सुख अनुचर
निज स्वामी कौं लियें फिरत हैं, ज्यौं गहि घर घर बनचर
दुख अपमान कौ व्यापत नाहीं, लोभी लोभ सुखारे
पाप भार सब वाकूँ लागत, दास रहत है न्यारे
चतुरथ आश्रम आय, देत फिर लाख बरस की नींव
'नागरिदास' जानि उन सबकूँ, महा पाप की सींव ॥१९॥

[यातैं नर ऐसी बिजाती कुसंग को त्याग करे, तब सुख होय। तहाँ पर पद]

कदली बेर ढिग पछितात
पवन परसत हलत त्यौं त्यौं गड़त कटक गात
पीर बिन वह हरी नित, यह नीर बिन कुम्हिलात
संग 'नागर' तजै ताको, होय जब कुसरात ॥२०॥

---

१७. कलि० = कलि के लोग जनम बिगारत। दोऊ = (हरि की भक्ति और भोग) दोनों। टेव = आदत। वादी = (वायु का) विकार उत्पन्न करने वाला।
१८. औंड़ी = गहरी। घरियाल = घंटा घड़ियाल
१९. सींव = सीमा
२०. कुसरात = कुशलात, कुशल।

[यातैं सब वेद पुराननि को सार कहत हौं , कुसंग तैं टरिए अरु सतसंग करिए। तहाँ पर पद]

रे मन त्यागि परम कुसंग
वेगि करि सतसंग आतुर, यहै तन छिन-भग
सकल वेद पुरान कैं बिच सार यह उपदेस
गाय ये 'नागर' सदा करि साधु संग विसेस ।।२१।।

[तातैं जनम साधु संग मैं बितावनौ, तहाँ हरि जनम करम गुन गावनौं । तापर पद]

रे मन जनम करम गुन गाय
लोक वेद बिसतार सार बिन, नीरस कथा बहाय
कैसैं वाल-केलि-कौतूहल गोकुल माँझ करे
कैसैं दुरि घर-घर दधि चोरयो, कैसैं चीर हरे
कैसैं ब्रज वृंदाबन बिहरे, कैसैं गाय चराई
कैसैं जमुना कूल कदम तर मोहन बैन बजाई
कैसैं जग-पतनिनि पैं भोजन माँगि लयो बलबीर
कैसैं ढाकनि की छहियाँ मिलि छाक खात आभीर
कैसैं सुन्दर हस्त कमल पर सात द्यौस गिर धारयो
कैसैं बार-बार ब्रज-जन कौं बहु बिधि कष्ट निवारयो
कैसैं सरद-निसा बन कीनैं रास केलि आनंद
कैसैं काम बिजै करि लीनौ, थकित रह्यो नभ चंद
कैसैं घोस निवासनि कौं हरि सुख दीनौं बहु भाँत
'नागरिदास' कहो सो निसि दिन, जात है आयु बिहात ।।२२।।

[या पद के टीका विस्तार]

(हरि बाल लीला)

नंद सुत नित्य रस बाल लीला मगन,
उदधि आनद गोकुल कलोलैं
गउर अरु स्याम अभिराम भइया दोऊ
ललित लरिकान लियैं संग डोलैं

---

२१. छिन भंग = क्षण भंगुर । गाय = गा, गाओ ।

२२. बहाय = बहा दो । बैन = वेणु, बाँसुरी । बलबीर = बलराम के भाई, कृष्ण । आभीर = अहीर, ग्वाल । गिर = गिरि, पर्वत । छाक = दोपहर का कलेवा । घोस = अहीरों की बस्ती, गोशाला । बिहात = बीती ।

भवन प्रति भवन चलि चोरहीं दूध दधि,
रतन भूषन बदन तन उजेरैं
खात लपटात ढरकात फिरि हँसि भजत,
चकृत ह्वै भवनी निज भवन हेरैं
कबहुँ गहि-गहि फिरत पूँछ बछियानि की,
किंकिनी कनक कटि मधुर बाजैं
गोप गोपीनि मन दृगनि के खिलौना,
खिलत मुख कमल, मुरि हसनि भ्राजैं
बदन दधि छींट छवि, धूर धूसर अंग,
अबही तैं मदन गति पगनि पेलैं
कंठ बघनॉ दिये, पाय पैंजन भनक,
'दास नागर' हिये-अँगना खेलैं ॥२३॥

तिहारो धोटा बरजै क्यो नहिं माई,
इन बातन वृज कौन बसैगो, बहुत-बहुत नकिआई
मेरी और सास की चुटिया सोवत गांठि घुराई
फिर दधि खाय, जगाय भग्यो, हम भट भेरनि भहराई
चतुर चोर छिपि छल सौं निकसत, आवत नाहिं गहाई
अबही तैं 'नागर' छछंद तेरौ अरी बड़ो औटपाई ॥२४॥

खेलत भइया दोउ मइया के आगैं
गोपी और निरखि रही कउतक, पलक-पलक नहिं लागैं
जसुमति गोद तें बल चलि आवत, रोहिनी तैं घनस्याम
भेला ह्वै ह्वै सीस भिरावत, गरजि गरजि अभिराम
लरि लपटाय लला मिलि लोटत, बाल केलि सुखदानी
'नागर' ललित चितै आनँद मैं, हँसि-हँसि परत है रानी ॥२५॥

---

२३. कलोलैं = कल्लोलित होते हैं, तरंगायित होते हैं। गउर = गौर। भजत = भग जाते हैं। भवनी = गृहिणी। हेरैं = खोजती हैं। बघनां = व्याघ्रनख। अंगना = आँगन।

२४. माई = सखी। नकियाई = परेशान कर दिया है। धोटा = ढोटा, लड़का। गाँठि घुराई = कस कर गाँठ दे दी। भटभेरनि = मुँडभेड होने से। भहराई = गिर पड़ी। औटपाई = नटखट, शरारती।

२५. कउतक = कौतुक, क्रीड़ा। बल = बलराम। भेला = भिड़ने वाले, मल्ल।

(चीरहरन , लीला)

पिय जिय पीर कछु पहिचान
चीर सबके हरत कहा, चित हरे इहिं मुसक्यान
सीत बस हम, जल मगन, तन नगन, बिनती मान
नाहिं चहियतु तुम्हैं ऐसी, देहु अंबर आन
हास रस आनंद कीनौं, चतुर ठगई ठान
प्रीति बाढ़ी परसपर, बर दयो हरि सुखदान
स्याम कैं मन गउर तन छवि बसी कच लपटान
रहे 'नागरिदास' के जिय बसन-चोर सुजान ॥२६॥

(गोचारन आवन लीला)

सुनत धुनि बैंन मधुराग गौरी रुचिर,
चढ़िय निज भवन तिय रवन हित अगमगी
जानि घनस्याम आगमन गोकुल-बधू,
अटनि दुहु दिसनि मनौं दामिनी जगमगी
साँझ सुख समैं आनंद गहमह ठई,
उड़ि रैंन धैन बहु गलिनि बिच रगमगी
संग गोपाल नट बेस रहि देखि सब,
पलक नहिं लगत, मुख अलक रज सगमगी
कइक हसि फूल डारत, कइक काँकरी,
कइक मग छाड़ि रहि सांकरी लगमगी
'नागरीदास' हरि माधुरी पान करि,
रहि न कछू ठौर, मति मदन बस डगमगी ॥२७॥*

---

(२७) गहमह=गहि महि (मु) ।* 'पद मुक्तावली' २०२ पर पुनः अवतरित।

२६. कहा = क्या। मगन = मग्न, डूबा हुआ। नगन = नग्न। अंबर = वस्त्र। आन = लाकर। ठगई = ठगी, डकैती।

२७. रवन = रमण, प्रिय। अगमगी = अग्रसर हुई, आगे बढी। अटनि = अटाओं पर। गहमह = चहल पहल, रौनक। ठई = स्थित हुई। रैन धैन = धेनुओं के पगों से उठी हुई रेणु। रगमगी = रंग (प्रेम, आनंद) में मग्न। सगमगी = सगबगी, लथपथ, भरी हुई। कइक = कई एक; अनेक। लगमगी = लगन में मगन हो गई।

(बेन गीत)

सुनि री सखी सुखदाई
देखि अमल सरद रितु आई
आई सरद, गत पंक भुव भइ, सुच्छ अंबु अकास हैं
कुंज कानन अति प्रफुल्लित, छई कुसुम सुवास हैं
ठौर ठौर सरोवरी बिच अमल कमलनि पुंज री
तहाँ भ्रमत अलिन्द माते, करत आतुर गुंज री
सुभग वृन्दावन अवनि, बहैं त्रिविध रोचक पवन हैं
'दास नागर' देखि तिहिं ठाँ करत मोहन गवन हैं ॥ २८ ॥*

उर मंडित वनमाला
डोलैं गायनि संग गुपाला
संग गायनि कैं गुपाला बेष नव नटवर कियैं
मोर पच्छ, प्रसून पुंज प्रवाल जूरा सिर दियैं
कंज करननि कर्निका, तन धात गुंजावलि लसैं
दसन किरननि जार को उर हार फैलत तब हसैं
मद बिघूर्नित नैन सोहै, बंक भौहैं मन हरैं
'दास नागर' स्याम घन लखि मुरलिका अधरन धरैं ॥ २६ ॥

पसु पच्छी चहुँ दिस री
सुनि धुनि गान, देह सुधि बिसरी
बिसरी जु सुधि, खग मृग चकित चित, मुख न कहुँ कन तृन छियैं
धेनु बरसति नीर नैननि, नाहिं बछरा पय पियैं
थक्यो मंद समीर सुनि, द्रुम पातहु न पल्लव हलैं
बिथकि जमुना जल रह्यो, रथ भान नहिं आगैं चलैं
नभ बिमाननि गिरत सी तिय, पिय उछंग निवार दी
'दास नागर' सुनत धुनि सुर वधू देह बिसारि दी ॥ ३० ॥

---

*पद २८, २६, ३०, ३१ उत्सवमाला ६१, ६२, ६३, ६४ पर पुनः अवतरित हैं।

२८. गत पंक भुव = भूमि पंक हीन हो गई। ठां = स्थान

२६. प्रवाल = लाल लाल कोमल किसलय। करननि = कर (हाथ) के बहुवचन का भी बहुवचन, हाथों। कर्निका = कमल का छत्ता, करहाटक। धात=गेरू। गुंजा=घुंघुची। जार=जाल, समूह। बिघूर्नित=घूमते हुए। लखि=लखो, देखो।

३०. छियें = छूते हैं। उछंग = गोद। निवार दी=रोक दी।

री तैं कौन पुन्य तप कीनौं
पिय को अधर-सुधा रस लीनौ
लीनौं अधर रस सुधा बन मै, अरी बैरन बाँसुरी
हम भवन तलफत फिरत इत, उत कियो धीरज नासु री
उड़त अंचर, उरज उघरत, बैंन-धुनि सुधि हर लई
कबरि छुटि, भइ सिथिल नीबी, मदन पीड़त निरदई
कहैं सम्हारि-सम्हारि कबहूँ, कबहुं आवत ताँवरो
'दास नगर' ध्यान तनमय, भरत अंकनि साँवरो ॥३१॥

(जग्य पतनी भोजन लीला)

पूरन ब्रह्म नंद के ऐना
सुन्दर स्याम कँवल दल नैना
कब देखैं रूप प्रकास
लगी जग्य-पतनिन मन आस

लगी आस, उदास जिय मैं, रहैं डारि उसास कौ
नैंन भरि बन ओर चितवैं, ज्यौ चकोर प्रकास कौ
कह्यो जिहिं छिन स्याम कौं संदेस ग्वारनि आय कै
उठी लै लै विविध भोजन, चली आनँद छाय कै
धरत पग चंचल, तऊ भये पथ कोस करोर के
चंद चाहनि घुटे छूटे वृन्द मनहुं चकोर के
एक रोकी गेह, सो तजि देह, सब पहिलैं गई
'दास नागर' लाल करि उर माल तिहिं बालहिं लई ॥३२॥*

ढिग आई दुज बाला
रहि इक टक लखि नँदलाला
ठाढ़े परम छबि पावैं
हरि कर गहि कँवल फिरावैं
कँवल फेरत स्याम ठाढ़े, कँवल-मुख मुसक्यावहीं
कँवल-माला चरन परसत, कँवल-दगनि ढुरावहीं

३१ कबरी = जूरा। नीबी = फुफुती। तांवरो = ताप, ज्वर, जूडी।
३२. चाहनि = प्रेम, देखने के लिए। घुटे = दम घुटे हुए, मृतप्राय।
*३२,३३ संख्यक पद व्रजलीला ७,८ संख्यक पदों पर पुनः अवतरित है।

वाम भुज धरि सखा अंसहि, धुके अति छवि पाय कैं
तिहीं छिन लखि कोटि मनमथ रहे हैं सिर नाय कैं
निरखि मोहन माधुरी, दुज वधू प्राननि वारहीं
देत भोजन, नेह आतुर, देह कौ न सम्हारहीं
करत ही निस द्यौस भामिनि, सो मनोरथ सव ठए
'दास नागर' नंद-नंदन प्रीत ही कैं वस भए ॥३३॥

(छाकलीला)

नव गोपाल मिलि करन भोजन लगे
तीर जमुना विपुन, भीर वहो वालकनि
हृदै आनंद भरि, खेलि, रस रगमगे
छाक लीला ललित, कूल कोलाहलनि,
दिवस भयो जानि मनु कोक लागन जगे
चहूँ दिस कुंडलाकार ग्वालावली,
चारु व्रज चंद उडगननि विच जगमगे
कइक छींकोंनि, कइ फूल फल सिलनि पर,
कइक दधि मधु धरनि वकुल कल लैन गे
किसलै दल, कदलि दल, जलज दल, जघनि पर
धरत व्यंजन विविध परम कौतुक पगे
स्याम कर वाम पर, भात धरि खात फिरि,
'नागरीदास' हँसि जात वातनि खगे
निरखि विधि कहत मन, कहाँ जग्यभोग्य ये
भूठ पसुपालकनि की जु तैं नहिं भगे ॥३४॥

(गोवर्द्धन धारन लीला)

सजनी निरखि नंदकुमार
धरैं गिरि कर, वढ़ी छवि, लखि मदन वहो वलिहार

---

३३. ढिग = पास । दुज = द्विज, ब्राह्मण । दुरावहीं = कभी इधर कभी उधर करते हैं; प्रसन्न होते हैं । अंसहिं = कंधे पर । धुके = झुके; नमित । करत ही = करती थी । ठए = पूर्ण हुए ।

३४. विपुन = विपिन, वन । वहो = वहु, वहुत । लागन = लगन (प्रेम) पूर्वक । छींकानि = सिकहरों पर । सिलनि = चट्टानों । वकुल = एक प्रकार का पेय गे = गए । खगे = लगे हुए, लीन । जग्यभोग्य=यग्य का भोग जिसे मिलता हो; जो यज्ञ-भोग का उपभोग करने योग्य हो; देवता । भूठ=जूठ, जूठा ।

ललित अंग तृभंग, कटि तट कनक किंकिनि जाल
बंक भुव दृग अलक परसत, चरन परसत माल
उदित बिच ब्रजचंद पूरन, तिमर मेट्यो घोर
तहाँ गोपी गन तरइयाँ, भान-कुँवरि चकोर
उहाँ आहिर इन्द्र बरसत प्रलय घन लिये संग
'दास नागर' गोवर्द्धन तर इहाँ बरसत रंग ॥३५॥*

(रासलीला)

रास रच्यौ नँदलाला
लीनैं संग सकल ब्रज-बाला
अद्भुत मंडल कीनौं
अति कल गान सरस सुर लीनौं

लीनौं सरस सुर राग रंजित बीच मिलि मुरली कढ़ी
हौन लाग्यो नृत्य बहो बिधि, नूपुरनि धुनि नभ चढ़ी
डुलत कुंडल, खुलत बैंनी, झुलत मोतिनि माला
धरत पग डगमग, बिबस रस, रास रच्यो नँदलाला

चित हाव-भावनि लूटैं
अभिनय दृग भौहनि सर छूटैं
ललित ग्रीव भुज मेलत
कबहुँक अंकमाल भरि झेलत

झेलत जु भरि-भरि अंक निसँकत, मगन प्रेमानंद मैं
चारु चुंबनि अरु उगारहि धरत तिय मुख चंद मैं
उड़त अंचर, प्रगटि कुच वर, ग्रंथ पट कसि छूटै
बढ़यो रंग सु अंग-अंग, चित हाव-भावनि लूटै

पगन-गति कउतक मचैं
कटि मुरि-मुरि मध्य लचैं
सिथिल किंकनी सोहै
मुकट लटक मन मोहै

---

*३९ वाँ पद उत्सवमाला १०० पर पुनः अवतरित।

३९. कटि तट = 'तट' प्रयोग स्वार्थ है। तिमर = तिमिर तम, अंधकार। भान-कुँवरि = वृषभानु की कन्या। रंग = आनंद, प्रेम।

मोहैं जु मन नट मुकट लटकनि, मटकि गति पग धरनि की
भँवर भरहरि चहूँ दिसि, छवि पीत पट फरहरनि की
गिरयौ लखि मनमथ मुरछि, लै भजी रति सुख मधु अचै
नचत मनमोहन तृभंगी, पगनि गति कउतक मचै

वृन्दावन सोभा बढयो
तापर व्योम विमाननि सों मढयो
दुंदुभि देव बजावैं
फूलनि अंजुलि बहु बरसावैं

बरसैं जु फूलनि अजुली बहु अमरगन कौतुक पगे
विबस अकनि निज बधू हिय निरखि मनमथ सर लगे
हैं गए चर थिर, सुथिर चर, थिर सरद पूरन ससि चढ़यो
'दास नागर' रास अवसर वृंदावन सोभा बढयो ॥३६॥*

रह्यो रँग खेलत रास रसाला
तुटि गए हार, छुटि गए अंचर, श्रम डगमगन मराला
जुवति जूथ जुत धसे जमुना बिच मदन मोहन तिहिं काला
क्रीडत जनु करनी सँग लीनैं मत्त दुरद नँदलाला
गोरे अंग महा छवि पावत, भीजे बार बिसाला
मनो सीतल चंदन पुतरिन सों लगी लपटि अहि-माला
छवि सों छींटनि खेल मचावत, प्रेम बिबस ब्रज-बाला
जनु उच्छव कालंदी गृह, उछरत मुक्तनि के जाला
बाहु मुंड अवगाहि नीर ग्लबीर चले गज चाला
'नागरीदास' ब्रज रानी रमि, आए गेह गुपाला ॥३७॥*

---

३६. कढ़ी = निकली । मेलत = डालते हैं । भेलत = ढकेल देते हैं । उगार = पान की पीक । ग्रथ=ग्रंथि, गोठ । लचैं = लचक जाती हैं । नट = नर्तक । मटकि= लचक कर, नखरे से चलकर । भरहरि = तितर-बितर या विकीर्ण होकर । अचै = पीकर ।

३७. रँग = आनद, हर्ष । करनी = करिणी, हथिनी । दुरद = द्विरद, दो दाँतों वाला, हाथी । बार = बाल, केश । पुतरिन = पुत्तलिकाओं से, मूर्तियों से । मुक्तनि = मोतियों । अवगाहि = आलोड़ित कर, मथ कर ।

*३६,३७ पद उत्सवमाला ७०,७१ एवं पद मुक्तावली ४५६,४६० पर पुनः अवतरित हैं ।

दोहा

इंद्रप्रस्थ जमुना निकट, भवन पुलिन ढिग चार।
तिहि ठां पद रचना करी, मो मति के अनुसार ॥३८॥
अष्टादस सत पंच है, बरष पौष सुदि मास।
'पद प्रबोध माला' कियो, ग्रंथ नागरीदास ॥३९॥

——:——

(२) वन जन प्रशंसा

श्री वृन्दावन स्तुति

चर्चरी

जैंति वृंदा विपुन विस्व वदन मही
महिमा अद्भुत निगम गाज गाजैं

वननि वनराज व्रजराज सुत प्रिय तहां
सहज सुख नित्त रितुराज राजैं

कथत श्री-मुख कथा, कृष्ण वल प्रति जथा,
फूल फल भूमि छवि छाज छाजैं

कोस दस दोय अनुराग रैनी रची
परसि मन विरंगता भाजि भाजैं

जुगल कल केलि विच कुञ्ज रचना रुचिर
नूपुरनि शब्द प्रति वाज वाजैं

'दास नागर' रंग वाग राधा सदा
निरखि दृग काम रति लाज लाजैं ॥१॥*

धन धन श्री गुरुदेव गुसांई
वृंद्रावन रस मग दरसायो, ऊवट वाट छुटांई
भूले हे वहु ते जनमन के, फिरत अन्ध की नांई
'नागरीदास' वसाए कुञ्जनि, सर्वे छुडाय दाहिनी वांई ॥२॥

---

* यह पद 'पदमुक्तावली' में भी संख्या ७२६ पर है। पांचवां चरण इस ग्रंथ मे नही है, पदमुक्तावली से यहां ले लिया गया है।
(१) सहज = साज (पदमुक्तावली ७२६)।

१. गाज गाजैं—उच्च स्वर से घोषित करते हैं। वल = वलराम। रैनी = (१) रजनी (२) रेणु, रज। विरंगता = भिन्नता। रंग = प्रेम, आह्लाद। वाग राधा = वृंदावन, राधा का नाम वृंदा भी है।

२. ऊवट = ऊवड़ खाभड़; कठिन (मार्ग)। भूले हे = भूले थे।

धन्य-धन्य हैं जोई पुरान
ताकैं मध्य श्री वृंदाबन की कथा परम सुखदान
बिन वृंदावन बानी मेरैं कबहुँ परो जिन कान
'नागर' ब्रज वृंदावन बिन मोकों नहिं भावत भगवान ॥३॥

धन-धन वृंदाबन यह नाउं
सब तत्तनि को सार, सार सुख, परम पियारो ठाउं
सोवत सुपनैं निति निसि बासुर, याही कौ निति गाउं
'नागरिया' जाकै मुख प्रगटै, ता मुख को बलि जाउं ॥४॥

समस्त वृंद्राबन बासी प्रशंसा ।

धन-धन वृंदा बिपुन गुसाईं जेते
जिन दिछ्या-सिछ्या करिकै नरहरि सनमुख किये केते
परम पुनीत पूज्यकुल सब कैं, कृपा भक्ति फल देते
नागर भए 'रु हैं अब हौनै, सब जग वंदित तेते ॥५॥

धन-धन वृदावन के सत ।

कहा बिरक्त, कहा कुंज निवासी, बडड़े महा महंत
जिन सुदेस उपदेसनि तै बन बसि रहै लोग अनंत
जहां तहां ऊसर तै सर कीनै 'नागरिया' रसवंत ॥६॥

धन-धन वृदा बिपुन बिरक्त
संग्रह भजन कियो, तजि संग्रह, छांड़ि वांत ज्यौं जक्त
कृष्ण कथा मकरंद के मधुकर वृत्ति आसक्त
'नागर' फिरत छीन तन कुंजनि, भए पुष्ट हरि भक्त ॥७॥

धन-धन वृंदाबन के कुंज निवासी साध
हरि गुरु सनि सेवनि संग्रह उच्छव करत अगाध

---

४. नांउं = नाम । ठांउं = स्थान । बासुर = बासर, दिन । गाउं = गाता हूँ; गुणानुवाद करता हूँ ।

५ केते = कितने ही । ते ते = वे वे, वे सब

६. बडडे = बड़े । सुदेस = सुंदर । ऊसर = अनुर्वर भूमि । सर = सरोवर, तालाब; रसवंत = सरस, आनंदमय ।

७. संग्रह = संकलन, वांत = बमन, कै । संग्रह = संग्रहीत । पदार्थ ।

सबनि देत विश्राम धाम बन, मेटत तन मन व्याधि
'नागरीदास' लेत ए सब सुख हरि राधा आराधि ॥८॥

धन-धन वृंदावन के महा महत

वृंदावन अधिकार भार भर, भक्ति कृपा उलहंत
वृंदा बसि प्रताप तेज अनमीं नर निकर नवावैं
उपदेसक नृप सिंव, सदधनि वृंदावन दरसावैं
सर्वोपर वृंदावन डिग्गज महत सभा समुदाय
'नागरीदास' दास वृंदावन रहे निसान बजाय ॥९॥

धन-धन वृंदावन के पंडित ।

विद्यावत, बोध-दान तीरथ मैं देत, परम गुन मंडित
परमारथ स्वारथ की संपति सचित हिये अखंडित
'नागर, भये किते नर इनतैं दोऊ लोक अखंडित ॥१०॥

धन-धन वृंदावन के वक्ता ।

उपदेसक हरि विमल भक्ति के, परम प्रेम अनुरक्ता
तुलसी वन अमृत रस लीला श्रवन द्वार लै लावैं
'नागरीदास' रसिक श्रोता जे भक्ति मकरंद लुभावैं ॥११॥

धन-धन वृंदावन के कविजन ।

वृंद्रावन की लीला बरनत, वाही मैं नित रहैं लग्यो मन
रचत रुचिर अति अच्छर, रचना जथा रूप दरसावैं
देव बांनी तैं बांनी करि, श्रवन सुधा सो प्यावैं
हरिलीला सास्त्र सुभाजन के द्रवी है सब लोग
इनहीं तैं नवरस विंजन के करत रसिक जन भोग

---

८. साध = साधु । सनि = सनकर । सेवनि = सेवा की । उच्छव = उत्सव ।
९ भार भर = भार (बोझ) से भरे हुए । उलहंत = उल्लसित होते हैं । महत = महंत । अनमीं = न झुकने वाले । नवावैं = नमित कर देते है ।
१०. दोऊ लोक अखंडित = इहलोक परलोक दोनों को पूर्ण रूप से प्राप्त करने वाले ।
११. तुलसी वन = वृंदावन । जालंधर की सती सध्वी पत्नी 'वृंदा' विष्णु के शाप से 'तुलसी' का विरवा हुई थी । देव बानी = संस्कृत ।

इन बिन सबही कोरे रहते, गत रस रूखी छाती
इन बिन दंपति-रस-संपति की नहिं प्रवीनता आती
ए तुलसी बन बसि कुजनि मैं कुंज केलि बिस्तारैं
'नागरीदास' भाग इन के कौं, कहां लगि कोऊ उचारैं ॥१२॥

धन धन वृंदाबिपुन गवइया
तान ताल बंधान गान मै जुगल रूप दिखवइया
मन लैनी बानी पैनी के सर अमोघ चलवइया
भजन करन, चित हरन, चतुर अति, हियैं भाव भरवइया
'नागरीदास' प्रकासक उच्छव, नैननि नीर ढरवइया ॥१३॥

धन-धन वृंदाबन के दुजवर
एक संख, अरु खीर भरे पुनि, राखे या रज मैं धर
सबैं पूजि, बासी तीरथ मै, पावन करता घर-घर
जमुना तट जमुना के जाचिग, 'नागरीदास' सुबर नर ॥१४॥

धन-धन वृंदावन के लिखिया
जिन उत्तम लेखक ब्रतधारी, सुंदर अछरनि सिखिया
सहज सिमटि कैं रहै नैन, मन चचलता छुटि जाय
हरि गुन कथा लिखत ही तिन कौं सब दिन जात बिहाय
सिद्धि करन परमारथ स्वारथ बसि तुलसी बन माहीं
'नागरीदास' भाग इनको कोउ बरन सकत है नाहीं ॥१५॥
धन-धन वृंदाबन के तिलकिया
भक्ति चिन्ह मुख छाप रचित कर, परम पुनीत मिलकिया
बैठत घाट-घाट पर, सहजहिं चितवत रूप चिलकिया
'नगरिया' जजमान श्री जमुना, लैं हरि नाम किलकिया ॥१६॥

---

१२. द्रवी = द्रव्य (धन) वाले बिंजन = व्यंजन, पका हुआ भोजन। कोरे = विहीन; भूखे। गत रस = रसहीन।

१३. पैंनी = तीव्र धार वाली।

१४ एक संख, एक तो शंख, फिर खीर से भरे हुए।

१५. लिखिया = प्रतिलिपे करनेवाले; लिखक।

१६. तिलकिया = घाट पर बैठकर यजमानों, स्नानार्थियों को तिलक लगाने वाले। मिलकिया = मिलक (अरबी); मिल्कियत, जागीर, जायदाद

धन-धन वृंदावन के भाट
राधा कृष्ण जनम उच्छव मैं पढ़त बंस के ठाट
ब्रज बासनि के जस कौं बरनत, नहि बरनत वैराट
'नागरीदास' बड़े घर के ए कौन कर सकै नाट ॥१७॥

धन-धन वृंदावन की महा डुकरिया
निर्विकार निर्दूषित तन है, अति कृस कूब सुकरिया
पूस मास मैं जमुना न्हावैं, डरत नहीं मरबे सौं
कालहु को बस चलत न तिनपैं, परम भक्ति करबे सौं
लै लटिया कर कटि नवाय कैं, बडे भोर ही धावैं
च्यार कोस पर कर्मा दे कै निति, 'नागर' घर आवैं ॥१८॥

धन-धन जे वृंदावन बाई
तिनकौं श्री राधा करुणा करि अपनैं बाग बसाई
दंपति गावैं, जमुना न्हावैं, तन लोई लपटाई
कथा कीरतन दरसन कैं हित रह नित 'नागर' मॅडराई ॥१९॥

धन-धन वृंदावन के बजाज
मोटे मिहीं पटन घट ढांपत, राखत सबकी लाज
विग्रह रूप जुगल कैं तन मैं मृदु तनजेबी साज
'नागरीदास' बास कुंजनि करि, करत आपनौ काज ॥२०॥

धन-धन वृंदावन के मोदी
जिन आसा मनु जात्री आवैं, लेत जिनस भरि गोदी
इनतें सहवासी सुख पावैं, सबकौ अन धन देत

संपत्ति। चिलकिया = चमकने वाला; कांतिमान। तिलकिया = प्रसन्नतापूर्वक किलकारी मारना; उल्लास से उच्च स्वर में कहना।

१७. बंस के ठाट = पूर्वजों का गुणानुवाद। वैराट = विराट के रहनेवाले अर्थात् बड़ी जगतों के रहने वाले। नाट = नाट्य।

१८. डुकरिया = वृद्धा। कूब सुकरिया = कूबड निकाले हुए। परकर्मा = परिक्रमा।

१९. बाई = आदरणीया महिलाएँ। लोई = (लोमीय); ऊनी चादर।

२०. मिहीं = महीन, बारीक। घट = शरीर। विग्रह = मूर्ति। तनजेबी = तनजेब (कपड़ा विशेष, शरीर को सुशोभित करनेवाला) का बना हुआ।

छुधित न रहत देत हैं काहू, दया मया हिय हेत
इनहीं तै हैं चहल पहल ह्यां, इनहीं तें आनंद
'नागरीदास' बसाए इनकौं श्री वृंदावन चंद ॥२१॥

धन-धन वृंदावन के मधुमय तई चढ़नियां

विविधि भाँति के मधुर पाक वे रचत हैं भोग अमनिया
गूंझा गूंदी मोदक गठरी खाजा खुरमा खासे
रस डुरकी मुरकी 'रु जलेबी पूवा पुरी पतासे
सक्कर पारे पेरे मिश्री मावा मोहन भोग
खाड खिलौना, खांड़ सँठेली, बाल बिनोदी जोग
फैंनी मधुर, तृकौंन, सुहारी, सेत गुलाबी घेवर
खिली खिजूर, पूरि घृत पावैं रेवंती को देवर
मींजी पाक, चिरौंजी पाक, पेठा पाक नए
तिनगनी, तेज, इलाची दांनैं, परम सुगंधित ठए
फुली फुलौरी, सेव सलौनी, गरमागरम कचौरी
बरनौं कहा निकाई, तिनके दरसन मांझ ठगौरी
इत्यादिक सुंदर सामग्री सब मंदिरनि पठावैं
'नागरीदास' दास अति रुचि हीं उंहिं प्रसाद कौं पावैं ॥२२॥

धन-धन वृंदा बिपुन कसेरा
बड़े पात्र पात्रन कौं दैही कर-कर अमल उजेरा

---

२१. मोदी=बनिया, आटा चावल दाल बेचने वाला । जिनस=आटा चावल आदि खाद्य पदार्थ । गोदी=गोद, अंक । सहबासी=पड़ोसी । अन=अन्न, अनाज । हेत=प्रेम, हित ।

२२. तई=मिठाई बनाने की छोटी कड़ाही । तई चढनिया=भट्टी पर तई चढ़ानेवाले; हलवाई । अमनिया=जिसमें कोई छूत न हो; पवित्र । खासे=(१) बढ़िया, अच्छे । राज-भोग । मुरकी=गुड़ में सनी हुई लाई का लड्डू । पूवा=मालपुवा । पेरे=पेड़े । बतासे=बतासा । मावा=खोवा । सँठेली फैंनी=सूत के लच्छे की तरह की एक मिठाई । तृकोन=तिकोना, समोसा । रेवंती=रेवती, बलराम की स्त्री । रेवंती के देवर=कृष्ण । दास=भक्त । प्रसाद=देवता को चढ़ाया हुआ पक्वान्न या मिष्टान्न ।

सबको धर्म चलत इनहीं तैं झांझनि रव झनकेरा
'नागरीदास' सौंज सेवा की बरनत सांझ सवेरा ॥२३॥

धन-धन वृंदा विपुन पसारी
तिनकी सौंज मंदिरनि पहुँचैं सहवासनि सुखकारी
केसर अगर औ चंदन बंदन हरि तन लेप लगावैं
मिरच लवंग मसाले नाना भोगनि माझ मिलावैं
अंगराग अरु रसना पोषक सब रोगन के हंता
'नागरीदास' बसत बड़भागी जहाँ राधिका कंता ॥२४॥

धन-धन वृंदावन के वैद
साध सत को तन दुख मेटत, मेट खाट की कैद
स्वारथ मैं परमारथ करहीं, भेपज कै उपचार
'नागरीदास' नहीं सम इनकैं स्वर्ग अश्वनी क्वार ॥२५॥

धन-धन वृंदा विपिन खवानचावारे
हरि उच्छव मेला मंगल मैं, लगत सबनि कौं प्यारे
खारी, मीठी, ठूग, सलौंनी, थैलनि भरि-भरि लेत
'नागरीदास' साध संतन की रसना कौं सुख देत ॥२६॥

धन-धन वृंदावन के चतुर तमोरी
तिनकी बीरी भोग लगत तहाँ गउर स्याम की जोरी
सबकैं रंग रचत इनसौं, जहां उच्छव मंगल गान
तहाँ प्रसादी पावत हैं बड़ भागी 'नागर' पान ॥२७॥

धन-धन वृंदावन के माली मालनि
उच्छव भवन द्वार सोभित ए कर फूलनि को डालनि

---

२३. कसेरा=कांस्य पात्र (काँसे के बरतन) बनाने और बेचने वाले। झांझ=एक प्रकार का कांस्य वाद्य। झनकेरा=झंकृत होने वाला। सौंज=सामग्री।

२४ पसारी=पंसारी; मिर्च मसाले बेचनेवाला। बंदन=रोरी।

२५. भेपज=दवा। अश्वनीक्वार=आश्विनीकुमार, देव.वैद्य।

२७. बीरा=पान का बीड़ा। रंग=शोभा।

इनहीं तैं रचना फूलन की, फूलन हरष उछालनि
मंगल रूपा वृंदाबासी 'नागर' भाग बिसालनि ॥२८॥

धन-धन वृंदाबन के बारी

इनकौं कलपवृच्छ पत्रन की देत जीवका भारी
रुचिर रचत पनवारे दौंना साधन कौं सुखकारी
'नागरीदास' सुफल कर कीए बड़े भाग व्रतधारी ॥२९॥

धन-धन वृंदाबन के राज

करनी बल कुंजनि की रचना करत परम सुभ काज
बिसकरमां हरि मंदिर के बांधत श्री जमुनां पाज
'नागरीदास' लिये गज बाजी नित रहै जुरे समाज ॥३०॥

धन-धन वृंदावन के सुनार

जुगलरूप सेवा के भूषन देत हैं सदा सँवार
काज इहां को बड़भागन तैं दयो तिन्हे करतार
'नागरीदास' बसत तहाँ, तिनकी महिमा को नहिं पार ॥३१॥

धन धन वृंदाबन के तेली
तिनको नेह पसारत घर घर, दिन गत जोति नवेली
हरि मंदिरनि तीर जमुना कैं दीपग पुन्य बढ़ावै
'नागरीदास' महातम इनको कोऊ कहां लगि गावै ॥३२॥

धन धन वृंदाबन के गंधी

कुंज गलिन कौ करत सुबासित, सँग अलि फिरत मदंधी
सेवा स्यामा स्याम सेज सुख सदा सुगंध सुबासे
'नागर' इन्हे बसाए दंपति वृंदा बिपुन निवासे ॥३३॥

---

२८. डालनि = डलिया।

२९. बारी = पतरी, दोना बनानेवाले कहार। पनवारे = बड़े बड़े पत्तल।

३०. राजमैमार = पक्के मकान बनानेवाले। करनी = राजों का औजार, जिससे गारा उठा-उठा कर ईंटो पर रखते है। पाज = पुल।

३१. गज बाजी = हाथी घोडे।

३२. नेह = स्नेह (तेल)। दिन गत = दिन बीतने पर, रात मे।

३३. अलि = भौंरा।

धन धन वृंदावन के दरजी
सिसिर हेम रितु कारन अपने विपुन बसाए हरि जी
होत तन सुखी तीरथवासी इनकें हाथनि करजी
'नागर' निपुन फार कैं जोरत पट रचना के घर जी ॥३४॥

धन धन वृंदावन के जो टेर टेर फल देंहीं
अंब अनार जंबुफल नींबू खिरनी रस अमृत मैंही
आंड़ू, सफतालू 'रु फालसे केला पुनि अंजीर
कुंज गलिन मैं टेरत डोलत सुनि सिसु होत अधीर
स्यामा स्याम प्रेर मन जन को फलनि पियारे पावैं
'नागरीदास' भाग इनको कोउ सुकवि कहाँ लगि गावैं ॥४५॥

धन धन वृंदावन के पटुवा
रसिक जनन के पोवत नित प्रति माला कंठी बटुवा
पाट स्याम अरु पीत कनक रँग रचना रुचिर संवारे
व्रजभूषन के भूषन साजत, 'नागर' भाग अपारे ॥३६॥

धन धन वृंदावन के रँगिया
मनमोहन को फैटा रँगही, उतकी सारी अँगिया
बरखा व्याह गृहस्थ तरुन जन पट घट रँगे सुरग
या बन को रंग सर्वोपर बिच 'मागर' विविध प्रसंग ॥३७॥

धन धन वृंदावन के ग्वार
गऊ चरावत, जहाँ चराई मोहन नंद कुँवार
गोरज गंगा न्हात, न्हात पुनि जमुना, जात हैं पार
विपुन बास, टइ टहल गउन की, नागर परम उदास ॥३८॥

---

३४. हेमरितु = हेमत ऋतु । करजी = कैंची । पट रचना के घर = कुर्ते इत्यादि पहनाने के कपडे बनाने मे निपुण ।

३५. प्रेर = प्रेरित करते हैं ।

३६. पोवत = पोहते हैं, गुहते है । बटुवा = कपड़े की, डोरी लगी, छोटी थैली, जिनमें खैर सुपाड़ी लाची लौंग सुरती आदि नित्य प्रयोग के लिए रखी जाती हैं । पाट = तागा, डोरा । पटुवा = पटवा, पटहरा ।

३७. रंगिया = रँगरेज, कपडा रँगनेवाले । फेंटा = कमरबंद ।

३८. अंगिया = चोली ।

धन धन वृंदावन के कोली
सबही मैं अति आनंद करता इन मृदंग व्रत जोली
लेत बजाय नौछावरि हरि की अरु प्रसाद भरि झोली
'नागरिया' इन्हैं मिलक दई करि जनमोत्सव अरु होली ॥३९॥

धन धन वृंदावन के नाई
संत जननि के भद्र हेत ये बसत यहाँ सुखदाई
सेन बंस पावन कियो बन बसि, बरनौ कहा निकाई
'नागरदास' दास दासनि के भलो टहल इन पाई ॥४०॥

धन धन वृंदावन के बढ़ई
हरि सिंघासन, संत पावरी, तिनकौं निति प्रति गढ़ई
रचत कपाट कुंज की रच्छा, बड़े द्रुमनि के नाई
'नागरीदास' कहाँ लौं कहियैं इनको भाग बड़ाई ॥४१॥

धन धन वृंदावन के कुम्हार
वृंदावन रज जीवन जिनके, वृंदावन रज सार
वृंदावन रज तन मंडित रहैं, मन रज लगत सुप्यार
वृंदावन रज भाजन लैं, सुख 'नागर' लहत अपार ॥४२॥

धन धन वृंदावन के चुहरा
तिनको समता आदि साख मैं कहत हैं लोक समूहरा
बेचत सूप, धूर धूसर तन, गलियां झारत भले
'नागरीदास' बसत या भू मैं संत सति सौ पले ॥४३॥

धन धन वृंदावन जे बसैं
न्यारे न्यारे कहा बरनौं सब, स्वर्ग मुक्ति कौं हसैं

---

१९. कोली = मृदंग बजाने वाली एक जाति; नौछावरि = उतारा; वह धन या वस्तु जो किसी की मंगल कामना से उसके सिर के चारों ओर घुमाकर दान दे दी जाय।

२०. भद्र = बाल बनाना। सेन = नाई जाति के प्रसिद्ध भक्त, जो रामानंद के बारह शिष्यों में से एक हैं।

२१. पावरी = खड़ाऊँ। नाईं = [illegible]।

२२. चुहरा = झाड़ू [illegible], भंगी, चुहड़ा। सीत = सीथ, जूठन।

कहाँ आय कहाँ जाय, कहाँ के अति वड़ भागी लखैं
'नागर' ए देखत औरन कैं पाप सकल तन नखैं ॥४४॥

धन धन बृंदावन जे आवैं
सुंदर करत प्रीत संतन सौं निति प्रति नैंति जिमावैं
मन वच क्रम सौं सेवत साधन, चरननि लगि लपटावैं
'नागरीदास' भाग तिनको कोऊ कहां लगि वरनि सुनावैं ॥४५॥

धन धन बृंदावन जिनको मन
बृंदावन हित तरफत व्याकुल, परबस दूर धर्यो तन
बृंदावन को ध्यान हिये मैं, बृंदावन कौ गावै
बृंदावन वासिन सौ 'नागर' प्रेम पुलकि लपटावैं ॥४६॥

धम-धन बृंदावन व्यौहार के रच्छक
राजा हाकिम धर्म सहायक बन वासिनि के पच्छक
बृंदावन की नाव-छाप सिर, पूरब पुन्य प्रतच्छक
'नागरीदास' सबनि सौं सूधै, दुष्टनि कौं नाहर से भच्छक ॥४७॥

धन-धन बृंदावन के भूमिया लोग
जेसैं वार बनी काँटन की, रचे स्याम त्यौं रच्छया जोग
ह्यां हीं उपज, खपत हैं ह्यां हीं, अनत जाय नहिं करैं वियोग
'नागरीदास' सुखी या रज मैं, तिनकैं दूध दही के भोग ॥४८॥

पशुपच्छी जंतु वर्णन

धन-धन बृंदावन की गइया
बृंदावन मे चरत हरे तृण बृंदावन की छइया
बृंदावन गोपाल फिरे सँग, जिनकी जगत प्रसंस
ये सुरभी बृदावन की, सो हैं उनहीं को अंस
बृंदावन मै वसत निरतर, बृदावन जन छीवैं
'नागर' वड़भागी सो, इनको दूध प्रसादी पीवैं ॥४६॥

---

४७. पच्छक = पक्ष लेनेवाले। प्रतच्छक = प्रत्यक्ष करनेवाले।

४८. भूमिया = (१) जमीदार, (२) ग्राम देवता। वार = खेत की रखवाली के लिये चारों ओर काँटों का वाड़ा। जोग = योग-क्षेम; खेम कुशल। खपत = समाप्त हो जाते हैं।

४६. छइयां = छहियां; छाँह मे। छीवैं = छूते हैं।

धन-धन वृंदावन के बंदर
अपने भुज बल भोजन करहीं, मांगत नहिं पायन पर
गोपिन के घर बाल केलि मैं लियैं फिरे गोपाल
माखन चोर खवायो माखन अरु पकवान रसाल
तिनकौं बंस बसत ए कुंजन, कुंज कलप द्रुम ध्यावैं
'नागरिया' नित अनायास ही मन बांछित फल पावैं ।।५०।।

धन-धन वृंदावन के स्वान

संत सीत की करैं जीवका, जमुना जल को पान
कुंज द्वार चौकी में चौकस, रहि रजकरत सनान
'नागरिया' जे बिमुख मनुष है, ते इनके न समान ।।५१।।

धन-धन वृंदा बिपुन बिलइया ।

महा प्रसाद छल सौं छिपि लैहीं, घर-घर की ह्वै हिलइया
ह्यां उपजत अरु लीन होत ह्यां, बाहिर नहिं निकलइया
'नागरिया' जे जंत इहां के, सब तन रेणु मिलइया ।।५२।।

धन-धन वृंदावन के गदहा

चूना माटी ईंट के ढोहक, साधन के सुख सधहा
हरि मंदिर अरु कुंज घाट सब इनहिं पीठनि बने
'नागर' ये परमारथी पूरे, या दुर्लभ रज सने ।।५३।।

धन धन वृंदावन के काग

माखन चोर के कर तै रोटी लै भाजे बडभाग
कुंजनि माझ बसेरो करहीं, कुंजनि सौं अनुराग
'नागर' वे शुभ बोलत हैं निति, संत सीत सौं लाग ।।५४।।

धन धन वृंदावन के पच्छी

कोयल कीर कपोत कोकिला मोर चकोर निलच्छी

---

५०. पायन पर = दूसरों के पैरों पर गिर कर; गिडगिड़ाकर ।
५२. बिलइया = बिल्ली । हिलइया = हिलनेवाली, प्रवेश करने वाली, घुसने वाली ।
५३. ढोहक = ढोनेवाले । सधहा = साधने वाले, सिद्ध करने वाले, पूर्ण करने वाले ।
५४. लाग = लग्न

बोलत कल बानी कुंजनि मैं, दपति के मन भाए
'नागर' नित्त विहार जुगल कैं कवि रसिकनि ए गाए ॥५५॥

धन धन वृंदावन के जंत

छोटे मोटे कहां लगि बरनौं, तिनकी जात अनंत
उपजत खपत इहां एई सब सब अधिकारी हौनै हैं अंत
'नागरीदास' सकल बड़भागी, जे इह रेणु बसंत ॥५६॥

वृंदावन-वास

किते दिन बिन वृंदाबन खोए

यौं ही वृथा गए ते अबलौं राजस रंग समोए
छाड़ि पुलिन फूलनि की सज्जा, सूल सरनि पर सोए
भीजे रसिक अनन्य न दरसे, बिमुखनि के मुख जोए
हरि बिहार की ठौर रहे नहिं अति अभाग्य बल बोए
कलह सराय बसाय भिठारी, माया रांड़ बिगोए
इक रस ह्यां के सुख तजि कैं, हँसे कभू कभू रोए
कियो न अपनौं काज, पराए भार सीस पर ढोए
पायो नहीं आनद लेस, मै सबै देस टकटोए
'नागरीदास' बसे कुंजनि मै जब, सब बिधि सुख भोए ॥५७॥

कृष्ण कृपा गुन जात न गायो

मनहुँ न परस करि सकै, सो सुख इनहीं दृगनि दिखायो
गृह व्यौहार भुरट को भारो, सिरपर सौ उतरायो
'नागरिया' कौं श्री वृंदावन भक्ति तख्त बैठायो ॥५८॥

---

५५. इस पद के द्वितीय चरण मे प्रयुक्त 'कोयल' और 'कोकिला' एक ही पक्षी के रूपक हैं, अतः यहाँ पुनरुक्ति दोष है। निलच्छी = नीठाच, नीलाक्षी; हंस, हंसिनी। ए गाए = इनका गुणानुवाद किया है।

५६. जंत = जीव जंतु। बसंत = बसते हैं।

५७. किते = कितने। राजस रंग = राजसी वृत्ति। समोए = डूबे, लीन। पुलिन = नदी-तट। जोए = देखे। भिठारी = भटियारी। बिगोए = खराब किया, बरबाद किया, नष्ट किया। कभू = कभी। लेस = लेश; थोड़ा सा। टकटोए = अंधों की तरह हाथ फैला फैलाकर स्पर्श ज्ञान से ढूँढा। भोए = भींगे।

५८. मनहुँ = मन की

हमारी बाँह गही बृंदाबन
राख्यो अपनी सीतल छहियाँ, जग दुख घाम तप्यो तन
मो मैं कछू कृपा बल नाहीं, हौं जानू अपने मन
'नागरीदास' नांव-हित सौं, करि कृपा करायो धन-धन ।।५९।।

देह धरैं को अब फल पायो
बीते बहुत बरस असमंजस, माया नाच नचायो
थोहर बन तैं मोहि काढ़ि, थिर बृंदा बिपुन बसायो
कौन कृपा अनयास भई, हौ निज मन हेरि हिरायो
निस दिन पहर घरी छिन-छिन निति आनंद रहै सवायो
'नागरीदास' दास ह्वै कै जो इहाँ न आयो, सो पछतायो ।।६०।।

अब तो यही बात मन मानी
छाँड़ौ नहीं स्याम स्यामा की बृंदाबन रजधानी
भ्रम्यो बहुत लघु धाम बिलोकत छिनभंगुर दुखदानी
सर्वोपर आनंद अखंडित सो जिय ठौर सुहानी
हरि भक्तनि मैं अस्तुति है ही, निंदा मुख अभिमानी
'नागरिया' नागर कर गहिहैं, रहिहैं जक्त कहानी ।।६१।।

हमारी सबही बात सुधारी
कृपा करी श्री कुजबिहारनि अरु श्री कुंजबिहारी
राख्यो अपनै बृंदाबन मैं, जिहि ठा रूप उजारी
नित्त-केलि-आनंद अखंडित, रसिक संग सुखकारी
कलह कलेस न ब्यापे इहिं ठा, ठौर बिश्व तैं न्यारी
'नागरीदास' इहिं जनम जितायो, बलिहारी बलिहारी ।।६२।।

हम तो बृंदाबन रस अटके
जब लगि इहिं रस अटके नाहीं, तब लगि बहु बिधि भटके
भये मगन सुख सिंधु मांझ ज्यों, सब तजि कैं जग खटके
अब बिलास रस रासहि निरखत, 'नागरि' नागर नट के ।।६३।।

---

५९. तप्यो = तपाया हुआ । (नागरीदास) नाम होने के कारण ।

६०. थोहर = सेंहुड़ । हेरि हिरायो = खो गया ।

६३. खटके = भय, डर ।

भए हम वृंदावन रस भोगी
जा इस भोगहिं कर न सकत, जे जगत बिपत के रोगी
रास बिलास 'रु कथा कीरतन हरि उच्छव आनंद
निस दिन मंगल मई समय तहाँ नट नागर ब्रजचंद ॥६४॥

निति आनंद वृंदावन महियाँ
नित्त केलि कउतक रस लीला, निरखि-निरखि दृग हारत नहियाँ
नित्त हरे द्रुम फूल फलनि जुत, जमुना तट अति सीतल छहियाँ
नित नउतन सब लोग सनेही, प्रीत रीत यह और न कहियाँ
नित्त बास, निति कथा कीरतन, निति प्रति गति मति रहत उमहियाँ
नित बास तहाँ 'नागरीदासहि' स्यामा स्याम दयो गहि बहियाँ ॥६५॥

वृंदावन सुबसत जमुना तीर
सदा रूप की पैंठ लगी रहै, कबहुँ न होत उछीर
प्रेम नदी सी फिरत रगमगी, गलिनि गलिन बिच भीर
'नागरिया' निति मिले देखियत साँवर गउर सरीर ॥६६॥
हमारी अब सब बनी भली हैं
कुंज महल टहल दई मोहिं, जहाँ निति रंग रली हैं
साहिब स्यामा स्याम, उसीली ललिता ललित अली हैं
नागरिया पैं कृपा करी अति श्री वृषभान-लली हैं ॥६७॥
वृंदा बिपुन सरिख रजधानी
राजा रसिक बिहारी सुंदर, सुंदर रसिक बिहारनि रानी
ललितादिक ढिग रसिक सहचरी जुगलरूप मद पानी
रसिक टहलनी वृंदा देवी रचा रुचिर निकुंज रवानी
जमुना रसिक, रसिक द्रुम बेली, रसिक भूमि सुखदानी
इहां रसिक चर थिर नागरिया रसिकही रसिक सबै गुन गानी ॥६८॥
राय गिरधरन नव कुंज रजधानि बिच संग श्री राधिका रानि राजैं
मोर चहुँ ओर, हय हींस हलचल चमू

---

६५. महियाँ = मे। नहियाँ = नहीं। नउतन = नूतन, नवीन। कहियाँ = कहीं।
उमहियाँ = उल्लसित। बहियाँ = बाँह, हाथ।
६६. पैंठ = हाठ, बाजार। उछीर = खाली जगह, अवकाश।
६७. उसीली = वसीला करनेवाली, दासी।
६८. मद पानी = मद (शराब) पीने वाली। रवानी = रौनक।

गहर जल घोष निस्सान बाजैं
कोकिला कीर कलहंस बंदी बहुत
बड़े निति केलि के बिरद गाजैं
प्रेम परधान मति, मदन मंत्री महा,
देत रस मंत्र सब सुखनि साजैं
मत्त मधु माधौ कुतवाल के दूत अलि
फिरत कुसम सौरंभ के काजैं
सुफल फल देत तरु देव बहो भाँति अरु
नगर कुल देवी बृंदा बिराजैं
रूप उत्सव सदा सहज मंगल दगनि
उभै आसक्त लखि लाज लाजैं
'दास नागर' निकट ललित ललितादि तहाँ
राज आनंद छकि चढ़िय छाजैं ॥६९॥

कुंज छवि पुंज बहु बितन सेवत सदा
जुगल आसक्त रस एक आनंद
लिबढ़ि रहि द्रुम लता मत्त अलि कुसम प्रति,
पलहु नहिं घाम रवि बिरह दुख दंद
मधुर कल कंठ ललितादि पूरित महा
रंग मय राग सारंग धुनि मंद
'दास नागरि' तहाँ स्याम स्यामा निकट
ठाढ़ी इक टक जु रही निरखि मुखचंद ॥७०॥

दोहा

अष्टादस सत दस जु नव, संवत माघ सुमास
'वन जन प्रसंस' कल ग्रंथ यह, कियो नागरी दास ॥७१॥

---

६९. राय = राजा। रानि = रानी। हींस = घोड़ों की बोली। हकचक = कोलाहल। बंदी = गुणानुवाद करनेवाले, भाट। गरजैं = गाते हैं। परधान = प्रधान मंत्री। सौरंभ = सौरभ, सुगंधि। छकि = पूर्ण रूप से अघाकर, तृप्त होकर। छाजैं = सुशोभित होती है।

७०. लिबढ़ि = लिपट। सारंग = एक विशेष राग।

(३) ब्रज लीला

श्री नंदसुत गोपीजन वल्लभो जयति

दसमस्कंध के पूर्वार्द्धानुसार श्री व्रज लीला

नंद गृह जन्मोत्सव खंड

राग सोरठ

श्री वल्लभ कुल बंदौ
करि ध्यान परम आनंदौ
धनि नंद जसुमति रानी
लयो कृष्ण जनम जग जानी
कृष्ण जनमत भयो आनँद गृह महा मंगल ठयो
घोष उच्छव भीर भारी नभ बिमानन सौं छयो
दूध दधि घृत मची कादौं मनौं भादौं बरसहीं
पुहुप बरसा करत सुर अहलाद अति जिय सरसहीं
नवनिद्धि घर-घर फिरत कँवला गोप कुल गन आलिन मैं
छाय रह्यो बैकुंठ तैं सुख अधिक गोकुल गलिन मैं
तिहीं छिन तैं सकल व्रजजन संपदा सुख सौं सजे
'दास नागर' धन्य सो जिहि परम हित करि हरि भजे ।।१।।

दैत्यबध खंड

झूलत पालनैं हरि राई
भंज्यो सकट बकी बनि आई
चकित रही व्रज बाला
यह को है रूप रसाला
प्रथम रूप रसाल धरि कै लाल गहि लए गोद मैं
कंस रिपु को पाय पलनां पूतनां भइ मोद मैं
करत अस्तन पान लीनै प्रान ऐंचि सु सो समै

१. वल्लभ = प्रिय। उच्छव = उत्सव। कादौं = कर्दम, कीच। कँवला = कमला, लक्ष्मी। आलिन = सखियों।

कृपानिधि हरि, दई गति करि, गिरी तन षट कोस मैं
जमला अर्जुन तारि दई, मुख मात बिस्व दिसाय कैं
तृणावर्त अरिष्ट अघ बक हत्यो बच्छ फिराय कै
संखचूड़ प्रलंब केसी व्योम धेनु कबहु हते
'दास नागर' गोप तन हरि किए आसुर सदगते ।।२।।

दावानल पानादिक व्रज रच्छिक लीलाखंड

करि पान दावानल लयो
गहि काढ़ि काली अहि दयो
गोपन बैकुंठ दिखायो
हरि व्याल तै नंद बचायो
लयो नंद बचाय बहु बिधि सकल व्रज रच्छया करी
सत दिन कर धारि गिरिवर प्रलय जल मेटी झरी
द्रुमन के खग नग के ऊपर तिन्है कहुँ नहिं जल छियो
पर्यो पॉयन इन्द्र तब सिर अभै कर गिरधर दियो
गोप गो गोपीन कै मन सत दिन उच्छव रह्यो
कहत जै जै सकल सुर नॅद नंद गोबिंद पद लह्यो
बिबिधि लीला करत व्रज मै नंद सुत अति सोहने
'दास नागरि' कृष्ण अरु बल महा मन के मोहने ।।३।।

माखन चोर लीला खंड

जसुमति सुत सुखरासी
रसमग्न सकल व्रजबासी
तिय धाम काम सब भूली
रहै बाल केलि रस भूली
करत बालक केलि बहु बिधि सबन के मन कौ हरैं
चोरहीं दधि दूध घर-घर जदपि लै कोनैं धरैं
वृंद बाँदर अरु सखा सब तिनहिं संग खवावहीं
देखि भवनी भवन आवत तहाँ तैं भजि जावहीं
कहूँ बालक चढ़ि अखूखल, जाकै पर फिर सावरो

---

२. को है = कौन है । सकट = शकटासुर । बकी = बकुली (के समान कपटी)।
ऐंचि = खींच । आसुर = असुर ।

रंभ्र घट करि मह्यो पीवत नंद सुत मन भाँवरो
जग्य मै आवत न कीनैं वेद मंत्र उपाय कै
'दास नागर' सो'व ब्रज मैं दही खात चुराय कैं ॥४॥

गोचारम छाक लीला खंड

वन वन गाय चरावै
गावैं अरु बैन वजावैं
वलराम कृष्ण सुखदाई
वहु लीला करत सुहाई

करत लीला विविधि वन मै संग वालक मंडली
छाक जेवत, ढाक छहियॉ, चितैं चकित कमंडली
चहूँ दिसि ग्वालावली, ब्रज चद विच अवरेखहीं
ललित लीला वाल कउतक सुर विमानन देखहीं
परसपर चाखत चखावत, हसि हसावत हे तवैं
जग्य भुक क्यौं जूठ जेवत हरे विधि वछरा जवैं
सजल जग रह्यो हेरि जाकौं, सोई हेरन कौं चले
'दास नागर' करत भोजन फिरत, मोहि लागे भले ॥५॥

वछराहरन लीला खंड

राजस गुनमद फूलि कैं
हरे ग्वाल वच्छ विधि भूलि कैं
फिर तैसे तिहिं ठां चितैं
गिरयो चरन चतुर्मुख ही हितैं

गिरयो चरननि दंड ज्यौं ब्रह्मांड कर्ता स्याम कैं
बहु रूप चितवत चतुर्भुज विच अवनि वृंदाधाम कैं
डार अरु फल फूल दल द्रुम कृष्णमय सव जानियैं
अहा वृंदावन महातम कहा कहि जु वखानियैं

---

(४) आवत न = आहुतन (हस्तलेख)

३. सौंहने = सुहावने । वल = वलराम ।

४. अलूखल = उलूखल, ओखरी । जाकैं पर = उसके (ओखरी के ऊपर चढे बालक के) ऊपर । मह्यो = मही, मट्ठा । भाँवरो = भाने वाले ।

५. कमंडली = कमंडल वाला, ब्रह्मा । अवरेखहीं = सुशोभित हो रहे हैं । हे = थे । जग्य भुक = यज्ञ का भोग लगाने वाले । हेरन = खोजने के लिए ।

कही हरि तरवरनि महिमां आपु मुख बलबीर कौ
रहो तिनकौ ध्यान रहे जिय परसि जमुना नीर कौं
धन्य वह बन भूमि जिहि ठां लाल पद पंकज धरें
'दास नागर' धन्य सो नर बास बृंदावन करें ।।६।।

जग्य पत्नी लीला खंड

पूरन ब्रह्म नंद के ऐना
सुंदर स्याम कमल दल नैनां
कब देखै रूप प्रकास
लगि जग पत्नीन मन आस
लगी आस, उदास जिय मैं, रहैं डारि उसास कौं
नैन भरि वन ओर चितवैं, ज्यौं चकोर प्रकास कौं
कह्यो जिहि छिन स्याम को संदेस ग्वारनि आय कैं
उठी लै लै बिबिधि भोजन, चली आनँद छाय कैं
धरत पग चंचल तऊ भए पंथ कोस करोर के
चंद चाहनि छुटे छूटे बृंद मनहुँ चकोर के
एक रोकी गेह, सो तजि देह सब पहिलैं गई
'दास नागर' लाल करि उरमाल तिंहि बालहि लई ।।७।।

ढिग आई दुज बाला
रही इक टक लखि नँदलाला
ठाढ़े परम छबि पावैं
हरि कर गहि कँवल फिरावैं
कँवल फेरत स्याम ठाढ़े, कँवल मुख मुसकावहीं
कँवल माला चरन परसत, कँवल दृगनि ढुरावहीं
वाम भुज धरि सखा अंसहिं,झुके अति छबि छाय कैं
तिहीं छिन लखि कोटि मनमथ, रहे हैं सिरनाय कैं
निरखि मोहन माधुरी, दुजबधू प्रननि वारहीं
देत भोजन, नेह आतुर देह कौ न सम्हारहीं

(५) हस्तलेख में आठवीं पंक्ति नहीं है। (६) दसवीं पंक्ति हस्तलेख में नहीं है। यह पद 'पद प्रबोध माला' का ३२ वाँ पद है।

करत ही निस द्यौस भामिन सो मनोरथ सब ठए
'दास नगर' नद नंदन प्रीत ही कैं बस भए ॥८॥

चीरहरन , रास , बरदान, वेणुरव-आरंभ खंड

गोपी जन जमुना न्हावैं
देवी पूजि पूजि सिर नावैं
कात्यायनी वर दीजैं
हमारे नंद-पुत्र पति कीजैं
नंद सुत चित चोर आए , लए चीर चुराय कैं
प्रीति साँची निरखि कैं , दए चीर वर मुसकाय कैं
आयहैं अब सरद रात्री , रमण मिलि करिहौं जबैं
सकल पूरन काम ह्वै हीं, मदन मद मोचत तबैं
सरदनिसि आई जु वे बहु मालती फूलन छई
उदित पूरन चद किरनैं सर्व बन व्यापक भई
अति मनोहर समैं निसिमुख बेणु हरि अधरनि रली
'दास नागर' महा मोहन मत्र धुनि दूती चली ॥६॥

रासारंभ खंड

बंसी स्याम बजाई
सो मधुमय धुनि छाई
परी श्रवन मै जाकै
सुधि नहिं रही फिर ताकै
रही नाहिन सुधि तनकहू जिहि भनक श्रवननि सुनी
गई छूटि समाधि सिव की बिबस मन ग्रीवा धुनी
द्रुमनि पर जकि थकि रहे खग, रुक्यो जमुना नीर है
हलत नाहिं द्रुमावली , थकि रह्यो मंद समीर है
चली सुनि ब्रज बाल मारग नाद अमृत धारि कैं
गेह तजि कैं नेह आतुर , लोक वेद बिसारि कैं

---

(८) यह पद 'प्रबोध माला' का ३३ वाँ पद है। नवीं एवं दसवीं पंक्तियों का अधिकांश हस्तलेख में नहीं है। हस्तलेख में आठवाँ चरण छूट गया है।

१. निसिमुख = संध्या। रली = मिली।

रुकी , सो नहिं रुकी गृह बिच , गई तन तजि भामिनी
'दास नागर' स्याम घन सौं मिली चलि ज्यौं दामिनी ॥१०॥

रास रमण लीला खंड

अलि अवली सब ठाढ़ी
मनु चित्र चितेरे काढ़ी
रहि इक टक नैन बिसाला
मधि निरखि त्रभंगी लाला
मद्धि नट नागर त्रिभंगी कँवल मुख मुरली धरैं
वंक भुव , मनहरन द्ग, सिर मुकट, बन माला गरैं
हरि मनोहर माधुरी तिय पिक्ख , पल लागै नहीं
जिहीं तन जाके परे द्ग , थके पुनि तिहिं के तहीं
रहे अरबरि स्यामहू इत लखि तियनि की ओर हैं
वहुरूप धन मै परे द्ग , भए भरे के से चोर हैं
भीर वहु चंदाननी , बन भयो रूप प्रकास है
'दास नागर' सबनि हिय मैं रास करन हुलास है ॥११॥

मन मोहन हित नातै
हसि कहन लगे कछु बातै
सुनत बिंग के बैना
भरि लीने तिय जल नैना
लए भरि कैं नैन सब , रुख रोष जुत भुव भंग की
जगत विजई हित खिंची हैं मनहु चाप अनंग की
सतर ह्वै ह्वै बंक चितई , लगी छबि अभिरामिनी
मंद सहज सुछंद सौ फिर दए उत्तर भामिनी
तब बिहँसि कैं , रस द्ष्टि सौं , पिय सबन कौं अंकनि भरी
आरंभ गान सुरास हित मिलि महामोहन धुनि करी
करन सौं कर जोरि द्वै द्वै तिय भई बिच श्याम कै
'दास नागर' रच्यो मंडल मध्य वृंदा धाम कैं ॥१२॥

---

१०. भनक=धीमी ध्वनि। धुनी=धुनने लगे। जकि=भौंचक्के होकर, आश्चर्य चकित होकर। थकि रहे=थक गए।

११. मद्धि=मध्य में, बीच में। भुव=भ्रू, भौंह।

१२.

रास बिरहोत्पन्न लीला खंड

बिहरत वन बनवारी
कहुँ दुरि गए ढिग लै प्यारी
बिरह बिबस तिय हेरे
संग मधुप गन घेरे

घेरे मधुप सुक मोर, लखि मुख ओर रहत चकोर है
विफल भइ बूझत लताद्रुम कितै नंद किसोर हैं
नीर नैननि, पीर हिय, बिन धीर बिलपत डोलहीं
कितै हो हरि प्राननाथ, यौ सहित आरति बोलहीं
लाल की लीला ललित मिलि तिहि समै सबहिन रची
बढ़्यो बिरह विषाद जिय, सुकवारि अबला तन तची
पियहि हेरत फिरत, टेरत सकल वन मैं, रगमगी
'दास नागरि' चद सौं बिछुरी किरन जनु जगमगी ॥१३॥

चार चरन चिह्न पाए
रज सो दृग सीस लगाए
पिय सुख सौं सुख भीनी
कछु कोपी नाहिं प्रवीनी

नहिन कोपी प्रेम [ओपी संग गोपी जानि कै
बहुरि देखी वही ठाढ़ी, तजी पिय सुख सानि कै
रगमगी अलक, सिथिल दृग, पुनि चलत धारा नीर है
तुट्यो मोतिन हार उर तैं, छुट्यो अंचल चीर है
डगमगत पग धुकि धरनि पर, नहि सकत रहि गहि धीर कौं
मनहुँ दीपक लोय लहकत, परसि मद समीर कौं
छुवत मुख द्रुम पात पल्लव, सकत नहिं निरवारि कैं
'दास नागरि' उठत पिय कौ "क्वासि, क्वासि" पुकारि कैं ॥१४॥

---

१४. हस्त लेख मे दसवाँ चरण छूट गया है

१३. आरति = आर्ति, दुःख। तची = संतप्त हुई।

१४. कोपी = कुपीत हुई, क्रुद्ध हुई। ओपी = कांतिमान हुई। लोय = दीप-शिखा। निरवारिकै = अलग करके। क्वासि-क्वासि = कहाँ हो, कहाँ हो।

हरि प्रागट्य ब्रजबाला मिलन खंड

महा सघन वन आवैं
तहाँ जी को लोभ न ल्यावैं
अपनैं अंग उजेरैं
रूप को सागर हेरै
रूप सागर सौं बिछुरि तरफरत बिधि ज्यौं मीन की
देखि कैं दुरि द्रुमनि मैं पिय चहै गति गोरीन की
लाल दृग भरि नीर लीनैं, पीर जिय व्यापक भई
तबहि तिन मै आय प्रगटे, सलज मुख, ग्रीवा नई
आनंद तब को कह्यो परत न, बहुरि बैठे पुलिन मै
रंग बाढ़्यौ दुहूँ दिसि हित बिहसि बातै खुलिन मैं
रिनी हौं तिहारो कहत, वारत अपनपो स्याम हैं
दास नागर ब्रज बधुनि लये मोल हरि बिन दाम है ॥१५॥

रास लीला खंड

निर्तत हैं ब्रज बामा
सुंदर छवि अभिरामा
दामिनि तन दुति राजै
मुख कुंडल थहरनि भ्राजै
थहरत कुंडल, फहरत अंचल, नहिं ठहरत उर माला
खूटत वैंनी, छूटत फूल, सु पिय मन लूटत बाला
सरस संगीतनि घट तन उघटत तत्त रंग तक्टि कटि लौंनी
तत थेई थेई थेई धुमकट तकथो परननि परत सुठौंनी
झं झं झनकत किंकिनि नूपर, खनकत बलया कंकन
उरप तिरप नट अलग लाग मै, लेत भुजन भरि अंकन
चंचल तन चलदल गत बिलुलित दुति अलात सी सोहैं
'नागरी दास' सुघर नर्तक सब गुन प्रगटत मन मोहै ॥१६॥

---

१४. जी को = जीव (हस्त०)
१६ परनिन = परतनि परत सुनौनी (हस्त०)
१५. नई = झुकी हुई, नमित ।
१६. थहरनि = प्रकंप, हिलना । खूटत = रुकावट डालती है । बलया = वलय, चूड़ी । चलदल गति = पीपल के पत्ते के समान । बिलुलित = चंचल, अस्त व्यस्त ।

अनूपम रास बन्यो है
सुर तान बितान तन्यो है
गिरयो काम काम के बाननि
नभ मोहे देव बिमाननि
देव बिमाननि कौतिक मोहे फूलनि कौं बरसावें
प्रेम मगन कौतूहल देखत दुदभि परन मिलावैं
निरखि सुरबधू पीड़त मनमथ, सब सुधि बिसरि गई है
कवरी छुटत, खिसत कुसुमावलि, नीबी सिथिल भई है
मधुमय राग मुरलिया मोहति, थिर चर, चर थिर कीनें
उडगन सहित चंद्रमा बिथकित, पैंड न आगैं दीनें
मुकुट लटक अस हस्तक भेदन अद्भुत रग बढ्यो है
'नागरी दास' रास मै रसमय नभ लौं सब्द चढ्यो है ॥१७॥

श्रम कन मुख हैं आये
मनु चद सुधा प्रगटाये
खिस बैंना झुकि मोहै
सिर सिथिल चंद्रिका सोहै
सिथिल चंद्रिका मुकुट झुकाहौ श्रमित अंग छबि पाए
उपजत गति कौतक पायन, मग डगमग डगनि डुलाए
स्वेद सुवास अंग प्रगटत भइ, संग भौंर भहरावैं
गउर स्याम तन नील पीत पट फैल फैल फहरावैं
गिरि गिरि परत बिमल नग भूषन, रही जु तन सुधि नाहीं
रसानन्द सागर अति बाढ्यो, मगन भए तिहि माहीं
मंडल रास बीच दोउ उरझे, गर बाहीं पिय प्यारी
'नागरी दास' बसो हिय राधा अरु श्री कुजबिहारी ॥१८॥

---

(१८) मग = मन (मु) (१६) साजहीं=आवही (हतस०) दसवाँ चरण हस्तलेख मे छूट गया है।

अलात = अंगारा; जलती हुई लकडी। परन = कोई वाद्य विशेष दुंदुभि के समान, चमडे से मढा हुआ, हाथ से बजाया जानेवाला। परननि = परनों पर। सुठौनी = सुठि, सुंदर।

१७. पैंड = रास्त। हस्तक = हाथ की भाव भंगी।

१८. बैंना = वेणी। भहरावै = एक साथ टूटे पड़ते हैं; भीड कर लेते हैं।

रासोत्तर जलविहार खंड

रास मैं रंग रह्यो है
सो नहि जात कह्यो है
श्रमति अंग सरसाए
तब चलि जमुना आए
आए सु जमुना तट पुलिन तहाँ कँवल सौरभ साजहीं
धसे जल रस मत्त क्रीड़त, छिरकि तन छिरकावहीं
अंजुलिन जल छुटत, छबि कबि कहत जुगत विचारि कैं
गृह तरनिजा उछाह मुकता मनु उछारत वारि कैं
चंद्रिका मैं चमकि बूँदै गिरत यो छबि पावई
जानि बहु उडपति अवनि उड़ि उड़ि गगन तै आवई
पारिजात के जोतिमय जनु फूल खेलत फैलहीं
'दास नागरि' जल कलोलत, छबि सौ छिरकत छैलहीं ॥१६॥

भीजे तन छबि पावैं
पिय के लखि नैन सिरावे
प्रेम सनी तिय जल सनी
राजत ज्यो कंचन कुमुदिनी
मनहुँ कंचन कुमुदिनी जल बीच दुति जगमग रही
भई लखि ब्रजचंद प्रफुलित, परति नहिं सोभा कही
तन छबीले बार भीजे लगे अति छबि पाय कै
ज्यौं 'व चंदन पूतरिन सौं रहे अहि लपटाय कै
कबहु तन जल मगन बिथुरे कचनि बिच मुख देखियै
ज्यौ सिवारन चंद उरझे तिरत जल अवरेखियैं
रूप जगमग रह्यौ, सलिता खिली राका जोति है
'दास नागरि' तिहिं समैं जलकेलि यहौ बिधि होत है ॥२०॥

जलबिहार-उत्तर गृह-आगमन खंड

क्रीड़त जुवतिन संग
हरि ब्रीडत कोटि अनंग

---

१६. जुगत = युक्ति। उछाह = उत्सव।
२०. सिरावैं = शीतल करते हैं। सलिता = सरिता, नदी।

काम केलि रस भीने
निसि बिबिधि कुतूहल कीने
कीनें कुतूहल बिबिधि निसि रस मंडली आनँद छई
रूप सरसनि, अंग परसनि, रंग बरसनि अति भई
नीर बिच बलबीर, गज ज्यौं संग करनिनि सुख लियो
बाहु सुंडा दंड सौं अति अंबु अवगाहन कियो
झेलि सुखसागर चले, निख नैन उन्मीलित किय़ैं
रहि मनोहर मंडली छकि, प्रेम रस मदिरा पियैं
काव्य आश्रय भई बातैं सुधा श्रवन सुहावहीं
'दास नागर' धन्य सो ब्रज ललित लीला गावहीं ॥२१॥

---

२१. ब्रीड़त = लज्जित करते हैं।

(४) गोपी प्रेम-प्रकास

दोहा

गोपी गोपीनाथ के, एक प्रान द्वै गात ।
तिनहीं कौं सिर नाय कैं तिनकी बरनौ बात ।।१।।

बचनिका

(अथ प्रथम प्रयोजन)

श्री कृष्ण उद्धव कौ ब्रज पठए। ताको जग प्रसिद्ध प्रयोजन तो यह, जो श्री नंद जसोदा गोपी गोपन को समाधान करनौ,प्रीति लोकरीति अनुसरनौ। इति प्रथम प्रयोजन।

अथ दुतीय प्रयोजन

श्री कृष्ण लीला पुरुषोत्तम अवतारी। सो जाकैं अभिमान होय ताको अभिमान रहन न दे सो देख्यो उद्धव ज्ञान को अवतार हैं अरु याकै अभिमान हैं, जो ग्यान उपरांत और पदारथ कोऊ नाहीं। याकैं लियैं इनकौं ब्रज पठये, अरु उद्धव के चित्त मैं जो मुख्य आसय हो सोई श्री कृष्ण उन्हकौ या लियैं कहायो, जो इनकैं उनकैं यही चरचा होइ, जो गोपी प्रेम भक्ति को स्वरूप हैं, उनके मुख की बात सुनि उनकी दसा देखि इनको वह मत अरु अभिमान दूरि होयगो ।।

दोहा—कहा उद्धव, कहा इन्द्र अरु, मदन महा मद खान ।
काहू कैं तन तनक हरि, रहन दयो नहिं मान ।।२।।

इति द्वितीय प्रयोजन

अथ तृतीय प्रयोजन

जो सगुन निर्गुन सास्त्र तेऊ गावत हैं, सो उद्धव के तो निर्गुन ब्रह्म को आसै। अरु गोपीन के प्रेम रूप को आसै। यो ग्यानी, वे अनुरागी। सो इन दोवन के चरचा करावनीं। सो जामैं जो सरस रहै अरु आपनौं रंग वाको लगाय देवैं, सोही मत मुख्य जग मैं प्रसिद्ध होय।

दोहा—प्रेम रूप मोहन मई, उमगै उदधि उलैंड़ ।
कौन सकैं तब रोकि कैं, ग्यानधूरि की मैड़ ।।३।।

इति तृतीय प्रयोजन।

---

१. उलैंड = प्रवाह, उमडना

२. तन तैं = ओर से। ब्रज तन = ब्रज की ओर।

३. सुफलक सुत = अक्रूर, जो कंस की ओर से आकर कृष्ण को मथुरा ले गए थे।
सुचित = स्वस्थ चित्त, शांत। झख = मछली। पान्यौं = पानी।

अथ चतुर्थ प्रयोजन

जो श्रीकृष्ण तो सिंगारमय, परमरसिक मनि; अरु उद्धव निकटवर्ती सखा, सो सदा रूखे ग्यानी। सो इन उन के संग में सदा रंग सुन रंगों करि निकरे; एक मत प्रकृत चित। तातें हरि सुजान जानिमन जानि कृपा करि ब्रज के रंग की रैनी में रँगाय मँगाए।

दोहा—प्रेमभक्ति नवरंग की रैनी ब्रज अभिराम।
बिना रँगे नहि रंग मन, किमि क्यों राचैं स्याम ॥४॥

इति चतुर्थ प्रयोजन।

अथ पंचम प्रयोजन

जो श्री कुंज बिहारी तिनको नित्य बिहार श्री वृन्दावन में। तिन नट नागरि को उद्धव निज सखा है, ताकों श्री वृन्दावन में राखिये। सो याहि तिन उत्कंठा ऐसे बास होय। सो याहू तें उहाँ पठये, जो गोपी सतसंग के रंग को सुख लिहें राज या ठौर को बास चाहेंगे सो ऐसे ही भयो। उद्धव प्रार्थना वचन—श्लोक—

आसामहो चरणरेणुजुषामहं स्यां वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम्। *
या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा, भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम् ॥५॥

अर्थ—सो ऐसी इनकी प्रार्थना सुना दियो जान। तातें श्री कृष्ण कृपा करि गोप्य स्वरूप द्रुमलता तद्रूप करि यो वृन्दावन राखे। सो गोपिन की चर्म दृष्टि करि कैसे दीसें। अब ब्रजवासी हरिगुन गायक वैष्णव उद्धो को एक अंस करिकै मानै, सूरदास को तो श्री मत गोस्वामी विट्ठलनाथ जी द्वारा यह भेद जान्यो, इनके पद भ्रमरगीत के अनुभवीक तिनहू तें जान्यो परयो।

पद-स्तुति दोहा

किधौं सूर को सर लग्यो, किधौं सूर की पीर।
किधौं सूर को पद लग्यो, तातें बिकल सरीर ॥६॥

सो अब उनही के पदन करिकैं प्रसंग वर्नन करियतु है।

अथ उद्धव प्रति श्री कृष्ण वचन।

उद्धव बेग ही ब्रज जाहु
श्रुत सँदेस सुनाय मेटो बल्लभिन को दाहु

---

४. सिद्धि = मुक्ति। बीच = अंतर। निज = खास। बहाऊँ = दूर कर दूँ।

६. बाय = विपत्ति, बला। परवानें = पतंग, दीपक पर जल मरनेवाला कीड़ा।

* श्री मद्भागवत, स्कंध १०, अध्याय ४७, श्लोक ६१।

काम पावक, तूल तन मन, बिरह स्वास समीर
भस्म नाहिन होन पावत लोचननि के नीर
आजु लौं इहिं भाँति उद्धव कछू कुसल सरीर
इते पर बिन समाधानहिं जरहिंगी तिय धीर
बार बार कहा कहौं सुनि सखा साधु प्रवीन
सूर सुमति बिचारि, जैसें जियहिं जल बिन मीन ॥१॥

अथ गोपी प्रति गोपी वचन, पद

कोऊ वैसिही अनुहारि
मधुबन तन तैं आवत हैं री, देखो नैन निहारि
वैसे हि मुकुट, मनोहर कुंडल, पीत बसन रुचिकारि
वैसे हि बात कहत सारथि सौं ब्रज तन बाँह पसारी
इतनैहूँ अंतर यौ मानत मनौं बीते जुग चारि
सूर सकल तलफत आतुर ह्वै ज्यौं 'ब मीन बिन बारि ॥२॥

कवि बचन तथा गोपीं प्रति गोपी बचन

देखो नंद द्वार रथ ठाढ़ो
बहुरि सखी सुफलक सुत आयो, परयो सँदेह उर गाढ़ो
प्रान हमारे तबहि गयो लैं, अब किंहि कारन आयो
मै जानी इहिं बात सत्य कै, क्रिया करन उठि धायो
इतनै अंतर लखि सुफलक सुत तिहि छिन दरसन दीनौ
तब पहिचानि सखा हरि जू को परम सुचित मन कीनौ
तब प्रनाम कियो अति रुचि करिकै और सबनि कर जोरे
सुनियत हुते तैसे ही देखे परम सुहृद अति भोरे
तुम्हरो दरसन पाय, आपनो जनम सुफल करि जान्यौ
सूर सु उद्धव मिलत भयो सुख, ज्यौ झख पायौ पान्यौं ॥३॥

अथ गोपी प्रति उद्धव बचन, पद

सुनहु गोपी हरि को संदेस ।
करि समाधि अंतरगति ध्यावौ, यह हरि को उपदेस
हौ अबिगत, अबिनासी पूरन घट-घट रहौ समाई
जोग तत्व बिन मुकत न होई बेद पुराननि गाई
सगुन रूप तजि, निर्गुन ध्यावौ इक मन इक चित लाय
यह उपाय करि बिरह तरो तुम, मिलै ब्रह्म तब आय ।

दुसह सँदेस सुनत माधौ को गोपी जन बिलखानी
'सूर' बिरह को कहा लगि कहिए, नैंननि बरसत पानी ॥४॥

उद्धव प्रति गोपी वचन

ऊधो या ब्रज की दसा बिचारो
ता पीछे यह सिद्धि आपनी, योग कथा बिस्तारो
जा कारन पठए तुम माधौ सो सोचहु मन माहीं
कितक बीच बिरह परमारथ, जानत हो किधौ नाहीं
परम चतुर निज दास स्याम के, संतत निकट रहत हो
जल बूड़त अवलंब फेनु कौ, फिरि फिरि कहा गहत हो
वह अति ललित मनोहर आनन कौनैं जतन बिसारौं
जोग जुगत अरु मुकति बापुरी वा मुरली पर वारौं
जिहिं उर बसत स्याम घन सुन्दर, तहाँ निर्गुन क्यों आवैं
'सूरदास' सोइ भजन बहाऊँ, जाहि दूसरो भावैं ॥५॥

मधुकर कौन मनायो मानैं
अबिनासी अति अगम अगोचर, कहा प्रीत की जांनैं
सिखवहु जाय समाधि जोग मत जे सब लोग सयानैं
हम अपनैं ऐसैं ब्रज बसिहै बिरह बाय बौरानैं
जागत सोवत सुपन द्यौस निसि रहिहैं रूप परवानैं
बाल कुमार किसोर लीला सुख सिंधु सुधा सौं सानैं
जिनकौ तन मन प्रान 'सूर' हरि मृदु मुसकानि बिकानैं
परी जु बूँद अलप पयनिधि मैं बहुरि न कोउ पहिचानैं ॥ ६ ॥

गोपिन प्रति उद्धव बचन ।

ज्ञान बिना होय सचु नाही
घर घर व्यापक, दारु अग्नि ज्यों, सदा बसैं उर माहीं
सगुन छाड़ि निर्गुन कौ ध्यावो यौ जु करो किन नाहीं
तत्व भजै ऐसी ह्वै जैहो, ज्यौ तन की परछाहीं
देखो यातै सब सचु पावत जे अब लौं अवगाहीं
'सूरदास' निर्गुन बिन कैसै उर मै और समाहीं ॥ ७ ॥

---

३. आपनो = आय भो (सु) ।
७. सचु = सुख । दारु = लकड़ी । किन = क्यों । अवगाही = मंथन किया ।

उद्धव प्रति गोपी वचन ।

ऊधौ निर्गुन कैसे ध्यावैं
जो ध्यावैं तो कहा कहि ध्यावैं, रूप रेख बिन ध्यान न आवैं
अगम अगाधि अगोचर कहियत, अबिनासी को पावैं
'नागर' स्वाद न आवै, जो कोउ बहुतउ बासी खावैं ॥ ८ ॥

ऊधौ जल माँगत जिन देउ सयानी
घट ही मैं गंगा, घट ही मैं जमुना, भरि भरि पीयो पानी
स्वाद न आवत, तुस फाँकत ज्यौं, निर्गुन बात बखानी
नैननि प्यास मिटै जब मिलिहैं 'नागर' सुखसागर दधि दानी ॥ ६ ॥

गोपीन प्रति ऊधौ वचन ।

जब लग हृदै ज्ञान नहीं आवैं ।
तोलौं कोटिक जतन करो कोउ, बिन बिबेक नहिं पावैं
बिन बिचार सब हैं सुपनों सो, मैं देख्यो सब जोय ।
नाना दारु 'सूर' ज्यौं पावक प्रगट मथे तैं होय ॥ १० ॥

ऊधौ प्रति गोपीन वचन ।

नाहिंन रही मन मे ठौर ।
नंद नँद बिन अचितैं, कैसे आनिए उर और
घोस जागत चलत चितवन सुपन सोवत राति
हृदै तैं है मदन मूरति, छिन न इत उत जात
कहत कथा अनेक ऊधौ लोक लोभ दिखाय
कहा करैं हित प्रेम पूरन, घट न सिंधु समाय

---

(१०) हस्तलेख में अंतिम पंक्ति अत्यन्त भ्रष्ट है—'नैंना दरस 'सूर' ज्यौं पावक प्रगट मथे ते होय। सभावाले संस्करण में 'सूर' के स्थान पर 'बसै' पाठ है और निम्नांकित चार चरण और भी हैं—

तुमही कहत सकल घट व्यापक और सबहिं तें नियरे
नख सिख लौं तन जनत निसा दिन, निकसि करत किन सियरे
साँची बात सबै बोलत हौ, मुख मैं मेले तुरसी
'सूर' सुऔषधि हमें बतावहु, पित जुर ऊपर गुर सी ॥ ४४०६

६. तुस = भूसी ।

स्याम गात, सरोज आनन, ललित मधु रस हास
'सूर' ऐसें रूप कौ ये मरत लोचन प्यास ।। ११ ।।

ऊधौ चरचा करी न जाय
तुम न जानत प्रेम पथ, हम कहत जिय सकुचाय
कथा अकथ, सनेह की बिन, उर न आवत और
बेद समृत उपनिषद कौ, रही नाहिन ठौर
मौन ही मैं कहन ताकी, सुनत श्रोता नैन
सो 'व 'नागर' तुम न जानत, कहि न आवत बैन ।। १२ ।।

गोपी प्रति उद्धव वचन ।

मानहु जोग कह्यो है माधौ
करि विचार अपने जिय साधौ
इला पिंगला सुषमन नारी
सुन्य धारना, बिन आकारी
ब्रह्म भाव करि सबकौं जानौं
'सूर' परम तत यह पहिचानौं ।। १३ ।।

उद्धव प्रति गोपी वचन ।

सब खोटे मधुबन के लोग
जिनके संग स्याम सुंदर पिय सीखे हैं अपजोग
भली करी ऊधौ ब्रज आए, जुवतिन कौं लै जोग
आसन ध्यान नैन मूँदे तैं कैसै जात बिजोग
तुमहिं उनहिं यह भली बनि आई, कुबजा सो संजोग
'सूर' सुबैद कहा लै कीजै, कहे न जानै रोग ।। १४ ।।
ब्रज जन सकल स्याम ब्रतधारी
बिना गुपाल नहिं आन उपासन, अनत कहूँ बिभिचारी
जोग पोट सिर भार बहन कौं, कत ब्रज माझ उतारी
इतनिक दूरि जाहु चलि कासी, उहाँ बिकत हैं भारी

---

(११) चितैं=चतैं (मु)। नँद नंद बिन ऊचितै='नंद नंदन अछत' यही सामान्य पाठ है।

(१४) अपजोग=उपजोग (हस्त० मु) । जुवतिन=दुख तिन (हस्त० मु) ।

१३. तत=तत्व ।

१४. अपजोग=बुरा योग ।

ऐसे ज्ञानहिं कों न छुवत हैं, मंडली अनन्य हमारी
जो प्रभु वह रस रीति उपदेसी, सो क्यों जात बिसारी
इहाँ मुकति कोऊ नहिं परखत, जदपि पदारथ चारी
'सूरदास' प्रभु जुवति वृंद वर दरशन की जु भिखारी ।। १५।।

गोपी प्रति ऊधौ वचन ।

गोपी पद्मासन चित लावौ
नैंन मूँदि अतरगत ध्यावौ
हृदय कमलमय जोति प्रकासी
सो अच्युत अविगत अविनासी
इहिं उपाय बिरहा तन भेटो
'सूर' जोग जगदीसहि मेटो ।। १६ ।।

ऊधौ प्रति गोपी वचन ।

ऊधौ मुखहिं आवत गारि
कहा करौं, नँद नंद की करि कानि देत हों टारि
वह मनोहर माधुरी लखि मंद मृदु मुसिक्यात
तुम्हैं फिरि सुधि रही कैसैं, जो 'ब निर्गुन बात
जानियत हैं, यह तिहारै कहन ही के नैन
कलप बीतें पल परन मैं, होत ह्याँ क्यों चैन
नवल 'नागर' रूप निधि मैं ह्वै रह्यो जो लीन
मुर स्थल मे मारिए क्यौं कहे तैं मन-मीन ।। १७ ।।

ऊधौ तुम न जानत प्रेम
बसो मथुरा राजधानी तहाँ व्यापक नेम
कथन निर्गुन ज्ञान सूको राजनीत प्रबंध
प्रीत नैननि रूप रीझनि कहा जानैं अंध
इहाँ व्रज मैं बृथा कीजै जोग नीरस पाठ
छाड़ि नट 'नागर' मधुर फल, कौंन चाबै काठ ।। १८ ।।

---

१५. पोट = मोटरी, गठरी । अनन्य = न अन्य; एक ही से प्रेम करनेवाली ।
१७. मुरस्थल = मरुस्थल, रेगिस्तान ।
१८. सूको = शुष्क ।
(१७) ह्यां = हां (मु) · मारिए = डारिए (मु) ।

गोपीन प्रति ऊधौ वचन ।

तुम अपने घट ही में देखो
बिलपति कहा बावरी सी तैं, बाहिर ढूँढ़त यह कहा लेखो
सर्व ब्रह्म, कोउ नहीं दूसरो, यह सबही चित में अवरेखो
'सूरदास' जदुनाथ मिलन कौं, छाँड़ि देहु हिय परम परेखो ॥ १९ ॥

ऊधौ प्रति गोपी वचन ।

परेखो कौन बात को कीजै
ना हरि जाति न पाँति हमारी, कत ही मानि दुख लीजै
नामदेव, जादू कुल दीपक, बंदीजन ब्रह्मावैं
नँद नदन, गोपी जन बल्लभ, नाहिन कान्ह कहावैं
नाहिन मोर चंद्रिका माथें, नाहिन उर बनमाल
सोभित है भूषनि के भूषन सुंदर स्याम तमाल
बिसरि गयो गृह बन को नातो और हमारो रंग
'सूरदास' प्रभु गई सगाई, वा मुरली के संग ॥२०॥

हा हा ऊधौ कहियें बात
सुर मुरली सों मोही सब हम, अब सुर संख बजात
रंग-रस तजि, रन-रस-बस भए, कछु मृदु कर्कश लखि जात
सहि न सके सर नैन हमारे, क्यों सर सार सुहात
पीत भँगा को लगत भार तब, कवच कसत क्यों गात
मूँठि गुलाल लगत अबला कर, अब न गदा डरपात
सुनि सुनि हम यह सहि न सकत हैं, होत दृगनि जल-पात
जगत कहत हमें भई बावरी प्रीति रीति के नात
मुरली मुकट लटक वह छवि की हिय तें नाहिन जात
'राजसिंह' प्रभु कह्यो कहा यह, धरी दया नहि गात ॥२१॥

---

(१९) कोउ = को (सु) ।
(२०) कतही = कहा (सूरसागर ; ब्रह्मावैं = बरनावत (सूरसागर)
(२१) सके सर = सकत है (हस्त)
१९ लेखो = हिसाब, गणना । अवरेखो = मान लो; अंकित कर लो । परेखो = प्रतीति, विश्वास ।
२०. रंग = प्रेम । ब्रह्मावैं = ब्रह्म कहकर गुणानुवाद करते हैं ।
२१. सर = शर, बाण । सार = लोहा । डरपत = डरते हैं ।

अथ गोपी प्रति ऊधौ वचन ।

जानि कैं बावरी जिन होहु
तत्व भजैं ऐसी ह्वै जैहौ, ज्यौं पारस परसैं लोहु
मेरे वचन सत्य कै मानौ, छाड़ौ सब सौं मोहु
तौलौं सब पानी की चुपरी, जौ लौं अस्थित दोहु
अरे अरे मधुप बात यह ऐसी क्यौं कहि आवै तोहि
'सूर' सुबसती छाँड़ि घर बसे हमहि बतावत खोह ॥२२॥

अथ ऊधव प्रति गोपी वचन

ऊधौ अपनौं जतन करो ।
हित की कहैं अहित लागत हैं इहाँ बेकाज परो
जाय करो उपचार आपनौ, हौं जु देत सिख जी की
कछू कहत कछुवै कहि आवत, धुनि देखत नहिं नीकी
साधु होय ताहि उत्तर दीजै, तुम्ह सौं मानी हारि
यह जिय जानि स्याम सुंदर तुम दीनौ ढिग तैं टारि
मथुरा दौरि गहो इन पायन, बाढ्यो हैं तन रोग
'सूर' सुबैद बेगि किन हेरो, भए अरध-जल-जोग ॥२३॥

तू ह्याँ करत कौन की बातैं ।
सुनि ऊधौ हम समझत नाहीं, फिरि बूझत हैं तातै ॥
को नृप भयो, कंस किहिं मार्यो, को वसुदेव सुताहि
ह्याँ जसुदा सुत परम मनोहर जीजत हैं मुख चाहि
दिन प्रति जात धेनु बन चारन गोप सखन के संग
बासर गत रजनी मुख आगम करत दृगनि गति पंग
को पूरन व्यापक अबिनासी को बिधि बेद अपार ।
'सूर' वृथा बकबाद करत कत ह्याँ ब्रज नंदकुमार ॥२४॥

---

(२२) तौ लौं सब० = तौलौं यह सब नीकी चुपरी. जब लौं अस्तुति द्रोहु (हस्त०, सु)
(२३) अरध-जल-जोग = मरन के जोग (सूरसागर ४२२६)
(२४) सुताहि = सु काहि (सु) । बासर० = बाल कुमार किसोर लीला छवि कर नैंन गर पंग (हस्त०) ।

२३. धुनि = लक्षण ।

२४. सुताहि = सुत + आहि; पुत्र हो । चाहि = देखकर ।

अथ गोपी प्रति ऊधौ वचन ।

अब तुम मानि लेहु ब्रज बाल
हौं जु करत उपदेस तत्व को, पचत भयो बहु काल
छाड़हु माया मोह हिए को, विरहा विसम विसाल ।
'सूरदास' निर्गुन कौ ध्यावत मिटिहैं हित जंजाल ॥२५॥

अथ ऊधौ प्रति गोपी वचन

ऊधौ वृथा करत बकवाद
हम जान्यौ तुम जानत नाहीं, रूप सुधा सुख स्वाद
सकल ब्रज मोहन मई है, गोप 'रु गोपी गाय
तिनैं तौ, बिन घनस्याम सुन्दर, कैसे और सुहाय
हमारे तन करि खंड खंड ज्यौं देहु भूमि मै डारि
न्यारे न्यारे लपटि जाहिं लखि 'नागर' नंद कुँवार ॥२६॥

ऊधौ यह तन जो कोऊ फेरि बनावै
तऊ नँद नंदन तजि प्यारे कौ, और न मन मै आवै
जो या तन की तुचा काढ़ि कैं, लेकरि दुंदुभि सजई
मधुर उतंग सब्द सुर निकसै, 'लाल, लाल' ही बजई
छूटैं प्रान, मिलै तन माटी, द्रुम लागैं तिहि ठाम
कह अब 'सूर' फूल फल साखा लेत उठैं हरिनाम ॥२७॥

अथ कवि वचन ।

दोहा— ऊधौ मन पलट्यो निरखि गोपी प्रेम उमंग ।
बिन लाग्यो कबहु न सुन्यौ प्रेम भक्ति को रंग ॥२८॥

अथ गोपी प्रति ऊधौ वचन ।

अब अति पंग भयो मन मेरो ।
पठयो हो निर्गुन उपदेसन, भयो सगुन को चेरो
जो कछु कह्यो ग्यान गाथा, सो तुमहि न परसत नेरो.
मैं सठ बाद कियो सो यौंहीं, कह्यो सुन्यो उन केरो
मै जान्यौ नहि प्रेम तैं पल भरि, ह्या बटमास बसेरो
'सूर' स्याम पैं, आग्या दीजैं, बोरौं जोग को बेरो ॥२९॥

---

(२७) तजि = बिन (हस्त०)
(२९) सठ = सब (हस्त०) यह पद सूरसागर मे मुद्रित पद से अत्यंत भिन्न है ।

अथ कवि बचन

ऊधौ बार बार सिर नावत
गदगद कंठ, पुलकि, विह्वल मन, कर पायन सौं छुवावत
धन्य गोपी तुम रँगी स्याम रँग, तज्यो सकल चित चैंन
गुल्म लता ह्वै रहिए इहि ठां, तन रंजित ब्रज रैंन
प्रेम भक्ति रस सुधा पियो मैं, अब चित अनत न जाय
तुम मेरे गुरु कह्यो छिमहु सब, परत तुम्हारैं पाय
यौं कहि ऊधौ उठे गवन कौं, फेर सकत नहिं पीठ
'नागर' मन यहाँ गए राखि कैं, तन पहुचायो नीठ ॥३०॥

अथ ऊधौ मधुपुरी आगमन, श्रीकृष्ण प्रति वचन ।

माधौ जू यह ब्रज को व्यौहार
मेरो कह्यो पवन को भुस भयो, गावत नंद कुवार
एक ग्वाल गो-सुत ह्वै रेंगत, एक लकुट कर लेत
एक मंडली करि बैठारत छाक बाँटि कैं देत
एक ग्वाल नटवत सब लीला, एक कर्म गुन गावत
अनेक भाँति करि मैं समुझाई, नैंक न उर मै आवत
निस बासर एही टक ब्रज मैं, दिन दिन नौतन प्रीत
'सूर' ग्यान सब फीको ह्वै गयो देखत वह रस रीत ॥३१॥

मैं समुझाई करि अपनौं सो
तद्दपि उन्है प्रतीत न उपजी, लग्यो सबै सुपनौं सो
कही तुम्हारी सबै सुनाई, और कछू अपनी
सुनत वचन मम गयो धीर, मन और उठी कँपनी

वहाँ प्रथम चरण इस प्रकार है—'अब अति चकितवंत मन मेरो (सूरसागर ४६९७)।

(३०) रंजित = रंजन (हस्त०)

(३१) बैठारत = बैठी रति (मु)

२९; नेरो = जरा सा भी । उन केरी = उनका । बसेरा=निवास । स्याम पैं = श्याम के पास, बेरी = (नावों का) बेड़ा ।

३०. नीठ=कठिनाई से ।

३१. कुवार=कुमार=कुमार । नौतन = नूतन ।

कोऊ कहै बनाय पचासक, उनकैं बात जु एक
धन्य सु ब्रज की नारि जु तिनकैं बिन दरसन कछु और न टेक
देखत उनको प्रेम, इहाँ की धरी रही सब ऊल्यौं
सूर स्याम हौ रह्यो ठग्यो सो, ज्यौं मृग चौका भूल्यौं ॥३२॥

अथ ऊधौ प्रति श्रीकृष्ण वचन

"ऊधौ इते दिवस क्यौं लाए।
पठये हुते जोग कहि आवन, तुम पट मास बिताये
तुम बकता हौ बिरमि रहे, किधौं उन कछु कहि बिरमाए
'सूर' स्याम उन श्रोता करि मोहिं, सबै ग्यान बिसराए ॥३३॥

अथ श्रीकृष्ण प्रति ऊधौ वचन

उनमैं पाँच दिवस जो बसिए
नाथ तुम्हारी सौं जो उपजत, फेरि अपनपौ कसिए
वह लीला सब ब्रज गोपिन की देखत ही धनि आवै
मोकों बहुरि कहाँ वैसो सुख, बड भागी सो पावै
मनसा बच करमना कहियतु, नाहिं कछू अब राखी
'सूर' काढ़ि डारयो ब्रज तैं ज्यौं, दूध माँझ तैं माँखी ॥३४॥

हो हरि अहुर दाँव दै हारयो
आग्या भंग होय क्यौं मोपैं, बचन तुम्हारो पारयो
हारि मानि उठि चल्यो दीन है, मानि अपनपौ कैद
जानि लेहु इतने मैं माधौ, कहा करैं नीमन को बैद
उत्तर को उत्तर नहिं आवत, तब उनहीं मिलि जात
मेरी कितक बात, ब्रह्माहू अर्द्ध बचन मैं मात
अपनी बात समझि मनही मन, चल्यो बसीटी तोरि
'सूर' एकहू अंग न काची, मैं देखी टकटोरि ॥३५॥

---

(३२) धीर = घृत (हस्त०)
(३४) मांझ = खाँड (हस्त०)
(३५) अहुर = बहुरि (हस्त०)

३२. पचासक = पचास एक; पचासों। ऊल्यौं = (१) उछल कूद (२) ऊल जलूल; असंबद्ध प्रलाप। चौका = चौकडी।
३४. कसिए=दबाइए, रोकिए। अहुर=औरी बोलना, खेल मे हार स्वीकार कर लेना।
३५. नीमन = चंगा, नीरोग।

अथ ऊधौ प्रति श्रीकृष्ण वचन

ऊधौ तुम से सखा सुजान
क्यौं उपदेस लग्यो नहिं उनकौं, गाथा गूढ़ विधान
तुम जु ग्यान औतार प्रगट जग, वे अबला अनजान
सूरदास वहि रंग रँगे तुम, दीसत बिसरयो ग्यान ।।३६।।

अथ श्रीकृष्ण प्रति उद्धव वचन

माधौ सुनहु ब्रज को प्रेम
बूझि मैं षट मास देख्यो गोपिकनि को नेम
हृदै तैं नहिं टरत कबहूँ स्याम काम-बिजेत
आँसु सलिल प्रवाह मानौ अर्घ नैन जु देत
देह गेह समेत अर्पन कमल-लोचन ध्यान
सूर वह रस भजन देखत, गयो उडि सब ग्यान ।।३७।।

नीकैं सुनहु स्याम सुजान
कौन मानै बात नीरस सकल ब्रज रसखान
तुम जु हे विधि वेद वक्ता प्रगट श्री भगवान
उहि मनोहर मंडली मैं क्यौ न राख्यो ग्यान
कबहुँ तुमकौं लै नचाए जोरि पानंनि पान
कबहुँ छुवायो मुकट चरननि, कियो उन जब मान
कबहुँ बैनी गूँथि निज कर पग महावर सान
कबहुँ ठाढ़े जोरि कर करि दीन चित सनमान
प्रेम आगै नेम की कछु चलत नाहिं निदान
रिनी ह्वै छूटे वहाँ क्यों नवल 'नागर' प्रान ।। ३८।।

अथ ऊधौ प्रति श्रीकृष्ण वचन

ऊधौ अब तुम हमरे लायक
रूखी बात न कहत हो, भीजे कहत, प्रेम के बायक

---

(३७) सूर वह रस भजन देखत = सूरदास वह रसन देखत (हस्त०)
मत = पराजित बसीठी = दूतत्व काची = कच्ची, टकरोरि = टटोल कर, हाथ से छूछू कर।
३६. दीसत = दिखाई देता है।
३७. बिजेत = विजय करनेवाले। अर्घ = देवता को जल चढ़ाना।
३८. जु हे = जो थे। पाननि पान = हाथ मे हाथ। निदान = अंततः।

मो अनुराग रंग रँनी ब्रज रँगि आए मन रंग
'सूर' सखा प्रिय मेरो तेरो अबै बन्यौ है संग ॥३९॥

अथ कृष्ण प्रति ऊधौ वचन

कहा लौं कहिए ब्रज की बात
सुनहु स्याम तुम बिन उन लोगनि जैसें द्यौस बिहात
जाको आवत देखत हैं, मिलि बूझत हैं कुसलात
चलन न देत, प्रेम उर आतुर फिरि फिरि पग लपटात
गाय ग्वाल गोपी गो सुत सब बिलखि बदन कृस गात
परम दीन जनु सिसिर-हेम-हत-अंबुज-गन बिन पात
पिक चातिक बन बसन न पावत, बायस बलिहिं न खात
'सूरदास' संदेसन के डर पथिक न वह मग जात ॥४०॥

ब्रज की जुवति अति तन छीन
रहत इकटक चित्त चातक स्याम घन तन लीन
नाहिं पलटत बसन भूषन, दृगनि दीपक तात
बिलखि बदन मलीन तन ज्यौं तरनि बिन जलजात
कहत ज्यौं हौं कह्यो स्रुति मत, पच्यो करि उपदेस
धरत नलनी बूँद ज्यौं जल, बचन हिये प्रवेस
वहै मुरली, मोर चंद्रिका, पीत पट, बनमाल
रही वह छवि अंग अंगनि लता लपटि तमाल
दिवस ज्यौं बितवत सकल मिलि कहत गुन बलबीर
रैनि उडपति निरखि तलफत, मीन ज्यौं जल तीर
अहो करुनासिंधु स्वामी होहु बेगि सहाय
'सूर' प्रभु अबकैं दरस दै, मरत लेहु जिवाय ॥४१॥

ऊधौ सब ब्रज भूलत नाहीं
हंस सुता कूलनि की सोभा अरु कुंजनि की छांहीं
वह सुरभी, गउ बच्छ, दोहनीं, खरक दुहावन जाहीं
ग्वाल बाल मिलि करत कुलाहल, नृत्तत गहि गहि बाहीं
लीला बहुत भाँति हम कीनी, जसुमति नंद निबांही
जब जब सुरति होत वा सुख की, मन उमगत, तन नाहीं

---

३९. बायक = वाचक, कहनेवाला, दूत ।
४०. हेम = हिम, पाला, तुषार ।

यहै द्वारिका रची कनक की, मनि मुक्तावलि जाहीं
'सूरदास' प्रभु सुमिरि सुमिरि सुख, यो कहि कहि पछिताहीं ॥४२॥

अथ श्रीकृष्ण प्रति उद्धव वचन

चित दैं सुनौ स्याम प्रवीन
हरि तुम्हारैं विरह राधा मैं जु देखी खीन
कहन जबहिं सँदेस सुंदरि गमन मो-तन कीन
छूटि छुद्रावलि अरुझि पग, धरनि धुकि बलहीन
उलटि तबहिं सँभारि भट लौं परम साहस कीन
कहत बैन, न बोल आवै, हृदै परि असु भीन
नैन इकटक, सुरत बिन ज्यौं, ग्रस्त आपद, दीन
सूर प्रभु करुना करो यौ जिवत आसाधीन ॥४३॥
बातैं बूझत यौं बहरावत
सुनहु स्याम वै सखी सयानी, पावस रितु राधे न जनावत
घन गरजत वह कहत कुसल-मति, गरजत गुहा सिंघ समुदावत
नहि दामिन, द्रुम दवा सैल परि बाव उलटि ताती भरि आवत
दादुर मोर पपीहा बोलत, ग्वाल मंडली खगनि खिजावत
कबहुक प्रगटि पपीहा बोलत, तब मिलि कर तारी जु बजावत
नहि नभ वृष्टि, झरत झरना धर, परि परि बूँद उछटि इत आवत
'सूरदास' प्रभु कहौं कहा लगि, तुम्हरे दरस बिना दुख पावत ॥४ ॥

अथ ऊधौ प्रति श्रीकृष्ण वचन

मोहि गोपीजन नहिं बिसरत
उनकी प्रति रीति अंतर की तनक न मुख तैं निसरत
सबहि चतुर, सब आनँद मूरति, सब तन प्रेम अछेह
तिनमैं श्रीराधा के मेरे एक प्रान द्वै देह

---

(४२) तन नाहीं = मन माही (हस्त०, मु)।
(४३) परि असु भीम = परिहस भीन (सूरसागर ४७२५)
४२. हंस सुता = सूर्य की पुत्री यमुना। सुरभी = गाय। खरक = गोष्ठ, अड़ार, गायों के बाँधने की जगह। निबाहीं = निर्वाह किया; पाला पोसा। जाही = जिसमें।
४३. खीन = क्षीण, दुर्बल। मो तन = मेरी ओर। छुद्रावली = किंकिणी। धुकि = झुकि। असु = दुःख, [illegible]। भीन = सिक्त।
४४. [illegible] बाव = वायु, हवा। झरि = [illegible]

जदपि बिभौ ह्यां अमरावति-सो, रह्यो सकल सुख छाय
तद्यपि सुधि आवत व्रज की तब सुधिहू की सुधि जाय
ऊधौ परम प्रवीन सखा प्रिय तुम बिन कासौं कहियैं
'नागरीदास' दुसह मन ही मन बिरह पीर नित सहियैं ।।४५।।

अथ कवि वचन ।

जद्यपि पाई हैं रजधानी
बार बार वृंदाबन की हरि कहि कहि उठत कहानी
जद्यपि कनक-जटित-मंदिर मै रची रुचिर कमनी
ज्यौं सुख पत्र बिछाय राधिका सुख सोवत अवनी
जद्यपि भूषन बहुत भाँति ए मर्कत लाल मनी
'सूरदास' वा गुंज पुंज की सोभा पै न बनी ।।४६।।

अथ कवि प्रार्थना ।

हमारै मुरलीवारो स्याम
बिन मुरली बनमाल चंद्रिका नहिं पहिचानत नाम
गोप रूप वृंदाबन चारी व्रज जन पूरन काम
याही सौं हित चित्त बढ़ो नित दिन दिन पल छिन जाम
नंद गाँव, गोवर्द्धन, गोकुल बरसानौं, बिश्राम
'नागरीदास' द्वारिका मथुरा इन सौं कैसो काम ।।४७।।
जो कोउ व्रज लीला रस चाखै ।
ताकौं फिरि कहुँ और कथा मै, कबहुँ न मन अभिलाखैं
षट रस छप्पन भोग न भावत, जो व्रज गोरस पावै
हित व्रज रसिक उपासिक सौं करि, आन सौं मन न मिलावैं
'नागरिया' व्रज महिमा रसना तनकहु जात कही ना
बिन रस रूपा भक्ति जक्त ज्यौं मरुधर जेठ महीना ।।४८।।

हम व्रज सुखी व्रज के जीव
प्रान तन मन नैन सर्वसु राधिका को पीव
कहां आनंद मुक्ति मै ये कहा केलि बिधान
कहां ललित निकुंज लीला मुरलिका कल गान

---

(४६) सोवत=सोते (सु) ।
(४७) नंद गांव=नंदीसुर (छूटकपद ४)
४८. आन=अन्य दूसरा । जक्त = जगत, संसार । मरुधर=रेगिस्तान ।

कहां पूरन सरद रजनी जोन्ह जगमग जोत
कहाँ नूपुर बीन धुनि मिलि रास मंडल होत
कहाँ पाँति कदंब की झुकि रही जमुना बीच
कहाँ रंग बिहार फागुन मचत केसरि कीच
कहाँ गहबर बिपन मैं तिय रोकिबो मिस दान
कहाँ गोधन मध्य मोहन चिकुर रज लपटान
कहाँ लंगर सखा सोहन कहाँ उनको हास
कहाँ गोरस छाछि टैंटी छाक बिपन बिलास
और ठौर न कहूँ ए सुख, बिना ब्रज इहिं धाम
'दास नागर' घोष तजि चहैं मोष सो बेकाम ।।४६।।

दोहा ।

प्रभुता सोभा स्वाद बिन, मन न लगत अभिराम
करनफूल मणि कनक के मधुकर के किहि काम ।।५७।।

रस लीला वैकुंठ की, सुनी न नित्य नवेलि
तीन लोक मैं गाइयै, नउतन हीं ब्रज केलि ।।५१।।

रमा रमापति संख कौं, बहुधा कोउ बरनैं न
तीन लोक मै गाइयैं गोपी मोहन बैन ।।५२।।

लखमी दयो भ्रमाय जग, बोरत लखमी भोग
गोपी जन गुन गाय कैं, तरत जु कलि के लोग ।।५३।।

---

(४६) ए कहाँ केलि बिधान=इह कहां मृदु मुसकान (छूटक पद १)। बिपन विलास=रोटी रासि (छूटक पद १)। अंतिम दो पंक्तियों के स्थान पर 'छूटक पद' पद १ में ६ भिन्न पंक्तिया हैं।
पाँति = पाति (हस्त०)

(५०) लगत=लेत (हस्त०)

(५१) रमा रमापति संख कौं=संख पंचजन नाद कौं (हस्त०)

(५३) भोग=जोग (हस्त०); जु = जि (हस्त०)

४६. लंगर=नटखट। सोहन=सुहावने। टेंटी=करील का फल। घोष = गोष्ठ, अहीरों बस्ती। मोस=मोक्ष।

५३. लखमी=लाक्ष्मी।

स्यामहिं सब गोपी प्रिये, गोपिन कौं प्रिय स्याम
सो नागरिया हिय बसो, निस दिन पल छिन जाम ।।५४।।

संमत अठारैं सैं सुकल, पच्छ जेठ सुभ मास
'गोपी प्रेम प्रकास' यह कियो नागरीदास ।।५५।।

---

(५) श्री रामचरित्र माला

दोहा—सिया राम पद ध्याय कैं, कोमल कमल नवीन
राम चरित माला रचूं, चुनि चुनि पद प्राचीन ॥

श्री रामजन्म समय पद

चलि री आजु हैं मंगलचार
राजा दसरथ के दरबार
अति सुंदर श्री राम स्याम तन प्रगटे राजकुमार
पावत गुनी दान बहु कचन अरु मनि मुक्ताहार
'नागरीदास' अमंगल मिटि मंगल लोक अपार ॥१॥

अवधपुर बाजत आजु बधाई
भई नगर पर भीर बिमाननि प्रगट भए रघुराई
बरसत कुसुम धुजा कलसनि पर अति सोभा उफनाई
'नागरीदास' गान मंगल धुनि छाय रही सुखदाई ॥२॥

बाललीला

करतल सोहत बान धनुहियाँ
खेलत फिरत कनकमय आँगन, पहिरे लाल पनहियाँ
दसरथ कौसल्या के आगैं बसत नैन की छहियाँ
मानौं चार हंस सरवर तैं बैठे आनि सदहियाँ
रघुकुल कुमुद चंद्र चिंतामणि प्रगटे भूतल महियाँ
यहै दैन आए रघुकुल कौ आनँद निधि सब कहियाँ
यह सुख तीन लोक मैं नाहीं सो पइए प्रभु पहियाँ
'सूरदास' हरि बोलि भक्त कौ निर्बाहत दै बहियाँ ॥३॥

---

१. यह सूर सागर (नवम स्कंध) का ४६३ वाँ पद है। बसत नैन की० = लसत सुमन की छहियाँ (सूर०)। सदहियाँ = सदेहियाँ (वही)। यहै दैन आए = आए आप दैन (वही)।

२. धनुहियाँ = छोटा धनुष। पनहियाँ = उपानह, जूती। सदहियाँ = सद्यः, अभी-अभी। महियाँ = महँ, में। पहियाँ = पहँ, पास।

छोटी सी धनुहियाँ, पनहियाँ पाय छोटी
छोटी सी कछोटी कटि, छोटी सी तरकसी
राजत झँगूली झीनी, दामिनी की छवि छीनी,
सुन्दर वदन सोहैं पगियाँ जरकसी
मो मन हरन विचित्र आभूषन
कछू कछू आवत सनेह की सरक सी
सूरत की मूरत कही न बनैं 'तुलसी' पैं,
जोइ जन जानैं जाकै कसिकैं करकसी ।।४।।

धनुही बान लियै सँग डोलत
चारौ बीर धीर संग, अति सोभित, बचन मनोहर बोलत
लछिमन भरत सत्रुघन सुन्दर राजिव लोचन राम
अति सुकुमार, परम पुरुषारथ, अर्थ धर्म धन काम
कटि तट पीत पिछौरी बाँधे, काक पच्छ धरें सीस
सर-क्रीड़ा देखन दिन आवत स्यौ सुर नारि अनीस
सिव मन सोच, इन्द्र मन आनँद, दुख सुख विधिहि समान
दिति दुर्बल अति, अदिति सु सुख मन, निरखि 'सूर' संधान ।।५।।

---

(४) यह गीतावली (बाल कांड) का ४४ वाँ पद है। छोटी सी = छोटियै। पाय = पगनि। सोहैं = सिर। मो मन० = वय अनुहरत विभूषन विचित्र अंग। कछू कछू = जोहे जिय। सूरत की मूरत = मूरत की सूरत। तुलसी पैं = तुलसी (सु)। जोई जन० = जानै सोई जाके उर कसकै करक सी।

(५) यह सूरसागर (नवम स्कंध) का ४६४ वाँ पद है। धीर संग अति = संग इक। स्यो सुर नारि अनीस = नारद सुर तैंतीस। सोच = सकुच। सु सुख मन = हृष्ट चित्त। निरखि = देखि।

४ कछोटी = कछनी, कमर तक ऊपर चढाकर पहनी हुई धोती। तरकसी = छोटा तूणीर। झँगूली = बच्चों के पहनने का एक प्रकार का कुरता। झीनी = महीन। पगिया = पगड़ी। जरकसी = जरी (सोने) के काम की, स्वर्णतार जटित। सरक = नशा। कसिकें = पूर्ण रूप से। करकसी = करकसी है।

५. काकपच्छ = प्राचीन काल में दोनों कानों के ऊपर रखे जानेवाले बालों के पट्टे। सर क्रीड़ा = बाण चलाने का खेल। स्यो = सहित। अनीस = सेनापति, स्वामी कार्तिकेय। सुरनारि = देवांगना। संधान = निशाना लगाने के लिए धनुष पर बाण का ठीक तरह से रखना; निशाना लगाना।

अथ अश्व गिंदुक लीला

राम लच्छ इक ओर, भरत रिपुदमन लाल इक ओर भए
सरजू तीर समस्त भाग करि गनि गनि गोइयाँ बाँटि लए
गिंदुक केलि कुसल हय चढ़ि चढ़ि, मनसिज से बनि ठोकि खए
कर कमलनि बिचित्र चौगानैं खेलनि लगे, खेलि रिझए
व्योम बिमाननि बिबुध बिलोकत, खेलनि, छाँह छए
भूरि भाग, अनुराग उमगि जल, सकुचि सकुचि सिर नैन नए
इक लै बढ़त, एक धरि फेरत, प्रेम प्रमोद बिनोद मए
एक कहैं भइ हार राम की, एक कहैं भइया भरत जये
प्रभु बकसत गज बाजि साज सौ, जै धुनि गगन निसान हये
ते सेवक जाचक भरि जीवन फिरि न दूसरैं द्वार गए
जाम अवधि करि जाचत ब्रह्मा तृजुग जौंन नव ठाम ठए
'तुलसी' ते समान ऊपर जे प्रभु के निज रंगनि रए ।।६।।

झरोखैं झाँकै दसरथ रानी
कौसल्यादि सुतनि के सुख कौ देखत नाहिं अघानी
नैननि नीर पुलक उर आनँद कौतक रही निहार
च्यारूँ बीर अश्व गेंदुक मिलि खेलत राजकुमार
ललकारत दुबटत असि ताते आवत दृष्टि न परिहीं
बिज्जु लता से पलट पलट हय, लै लै गेंद निकरिहीं
वारत मात वसन भूषन मिलि, बकसत नृप गज बाज
भई बिमानन भीर अवध पर, देखत अमर समाज

---

(६) यह गीतावली (बाल कांड) का ४५ वां पद है। लच्छ = लखन। सरजू तीर समस्त भाग करि = सरजु तीर सम सुभग भूमि थल। गोइयाँ = गुनियाँ (सु)। गिंदुक = कंदुक। मनसिज० = मन कसि कसि ठोंकि ठोंकि खए। ठोंकि = ढोंकि (सु)। बिबुध = बिबिध (सु)। खेलनि = खेलक पेखक। आगे बहुत अन्तर है। छठी पंक्ति यह है—सहित समाज सराहि दसरथहिं बरसत निज तरु कुसम चए।

६. गिंदुक = कंदुक, गेंद। गोइयाँ = साथी। ठोंकि खए = खम (ताल) ठोंककर खड़े हो गए। नए = नमित, झुके हुए। मए = मय, सहित। जए = बिजयी हुए। बकसत = बख्श रहे हैं, प्रदान कर रहे हैं। निसान = दुंदुभि। हए = हते, चोट पड़ी। रए = रँगे।

अर्थ धर्म अरु काम मोक्ष ये मानहुँ रूप धरैं
'नागर' रामचन्द्र सबही के दृगनि को तिमिर हरैं ॥७॥

खेलत अश्व गेंदुक बीर
सत्रुघन अरु भरत लछमन राम सरजू तीर
सुभग अति सम भूमि पर हय चपल पद गति चार
पत्र चलदल चलत जनु थरहरत मुक्ता थार
परसपर लै जात गेंदुक करत हथ छुट दौर
भ्रमत लोलुप नरनि को मन ज्यौं न ठहरत ठौर
उठत अंग भकोर सौंधे केलि श्रम चौगान
टूटि मोती माल बिथुरत, चिकुर रज लपटान
खेल बिच हसि हसि बहस के बदत मधुरे बोल
हिये 'नागर' रहो दसरथ राजकुमार कलोल ॥८॥

सोई खेलन हारे
उतरि उतरि चुपकारि तुरंगनि सादर जाय जुहारे
बंधु सखा सेवग समाज सनमान सनेह सुहाए
दिए बसन गज बाजि साज सुभ भू सब भाँति सुहाए
मुदित नैन फल पाय गाय गुनीसर सानन्द सिधारे
सहित समाज राज मंदिर कहँ श्री राम राय पाँव धारे
नित नित मंगल मोद अवध सब विधि सब लोग सँवारे
'तुलसी' ते समान ते ऊपर जे प्रभु चरित सुखारे ॥९॥

---

(९) यह गीतावली (बालकांड) का ४६ वाँ पद है। सोई खेलनि हारे=खेलि खेल सु खेलनिहारे। समाज = सराहि। सुहाए = सँभारे। भू सब भाँति सुहाए = साज सुभाँति सँवारे। गुनीसर = गुन, सुर। राज मंदिर कहँ = राज मंदिर को (मु)। श्री राम राय पाँव=राम राय पगु। गीतावली में छठे चरण के पश्चात् ये दो चरण और है—भूप भवन घर घर घमंड कल्यान कोलाहल भारे निरखि हरषि आरती निछावरि करत सरीर बिसारे। सँवारे = सुखारे। तुलसी०= 'तुलसी' तिन्ह सम तेउ जिन्ह के प्रभु तें प्रभु चरित पियारे।

७. दुवटत=झपटते हैं, डाँटते है। असि=अश्व, घोड़ा। बाज=बाजि, घोड़ा।
८. चार=चारु, सुंदर। थार = बड़ी थाली। बदत= कहते है।
९. जुहारे = प्रणाम किया। गुनीसर=बडे-बडे गुनी।

[ऋषि विश्वामित्र अयोध्या आगमन, जाचग्या पूरन]

नृपति घर विस्वामित्र पधारे
पद पदार्थ हैं बैठत ही, जाचग्या बचन उचारे
देत महा मख माझ निसाचर अति दुख दुष्ट दुखारे
तन सुन्दर घन स्याम राम ये दोऊ संग हमारे
रिख मुख बचन न मान्यो दसरथ, भए मगन सर मोह
जानी नहिं मानी जाचग्या, दुज मन उपज्यो छोह
फरकत अधर अरुन लखि लोचन, रही सभा भै पाग
मानौ बिस्व प्रलय के कारन रुद्र उठे अकुलाय
भुव डगमगत बिटप, उड टूटत, दिग्गज धृति डिगुलाए
जान्यौ अंतहि होत अवधपति, जब बसिष्ट समुझाए
अति सुकुमार मनोहर मूरति गउर साँवरे अंग
'नागरिदास' कुमर दोउ दीने करि तपसी के संग ॥१०॥

[विश्वामित्र संग लीला]

सानुज भरत भवन उठि धाए
पिता समीप समाचार लै, मुदित मात पें आए
गदगद सुर, तन पुलक, अधर फरकत, लखि प्रीति सुहाए
कौसल्या लये लाय हृदय सौं, बलि बलि कहत कछू सुधि पाए
सतानंद प्रोहित अपनों तिरहुति-नाथ पठाए
कुसल छेम रघुबीर लछन की ललित पत्रिका लाए
दली तारका, मारि निसाचर, मख राखे, तिय तारी
दै विद्या, लै गए जनकपुर, गुर सँग रहे सुखारी
सजि पिनाक-पन सुता-स्वयंवर सब नृप कटक बटोरयो
राज सभा रघुबर मृनाल ज्यौं संभु-सरासन तोरयो
यह सुनि सिथिल सनेह बंधु दोउ अंब अंक भरि लीने
वार वार मुख चूमि-चामि के, बसन निछावर कीने

---

१०. पदार्थ = पद अर्घ; जल पाकर, हाथ पैर धोकर। मख = यज्ञ। माझ = मध्य, में। मगन = मग्न; डूबना। सर = सरोवर, तालाब। जानी = (विश्वामित्रने) समझा। छोह = क्षोभ। भै = भय, डर। भुव = पृथ्वी पर। उड = तारा, नक्षत्र। धृति = धैर्य। डिगुलाए = डगमगाए।

सुनत सुहावनि चाह, अवध घर-घर आनंद बधाए
'तुलसिदास' रनवास रहस बस, सखियनि मंगल गाए ॥११॥

[या पद की टीका, प्रथम तारका हतन, मख रच्छा]

असुर सुबाहु तारका मारी
सस अौस वीरासन राघव करी जज्ञ रखवारी
स्थापक धर्म, अधर्म उथापक, 'नागर' राम उदार
धनुष बान कर लिए प्रगट भुव, भक्त हेत अवतार ॥१२॥

[अहल्या झींवर समय पद]

चरननि की महिमा मैं जानी
प्रगट सिला ते निकसी सुंदरि, पद परसत गउतम रानी
देखि चिन्ह चक्रन भयो झीवर, नाव लई गहिरे पानी
चरन प्रछाल चढ़ो तुम रघुवर, दीन बचन बोलत बानी
तरनी मेरी तारो जो तुम, होय सकल कुल की हानी
'कृष्णदास कटहरिया' के प्रभु कहा जानै नर अभिमानी ॥१३॥

पावन पद रज रघुवीर की
जा परसत सिल को तन पलटयो, गति भई देव सरीर की
ल्याव नाव केवट बोले प्रभु, ठाढे तटनी नीर की
चले पलाय फेरि नहिं चितवत, सका राम सधीर की
करत परम गति परम कृपानिधि, तारि पतित भौ भीर की
जात नाव बैकुंठ स-घरणी कुटंब सहित कीर की
सेस महेस निगम नारद मुनि सेवा ब्रह्म उजीर की
'परसा' सुक सनकादि भजत, रति उर धरि गुन गंभीर की ॥१४॥

---

(११) यह गीतावली बालकांड का १०२ संख्यक पद है। तिरहुतिनाथ=तो हित नात (मु)। दै बिदया लै गए=लै बिरद सु फिरि गए (मु)। सुहावनि=सवासनि (मु)। रहस बस=रही सरस (मु)।

(१३-१४) ए दोनों पद ठीक स्थान पर नहीं रखे गए हैं। इन्हें राम वनगमन के उपरांत गंगा पार करते समय रखा जाना चाहिए।

११. सुधि=समाचार। चाह=समाचार। रहस=आनन्द।

१३. झींवर=धीवर, मल्लाह। प्रछाल=प्रक्षालन कर, धोकर।

१४ सिल=शिला, चट्टान। सधीर=धैर्यवान। भौ=भव, संसार। कीर=केवट। उजीर=वजीर; मंत्री।

[जनकपुर प्रवेस उपवन विहार समय प्रथम दरसन]

जनकसुता उपवन मैं आई
पूजन धनुष पहुप के कारण सखी बृंद लैं धाई
वेना वीन मृदंग संग धुनि, होत मनोहर गान
चलवत चॅवर सखी उडगन बिच, सिय-दुति चंद समान
नूपुर सब्द बिपन व्यापक भयो, सकल रगमगी आनि
झूम झुकावत द्रुमनि द्रुमनि, छवि कनक लता सी जानि
इत रिष पठए पहुप लैंन कौं, अति सुंदर रघुबीर
भई अचानक भेट, रूप की परी दृगन पर भीर
सजल कमल से दृग इत-उत रहे निहारि निहारि
मनमथ सरनि सुमार भए दोउ, रहत सम्हारि सम्हारि
कठिन फिरे अपनो मन दैं दैं, सुधि करि गुरजन-कानि
मन नैननि लयो स्वाद अलौकिक, नेह रूप सरसानि
प्रीत जहाँ मर्जाद रहत नहिं, ये मर्जादा सागर
इहि रस कारन नद-भवन तब प्रगट भए नटनागर ॥१५॥

[स्वयंवर समय पद]

स्वयवर जनक रच्यो सीता जू को व्याह
अति अदभुत कौतुक देखत ही, मिटत दृगनि के दाह
देस देस के नव नरेस सुनि सुनि सब बेस बनाए
हय गय सज दल, दलत महीथल, मिलि सब मिथिला आए
भूपनि को रूप देखि गर्व गयो, लोग सुविस्मय पाए
एक काम सो तो हर जारयो, ए कोटि काम किहिं जाए
ता पीछे रघुबीर धीर लघु बीर सहित पाव धारे
उदित भानु जनु भवन भवन प्रति दीपक फीक फिकारे
मद गज से नृप चाहि चकित भए, ओज मनोज सिधारे
बाल सिंह सम सुंदर अति गति, राजत प्रान पियारे
महा मल्ल सत अष्ट, कष्ट करि धनुप सभा मै आन्यौ
करि करि कोउ बलवंत बदन दस ताहु को भुज बल भान्यौ
नृपति समाज मध्य ठाढ़ो है, यौ कहि दूत बखान्यौ
जो ऐचै सो बरै जानकी, जनक यहै पन ठान्यो
एक चाप को दरस करत ही, मिस ही मिस जु पलानैं

एक उठावत गिरत धरनि झुकि, औरहि आन उठानैं
दस दस सहस गजनि को बल नृप, तेऊ निपट खिसानैं
देखि हसे दोउ बीर परसपर, लागत परम सुहानैं
तब रघुबर नवघन मूरति, श्री सिय तन मुरि मुसिक्यानें
दामिनि सो पट कटि लपेट, छवि सो चलि चाप निरानें
तिहि छिन अंध वृद्ध नर नारी सुर पुनि राजा रानें
भई भीर, रघुबीर के कौतुक देखनि को उररानें
झट दै लै, चट दै चढ़ाय, तट दै धनु तोरि गिरायो
जनक मुदित, जुबती मुदित, सिय को ’व प्रान घट आयो
जै जै जै सब कहत, अमर गन पहुपनि अंबर छायो
‘नंददास’ बलि बलि तिहिं औसर, घर घर मंगल गायो ।।१६।।

[विवाह समय तथा अयोध्या प्रवेश समय पद]

चार दूलह बने कुँवर अवधेस के,
चले व्याहन अली जनक नृप के सदन
सुहे बागे बने, सरस सोंधे सने,
थकित ह्वै रहि गयो, निरखि सोभा मदन
सोहैं सिर सेहरा खचित नग जगमगत,
लगत कमनीय अति बिमल विधु से बदन
खात बीरा, गरैं लसत हीरा पदक
दमकि मुसक्यान मे सिखर मनि से रदन ।।१।।

विविध भूषन बसन, सजी चतुरंगिनी
लगी चकचौंध सी मिले दिनमनि किरन

---

१६. किहिं जाए = किसने उत्पन्न किया । फीक फिकारे = फीके, मंदप्रभ । चाहि = देख कर । भान्यो = नष्ट हो गया । मिस = बहाना, व्याज । पलानैं = पलायन कर गए, भग गए । खिसानें = नष्ट हो गए; खराब हो गए । निरानैं = निकट आए । रानैं = रानी । उररानैं = उमड़कर । झट दै = शीघ्रतापूर्वक । चट दै = तत्काल । तट दै = तड़ाक की ध्वनि करके ।

१७. सुहे = लाल रंग के । बागे = जामा ; अंगा ; एक प्रकार का प्राचीन परिधान । बने = सुशोभित हो रहे हैं । सेहरा = मुकुट । खचित = जटित । बीरा = पान का बीड़ा । पदक = कंठ मे पहनने का जुगनूँ नामक गहना । सिखर = शिखर, एक रत्न विशेष । दिनमनि = सूर्य ।

नटी छबि जटी सब नचत तखतनि चढ़ी,
बजत नौबत मिली सकल बाजनि परन
जनकपुर घर अगर डगर बन बाटिकनि
खचित मनि को सकै ताकी सोभा बरन
सबही संपति भर्यो व्याह कौ देखि कै,
अबहि मानौ अमरपुर उतरि आयो धरनि ॥२॥

लै कै जनवास तैं बाग रचना भई
पुरुप गज अश्व कपि और कौतक घने
अगनि के जत्र तहॉं छुटनि लागे अगनि
धर गगन जोतिमय मनहुँ तिहि दिन ठने
बाजि गज बसन अरु बिबिधि भूषन सबै
तनकहु न थाकही देत मंगद जनै
स्तुति करैं बंदीजन, बिरद बरनैं नए
मिले मागद सबै दुहू बसनि भनैं ॥३॥

बडड़े अश्वन चढ़े, कुँवर समद बढ़े
पढ़े केकान अस नचत लिये मान कौं
उततैं सजि सेन निज, जनक नृप प्रेम तैं,
लैंन आए सबै जान मनि-जान कौं
समधी समधी मिले, परसपर अति खिले,
नारि मिलि गारि दैं, करन लगीं गान कौं
अटनि चढ़ि पुर-बधू, वारैं भूषन बसन,
देखि कै बिबस भइ रघुबंस-भान कौं ॥४॥

पौरि पहुँचे तहॉं चारु तोरन बँधे
गजन चढ़ि खडग सो जाय परसे

नटी=नर्तकी। जटी=जड़ी हुई। नौबत=बधाई का बाजा। परन=दुंदुभी के सदृश एक बाजा। धर=धरा, पृथ्वी। ठनें=हो गए। अगनि=अग्नि। अगनि=अगणित। मंगद=मंगन, भिखारी। मागद=मागध, भाट, चारण। समद=अत्यधिक प्रसन्नता। केकान=एक प्राचीन देश, सम्भवतः आज कल के फारस का खाकान। अस=अश्व, घोड़ा। केकान अस=केकान देश के घोड़े। पडे=प्रशिक्षण-प्राप्त। पौरि=द्वार। तोरन=फाटक।

उतरि भीतर गए, गज सु नेगनि लए,
सब्द जय जय भए, कुँवर दरसे
रहसि पुर नारि सब, वारि सरबस, कहैं
देह धरे चार नृप-पुन्य परसे
जनक कुल प्रोहितनि, आय करि आरती,
तिहि समै हेम सम मोती बरसे ॥५॥

थार मनि मानिकनि भरयो मंत्रनि खरो
तिलक करि दुजबधू अछित लाए
चातुरनि पातुरनि, तिहिं समै सोहिले,
अधिक मन मोहिले, मधुर गाए
सफल करि लेखनैं, नैन करि पेखनैं,
देखनैं देव दिगपाल आए
विविधि अदभुत बने, घने नभ-जान सो,
दिसि बिदिसि आकास सकल छाए ॥६॥

ब्याह मंडप तरैं, जाय ठाढ़े भए,
यथा विधि दुजबरन ब्याह ठान्यौ
चार रचि माड़ए, तिन्है तहँ लै गए,
कन्या वर जोग्य तहाँ आनि आन्यौ
लाय पट गाँठि परसाय कर दुहनि के
बना बनी परसपर मोद मान्यौ
फेरा लिवाय जू, अगनि कौ साखि दै
छाड़्यो नृप कन्यका-दान पान्यौ ॥७॥

दुगध ओदन तहाँ परसपर कौल दै
नवल जुवती जुवा बहुत हरषे

नेगनि=नेगी, नेग पाने वाले सेवक। रहसि प्रसन्न होकर। सम=सहित। हेम सम=स्वर्ण सहित। अछित=अक्षत, न टूटा हुआ चावल। सोहिले=सोहर, मंगल (गीत)। मोहिले=मोहक। जान=यान, विमान। माडए=मंडप। बना=दूलह। बनी=दुलहिनि। पान्यौ=पाणि मे; हाथ में। ओदन=भात। कौल=कवर, ग्रास।

उही मिस निरखि मुख सरद उडराज से
अवध महाराज सुत चित्त करखे
कुँवरिहू उही मिस सुघर वर वरन लखि
आप अपनै जोग्य निज नाह परखे
तिहीं पुर तिहिं दिवस परम मंगल भयो
सक भइ लंक, घन रुधिर बरषे ॥८॥

दुजन दइ दच्छिना ग्राम गज तुरँग रथ
रतन पट बरने वे जात कापैं
खोलि भंडार दए भूप सब आपनैं,
लेहु जाचक जु लयो जाय जापैं
करी ज्यौनार अस चतुर बिधि भोजननि
रुचि सो जेवैं जदपि बहुरि धापैं
पूजि कुलदेव कौं, खेलि जूवा तहाँ
बिछाय दए पलका, जाय बैठे तापैं ॥९॥

बिबिधि दए दायजे, करी पहिरावनी
अवध भूपाल भए अधिक राजी
इनहू पुनि जाचकनि दिए अति मोद सौ
अनगनित वसन मनि नाग बाजी
चले लै दुलहनि कुमर निज नगर कूँ
चढ़ी बढ़ी फौज सो अधिक छाजी
चहूँ दिसि बजि उठे बिबिधि बाजे घनैं
घन ज्यूं गंभीर नौबत जु गाजी ॥१०॥

आय पहुँचे कितिक दिनन मे अवध कूँ
अवध नवनिधि भरी पटनि छाई
कियो परबेस तब करिके गँठजोर तहाँ
सुघर बर नव किसोर चारूँ भाई
साजि कैं आरती जननि तीनूं तबै
जुवति जन संग लै साम्हे आई

बरन=रंग। घन=बादल। कापैं=किससे। जापैं=जिससे। धापैं=तृप्त होते हैं; अघाते हैं। पलका=पलंग, पर्यंक। राजी=प्रसन्न। नाग=हाथी। परबेस=प्रवेश।

आरती करि जु पुन वारि मनि मानिकनि
'वृंदावन' प्रभुनि की लइ बलाई ॥११॥ १७॥

[अथ श्री दसरथ पश्चात श्रीराम महाराज समय]

दोहा—और कथा करुनामई, मैं न लिखी है जान
अबैं वीर रस धरत पद, रावन हनन बिधान ॥१॥

[सिया सुधि लैंन हनूमान समुद्र उल्लंघन समय पद]

तबै इक अंगद बचन कह्यो
तरि कें सिंधु सिया सुधि लेई, किहि बल इतो लह्यो
इतनी बात श्रवन नि हरष्यो, हँसि बोल्यो जामवंत
या दल मध्य प्रबल केसरि-सुत, जाहि नाम हनुमंत
जो मन करैं एक बासर मैं, फिरि आवै फिरि जाय
स्वर्ग पताल आदि ताकों गम, कहिए कहा बढ़ाय
यह लैहै सीता-सुधि पल मैं, अरु ऐहै जु तुरंत
इहि प्रताप त्रिभुवन को पायो, याके बलहि न अंत
तबै बुलाय सुचित चित ते कयो, कच्छु तंबोरहि लेहु
ल्यावहु जाय जनक कन्या सुधि, रघुपति को सुख देहु
पौर पौर प्रति फिरहु बिलोकन, गिर कंदर बन गेहु
समैं विचारि मुद्रिका दीजहु, सुनहु मंत्र सुत एहु
धरि अहि-पत्र सीस, मारुत मन कर्यौ चौगुनो गात
चढ़ि गिरि सिखर बचन इक उचर्यो, गगन उठ्यो आघात
कंपत सिंधु सेस बसुधा, नभ रवि थंभ्यो उनपात
मानहु मेरु पच्छ ह्वै लागे, उड़यो अकासहि जात
चकृत भए परसपर बनचर, बीच करी किलकार
तहँ निसाचरी मिली जु अद्भुत करि अति मुख बिस्तार

---

(१८) यह सूरसागर नवम स्कंध का ९१८ वाँ पद है। सिया सुधि = सुधि (सु)।
समैं = लेहु (सु)। इस पद के चरण ५, ६, ७, ८ सूरसागर मे क्रमशः ७, ८, ५, ६
संख्यक चरण है। सूरसागर में ये नवीं दसवीं पंक्तियाँ अधिक हैं:—
केतिक लंक उपारि बाम कर, लै आवै उचकाइ।
पवन पुत्र बलवंत बज्र तनु, कापैं हटक्यौ जाइ।
समैं = लेहु (सु)।

पवन-पूत उर पैठि विदारी, तबहीं लगी न बार
'सूरदास' स्वामी प्रताप तैं, उतर्यौ जलनिधि पार ॥१८॥

[अथ हनूमान लंका प्रवेस, सिया सोधन तथा दरसन, संभाषन, मुद्रिका दैन, बिपुन विध्वंसन, असुर सेना हतन, रावन सभाषन, पुरी प्रजारि, लांगूल सांत करि, आय पुनः जानकी पद परस करन समय पद]

हनूमान लंका जु सिधाए
सूछम तन करि भीतर आए
पुर गिर सकल कंदरा हेरी, कहूँ दृष्टि नहिं आई
बिपुन असोक सिंसपा द्रुम तर, जनक सुता तहाँ पाई
करि प्रनाम अरु दई मुद्रिका, कही कथा जो राम कहाई
बाग विधंसि, हते दानव दल, सदृढ़ वचन कहि लंक जराई
बहुरि आय सीता पद परसे, पहिले उदधि लागूल बुझाई
'नागरीदास' कह्यो आग्या है, जाय करौं दरसन रघुराई ॥१९॥

[हनूमान प्रति संदेस कहन पद]

देखे हो कपि जात, सँदेस कहा हौ कहौं
सुनि कपि इन प्राननि को पहरो, कब लगि देत रहौं
ए अति चपल चल्योई चाहत, करत न कछू विचार
लै लै नाम जतन करि राखत, रोकि रोकि मुख द्वार
बार बार अकुलाय कहत हौं, डरपत हौ हनुमत
नाहिन 'सूर' सुनो काहू को दुख करुनामय कंत ॥२०॥
मेरी ओर ते विनती कीबी
पहिले नाम सुनाय, पाय परि, मनि रघुनाथ हाथ लैं दीबी
मंदाकनि तट फटिक सिला परि, मुख मुख जोरि तिलक की करनी
कहा कहौं कपि कहैं बनै अब, सुमिरत सुरत होत उर अरनी
तुम हनुमंत पुनीत पवन-सुन, कहियो जाय तुम्हैं मैं बरनी
'सूर' सु नैननि आय दिखावहु, मूरति दुसह दोप दुख हरनी ॥२१॥

---

(२०) यह सूरसागर नवम स्कंध का ९३९ वाँ पद है।
(२१) यह सूरसागर नवम स्कंध का ९४९ वाँ पद है।
कीबी = करनी। दीबी = धरनी।
१८. सुधि=शोध, समाचार। गम=प्रवेश। अहि-पत्र=पान।
२१. अरनी=अरणी; काठ का एक यंत्र, जिससे प्राचीन काल में यज्ञ के लिए अग्नि उत्पन्न की जाती थी।

[हनूमान रघुपति ढिग आय विज्ञप्ति करन पद]

रघुपति बेग जतन अब कीजै
बाँधिहु सिंधु बेग सुभटनि कौ आपुनि आयसु दीजै
तौ लौ बेग तरौ या पय को, द्रुम पाषाननि छाय
दुतिय सिंधु सिय नैननि को जल, जब लगि मिलै न आय
यातै बिनती करत कृपानिधि बार बार अकुलाय
'सूरदास' अकाल-प्रलय प्रभु मेटो दरस दिखाय ॥२२॥

[श्री रघुनाथ उदधि उलंघन समय पद]

उदधि-तट उतरत राम उदार
रोषावेश किए रघुनंदन, सब बिपरीत ब्यौहार
सागर पर गिरि, गिरि पर अंबर, कपि घन कै आकार
गरज किलक आघात उठत, मनु दामिनि पावक झार
उमड़त सलिल समात न सलितन, चलत उलटि कै धार
मनु रघुपति भय भीत सिंधु परि, पतनी पठई प्यौसार
सेना सेतु गगन मारग अरु चढ़ि जलचर बिचवार
सीय सगुन सुभ होत 'सूर' प्रभु जलनिधि उतरे पार ॥२३॥

[रावन प्रति मंदोदरी बचन]

सरन पिय जाइये मन क्रम बचन बिचारि
ऐसो को समरथ त्रिभुवन मै, जो अब लेहि उबारि
सुनि सिख कंत, दंत तृन धरि कै, सह परिवार सिधारो
परम पुनीत जानकी सँग लै, कुल कलंक किन टारो
ये दससीस चरन तर राखौ, तजि मति कुटिल अधीर
मेटैंगे अपराध महाप्रभु, कृपा करन रघुबीर
जिहि तोरि धनुष, मुख मोरि नृपनि कौ, सिया स्वयंबर कीनौ
छिन इक मधि भृगुपति-प्रताप-बल करषि हृदो हर लीनौ
लीला कपट कनक मृग मार्यौ, बध्यौ बालि अभिमानी
सोइ दसरथ-कुल-चंद अमित-बल आए सारँग-पानी

---

(२२) यह सूरसागर नवम स्कंध का ५६४ वां पद है।

(२३) यह सूरसागर नवम स्कंध का ५६८ वाँ पद है। सूरसागर एवं राम चरित्र माला के इन दोनो पदों मे प्रभूत पार्थक्य है।

जाको दल सुग्रीव सुमंत्री, प्रबल जूथपति भारी
महा सुभट रनजीत पवन-सुत, निडर बजर-बपु-धारी
करिहैं पंक लंक छिन भीतर, बजर सिला लै धाय
कुल कुटंब परवार सहित तोहि, बधत बिलंब न लाय
अजहू बल जनि करि सकर कौं, मानि, बचन सुनि मेरो
जाय मिल्यौ कौसल नरेस कौ, बंधु बिभीपन तेरो
कटक सोर मंदोदर सो दिस, देखत कपि दल भीर
'सूर' स्वामि रघुबंस तिलक दोउ, उतरे है जलनिधि तीर ।।२४।।

[अंगद संधि संदेसार्थ रावन ढिग आवन वर्णन]

बालि-नंदन बली, विकट वनचर महा
द्वार रघुबीर कौ बीर आयो
पौर तैं दौरि दरवान, दसमाथ सौं
जाय सिर नाय यौं कहि सुनायो
सुनि श्रवन, दस-बदन, सदन-अभिमान,
कै नैन की सैन, अंगद बुलायो
बिबिधि आयुध धरे, सुभट सेवैं खरे,
छत्र की छाँह निर्भय दिखायो ।।१।।

देखि हरि वेप, लंकेस हर हर हँस्यो,
"सुनहु भट ! कटक को पार पायो
देखि दानव महाराज रावन सभा
कहन को मंत्र इहँ कपि पठायो"
"रे रंक रावन, कहा डंक तेरो इतो,
दौरि कर जोरि बिनती उचारौ
परम अभिराम रघुनाथ के रोम पर
बीस भुज, सीस दस, वारि डारौं" ।।२।।

कोपि करवाल गहि, कह्यौ लंकाधिपति,

संभु की सपथ, कपि कुपथ क काया सकल,
स्वास आकास वनचर उड़ाऊँ"
"फेरि कै चरन द्वै, पंच सिर पहुमि दै
सबनि देखत अरे अब सँघारौ
जानकी-नाथ के हाथ तेरो मरन
कहा मति मूढ तोहि बीच मारौं" ॥३॥

"तोहि वनचर अबहि दंड दैहुँ देखि,"
कोपि अनुचरनि आज्ञा उचारी
तिही छिन वालि-सुत झपट पट मुकुट लै
पटकि भुव असुर, भयो गगनचारी
मारि असुरन, सभा जीति पुर कनक की,
तेज हरि-चक्र सम, छोह छायो
'सूर' प्रभु सुभट लकेस की लाज लै,
राम-पद-कमल सिर आय नायो ॥४॥२५॥

[रघुबीर बीर उच्छाह उच्चारनि पद]

दूसरे कर बान न लैहौं
सुनि सुग्रीव प्रतिज्ञा मेरी, एकहि बान असुर सब हैहौं
सिव पूजा जिहि भाँति करी है, सो पंक्ति सिर संतत जैहौं
करत प्रहार पाप फल वर्जित सिर माला कुल सहित चढ़ैहौं
करौं न बिलंब कछू जो छिन इक अरि सनमुख ह्वै पैहौं
जैसे तूल जु परत अगनि मुख, जारि जड़नि जम-पंथ पठैहौं
यौं वधि दुष्ट, देव दुज मोचन, लंक बिभीषन तोकौं दैहौं
सीता सहित बंधु 'सूर' प्रभु कुन पन पारि, अजोध्या ऐहौं ॥२६॥

---

(२५) यह सूरसागर नवम स्कंध का ९७३ वाँ पद है। इहँ कपि पठायो = जब कपि पठायो (जु)। उचारो = विचारो (सु)। सूरसागर एवं इस ग्रंथ के इस पद में घोर अंतर है।

(२६) यह सूरसागर नवम स्कंध का ६०१ वाँ पद है। सो पंकति सिर संतत जैहौं = सोइ पद्धति परतच्छ दिखैहौं।

२५. हरि वेष = वन्दर का वेष। हर हर = हहा कर। छोह = क्षोभ।
२६. हैहौं = हनूँगा; वध करूँगा।

[जुद्ध समै रावन हतन पद]
आजु अति कोप्यो है रन राम
ब्रह्मादिक आरूढ़ विमाननि देखत सुर संग्राम
घन तन कवच वीर बर साज्यो, कर साज्यो सारंग
सुचि करि सकल बान सूधे करि, कटि तट कस्यो निषंग
छुभित सिंधु, सेस सिर कंपित, पवन भयो गति पंग
इंद्र हँस्यो, हर हँसि बिलखाने, जानि बचन को भंग
टूटत ध्वजा-पताक-छत्र रथ, चाप चक्र सिर-त्रान
सोभित सुभट जरत, मानौं दौ द्रुम बिन साखा पान
घन अंबर दसहू दिस बाढ़ी, सायक किरन समान
मानौं महा प्रलय के कारन, उदित उभय पट भान
स्रोण छिंछ उछरत अकास लौं, गज बाजिन सिर लागि
मनहु नगर तृण घरनि घरनि ते, उपजी है अति आगि
उठि कमंध महराय भीत हैं, परत 'व जनु जरि जागि
फिरत शृगाल सिलौं सौं काढ़त, चलत 'व सिर लैं भागि
रघुपति-रिस-पावक प्रचंड भइ, सीता-स्वास-समीर
रावन जुत कुल सघन बेणु-बन, औरु सुभट रन धीर
होत भस्म कछु बार न लागी, ज्यौं ज्वाला पट जीर
'सूरदास' प्रभु विपुल बाहु बल छिनक माझ किए कीर ॥२७॥

[श्री राम विजय सिया मिलन पद]
बाढ़यो आजु लोकानंद
मिलत सिय-मुख-चंद्रिका चलि, अमल रघुपति-चंद
संख पटह निसान मंगल गान रव उच्चार
विभीषण हनुवंत आगैं, भक्त जन प्रतिहार
धाय आए श्रवन सुनि सुनि, सकल हरषित गात
भालु कपि अनगनत सेना, दरस हित उतरात
दार छरी प्रहार आगैं, नाहि पावत जान
कह्यो तब सब्रहिन प्रभू सौं, बरजिए हनुमान

---

(२७) यह सूरसागर नवम स्कंध का ६०२ संख्यक पद है। चक्र सिर त्रान = चमू अस तान (सु)।

२७. सारंग = धनुष । स्रोण = शोणित, रक्त । छिंछ = छींटा । वेणु = बाँस । बार = विलंब । जीर = जीर्ण, फटे पुराने । कीर = कीट, नष्ट ।

तबै सिविका छाँड़ि सीता चली आग्या पाय
राम दल गदलनि बिच, मनु दामिनी चमकाय
उड़ी रेनु अकास पूरन, कटक भट बहु साथ
'दास नागर' मिले सानँद, जनकजा रघुनाथ ॥२८॥

[अयोध्या आगमन, आनंद देनार्थ हनूमान पठावन, पद]

वेग पवन-सुत कूँ दसरथ-सुत आनँद देन पठाए
कुसुम विमान तैं उतरि वीर कपि, नर वपु धरि कैं धाए
गुह कूँ समाचार कहिकैं, फिरि कहे भरथ कूँ जाय
मारि लंकपति कों सीतापति आये हैं रघुराय
सुनिकैं मुदित चकृत चितवत हैं, मुख ते कढ़ै न बैन
आए सिमिटि तबै श्रवननि मैं, मन व्रत प्रान 'रु नैन
मिल्यो जाय तब कृपा-सिंधु सो भरत-भक्ति-जल-सोत
'नागरीदास' राम पद सेवत, तिन्हैं क्यों न सुख होत ॥२९॥

[विमान दरसन, निकट आगमनि, पद]

देखो राम राजा ह्वै आवत

दूरहि तैं दुतिया के ससि लौं, पुरजन व्योम विमान बलावत
सिया सहित वर वीर बिराजत, अवलोकत आनंद बढ़ावत
आगैं बंदर भीर महा भट, ज्यौं घन गगन पवन-बस धावत
निकट नगर जिय जान धरयो धर, जनम भूमि की कथा चलावत
यह मम जन, मम यहै प्रजा जू प्रियजन, आप कपिन कहि कहि समुझावत
यह बसिष्ट कुल पूज हमारे, पा लागिहु, सब सखन सिखावत
यह स्वामी सुग्रीव विभीषण, भरतहु ते मोकूँ जिय भावत
को जानतो कहाँ दसरथ-सुत, बन जु गए कछु बात न आवत
सब कीरति की अवधि इहाँ लौं, बरनत अंग जहाँ ह्दो जुड़ावत
रिपु हनि, देव काज सुख संपति सकल 'सूर' इनही तैं पावत
इतैं मान करि कृपा कृपानिधि पुर पैठत जन कौ जस गावत ॥३०॥

[अयोध्या पुरी प्रवेसानंद पद]

आज सखी अवध पर मध्य मंगल महा
सकल सुर नरनि मन मोद कहनो कहा

---

(३०) यह सूरसागर नवम स्कंध का ६११ वां पद है।
२८. दार छरी = छड़ीदार, छड़ी वाला, सेवक।
२९. कुसुम विमान = पुष्पक विमान।

कदली कंचन कलस, विमल नौ रतन जुत,
दिपत दीपावली लजत लाजा
द्वार तोरन रचित, धाम धामनि धुजा,
पुरी प्रविसत सिया राम राजा
घटनि सी अटनि दुति दामिनी कुल वधू,
गान धुनि करत, मुनि मनहिं करषै
परम उत्सव भरी अवध पर अमर गन
गगन तैं रस मगन कुसुम वरषैं
संग रघुवीर लघु वीर सेना सहित
बजत वादित्र चहुँधा सुहाए
'नागरीदास' सुख रास रघुकुल तिलक
देव करि काज निज राज आए ॥२१॥

[कवि वचन फल स्तुति]

दोहा

पढ़ैं सुनैं या ग्रंथ कूं, घरी एक दिन जाम ।
जाके हिय नित प्रति बसो, सिया राम अभिराम ॥१॥
सँमत अष्ट-दस सत जु पट, हिंडनि सलिता तीर ।
'नागर' पद चुनि चुनि कियो, ग्रंथ चरित रघुवीर ॥२॥

—:०:—

२१. लाजा = मंगल खील, धान का लावा । वादित्र = वाद्य, बाजा ।

करिए व्रज-बासिन सौं नेह
नख सिख भरे प्रीत रस सागर, आवत कबहुँ न छेह
नन्द नँदन प्यारे के प्यारे, नित मतवारे रूप
'नागरीदास' मिलावत मोहन रसिक कुँवर व्रज भूप ॥३॥

जो कोउ व्रज लीला रस चाखैं
ताको फिरि कहुँ और कथा मैं, कबहुँ न मन अभिलाखैं
खटरस छप्पन भोग न भावत, जो व्रज-गोरस पावैं
हित व्रजरसिक उपासिक सौं करि, आन सौं मन न मिलावैं
'नागरिया' व्रज महिमा रसना तनकहु जात कही ना
बिन रस रूपा भक्ति जक्त, ज्यौं मुरधर जेठ महीना ॥४॥

हमारैं मुरलीवारो स्याम
बिन मुरली बनमाल चन्द्रिका नहिं पहिचानत नाम
गोपरूप वृन्दावनचारी व्रज जन पूरन काम
याही सौं हित चित्त बढ़ो नित दिन-दिन पल छिन जाम
नन्दीसुर गोवर्द्धन गोकुल बरसानौं बिश्राम
'नागरिदास' द्वारिका मथुरा इनसो कैसो काम ॥ ५ ॥
चरचा करी कैसैं जाय
बात जानत कछुक हम, सो कहत जिय थहराय
कथा अकथ सनेह की बिन, उर न मावत और
बेद संमृति उपनिषद कौं रही नाहिन ठौर
मौनि ही मैं कहनि ताकी, सुनत श्रोता नैंन
सो 'ब 'नागर' लोग बूझत, कहि न आवत बैंन ॥ ६ ॥

---

(४) यह गोपी प्रेम प्रकाश का ४८ वाँ पद है।
(५) यह गोपी प्रेम प्रकाश का ४७ वां पद है। दिन-दिन = दिन (हस्त)।
१. दसधा = नवधा भक्ति में एक और 'प्रेमा' जोड़कर दशधा भक्ति कहते हैं। हौब = होना।
२. गहबरे = विकल; आँसुओं से भरे नेत्रों से। अन्तर = भीतर, हृदय में। अक्खर = अक्षर, वाणी। सोग = शोक।
३. छेह = कपट पूर्ण व्यवहार; अंत।
६. थहराय = काँपता है। मावत = अमाती हे, समाती है। संमृति = स्मृति, विधि सम्बन्धी प्राचीन ग्रंथ, जैसे मनु-स्मृति।

आयो आयो रे कलिकाल आयो
धरमहि मार उठावत आतुर, अधरम राज सवायो
अमर मानि छन-भंगुर तन, नर पाप करत न सकायो
छल करि पुत्र पिता कौं मारत, पिता पुत्र हति कैं सुख पायो
और जीव की कौंन चलावैं, हिंसा ही कौ स्वाद सुहायो
जहां तहां द्रोह कलह कर्कसता मत्सर क्रोध उरनि उफनायो
महा अमंगल घर घर दीसत, रुदित बदन बिलखायो
कूकर काग उलूक भयानक सदा सब्द रहै छायो
अल्प वृष्टि आकास निहारत, त्राहि त्राहि जग बचन सुनायो
ह्वै गइ कुटिल बुद्धि जीवन की, लोभ मोह कैं हाथ बिकायो
रहत न दृढ़तापन काहू को, भवन-काम तन नाच नचायो
तातैं गृह तजि तीरथ बसिए, रहैं सतसंग सदा सुख छायो
दुर्लभ महा पाय नर देही, चूक्यो समैं, सोई पछितायो
ठाकुर 'नागरीदास' पास सौं इह उपदेस कहायो ॥ ७ ॥

देखो सब जीवन की ख्वारी
महा घोर कलिजुग की भामिनि-कलह भई सबहीं कैं प्यारी
लगी रहैं उर अन्तर माहीं, भावत नाहिं करी छिन न्यारी
याही कौं सर्वस करि जानैं, सकल सुखन की बात बिगारी
यह जारन कौं नित्त लरावै, फिरि राखैं ज्यौं की त्यौं यारी
'नागरिया' केवल भक्तन इहिं दारी दूर निकारी ॥ ८ ॥

---

(७) हवि कें = हित कैं (हस्त) । रुदित = रुदत (हस्त) । तातैं० = तामें ग्रेह छाँड़ि बन बसिए (हस्त०) ।

(८) यारी = नारी (हस्त) । केवल—इसे 'के व ल' भी पढ़ा जा सकता है ।

७. उठावत = (संसार से) उठा देता है; समाप्त कर देता है । सकायो = शंका करता है; डरता है । उफनायो = उमड आया । रुदित=रोता हुआ । जीव न की=जीवों की । भवन काम तन = शरीर जो कि काम (कामनाओं) का भवन है । समैं = अवसर, समय । पास = पासमान, सेवक, पास (रहनेवाला) ।

८. ख्वारी = बरबादी, विनाश । जारन = प्रेमियों । यारी = दोस्ती । नागरिया केवल = (१) नगरीदास कहते हैं कि केवल······। (२) राधा के बल । दारी = दासी, लौंड़ी ।

बहोरि पद कर गति थकत अति अरुझि लाज-सिवार
जल जीव चौटत कुटुंब कारज बिबिधि बिबिधि प्रकार
अप्राध मूरत ग्राह की धरि गह्यो दृढ़ पग मर्म
गड़ी कहर कराल दाढ़ै, सोई भोग अकर्म
रोम रोमनि पीर पूरि सरीर धीरज क्कास
अति अमूझनि कलमली रुकि घुटत नासा स्वास
अहो करुनासिंधु स्वामी लेहु मोहि निकास
नाँव 'नागरिदास' सुनि कोउ करै नहिं उपहास ॥१३॥

क्यौं नहिं करो प्रेम अभिलाष
या बिन मिलै न नंद दुलारो, परम भागवत साख
प्रेम स्वाद अरु आन स्वाद यौं, ज्यौं अकड़ोड़ी दाख
'नागरिदास' हिये मै ऐसै मन बच क्रम करि राख ॥१४॥

क्यौं नहिं करत उपाय भगति को
पावत किये रूप आनंदी, आनँद उरहि अपार लगत को
देह कुटुंब आप के स्वारथ, दीसत हैं सब मोहि ठगत को
'नागरीदास' बैठि सतसगति, मेटि देहु दुख दाह जगत को ॥१५॥
माई नीको रस गोपाल को
औरै रस किहिं काम सखी री, गृह व्योहार जंजाल को
वाके गुन, वाकी रूप माधुरी सुमिरन प्रान रसाल को
'नागरिया' तजि गंग कौन करै न्हावन डोली खाल को ॥१६॥

---

(१३) गडी = गड़त (मु)। रुकि = रुचि (हस्त०)। नासा = नास (हस्त०)।
(१४) करो = करैं (मु)।
(१६) डोली = ढोली (हस्त०)।

१३. सिल = पत्थर की सिल जिस पर मसाला आदि पीसा जाता है। गरई = वजनदार, भारी। उकसना = निकलना, उभरना। चौंटत = (१) चोट करते हैं; (२) चहेटते है, दौडाते हैं। क्कास = कहां है। अमूझनि = न समझ में आने वाली। कलमली = बेचैनी, बेकली।
१४. साख = साक्षी, गवाह। आन = अन्य। अकड़ोड़ी = छोटे छोटे कंकड़। दाख = द्राक्षा, अंगूर।
१५. आपके = अपने।
१६. रसाल = मधुर। डोली = डोल; गर्मी के दिनों में नदी के सूख जाने पर चारों

परयो काम मन सौं आय
महा मन की लगन बिन, नहिं लहत मोहनराय
सो 'ब चंचल नीच संगी छिन न कहुँ ठहराय
कबहुँ कुटिल कठोर, कबहूँ सिथल थिर ह्वै जाय
कबहुँ कामानल जु तप कै लाख ज्यौं पिघलाय
निपट अति गति बिकट मन की कहूँ काहि सुनाय
कहूँ सोई सामुहैं दुख उठै मन को गाय
थक्यो झंझट करि बहुत बिधि कछू बस न बसाय
मूँदि लोचन सरन ह्वै बिच गिरयो गुर कै पाय
'दास नागरि' को जु हरि सौ देहु चित्त लगाय ॥१७॥

हम तैं भजन गयो है भाजि
एक घरी औकास न पावै, घेरि लए गृह काज
हिये अविद्या बाहर अरथी, दोऊ तनक न आवैं बाज
'नागरीदास' को कहा जाय, हरि जो तुमको आवै नहि लाज ॥१८॥

समयो हेरत कहा भजन को, समयो कबहुँ न पावैगो
दिन समयो जग दुंद मै बीतत, निसि मन जाग भ्रमावैगो
कृष्ण कुँवर सुमिरन कौ आछैं समयो कबहुँ न आवैंगो
'नागरिदास' समो हेरत ही, अंत समो आय जावैंगो ॥१९॥

प्रभु जू मोहि खबर नहिं मेरी, हौं जु कौन, हौ किनमैं
जो भावै सोई मोहि कीजै, हौ अब ठहरौ तिनमैं
भगतन मैं कोउ कहै मोहि, तो भगति-गन्ध नहिं नेरी
जो केवल पतितन मैं, तो क्यौ तिलक छाप तन तेरी

---

(१९) आवैंगो=पावैगो (हस्त०)। (२०) नेरी=तेरी (हस्त०)।

१६. ओर की बालुका राशि के बीच पडा हुआ जल-खंड। खाल=नीची जमीन (में पडा हुआ बरसाती पानी)। न्हांवन=स्नान।

१७. लहत=प्राप्त होते हैं; लब्ध होते है। तप कैं=तप्त होकर। कहूं सोई=जिससे कहता हूँ वही। पाय=पांव, चरण।

१८. अरथी=स्वार्थी लोग। बाज आना=दूर रहना।

२०. नेरी=तनिक भी, थोड़ी सी भी। संभ्रम=भ्रांति। अलग थलग=अलग। करनी०=कर्म नही दिया, जो मूल है।

मन संभ्रम कछु समझि परत नहिं, अलग थलग रह्यो भूल
'नागरिदास' नांव दै कैं हरि करनी दई न मूल ॥२०॥

गोया आसनाव न थे कभी
तोते की सी आंखि गई फिरि, देखत देखत अभी
किसी का कछु चलता नाहीं, हिकमत थकी सभी
'नागरी दास' गलत असनाई, गायब हुई जभी ॥ २१ ॥

कहाँ वे सुत नाती हय हाथी
चले निसान बजाइ अकेले, तहाँ कोउ संग न साथी
रहे दास दासी मुख जोवत, कर मीड़ै सब लोग
काल गह्यो तब सबहिन छाड़्यो, धरे रहे सब भोग
जहाँ तहाँ निस दिन विक्रम कौं भट्ट थट्ट बिरदत्ति
सो सब बिसरि गलैं एकै रट 'राम नाम है सत्ति'
बैठ न देत हते माखी हूँ, चहुँ दिसि चँवर सचाल
लए हाथ मैं लट्ठा ताको कूटत मित्र कपाल
सौंधैं भीनौं गात जारि कैं, करि आए बन ढेरी
घर आए तैं भूलि गए सब, धनि माया हरि तेरी
'नागरिदास' बिसरिए नाहीं, यह गति अति असुहाती
काल व्याल को कष्ट निवारन, भजि हरि जनम सँगाती ॥ २२ ॥

तिन्है कोरि कोरिक धिरकार
राग दोस मतसरता तजि कैं, मुक्ति जानि, मानी नहिं हार
सुन्यो भागवत, भक्त कहावत, कछु इक रीति करीबी
पैं सुख सार 'रु सतसंगति फल आई नाहिं गरीबी
हिये अभिमान, गोपि धन गाड़्यो, ताको सबैं बिकार
जो सचु पयो चहैं तो उर सौ दुरधन देह निकार

---

(२२) यह 'पद प्रबोध माला' का पाँचवाँ पद है। गलैं एकै रट = लगैं एकै रट (मु)। है सत्ति = कहैं सत्ति (मु)। सँगाती = सगाती (हस्त०)।

२१. गोया = यानी। आसनाव = दोस्त, मित्र; प्रेमी। आँख फिरना = बेमुरव्वत हो जाना। हिकमत = उपाय, प्रयत्न। असनाई = प्रेम।

साधु वचन सुनि दीन भए बिन्, क्यौंहु न जरनि मिटैगी
'नागरीदास' बहुत पछितैहो, दुख मैं देह मिटैगी ।। २३ ।।

जानत प्रीति-स्वाद हरिराई
रसकनि मन हित रस आस्वादी, मोहन सब सुखदाई
जा बन किये जग्य जाचंग्या, सुर मुनि मति तरसाई
जिहिं जग-पतनिनि की सामग्री माँगि-माँगि कैं पाई
कर्न द्रौन दुर्जोधन कैं गृह भोजन बिधि न सुहाई
खाए बकुलहिं बिदुर बधू कर, लही स्वाद सरसाई
बिप्र सुदामा तंदुल ल्यायो, सजन सुहृद गुर-भाई
छप्पन भोग तजि तिनकौं जेंए, करि करि बहुत बड़ाई
अर्पत रमा विविधि बिंजन बिच द्वारावत ठकुराई
तदपि मधुरता ब्रज-गोरस की भूलत नाहिं भुलाई
गोपी बरजि तरजि ताड़त तऊ चोरि चोरि दधि खाइ
वा रस की फिरि सुधि आई जब, अँखियाँ जल भरि आई
परम प्रीति आधीन नंद-सुत जानत प्रेम सगाई
'नागरिदास' कोऊ क्यो बिसरै ऐसो कुँवर कन्हाई ।।२४।।

जिहि जन भक्ति सुधा रस पीयो
सुर्ग राज-सुख गेह-काज मैं फिर मन कबहुँ न दीयौ
वेद-कलपतरु-फल-माधव तजि, जग-विष-फल नहिं छीयो
'नागर' और संग नहिं राचै, साध संग तिन कीयो ।। २५ ।।

---

(२३) रु सतसंगति = सुख संगति (हस्त०) ।
(२४) मन = मति (मु) । जा बन किये जग्य जाचंग्या = जाप न किए जग्य संयम ।
सजन सुहृद = सब हित हृदि (हस्त०) । तरजि ताड़त = खिजत (हस्त) ।
(२५) यह 'पद प्रबोध माला' का १४ वाँ पद है । गेह = ग्रेह (हस्त०) । माधव = मधुर (हस्त०) ।

२३. कोरि कोरिक = कोटि कोटिक, करोड़ों । धिरकार = धिक्कार । मृत्ति = मृत्यु । करीवी = किया । गरीवी = दैन्य भाव; विनम्रता । गोपि = गुप्त रूप से, छिपाकर । सचु = सुख । दुरधन = (अहंकार का) बुरा धन ।
२४. रसकनि = रसिकों, भक्तों । जाचंग्या = याचना, भिक्षा । पाई = साधुओं की बोली का शब्द है ; भोजन किया । बकुलहिं = वल्कल, बोकला । सगाई = सगंधता, सगापन ।

जब लग ही जग को सुख पागैं
तब लग जिय हरि-भगत-संग को रंग नहीं कछु लागैं
गृह व्योहार खेल गुड़ियन को, जब लग ही जिय भावैं
तब नव जोवन ह्वै मदरामय तिय पिय कंठ लगावैं
तिन चाख्यौ अति स्वाद अलौकिक स्याम मधुर रस पाक
'नागरीदास' लागत जाकौ फिर और वस्तु सब आक ॥ २६ ॥

हरि विमुखन के संग तें भली सउच की टौर
उनपैं कलह कलेस बढ़त हैं, वहां न कोऊ और
अति एकंत-स्थल आनँदमय गुणातीत निर्द्वंद
तिहि टा ह्वै निश्चित बैठिए, पट नासा मुख मुंद
तन मन को दुख दूर होय जहॉ, परम चैन सरसइए
'नागर' न्यारे बैठि जगत सौं, चित सुभ ओर लाइए ॥ २७ ॥

सब दुख बडे कहायैं होय
इंद्र सब मैं बडो कहियत, रहत निति दुख भोय
उग्र तप रिसि करत सुनिकैं लुटत सेज अँगार
असुर डर अमरावती तजि भजत बारंबार
ब्रह्म-हत्या तैं पलानै, दुरे कमल-मृनाल
अंग भग मंडित भयो, गिरि गए वृषण बिहाल
बुभ्यो दीपक बढ़ो जैसे बढ़ो कहियतु भूल
—मानि लघु हरि सरन 'नागर' रहैं, सो सुख मूल ॥ २८ ॥

राग धनाश्री

करिहैं वेई सहाय हमारी
जिहिं प्रभु जरासंध के गृह तैं बहु नृप दुसह आपदा टारी
काराग्रह विमुखन के सँग को, हरि निवारिहैं अब दुख भारी
जमुना-तट सत सगति दैहैं करुणानिधि 'नागर' सुखकारी ॥ २९ ॥

---

(२६) यह 'पद प्रबोध माला' का १५ वाँ पद है।
(२७) सुभ ओर = सुभ ठौर (हस्त०)।
(२८) यह 'पद प्रबोध माला' का ९ वाँ पद है।
२७. सउच की ठौर = शौचालय।

श्री जमुना जमुना कहियैं
जमुना नीर परसियैं निति बसि, जमुना तीर तीर ही रहियैं
जमुना जल अचवत ही तन के पाप जाहिं, उर भक्तिहि लहियैं
'नागरीदास' नास जमु ना है, जमुना पद उपास दृढ़ गहियै ।। ३० ।।

स्वप्न पद

रसना हरिगुन लगन लगी
कथा अमृत मधुर रस आनंद पगनि पगी
पलकांतर विरह अखियाँ अजक जगनि जगी
कृपा 'नागर' ताकी मति यौ प्रीत खगनि खगी ।।३१।।

मुनि सब लोक पावन करे
प्रगट श्री भागवत कीनीं, करुणा सागर ढरे
ल्याय भागीरथ सुरसरी पाप-पूर बह रे
तुम जु सब उर भवन-भवन मैं भक्ति-दीपक धरे
कृष्ण चरित विचित्र रस मद प्रेम गह्वर भरे
सहज श्री शुक चरन नवका 'दास नागर' तरे ।। ३२ ।।

राग सोरठ इकताल

रे मन जनम करम गुन गाय
लोक वेद बिस्तार सार बिन, नीरस कथा बहाय
कैसैं बाल-केलि कौतूहल गोकुल मांझ करे
कैसैं दुरि घर घर दधि चोरयो, कैसैं चीर हरे
कैसैं ब्रज बृंदावन बिहरे, कैसैं गाय चराई
कैसैं जमुना कूल कदम तर मोहन बैन बजाई
कैसैं जगपतिनिनि पैं भोजन माँगि लयो बलबीर
कैसैं ढाकनि की छहियां मिलि छाक खात आभीर

---

(३२) यह पद 'श्रीमद्भागवत पारायण विधि प्रकाश' में भी है।

३०. अचवत = आचमन करते ही, पीते ही। उपास = (१) पास बैठकर। (२) उपासना, आराधना करके।

कैसैं सुन्दर हस्त कँवल पर सात द्यौस गिरि धारयो
कैसैं वार-वार व्रज-जन को वहु विधि कष्ट निवारयो
कैसैं सरद-निसा वन कीनैं रास-केलि-आनंद
कैसैं काम विजै करि लीनौं, थकित रह्यो नभ चंद
कैसैं घोष-निवासनि कौं हरि सुख दीनौं वहु भाँति
'नागरीदास' कह्यो सो निस-दिन, जात है आयु विहात ।। २३ ।।

मेरैं येई वेदव्यास
श्री हरिवंस 'रु व्यास, गदाधर, परमानँद, नँददास
श्री हरिदास, विहारिनिदास, विट्ठल विपुल सुजान
रामदास, नाभा, दामोदर, अलि भगवान, सखी भगवान
चतुर्भुजदास, दास मेहा पनि, श्रीभट, चतुर विहारी
प्रीतम रसिक, रसिक वल्लभ अरु व्रज रसरीति उचारी
तुलसीदास, मीरा, माधव, अरु उभै नागरीदास
आसकरन, नरसी, वृंदावन, कवि माधुरी प्रकास
कृष्णदास, सूर, गोविंद अरु कुंभन, छीत स्वामि अनुरक्ता
श्रुति पुरान मेरैं इनके पद, हौं श्रोता ए वक्ता
तजि इनके पद अर्थ, सुनैं को नाना मत विभिचार
मूल सासतर सिंध क्यों हेरैं, पद छाडि अमृत फल सार
रसना श्रवननि मैं इनके पद रह्यो हिय मैं निर्दूषन
'नागरिया' इनकी पद-रज, सो होहु भाल मो भूषन ।।२४।।

होतो नहीं भागवत पुरान
तो इहिं तन फूटे अरघा से वृथा भए हे कान
सब भ्रमते, विन पाये मारग, बीच जगत ढमढेर
अंध डुंड ज्यों है फिरते, करि मुंड मुंड भटभेर
भक्ति संग सुख विन नर सगरे वात श्राव के जंत्र
'नागरिदास' सार सर्वोपर साधु भागवत मंत्र ।।२५।।

---

(२३) यह पद पीछे 'पद प्रबोध माला' में संख्या २२ पर आ चुका है ।
(२४) यह पद पीछे 'पद प्रबोध माला' में संख्या १ पर आ चुका है ।
२५. अरघा = जलधरी, प्रस्तर का वह आधार जिसमें शिव-लिंग रखा जाता है। हे=थे। ढम ढेर = लुढ़कते हुए। डुंड = सूखा वृक्ष। भटभेर=भिड़ंत, गुत्थमगुत्था होना। श्राव = सुनना।

हो हरि नींवहु फूल चुके
मत्त भँवर नव कुसुम गंध पर निस दिन भूल चुके
रितु बसंत वैसाख बितीत्यो तुम धौं भूल चुके
'नागरिदास' कुसंगत के नहिं मिटि दुख सूल चुके ॥ ३६ ॥

कलि के जनम बिगारत लोग
मूरख महा दोउ वे खोवत, हरि की भक्ति, विषय सुख भोग
कलह कलेस करत दिन बितवत, बिबिधि बिपति आस्वादी
ऐसैं ही सब आयु बितावत, टेव तजत नहिं बादी
दासी, दास, कुटुंब, मित्र, सब याही दुख रस पगे
'नागर' नाहिं कोउ समुझावत, सब स्वारथ के सगे ॥३७॥

कलि में ते क्यौं भक्त कहावैं
वृद्ध होय जे विमुख संग फिरि देस-देस उठि धावैं
होत निरादर दुख नहिं मानत, नींव देत अति औड़ी
चेतत नहीं, बजत सिर ऊपर यह घरियाल काल की डौंड़ी
बिन जमुना परसैं।क्यौं उतरत स्वेत कचन बिच धूर
'नागर' स्याम बैठि नहिं सुमिरत, ब्रज की जीवन मूर ॥३८॥

कलि के लोग कुमंत्री सिगरे
देत कुमंत्र बिगारत, मन कौं, आपुन मन के बिगरे
एक पेट के काजहिं खोवत दोऊ लोक, सुख-अनुचर
निज स्वामी कौं लियैं फिरतु हैं, ज्यौ गहि घर-घर बनचर
दुख अपमान को व्यापत नाहीं, लोभी लोभ सुखारे
पाप भार सब वाकौं लागत, दास रहत हैं न्यारे
चतुरथ आश्रम आय, देत फिरि लाख बरस की नींव
'नागरिदास' जानि उन सबकौं महा पाप की सींव ॥३६॥

कदली बेर ढिग पछितात
पवन परसत हलत त्यौं-त्यौं गडत कंटक गात
पीर बिनु वह हरी नित, यह नीर बिनु कुम्हिलात
संग 'नागर' तजैं ताको, होय जब कुसरात ॥४०॥

(३७, ३८, ३६, ४०) ये पद पहले 'पद प्रबोध माला' में क्रमशः १७, १८, १६, २०, संख्या पर आ चुके हैं।

३६. सूल = शूल, काँटा।

ते क्यौं हंस तहाँ सुख पावैं
स्वेत कास को विमल सरोवर जानि-जानि कैं आवैं
जहाँ कँवल जल मुक्ता नाहीं, तस ढीम तहाँ पावैं
'नागर' अपनी भूल, कौन कौं कहि कहि कै पछितावैं ॥४१॥

भयो दुखी गज दौ सौं दह्यो
दौरि चल्यो मुरधर दिस मूरख, नीर न कहूँ लह्यो
छाड़ि निवर्त-जल, पर्यो प्रवर्त-थल, दुख नहिं जात सह्यो
'नागर' आय स्याम-सलिता-तट भरि आनंद रह्यो ॥४२॥

जिनकौ झूठ लग्यो संसार
जग सौं निसपृह, सतसंगति करि लेत सदा सुख सार
ते कलेस मैं परत न कबहूँ, सार असार विचार
'नागरीदास' कुसगति करि कैं, कौन भयो नहिं ख्वार ॥४३॥

सदा सुख हरि भक्तनि कै माहिं
दसरथ-सुत अरु नँद-नंदन की बातनि समैं बिताहिं
विविधि कलेस 'रु कलह कलपना तिनमैं उपजत नाहिं
'नागरिया' ब्रह्मानंद हूँ तैं भजनानँद अधिकाहिं ॥४४॥

जिनकैं नहीं सतसंगति चाह
तिनकै उर कबहूँ मिटिहै नहिं महा दुसह दुख दाह
बिन साधन की कृपा कहो क्यौं कलि मैं होत निबाह
'नागरीदास' भक्त बचननि सुनि, भए चोर तैं साह ॥४५॥

बिन सतसंग मति बेढंग
फिरत डाँवाडोल मन, ज्यौं बिन लगाम तुरंग
कबहु गिर गिर उठत अति श्रम, चढ़त क्रोध उतंग
कबहु मूरख भ्रमत आतुर, उपज अग अनग
कहा तप व्रत दान संजम, कहा न्हाए गंग
'दास नागर' बिना साधन, सकल साधन भंग ॥४६॥

---

४१. ढीम = घुआ।

४२. दौं = अग्नि, वन की अग्नि। मुरधर = रेगिस्तान, मरु-भूमि। नृवर्त = निवृत्ति (मार्ग)। प्रवर्त = प्रवृत्ति (मार्ग)।

४५. साधन = साधुओं। निबाह = निर्वाह।

अब तो बहोत बिपत मैं भोगी
अति पिटवायो माया पै तैं, कृपा-दृष्टि कब होगी
बिबिध कुगति मै नाच्यो कूद्यो, केतो दुख सिर झेल्यो
काहू बिधि मैं सचु नहिं पायो, फाफड़ फींदा खेल्यो
खैंचा-खैंची जनम बिगारयो, जन जन को मन राखत
'नागरिया' हरि सरन तिहारी, बृंदाबन अभिलाखत ॥४७॥

करियतु बृथा मन की दौर
जिय चहत इत और ही, उत होत और की और
छीन आयुस होत नित, तन काल ब्याल को कौर
'दास नागर' ह्वै निवृत बस, बास तीरथ ठौर ॥४८॥

मन यह नीच, संगी नीच
उच्च पद कौं चढ़त नाहीं, जदपि नियरी मींच
नवन पाय कैं गवन करिहीं, ज्यौं 'ब नीर उलैंड़
प्रबल अति नहिं रुकत रोकैं ग्यान धूर की मैड़
मिलत जाही रंग, आपुन होत वाही रंग
देहु 'नागरिदास' कौं यातैं प्रभू सतसंग ॥४९॥

जा नर कौं प्रभू यह धन लीनौं
ताकौं निस दिन जीवत हीतैं नरक मिलक करि दीनौं
जनम करम उत्सव लीला गुन कथा कीरतन हौंन
झालर झांझ मृदंग ताल धुनि संत समागम भौंन
इतनी वस्तु गई जापैं तैं, वापैं रह्यो न क्यौं ही
'नागर' केवल दुख सहिबे कौं देह रहि गई यौंही ॥५०॥

[राग देवगंधार, तिताल]

नर को जनम बिगारत आसा
स्वारथ दाव अठारैं चहियतु, तीन परत बिच पासा

(४८, ४९) ये पद पहले 'पद प्रबोध माला' में क्रमशः संख्या ७, ११ पर आ चुके हैं।

४७ फाफड़ फींदा० = पापड़ बेलते रहे। मन रखना = दूसरों की इच्छा के अनुकूल आचरण करना।

५०. लीनौं = ले लिया। मिलक = मिल्कियत; जागीर। हौंन = हवन। वापैं रह्यौ न क्यौं ही = उसके पास (अन्य धन कितनी ही अधिक मात्रा में) क्यों न हो।

यह जग है चौपर की बाजी, अपने बस नहिं ख्याल
'नागरीदास' करो सतसंगत, छाड़ जगत जंजाल ॥५१॥

अब जिय काहे कौं दुख भोवै
कबहुक हरष सोक कबहू,, कबहू हसै कबहु रोवै
या जग मै है यही तमासा, ऐसैं ही नित होवैं
'नागरिदास' भजहु नॅट-नदन, जन्म वृथा मत खोवै ॥५२॥

गुपति अति मन मै लागी लाय
विविधि कामनां उठत चड झर, आसा-पवन सहाय
ग्यान बैरागहि वरत देखि तन, भक्तिहु रही छिपाय
'नागर' लोग बुझावत घी-सौं, भोग तैं नाहिं बुझाय ॥५३॥

यह मन मूढ़ महा अहकारी
हारत नाहिं आपनैं हठ, सठ अति कुटेव टहॅगारी
हरि समंध सुख करि लैबे को यह नर तन सुखकारी
तावौ फिरत भ्रमाये दिस दिस, तज ब्रज-कुंज-बिहारी
इहीं देह भुगतावत अति दुख परम पाप अधिकारी
आँधे लोग बतावत मारग मिल-मिल महा विकारी
अब सतसंग मित्र सजनन मै रहूॅ सदा जमुना तट चारी
अप-घर तैं पर-घर मत डारो, 'नागर' सरन तिहारी ॥५४॥

सूझत नहीं आपनी आव
लाख बरस की नींव देत, इत डोलत काल बिलोकत दाव
एते पर क्यौं प्रिय सजनन सौं फिर-फिर करत वियोग
अंत वियोग एक दिन ह्वैहीं, उपज विघ्न तन रोग
यातैं क्यौं सुख संगत तजिए, लगिए नहीं जगत सौं
'नागरीदास' वास वृंदाबन, ह्वै हौ सुखी भगति सौं ॥५५॥

(५१,५२), ये 'पद प्रबोध माला' मे ६,८ पद है।

५३. लाय = अग्नि। चंड = प्रचंड। झर = ज्वाला।

५४. कुटेव = बुरे स्वभाव वाला। टहँगारी = नटखट। समंध = संबंध। आँधे = अंधे। चारी = विचरण करने वाला। अप घर = अपने घर।

५५. आव = आयु। दाव = घात। भगत = भक्ति।

बृद्ध होय कैं धन उपजावत
वही कहावत करत मूढ़-मति, गंग की राह मदारहि गावत
जो धन उपज्यो, तो 'ब कहा, को करिहैं लखमी भोग
घटत रूप बल देह दिनहि दिन, बढ़त जुरा तन रोग
'नागरिया' बसिए बृंदावन बितए बरस पचास
हरि उच्छव लीला सुख लीजैं, कथा कीरतन रास ।।५६।।

पाप समीटत जनम गयो
चित तैं थकि विश्राम न लीनो, अधिक अधिक दुख भयो
ज्यौ ज्यौ यह तन जीरन ह्वै हीं, मन ह्वै नयो नयो
'नागरिदास' बसो बृंदावन, नित सुख ... छयो ।।५७।।

सुनियो कहत सबनि हौं टेरैं
यह बिधिना को प्रगट चूक है, द्वै मन किए न मेरैं
एकैं मन कौं सौंपि राखितो साधन गृह ब्यौहार
मन इक सौं हरि भक्तिहि करतो, जग दुख सब निरवार
'नागरीदास' एक मन तैं कहि क्यौं बनिहैं द्वै जोग
त्रिविध बिपति को रोग इतैं, उत हरि रस लीला भोग ।।५८।।

जो मेरैं तन होते दोय
मैं काहू तैं कछू नहिं कहतो, मोतैं कछु कहतो नहि कोय
एक जु तन हरि बिमुखनि के सँग रहतो देस बिदेस
विविध भाँति के जग दुख सुख, जहाँ नहीं भक्ति लवलेस
एक जु तन सतसंग रंग रँगि रहतो अति सुख पूर
जनम सफल करि लेतो ब्रज बसि, जहाँ ब्रज जीवन मूर
द्वै तन बिन द्वै काज न ह्वैहीं, आयुस छिन छिन छीजै
'नागरीदास' एक तन तै अब कहो कहा करि लीजै ।।५६।।

भक्ति बिन नर छकड़ा के बैल
लोग बड़ाई दै दै हाँकत, चलत दुखित ह्वै गैल

---

५६. मदार = शाह मदार । लखमी = लक्ष्मी । भोग = उपभोग । जुरा = वृद्धावस्था ।
५७. समीटत = समेटते हुए, एकत्र करते हुए ।

कारज द्रव्य बिना बल घीसें, मन सौं सकें न हार
लीनौं स्वारथ साधि सबनि मिलि, थाकें सिर दैं भार
भटकत ही मर जाय बृषभ मत, नथे जगत की लाज
'नागरीदास' बैठि बृंदावन करैं न अपनौं काज ।।६०।।

हौं हरि थक्यो बिसवा बीसौं
पीसत पीसत जनम गयो, अब पीसे को कहा पीसौं
हारयो बुहुत मजूरी करि करि, यह दुख अबै नसइयैं
'नागरी' स्याम कृपा करिकैं मोहि बृंदा बिपुन बसइयैं ।।६१।।

मेरो मन यह बिगर परयो
ह्वै गयो दही प्रीत जावन तैं, दूध न जात करयो
नहिं ऊगत, नहिं काज औरहू, जैसैं नाज जरयो
'नागरिया' मन काम न आवत, प्रेम-बाय बिचरयो ।।६२।।

मो पर काहे हरि अनखाए
भक्ति-सुधा-सागर तैं टारयो, मृग-मरीच-जल प्याए
स्वाति बूँद घन मेटि, धुवाँ के बादर भले दिखाए
रसिक मंडली न्यारी करि पापिष्टी लोग मिलाए
अपनी घां तन मन नहिं राख्यो, जित तित भूल भ्रमाए
'नागर' निज ब्रज-भवन दुरायो, ऊबट बाट चलाए ।।६३।।
अब हमहिं हमारी समझ परी
नहिं बैराग, प्रीत हरि सौं नहिं, मो मति झूठ भरी
कंचन जानि कसौटी लायो, पीतर ह्वै निकरी
'नागरीदास' नांव के नातैं, कीनो कृपा हरी ।।६४।।

---

(६३) स्वाति = मुद्रित प्रति में 'स्वाद' पाठ है ।
६०. छकडा = बैलगाड़ी । मत = सदृश ।
६१. बिसवा = बिस्वा; बीघे का बीसवाँ अंश । बिसवा बीसौं = पूर्ण रूप से ।
६२. जावन = मट्ठा जो पके दूध में उसे जमाकर दही बनाने के लिए डाला जाता है ; जमा देने वाला । ऊगत = अंकुरित होता है । बाय = (१) वायु , हवा । (२) विपत्ति ।
६३. रसिक = भक्त । पापिष्टी = पापी । घां = दिशि, ओर ।
६४. नांव = नाम ।

देखो असमंजस अब होवत
तनक लग्यो गंगाजल तन, कैसो मदिरा सौं धोवत
अमृत चाखि फेरि नहिं चाहत, गुर खैबे कौं रोवत
तुलसी पेड़ उखारि भक्त घर, बीज आक के बोवत
महा वृद्ध वय, ब्याह करन निज, आसा मै दिन खोवत
'नागर' आप कहाय परे हठ पोत सूतरी पोवत ।।६५।।

अब दिन खोवै कौन अलेखैं
वैसी समैं देखि, फिर असी कौन समैं कौं देखैं
इहिं समये की जे जे बातैं, तिनपैं मन न लुभाय
'नागरीदास' सिंह भूखो रहै, तऊ घास नहिं खाय ।।६६।।

धीर पुरस जाकौं सब कहैं
कबहुँ होत अधीर नाहिं चित, विविध विपति सिर सहैं
भक्ति करनि मैं अंतर परतैं, धीरज धरैं विचार
'नागरिया' ऐसे धीरज कौं, कोर कोर धिरकार ।।६७।।

हमकों किये कुसंगति ख्वार
वृंदावन नियरै ह्वै निकसे, झाँकनि दयो न द्वार
हरि चरचा कोउ करत सुनत नहिँ, और बात बिसतार
प्रभु-समंध सुख साधन की चित भूल गए उनिहार
दिति सुत से नर कलह कलपतरु देत हैं दुख अनपार
इनतैं लेहु छुड़ाय मोहि अब 'नागर' नंद कुमार ।।६८।।
मेरै द्वार संत फिर जावैं
दियो चहत दरसन करुना करि, आवनहू नहिँ पावैं
बधक बावरी थोरनि कौं आनंदित ह्वै ह्वै ल्यावैं
क्यौ भूलैं नहिं 'नागर', हरि की माया तिन्हैं भुलावै ।।६९।।
दर्पन देखत, देखत नाहीं
बालापन फिरि प्रगटि स्याम कच, बहुर स्वेत ह्वै जाहीं

६५. पोत = गुरिया । सूतरी = सन की मोटी सुतली । पोवत = पोहत; गूँधते हैं ।
६६. अलेखैं = व्यर्थ ।
६७. पुरस = पुरुष ।
६८ ख्वार=नष्ट । उनिहार=सादृश्य । दितिसुत=दैत्य ।

तीन रूप या मुख के पलटे, नहिं अज्ञानता छूटी
नियरें आवत मृत्यु न सूझत, आँखें हिय की फूटी
कृष्ण भक्ति सुख लेत न अजहूँ, वृद्ध देह दुख रासी
'नागरिया' सोई नर निश्चय जीवत नर्क निवासी ।।७०।।

अब कैसें ये द्यौस भरैं
आठ पहर मैं वृंदावन की कबहु न कोऊ बात करैं
नंद नँदन, गोपी जन वल्लभ, नाव न मेरे श्रवन परैं
'नागरीदास' बिना सतसंगत, को या मन की पीर हरैं ।।७१।।

जहाँ को जीव जहाँ सुख पावैं
चंदन कौ कीरा थोहर मैं कैसैं मन बिरमावैं
जल तें मीन परयो मदिरा मै, किहि बिधि जीव जिवावैं
'नागरीदास' कुसंगत मै, सतसंगी नहिं ठहरावैं ।।७२।।

अबै ए यौं लागे दिन जान
मानौ कबहूँ हुती नाहिनैं वा सुख सौं पहिचान
हरि अरचा चरचा कबहूँ नहिं, नहीं कथा बंधान
जनम करम हरि उत्सव नाहीं, रास रग कल गान
विमुख अनन्य निकट रहैं निसि दिन, महा दुष्ट दुख खान
ये दुख तरैं, कृपा करिहैं जब 'नागर' स्याम सुजान ।।७३।।

अब तो यही बात मन मानी
छाड़ौं नहीं स्याम स्यामा की वृंदावन रजधानी
भ्रम्यो बहुत लघु धाम बिलोकत, छिन भंगुर दुखदानी
सर्वोपर आनद अखडित सो जिय ठौर सुहानी
हरि भक्तनि मैं अस्तुति हैंही, निंदा मुख अभिमानी
'नागरिया' नागर कर गहिहैं, रहिहैं जगत कहानी ।।७४।।

अब तो जोई मित्र कहावै
जो श्री वृदावन बसिबे की निश्चय बात दढ़ावैं

---

(७४) यह वन जन प्रशंसा का ६१ वाँ पद है।
७१. भरैं = बितावें।
७२. थोहर=सेहुड़।
७३. वा = उस। बंधान=प्रबंध।

या बिन कहैं सु सत्रु हमारो, सो जिय कबहुँ न भावै
कहैं और कैं औसर चूकैं, सो 'नागर' पछितावैं ॥७५॥

जग मै बुद्धि-हीन सुख पावै
वहि काहू कै निकट न जावैं, वापैं कोउ न आवै
ताकौं दुख व्यापै नहिं कबहू, केवल उदर भरावै
'नागर' भक्ति बिना चातुर जे, दुख मै जनम बितावै ॥७६॥

हौं हरि मारकंड रिषि नाहीं
माया भली दिखाई मोकूँ, झकझोरयो जग माहीं
अति कलि कलह-धूप तन तचहीं, जाऊँ जहाँ जहाँ हीं
'नागरिया' कौ देहु कृपा करि बृंदावन की छाहीं ॥७७॥

हमारो साँचो हितू वहै
गाधारी के पति सौं जैसी बिदुर कही, सु कहै
सोई सत्रु जो मोहि बहावै, आपहु संग बहै
'नागरिया' कौ प्यारो सो, सँग बृंदा बिपुन रहै ॥७८॥

अब हरि मेटो दसा त्रिसंक
अधबिच परयो भोहि लै दीजै निज साधन कै अंक
कीजै सरल कृपानिधि स्वामी, जो मेरी मति बंक
'नागर' कृपा प्रसाद देहु, को चाबै विपति-करंक ॥७९॥

अब हौ दिन दिन दुख नहिं सहिहौं
कैबच बन तै बेग निकसिकै, बृंदाबन मै रहिहौं
यह विनती मेरी हरि तुम बिन और कौन सौ कहिहौं
'नागरीदास' नाँव गर्व तै फैट तिहारी गहिहौ ॥८०॥

भये हम वृन्दावन रस भोगी
जा सुख भोगहि करि न सकत, जे जगत बिपत के रोगी
रास विलास 'रु कथा कीर्तन हरि उत्सव आनंद
निस दिन मंगल मई समय जहाँ 'नागरिया' व्रजचंद ॥८१॥

हम यह कबहुँ सुनी नहिं आगै
खैंचत स्याम आपनी दिसि, नर पीछे पीछे भागैं

---

(८१) यह 'वन-जन प्रशंसा' का ६४ वाँ पद है ।
७९. त्रिसक=त्रिशंकु । करंक=हड्डी ।

मान सरोवर चाहत नाहीं, साँभर सर अनुराग
'नागर' भवन बुरे तजि देखौं रंग महल की जागैं ॥८२॥

तजि उपाधि जे हरि पद भजते
वे नृप कहा हुते बावरे, मनिमय कंचन के गृह तजते
अब छाड़त नहिं कलह-मूल घर भक्ति विमुख लोगिन सौं लजते
'नागरिया' नर मृत्यु-खिलौना, रहत नहीं, दुख सेना सजते ॥८३॥

सब नर परो उपद्रव माहीं
कृष्ण भक्ति की इच्छा कैसी, विषै भोगहू नाहीं
कलह बिना कछु और न भावैं, लरैं देखि परछांहीं
'नागर' ताप विरुद्ध नहीं, एक वृंदा विपुन जहाँहीं ॥८४॥

कृष्ण कृपा आए दिन भले
बहुतैं भ्रम्यौ आज लौं हौं, अब वृंदावन दिस चरन चले
दुरजन टरे, सजन मिलिहैं, जे नंद नँदन के रंग रले
भूखे हुते श्रवन मन लोचन, ते 'नागर' रस पोष पले ॥८५॥
हमारी अब सब बनी भली हैं

कुंज महल की टहल दई मोहिं, जहाँ निति रंग रली हैं
साहिब स्यामा स्याम, उसीली ललिता-ललित अली हैं
'नागरिया' पैं कृपा करी अति श्री वृषभान लली हैं ॥८६॥

कोई भूल्यो पंथ बतावैं
जित जाऊँ तित सिर भटभेरत, ऊबट चल्यो न जावैं
कबहुक गिरत, उठत कबहुक हटि, छिनहूँ सुख न बिहावैं
'नागर' घर वृंदावन की कोउ, कर गहि डगर चलावैं ॥८७॥

हरि जू अजुगत जुगत करैंगे
परवत ऊपर बहल काच की नीकैं ले निकरैंगे
गहिरैं जल पाषान नाव बिच आछी भाँति तरैंगे
मैन तुरंग चढ़े पावक बिच नाहीं पग्रर परैंगे

---

(८६) यह 'वन जन प्रशंसा' का ६७ वाँ पद है।

८२. आगैं = पहले। साँभर = राजपूताने में स्थित खारी पानी की झील, जिसके जल से नमक बनता है। जागैं = जागरण।

८८. अजुगत = अद्भुत। जुगत = युक्ति। बहल = बहली, रथ। पग्रर = प्रग्रह, पकड़।

याहू तै असमंजस हो किन, प्रभु दृढ़ कर पकरैंगे
'नागर' सब आधीन कृपा कैं, हम इन डर न डरैंगे ।।८८।।

हमारी चरचा मौन भई
जिनकी ॲंखियाॅ बहुश्रुत ही, तिन कहतहि समझ लई
फिरि नहि कियो प्रष्ण, चितवनि हसि चितवनि रीझ दई
'नागर' कहत कहत नहि आवै, है जीरन निति नई ।।८६।।

ये सिवही सौ सग निभै
वृषभ सिंघ सर्प अरु केकी, मूसौ हू रहत अभै
बिन भगवान संग असमंजस और तै नाहि बनै
'नागरिदास' कुसंगत तै नित बढ़त न भक्ति मनै ।।६०।।

अमल पद कमल चार सुचार
अरुन नील सुबरन मिलि मनहरनि भए छबि जार
मुखर मनि मंजीर मनमथ करत प्रगट चरित्र
गउर जावक चित्र-चित्रे चतुर मोहन मित्र
नख चंद्रिका प्रतिबिंब प्रसरत, कुंज कौतुक भूमि
दास 'नागर' मन मधुप तहाॅ रहो झुकि झुकि झूमि ।।६१।।

तुम बिन कौन सहाय करै
जानत प्रीत रीत रसिकनि मनि, कोऊ कहा उचरैं
पद्मावति जयदेव के स्वामी यह मन बृथा डरै
'नागर' सुख सागर पद ध्याये, को दुख जरनि जरैं ।।६२।।

अब तो कृपा करो गोपाल
दीनबंधु करुना निधि स्वामी, अंतर परम कृपाल
जग-आसा-विष-फल मत खवावौ, प्यावौ भक्ति रसाल
'नागरिया' पर दया करो किन, जन-दुख-हरन-दयाल ।।६३।।

अब तो कृपा करो गिरधारी
अपनी बाॅह छाॅह तर राखो, देखो दसा हमारी

---

८६. ही=थी । प्रष्ण=प्रश्न । जीरन=जीर्ण, पुराना ।
६०. मूसौ=मूषक भी, चूहा भी ।
६१. सुचार=सुचारु, सुंदर । जार=जाल । जावक=महावर, अलक्तक ।
६३. रसाल=मधुर ।

जुरे घोर कलि कलह तिमिर घन, भीति लगत है भारी
'नागर' सुख सँग उनको दीजें, जिनके प्रीत तिहारी ॥९४॥

अब तो करिए कृपा बिहारी
जग गुजारन तें लै राखो, वे जहाँ कुंज तिहारी
सजन समाज सहित तिहिं ठा रस भक्ति करों सुखकारी
'नागरीदास' नाँव देकें किन देखो दसा हमारी ॥९५॥

अब तो कृपा करो श्री राधा
बृंदा बिपुन बसौं श्री स्वामिनि, छाड़ि जगत की बाधा
तीन लोक गावत वा बन की लीला ललित अगाधा
'नागरिया' पै तनक ढरै तैं होय सहज सुख साधा ॥९६॥

अब तो कृपा करो ललितादि अली
तुम बिन और न कोऊ साधन, सब तैं तिहारी सरन बली
मोहि दिखावहु बृंदाबन की वे नव कुंज गली
होत हैं 'नागरिया नागर' की जहाँ निति रंग रली ॥९७॥

अब तो कृपा करो ब्रजबासी
जुग-जुग मधि हो सखा स्याम के लीला ललित उपासी
काम न और पुनीत ठौर सौं, गंग गया कहा कासी
'नागरिया' पै करुणा करिकैं, करियैं घोष निवासी ॥९८॥

अब तो कृपा करो सब संत
या तन मन सौं भ्रमत भ्रमत ही, ह्वै गए दिवस अनंत
घटत बुद्धि बल देह दिनहि दिन, तृष्णा को नहिं अंत
'नागरिया' अब उहाँ बसइए, जिहि ठा नित्य बसत ॥९९॥

अब तो कृपा करो श्री बृंदा
हे देवी तुव बिपुन भवन की उलहँगि न जाउँ अलिंदा

---

९४. भीति = भय।

९५. गुंजारन = कोलाहल।

९६. ढरैं तैं = द्रवित होने पर।

९८. और = अन्य, अपर।

वैष्णव सहित तहाँ को नित, रस-पान करौं सुखकारी
'नागरिया' पैं कृपा कीजिये, कृष्ण कमल पद प्यारी ॥१००॥

अब तो कृपा करो श्री जमना
दरस परस तट देहु बास बन, तृविध ताप तन दमना
हो दाता रस भक्ति दान की, सलिता और तु सम ना
'नागरिया' की मेट देहु जिय जग तृष्णा की भ्रमना ॥१०१॥

बहुरि परे वा दिस कौं पाँव
परम मनोहर जमुना-तट पर, जा दिस मेरो गाँव
स्वामी तहाँ हमारे मोहन, स्वामिनि राधा नाँव
'नागर' ह्वां बहु चरन धारि, उहां पहुँचि पंगु ह्वै जाँव ॥१०२॥

हम सत संगति बहुत लजाई
वृथा गई सब बात, आजु लौं जो कछु सुनी सुनाई
भक्ति-रीति अनुसरत नहीं, मन करत जक्त–मन-भाई
अजहुँ न तजत उपाधि, अवस्था चतुर्थाश्रम आई
श्री वृंदावन बास करन की, जात है समैं बिहाई
अब तो कृपा करो 'नागर' सुख-सागर कुँवर कन्हाई ॥१०३

तजत नहीं मति कूदा-फाँदी
कैसे प्रतिव्रत करैं स्याम सौं ज्यौं 'ब बिलल्ली बाँदी
माया-भांग भसूकि तरफरत, होत नहीं मति मांदी
'नागर' साध बचन मानैं बिन, जम कूटैगो चांदी ॥१०४॥

जब तैं मिल्यो रँगीलो संग
घटि चित चटक रु भयो भाँवरो, ज्यौं अटान को रंग

---

१००. उल्हंगि=उल्लंघन करके, डाँक करके। अलिंद=मकान का बाहरी चबूतरा या –छज्जा।

१०१. दमना=दमन करने वाली। भ्रमना=परिभ्रमण,

१०३. चतुर्थाश्रम=संन्यास। उपाधि=कपट, छल, उपद्रव।

मंद, ज्यूं रैन बिना दीपक दिन, ज्यौं अनंग बिन अंग
'नागरिया' पें कृपा करो हरि, हौंन न देहु कुढंग ॥१०५॥

इतनी है सब ठौर हमारी
वृंदावन, जमुना, गोवर्द्धन, राधा कुंड सुखकारी
नंद गाँव, बरसानौ हैं, जहाँ रहत स्याम की प्यारी
इन्हैं छाड़ि नहिं जाउँ अनत कहुँ, यह 'नागर' जिय धारी ॥१०६॥

हमतो बरसाने के बासी
गहवर गिर जहाँ खोर साँकरी, ललित ठौर सुखरासी
कुंड भरे जल, बन उपवन छबि, कुंज कुटी अनयासी
कुँवरि लली की देत दुहाई, सब सुख सैल निवासी
नर नारी पसु पंछी इहि ठाँ, लीला ललित उपासी
फिरत लाड़िली कै सँग निति, नट 'नागर' करत खबासी ॥१०७॥

दुहुँ भाँतिन कौ मै फल पायो
पाप किए तातैं बिमुखनि सँग देस देस भटकायो
मिटि सतसंग, भक्ति सुख, कोऊ हरि उत्सव न दिखायो
तुच्छ कामना हित, कुसंग बस, झूठै लोभ लुभायो
कौन पुन्य अब वृंदावन बरसानें सुबस बसायो
आनँद-निधि ब्रज अननि मंडली उर लगाय अपनायो
मुनिहू कौ दुल्लभ, सो सब रस बिलास दरसायो
स्यामा स्याम 'दास नागर' को कियो मनोरथ भायो ॥१०८॥

चकसोली के चना चुराए
गारी दै दौरी रखवारनि, ग्वारनि सहित गुपाल भजाए
हरे बूट दाबैं बगलनि मैं, स्वास भरे बन गहवर आए
कहत आतुरे बोल लोल दृग, हसत हसत सब बाप चढ़ाए
हरे चबात, कोउ होरा करि, बन की लीला लाल लुभाए
'नागरिया' बैठी छकि हारी, छील-छील नँदलालहि खवाए ॥१०९

---

१०५. भाँखरो = विवर्ण, रंगहीन। अटान = कोठा, अटारी, घर।
१०६. अनयासी = अनायास ही, स्वतः, बिना परिश्रम के बनी हुई। खबासी=सेवा।
१०८. दुल्लभ = दुर्लभ।
१०९. चकसोली = बरसाना के निकट ही दक्षिण में स्थित एक गाँव का नाम। भजाए = भाग गए। बूट = चना। स्वास भरे = हाँफते हुए। बाख = (?)। खवाए = खवाए।

सॉंचौ हितू सु यही दृढ़ावै
नित्ति विहार ठौर निति निरखै, वही कथा निति सुनैं सुनावैं
ब्रज-बासिन सौं प्रीति करैं दृढ़, निसवासर सुख समै बितावैं
'नागरिया' कौं स्वपनैहू मैं, अब ब्रज तजिकैं अनत न लै जावैं ॥११०॥

नंद वृषभान इक भवन राजैं
भई भट नटनि की भीर वृषभान पुर
पौरि अति मत्त गजराज गाजैं
दोउ कुलदीप के कुलहि मंगद भनैं
जुरे गन गुनी संगीत साजैं

समधी समधी मिलनि गोप गरई सभा
प्रभा आनंद कछु और आजैं
गारि गावत सकल मिल्यो महरावनौ
किए घूंघट, लिये हिये लाजैं
महल महलनि चहल पहल मंगल महा
द्वार सहनाय नीसान बाजैं
बॅटत तहॉ पान कपूर अरु अरगजा
गोप कुल करत सनमान आजैं
'नागरीदास' जहॉ फिरत उत्सव टहल
परम आनंद छवि चढ़े छाजैं ॥ १११ ॥

हमारी तुमसौं हरि सुधरैगी
बहुत जनम हम जनम बिगारयो, अबहू बिगारि परैगी
प्रीति रीति पूरन नहिं, कैसैं माया व्याधि टरैगी
'नागरिया' की सुधरैगी, जो अँखियॉ इतहिं ढरैगी ॥ ११५ ॥

हो हरि सरन तिहारी देहु
बिरद हैं असरन-सरन तिहारो, सो 'ब सॉच करि लेहु
मारत मोहिं कलि काल दबायैं, भरयो तरुनता छोह
च्यार सत्रु हैं वाके संगी, काम, क्रोध, मद, मोह

---

११०. मंगद = मंगल। गरई = गरुई, गौरवमई। महरावनौ = महर (श्रेष्ठ जन) के रहने का स्थान। सह[illegible] = शहनाई।

पाँचौं इंद्री मो बस नाहीं, मनहू पलटि गयो
लेहु बचाय 'नागरीदासहि' तो पद कमल नयो ॥ ११३॥

साँचे संत हमारे संगी
और सबै स्वारथ के लोभी, चंचल मति बहुरंगी
मन काया माया सरिता मैं बहतैं, आनि उछंगी
'नागरिया' राख्यो वृंदावन जिहि ठां ललित त्रिभंगी ॥ ११४॥

हमारी सबही बात सुधारी
कृपा करी श्री कुंज-बिहारनि अरु श्री कुंज-बिहारी
राख्यौ अपनै वृंदावन मैं जिहि ठॉ रूप उजारी
नित्य केलि आनंद अखंडित रसिक संग सुखकारी
कलह कलेस न व्यापै इहि ठां, ठौर बिस्व तैं न्यारी
'नागरिदासहि' जनम जितायो बलिहारी बलिहारी ॥ ११५ ॥

निति अनंद वृंदावन महियॉ
नित्य केलि कउतग रस लीला, निरखि निरखि दग हारत नहियॉ
नित्त हरे द्रम फूल फलनि जुत, जमुना तट अति सीतल छहियाँ
निति नउतन सब लोग सनेही, प्रीति रीति यह और न कहियॉ
नित्त रास नित कथा कीरतन, निति प्रति गति मति रहैं उमहियॉ
नित्त बास तहां 'नागरिदासहि' स्यामा स्याम दयो गहि बहियॉ ॥ ११६ ॥

सब मैं बुद्धवान नर जे हैं
तजि कुसंग, सतसंगत कैं हित तीरथ बास बसे हैं
अपने घरहिं सॅवारन कारन, बड़या परम प्रवीन
विषै भोग कैं लालच अटके, करत पुन्य बल छीन
यह कलिकाल सोरि काजर की, कौन भए नहिं कारे
'नागरिया' तिन हीं जग जीत्यो, जिन हरि चरण सम्हारे ॥ ११७ ॥

टि०—११५, ११६, संख्यक पद 'वन जन प्रशंसा के क्रमशः ६२, ६५, संख्यक पद हैं।

११३. नयो = नमित; झुका हुआ है।

११४. उछंगी = गोद में ले लेते हैं।

११७. बड़या = मूर्ख

हमतो बृंदावन रस अटके
जब लगि इहि रस अटके नाहीं, तब लगि बहु विधि भटके
भए मगन सुख सिंधु माझ ह्या, सब तजि कैं जग खटके
अब बिलास रस रासहि निरखत 'नागरि' नागर नट के ।। ११८ ।।

हमारी बाँह गही बृंदावन
राख्यो अपनी सीतल छइयां, जग दुख घाम तच्यो तन
मोमैं कछू कृपा बल नाहीं, हौ जानौ अपनै मन
'नागरीदास' नॉव हित सौं, करि कृपा करायो धन धन ।। ११९ ।।

ब्रज मैं होत सुख की लूट
परम धन आनंद के भंडार नित रहे खूट
अतुल द्रव्य सकेलिही नर, तउ अघात न कोय
नंद अरु वृषभान घर पारस प्रगट भए दोय
लेहु किन जापैं लयो जाय, परे रिधि के ढेर
'दास नागर' कहत टेरैं फिर न ऐसी बेर ।। १२० ।।

देह धरैं कौ अब फल पायो
बीते बहुत दिवस असमंजस, माया नाच नचायो
थोहर बन तैं मोहि काढ़ि, थिर बृंदा बिपिन बसायो
कौन कृपा अनयास भई, हौ निज मन हेरि हिरायो
निस दिन पहर घरी छिन छिन पल निति आनंद रहैं सरसायो
'नागरिदास' दास ह्वैं कैं जो यहाॅ न आयो, सो पछितायो ।। १२१ ।।

बृंदावन सुबसत जमुना तीर
सदा रूप की पैठ लगी रहै, कबहु न होत उछीर
प्रेम नदी सी झिरत रगमगी, गलिनि गलिनि बिच भीर
'नागरिया' नित मिले देखियत, सावर गउर सरीर ।। १२२ ।।

टि०—११८, ११९, १२१, १२२ सख्यक पद 'बनजन प्रशंसा, के क्रमशः ६३, ५९, ६०, ६६, संख्यक पद हैं।

१२०. खूट = खुले । सकेलना = दोनों हाथ फैलाकर फैली वस्तु समेट लेना; एकत्र करना । रिद्धि = ऋद्धि, समृद्धि ।

१२२. उछीर = रिक्त, खाली ।

अब तो कहिबे की न रही
अपनी बांह छाह तर राख्यो बृंदा बिपुन मही
ऐसैं ही करि कृपा मेटियैं काम क्रोध सबही
'नागरिया' की छूटि जाय, तुम्हैं सबही कहा कही ॥ १२३ ॥

दीजै प्रेम, प्रेमनिधि स्याम
गदगद कंठ, नैन जलधारा, गाऊँ गुन अभिराम
या छकि सों सब छूटि जाय ज्यौ और सबै कलमप के काम
'नागरिया' तुव रग रँग्यो फिरै इहिं बृंदावन धाम ॥ १२४ ॥

ए ब्रजबासी हरि के प्यारे
ए हरि मैं, हरि इनमैं निति प्रति, होत नहीं छिन न्यारे
इंद्र आदि सुर असुर दवानल विपधर तैं ए उबारे
'नागरिदास' किते या ब्रज पर पचि पचि गए बिचारे ॥ १२५ ॥

ब्रज राजा को बेटा चोर
घर घर तैं दधि माखन चोरे, चोरे चीर किसोर
जुवतिन के मन मानिक चोरे, हसि चितवन दृग कोर
'नागरीदास' चुरावै सर्वस, जो आवै इहिं ओर ॥ १२६ ।

ब्रज के लोग सब ठग महा
आप ठग, ठग के उपासक, अधिक कहिए कहा
कनक-बीज सी वचन-रचना देत तनक चखाय
बावरो ह्वै रहत सो फिर धाम धन बिसराय
छाड़ि कै रज लुटत रज मैं, दीन दीसत अग
और जग-सुख रंग उड़िकै, चढ़त कारो रंग
भूमि ठग, द्रुम देस ठग, यहाँ ठगे स्याम सुजान
राखै सयानप सो 'ब इनकै और कौन समान
इहाँ आवत ही परत दृढ़ प्रेम की गर पास
भूलि ह्याँ कोउ आइयो मत, कहत 'नागरिदास' ॥ १२७ ॥

---

१२४. छकि = नशा।
१२५. पचि पचि गए = खप गए परिश्रम कर करके हार गए ।
१२७. कनक = धतूरा । उडि कैं = हलका पड़कर । रज = उर्वर भूमि, धूलि । पास= पाश, फंदा ।

ए वेई हरि के व्रजवासी
सुबल सुबाहु श्रीदामा आदिक तन घनश्याम उपासी
वही भूमि, बन उपवन वेई, वहि गिरिराज छत्र छबिरासी
नंदीसुर, रसानौ, गोकुल, वई ठौर सब बिबिध बिलासी
वह गिरिधर हरिदेव बिहारी, बाम अंग प्यारी चपला सी
एई गाय, गोपी है वेई, जुग-जुग प्रगटि रहत अनयासी
लीला करी वेई जे अब लौ सदा देखियतु दृगनि प्रकासी
'नागरिदास' भेद इन उन मै जो जानैं, सो नर्क निवासी ॥१२८॥

आयो महा कलिजुग घोर
धर्म धीरज उड़ि गए ज्यो पात पवन झकोर
मिटे मंगल लोक, लागी हौंन आयुस मंद
बढ़ी जित तित कलह कर्कस, नहिन कहुँ आनंद
मिटी लच्मी, भाग्य सुभ सुख मिट्यो सब को भद्र
मिटी सोभा सहज सपति बढ़ि पस्यो दारिद्र
मिटी सजननि सुहृदताई, रह्यो स्वारथ एक
सुखी कोऊ देखिए नहिं, दुखी लोग अनेक
लेत कलि कलमष दबाए, जाइए कहाँ भागि
त्रिबिध ताप मैं तन तचत, लगी दसौं दिसि मैं आगि
'दास नागर' नहीं सीतल धाम निर्भय और
जहाँ बृंदा बिपुन जमुना, बचै वाही ठौर ॥१२९॥

जयति गुरुदेव हरि-भक्ति-दानी
तिन पैं करि करुना, लै किए तन-मन दिव्य
हुते कलमषनि जे मलिन प्रानी
बिमुख मुख रसना रस ना हुती कठिन कटु,
ताहि करी मिष्ट गोविंद गानी
'नागरीदास' अनयास जिनकी कृपा
भए मद-पानी तैं अमृत-पानी ॥१३०॥

---

१२८. वई = वही।

१२९. भद्र = श्रेष्ठ, मंगल कारी।

१३०. मिष्ठ = मीठी। गोविंद गानी = गोविंद का गुणानुवाद करने वाली। मद पानी = शराब पीनेवाले। अमृत पानी = अमृत पीनेवाले।

भक्ति बिन नर थोहर के डडा
जरि मरिबे बिन और काम नहिं, दीसै अंग प्रचंडा
रौम-रौम मै कॉटे तिनकें नीरस खंड बिहडा
केवल उदर भरनि कौं उपजे, जैसें अन्न के हंडा
तिन पर रुपे प्रसिद्ध देखिए जम राजा के झंडा
'नागरीदास' सग उनको करै सो हैं भडस भडा ।।१३१।।

भक्ति बिन हैं सब लोग निखट्टू
आपस मै लड़बे-भिड़बे कौं जैसे जंगी टट्टू
नित उनकी मति भ्रमत रहत है, तैसे लोलप लट्टू
'नागरिया' जग मैं वे उछरत, जिहिं बिधि नट के बट्टू ।।१३२।।

घोष मैं मोखहिं कोउ न बूझै
डार-डार द्रुम पात पात मै परे चतुर्भुज सूझै
घर घर टहल करत है लछमी, छिन कितहूँ नहि जाय
ब्रज बृंदाबन सुख बैभव लखि, मुक्ति रही सिरनाय
इहाँ अधिक बैकुंठहु तैं राजैं ब्रजराज अवास
नंद गाँव बरसाने को निति जगमग रह्यो प्रकास
हम गो-लोक प्रजत न चाहैं, खरिक देस सुखबासी
'नागरिया' जहाँ राधा मोहन लीला ललित बिलासी ।।१३३।।

हो हरि आछी समैं सम्हारे
थोरी अवधि जानि जीवन की, अपने बिरद बिचारे
भव प्रवाह मे बहे जात हे, बहियाँ पकरि निकारे
'नागरिया' राख्यो बृंदावन, जिहि ठां अपने प्यारे ।।१३४।।

बृंदा बिपुन रसिक रजधानी
राजा रसिक बिहारी सुंदर, सुंदर रसिक बिहारनि रानी

---

१३१. थोहर = सेंहुड । बिन = के अतिरिक्त । बिहंडा = टूटा । खंड = टुकड़ा । विनष्ट । रुपे = स्थित । भंडस = भंडा ।

१३२. बट्टू = गेंद ।

१३३. प्रजंत = पर्यंत ।

१३४. आछी = अच्छे । जात हे = जाते थे ।

ललितादिक ढिग रसिक सहचरी, जुगल-रूप-मद-पानी
रसिक टहलनी वृंदा देवी, रचना रुचिर निकुंज खानी
जमुना रसिक, रसिक द्रुम बेली, रसिक भूमि सुखदानी
इहाँ रसिक, चर थिर 'नागरिया', रसिकहि रसिक सबै गुन गानी ॥१३५॥

कृष्ण कृपा गुन जात न गायो
मनहु न परस करि सकै, सो सुख इनहीं दृगनि दिखायो
गृह व्योहार भुरट को भारो, सिर पर सौ उतरायौ
'नागरिया' कौ श्री वृंदावन भक्ति-तक्त बैठायौ ॥१३६॥

किते दिन बिन वृंदाबन खोए
यौंही वृथा गए ते अबलौं राजस रंग समोए
छाड़ि पुलिन फूलनि की सज्या, सूल सरनि पर सोए
भीजे रसिक अनन्न न दरसे, बिमुखनि के मुख जोए
हरि बिहार की ठौर रहे नहिं, अति अभाग्य बल बोए
कलह सराय बसाय भिख्यारी माया राँड़ बिगोए
इक रस ह्याँ के सुख तजिकैं, ह्यां कभू हसे, कभू रोए
कियो न अपनौ काज, पराए-भार सीस पर ढोए
पायो नहीं अनंद लेस, मै सबै देस टकटोए
'नागरिदास' बसे कुंजनि मै जब, सब विधि सुख भोए ॥१३७॥

ब्रज के लोग हैं महा कठोर
तनक न पीर पराई तिनकौं, मै देखे टकटोर
अपनैं ही स्वारथ कै कारन, डोलत हैं निस भोर
'नागर' सुख लैबे मै लोभी, दैबे मे झकझोर ॥१३८॥

यह ब्रज निति प्रति सुबस बसो
नंद-सुवन-आनँद-लीला-धन ब्रज-बासी बिलसो
मंगल-मई एक रस निबहौ, अरु बहु बिघन नसो
'नागरीदास' दास निस बासर, गावो हरषि हसो ॥१३९॥

---

(१३५) यह वन जन प्रशंसा का ६८ वाँ पद है।
(१३७) यह बन जन प्रशंसा का ९७ वाँ पद है।
१३६. भुरट = व्यर्थ। भारो = भार, बोझ।
१३८. झकझोर।

मोहन कृपा कटाछ निहारैंगे
मेरे औगुन सबै बिसरि कै, अपने बिरद बिचारैंगे
वृंदा बिपुन बास दृढ़ दैकै, अब दुख दूर निवारैंगे
'नागरीदास' नॉव कैं नातैं, बिगरी बात सुधारैंगे ॥१४०॥

बिन वृंदावन यह रितु बुरी
बादर लगन धुवॉ से नैननि, चपला चमकि चुभै ज्यों छुरी
मोर सोर चहुँ ओरनि ह्वै, मनु रिपु सेना के हींसत तुरी
'नागरिया' तुलसी-बन बाहिर, पावक सी पावस झुकि झुरी ॥१४१॥

हम तो नकल भक्ति की ल्याए
कबहुँ न सॉची भक्ति करी, मन इंद्रिनि हाथ बिकाए
कपट चतुरई वेष देखि कै, संत महंत लुभाए
बानाधारी बधिकनि पैं ज्यौं मानस हंस बँधाए
स्वांग धरैंहू सब फल प्रापत, भक्ति महातम जात न गाए
'नागरिया' नकली कौ हरि प्रिय वृंदा बिपुन बसाए ॥१४२॥

हम तो हैं या रस के भोगी
जो माघांत घोप मैं प्रगटत, ताहि न जानत जोगी
उज्ज्वल-रस रस मादिक पीकै, करत राज बिस्तार
ब्रीड़ा वल वैराग ग्यान गन, होत हैं ज्यौं घनसार
मास पॉच पट या आसा मैं, रहत हैं उरझे प्रान
'नागरिया' हिय सो सुख बरसो, स्यामा स्याम सुजान ॥ १४३ ॥

जो सुख लेत सदा ब्रजबासी
सो सुख स्वपनैंहू नहिं पावत, जे वैकुंठ निवासी
ह्यॉ घर घर ह्वै रह्यो खिलौना, जक्त कहत जाकौं अबिनासी
'नागरीदास' बिश्व तैं न्यारी, लगि गइ लूट हाथ सुखरासी ॥ १४४ ॥

ब्रज ही तैं है हरि की सोभा
बैन अधर छवि भए त्रिभंगी, सो वहि ब्रज के बॉस की गोभा

---

१४१. तुरी = घोड़ा। तुलसी बन = वृंदावन। झुरी = ज्वाला बरसा रही है।
१४२. बाना = वेश भूषा।
१४३. माघांत = माघ महीने के अंत में, फागुन में। उज्ज्वल रस = अलौकिक शृंगार, माधुर्य रस। ब्रीड़ा = लज्जा। घनसार = कपूर।

ब्रज बन धात विचित्र मनोहर गुंज पुंज अति सोहैं
ब्रज मोरनि की पंख सीस पर, ब्रज जुवती मन मोहैं
ब्रज रज नीकी लगत अलक पै, ब्रज-द्रुम-फल उर माल
ब्रज गउ-गन कै पाछैं आछै, आवत मद गज चाल
बीच लाल ब्रज चंद सुहाए, चहूँ ओर ब्रज गोप
'नागरिया' परमेसुरहू कै, ब्रज तैं बाढ़ी ओप ।। १४५ ।।

ब्रज को स्वाद बैकुंठ मै नाहीं
हरिगुन कथा भई जब मीठी, ब्रज रस मिल्यो तबै ता माहीं
ब्रज रस बिन कहा रसिक गावते, ब्रज बिन रस मरि जातो
ब्रज महिमा कौ वेई जानैं, जिनकौ ब्रज सौं नातो
भुवन चतुर्दस माझ धन्य ब्रज, धन धन ये ब्रजवासी
'नागरीदास' धन्य है सोई, जो ब्रज-रैंन उपासी ।। १४६ ।।

ब्रज-समंध-नाम-माला पद

ब्रज सम और कोउ नहिं धाम
या ब्रज सौ परमेसुरहू के सुधरे सुंदर नाम
कृष्ण नाँव यह सुन्यौ गर्ग तै, कान्ह कान्ह कहि बोलैं
बाल-केलि-रस मगन भए सब, आनँद-सिंधु कलोलैं
जसुदानंदन दामोदर, नवनीत-प्रिय, दधि-चोर
चोर-चोर, चित-चोर, चिकनियाँ, चातुर नवल किसोर
राधा-चद-चकोर, साँवरो, गोकुल-चँद, दधि-दानी
श्री बृंदावन-चंद, चतुर चित प्रेम रूप अभिमानी
राधा-रवन औ राधा-वल्लभ, राधाकांत रसाल
बल्लव-सुत, गोपी-जन-बल्लभ, गिरिवर-धर, छबि जाल
रास बिहारी, रसिक बिहारी, कुंज बिहारी, स्याम
बिपन बिहारी, बंक बिहारी, अटल बिहार बिहारभिराम
छैल बिहारी, लाल बिहारी, बंनवारी, रसकंद
गोपीनाथ, मदन-मोहन, पुनि बसीधर, गोविंद

---

१४५. गोभा = अंकुर, कल्ला ।
 शोभा ।
१४६. रैंन = रेणु, रज, धूल ।

ब्रजलोचन, ब्रजरवन, मनोहर, ब्रज उत्सव, ब्रजनाथ
ब्रजजीवन, ब्रजवल्लभ सबके, ब्रज किसोर सुभ गाथ
ब्रज भूषन, ब्रज मोहन, सोहन, ब्रजनायक, ब्रजचंद
ब्रज नागर, ब्रज छैल, छबीले, ब्रज वर, श्री नँद नंद
ब्रज आनँद, ब्रजदूलह, नितिही अति सुंदर ब्रज लाल
ब्रज गउ गन कै पाछैं आछैं, सोहत ब्रज गोपाल
ब्रज सनबंधी नाँव लेत, ए ब्रज की लीला गावैं
'नागरिदासहि' मुरलीवारो, ब्रज को ठाकुर भावैं ॥ १४७ ॥

गिरि वैराग सिखर मन चढ़यो
जगत किचपिच-कीच बीच ते अति अमूझ कैं कढ़यो
निर्भय भयो तमासो देखत, लरैं भिरैं नर मरैं
अहंकार ब्यौहार अगिन मैं, बृथा मूढ़ मति जरैं
धाम-धूम मचि रही रौर अति, सबहि देखिये दुखी
'नागरिदास' बास बृंदावन भक्त करत जे, सुखी ॥ १४८ ॥

साँचो मित्र गोपाल हैं मेरो परम पियारो
जिहिं दीनौं ब्रज-वास लै बैकुंठ तैं भारो
निज साधन को संग दयो नीके तैं नीको
जाकैं पटतर क्यौं लगे, सुख स्वर्ग को फीको
राग कलह के मूल को विष-अमल छुटायो
'नागरिया' बृंदा बिपुन रस अमृत प्यायो ॥ १४९ ॥

जगत को बाव वंदी ब्योहार
उपजत खपत छिनक मैं जैसे बादर परस बयार
अलग अलग आधार बिना सब, हरि इच्छा अनुसार
'नागरिया' जागत सुपनैं को है झूठो बिस्तार ॥ १५० ॥

---

१४७. सुधरे = (१) सुधारे गए ; (२) रक्खे गए। चिकनियाँ = छैला।

१४८. किचपिच = व्यर्थ का वाद विवाद, धमाचौकड़ी। अमूझ = अमैत्री। रौर = कोलाहल।

१४९. भारो = भारी, श्रेष्ठ। साधन = साधुओं। पटतर = उपमा। अमल = नशा।

१५०. बाव वंदी = दुःखपूर्ण।

दिन दिन समै जात है बीतो
नर अपनैं गृह काज करन सौं, कबहु न होय नचीतो
जोई विवेकी सुभ कारज को औसर यौं 'ब बिचारैं
'नागर' सूत सुई मैं पोहत, ज्यौं दामिन उजियारैं ॥ १५१ ॥

देहु प्रेम हरि परम उदार
बिना प्रेम जे भक्ति हैं नौधा, भई जात ब्यौहार
प्रेमहि कैं बस होत स्याम तुम, प्रेमहिं के रिझवार
प्रेम हाथ अपनैं नहिं 'नागर', ताको कहा बिचार ॥ १५२ ॥

हमैं सास्त्र की समझ न परिहैं
नहिं समझे, अबहूँ नहिं समझैं, जे समझे तिन कह्यौ सु करिहैं
परम-धर्मवेत्ता-आचारज-ब्यारनिहीं कैं मत अनुसरिहैं
हंस-वाहनी हठ सलिता मैं बूड़क लै लै नाहिं उछरिहैं
ब्रज-रस-केलि-सुधा पिय कैं फिर विद्या-वादनि नाहिं झगरिहैं
'नागरिदास' बास बृंदावन, निति विहार तैं कबहु न टरिहैं ॥ १५३ ॥

अन्योक्ति कुंडलिया

दाँत गए अरु बल गयो, अंग भार नहिं लेत
ऐसैं बूढ़े बैल कौं, कौन बृथा भुस देत
कौन बृथा भुस देत, मरत भूखनि कैं मारैं
यह जीवत, तउ लोग खाल को मोल विचारैं
सब स्वारथ मैं मत्त, अधिक अधरम सरसांत
ज्यौं ज्यो देखत बृषभ, सजन त्यौं पीसत दाँत ॥ १५४ ॥

झूलना छंद

घूम घुमाली लावनवाली, मतवाली सी झुकैं यहाँ
'नागर' सिर जूड़े खँचे अँगूड़े, मुख रूढ़े लट छुटी तहाँ

---

१५१ नचीतो = निश्चिन्त ।

१५२. व्योहार = प्रणाली, रीति रस्म

१५३. पिय कैं = पीकर । हंस-वा...
आचार्यों ।

चटक चिकनिया अंग रहैंदी, रंग महँदी लगी नहाँ
इश्क झँझेटी, लाज लपेटी, ये महरेटी चली कहाँ ।। १५५ ।।

---

१५४. घुमाली = भ्रमणशीला । लावन वाली = लावण्य वाली, सुंदरी । जूड़ा = कवरी, जूरा । रूड़े = सुंदर । रहैंदी = रहती हैं । महँदी = मेंहदी, मेंधिका, नखरंजनी । नहाँ = नख में । झंझेटी = झकझोरी हुई । महरेटी = महर की बेटी, बड़े बाप की बेटी ।

(७) उत्सव-माला

१ श्री कृष्ण जन्मोत्सव

दोहा—जसुदा कैं सुत होत भयो, गहगड गान निसान
गयो छाय पुर मोष लौं, मंगल घोष वितान ॥१॥

ब्रज थिर चर आनंदमय, आनँद विस्व अमंद
आज प्रगट भयो नंद ग्रह, रूप धरैं आनंद ॥२॥

दीपक प्रगट्यो नंद घर, निर्मल जोति अभंग
उड़ि-उड़ि परन लगे जहाँ, दानव दुष्ट पतंग ॥३॥

श्री जसुदा कैं सुत भयो, नख-सिख-सुंदर सर्व
रस सिंगार कैं ब्रन तन, करन काम गति खर्व ॥४॥

'नागर' सुत भयो नंद कैं, मनमोहन सुकवार
या मोहन हित मोहनी, अब ब्रज प्रगटनिहार ॥५॥

पद, राग षट; ताल जात्रा

आजु ब्रजराज कैं सुत भयो सुनि सखी,
उमगि उपहार लैं लैं चल्यो महरावनौं
थार कर हार भरि, भार लचकत लंक
बसन अति भार उर फन्यो फहरावनौं
इतहिं धुनि गान अरु मंगल निसान धुनि,
उतहिं नीको लगत घनन घहरावनौं

(दोहा ४) खर्व = गर्व (सु)। (पद २) उछाह = उत्साह (सु)।

१. गहगड = गहरा, घोर। निसान = डंका, नगाड़ा। पुर मोष = मोक्षपुरी, स्वर्ग। वितान = विस्तार, फैलाव।

२. अमंद = पूर्ण। ग्रह = गृह, घर।

३. अभंग = अखंडित। पतंग = शलभ, परवाना।

'नागरीदास' व्रज-चंद प्रगटत भयो,
नंद निधि हियैं आनंद लहरावनौं ॥१॥

राग गौरी तिताल

आज भयो नंद भवन आनंद
व्रज-जन उमगि चकोर चले मिलि, प्रगट्यो पूरन चंद
गावत मंगल गीत गलिन मैं, आवति युवती वृंद
'नागरीदास' उछाह छके सब, मिट जु गए दुख दंद ॥२॥

राग अडाणौं चौताल

नंद गोपराज अहो औरैं व्रज ओप आज
तेरैं पुत्र भयो भैया पुन्य फल जाप को
ब्रह्मरिष द्वार बहो देवता विमानन पैं
छायो सुर वेद गान भेदक अलाप को
घर-घर संपदा अपार वढ़ी देखियत
हमपै न कीनौं जात बर्नन प्रताप को
'नागरिया' वेर-वेर ग्वाल कहैं टेर-टेर,
तेरो घर मानो परमेसुर के बाप को ॥३॥

राग परज तिताल

बाजैं बधाई व्रज मे, नंद घरनि सुत जायो
गोपी गीत मनोहर गावत, आवत भावत, नभ तान तरंगनि छायो
कौतिग मोहे देखि देवगन, देवलोक बिसरायो
'नागरीदास' उछाह छके अति, आॅनंद उर सरसायो ॥४॥

तिताल

आज अति व्रज मे बढ्यो हैं आनंद
जगमग रह्यो नंद गृह पूरन, प्रगटो हैं गोकुल-चद
लोचन तृषित चकोरन के चित, मिटि जु गए दुख दद
'नागरीदास' जुरी कमला सी, गावत जुवती वृंद ॥५॥

इकताल

अब्रही नेक पौढ़ी हैं व्रजरानी
पुत्र जन्म उत्सव रस सानी, आनंदित, अरसानी

---

१. निधि = समुद्र ।

लालनहू पालन मैं सोए, कमल-नैन-पय-पानी
'नागरि' गोपी गान मनोहर फिरि करियो सुखदानी ।।६।।

आन कवि कृत । तिताल

नंद जी रैं चालो नैं घरां
महा मनोहर पुत्र हुवो लखि, लोयण सुफल करां
दही ख्याल सों भरां भरांवा, हसि-हसि फेरि भरां
'रसिक बिहारी' नांव कुँवर जी रो आगम जांणि धरा ।।७।।

राग खमायची तिताल

बधाई बधाई बधाई हो आजु वृज छाय रही
जसुदा के सुत भयो, सुनि उत कान दें दें,
मेघ से निसान बाजि सहनाय रही
ठाढ़ी नंद आँगन मे, मंगल कलस लिए,
मंगल रस ओपी गोपी सब गाय रही
'नागरिया' सुख सानी, दधि-खेलन अरसानी,
पट भीजि अंग, रंग झरि लाय रही ।।८।।

आन कवि कृत । राग सोरठ इकताल

कान पड़ी न सुणीजै नंद घर आजैं
घुरैं निसाण घणां मंगलमय, जाणैं नभ भादौ घण गाजैं
गोपी गीत गावती आवैं, चालंता छबि छाजैं
गोकुल रा गलियां रां चहुँवा बहुवां रांर मझोल बाजैं
श्याम वरण सुत जायो राणी, रूप अनूपम राजैं
होसी 'रसिक बिहारी' नांव यारो, अबही मदन बदन लखि लाजैं ।।९।।

ताल चर्चरी

गोकुल आज परम रंग रली
भयो है सुत नदरानी जू कैं, सुभ सुनिए बात भली

बृज बधूनि कै हियै बाढ़ी मोद मन कलमली
मनु उमगि सलिता रूप की आनंद आतुर चली
लंक लचकत, थार कर, भर भार हारावली
गान मंगल नूपुरनि धुनि छाय रही सब गली
छिरकि कैं दधि, नाचत मगन, जहाँ नंद सदन-स्थली
'दास नागर' छकी उच्छव, करत कौतिक अली ॥१०॥

राग काफी इकताल

बाजैं बधाइया वे, सइए नंद दे दरबार
हुवा सुत सोहना वे, मन दा मोहनां सुकुवार
आईं सुनि गोपियाँ वे, हिलि मिलि गावही खुसियाल
जुरे सब लोक मंगन वे, गुनी गुन बोल दैं दैं ताल
गुनी दे ताला नाचैं, वाहवा
आँगन पहपट माचैं, वाहवा
नंद दा लाला जीवो, वाहवा
दूधां अम्रत पीवो, वाहवा
खुसी दिल पावा झूमा, वाहवा
लला दी तूंनी चूमां, वाहवा
उसदा मगल गावा, वाहवा
दान दुपट्टा पावां, वाहवा
पावां पट दान मोती वो, जावा दिल फूल दे घर माँह
असाढा हाथ टोडर वो, बाजू बंध झूलदे बिचु बाँह
तुज पर घोलियाँ वो, जसोदे बोलियाँ दैं सुनाय
धनि-धनि आज दा दिन वो, दैंदी दान क्यों न मँगाय
महर नैं दान मँगाया, वाहवा
कचन झर बरखाया वाहवा

---

१०. कौतिक = कौतुक। कलमली = उद्विग्नता।

११. सइए = सखी। नंद दे = नंद के। मन दा = मन का। खुसियाल = मंगल गीत। पहपट = (१) शोरगुल, कोलाहल। (२) स्त्रियों का एक प्रकार का गीत। लला दी = लला की। तूंनी = तुमने उसदा = उसका। फूल दे = फूल के; प्रफुल्ल होकर। असाढा = हमारा। टोडर = हाथ में पहनने का कोई आभूषण। झूलदे = झूलते हैं। तुज = तुझ। घोलियां = (१)

है कइ सागन तू री, वाह्वा
क्यों तुपदा पूरी, वाह्वा
बीच खुली दिल गाढ़े, वाह्वा
मंगलतुली तुसाढ़े, वाह्वा
जन्म जनम गुन गावां, वाह्वा
'नागर' दरसन पावां, वाह्वा ||११||

तिताल

नंद जू कैं बाजत बधाई आज द्वारें
गहमह मंगल महा गान धुनि, लाग रही धूम सारें
अति आनंद भयो सुनि सजनी, गनत न काहू उचारें
'नागरिया' जसुमति सुत जायो, लखो री बदन निहारें ||१२||

तिताल

हो घर नंद कैं बाजत आज बधाइयाँ
झांझ झनक मिलि मधुर टकोरनि, पूरि रही सहनाइयाँ
आंगन भूमि झूमक दें दें, गोपी गावत आइयाँ
'नागर' वृज घनस्याम प्रगट भयो, सुख बरसा बरसाइयाँ ||१३||

आन कवि कृत । राग काफी

बाजें आज नंद भवन बधाइयाँ
गहमह आनंद रंगरली अति, गोपी सब मिलि आइयाँ
महरि जसोमति कैं भयो सुत, फूली अंग न माइयाँ
'रसिक बिहारी' प्रान जीवन लखि, देत असीस सुहाइयाँ ||१४||

---

२ अथ राधा जन्मोत्सव

इन बधाइन की अलापचारी में दैबे के दोहा
दोहा—प्राची-कीरति कूख तें, कन्या भई अनूप
मान-सिंधु आनंददा, चंद-मंजरी रूप ||१||६||

आजदा = आज का । दैंदी = देती । [illegible]

कुल-मंडन वृषभान की, भूषन-जगत अभूत
वारौं कोटिन नृपन के, या कन्या पर पूत ॥२॥७॥

वेग वढ़ो आरोग्य तन, भाग वड़ो उत्साह
नंद राय के कुँवर सौं, वेगहि होहु विवाह ॥३॥८॥

हो वृंदावन-ईस्वरी, गुन-पूरन, सुख-रास
विधिना सो मॉगत रहैं, जाचक 'नागरीदास' ॥४॥ ॥

राग ईमन चौताल

निसि मे सुपन लह्यो ताके फल की विधि वरसानैं प्रगटी सुखदाई
गउर स्याम इक जोरी अद्भुत, सुख सोवत सुपनैं दरसाई
जनो वहु करत विहार विपन मैं, गान रंग वरषा वरसाई
गिरि तरु कुंज पुञ्ज वन वीथिन, रस सिंगार नदी सरसाई
'नागरिया' सुभ सगुन होत हैं, घर-घर आनँद उर न समाई
लीला ललित करन दोउ प्रगटे, इत राधा, उत कुँवर कन्हाई ॥१॥१५॥

राग परज तिताल

ढाढ़नि नाचैं वृषभान की मंदिर रस माती
गावत सरस वधाई सुन्दर, लटकि चलत मुसकाती
नंद-सुवन अरु कुँवरि तिहारी, वेग वढ़ो दिन राती
'नागरिदास' रँगीली विच विच, देत असीस सुहाती ॥२॥१६॥

[या वधाई के गायवे में वीच वीच दैंने ए दोहा]

दोहा—देस देस के गुनी जन, जाचन आए द्वार
धन-धन उनयो भान जू, वरषत रिद्ध अपार ॥१॥१०॥

ढाढ़न श्री नँदराय की , वधू वृंद लै संग
आई श्री वृषभान कैं, रावर माच्यो रंग ॥२॥११॥

नाचै गावैं ढाढ़नी, कहैं वधाई पॉउ
हुलरावति श्री राधिका, लै लै कुल को नाँउ ॥३॥१२॥

---

७. अभूत=अभूत पूर्व; जैसी पहले न हुई हो।
११. रावर=राजमहल, रनिवास।
१२. पाँउ=पाऊँ।

कीरति रानी यौं कह्यो, गोपराज सिख मोर
ये जाचक नँदराय के, जो दीजै सो थोर ।।४।।१३।।
पूछो ढाढ़नि नाँव कौ, कहो कीरति मुख खोलि
नवला याको नाव हैं, बिजै सखी कह्यो बोलि ।।५।।१४।।

तिताल

हेली आज की घरी छिन भलियाँ
घन आनंद सकल वृज बरषत, कीरत बेलि सुफलियाँ
इत प्रगटी गोरी, उत स्यामहिं हिय आनँद कलमलियाँ
'नागरिया' जोरी अति लौंनी, हौंनी है रँग-रलियाँ ।।३।।१७।।

आन कवि कृत । तिताल

आजु वृषभान कैं बधाई
गहमह भीर भई रावर मैं, गावत अली सुहाई
हसि हसि गोपी मिलत परस्पर, आनँद उर न समाई
प्रगट भए उत 'रसिक बिहारी', इत प्यारी निधि आई ।।४।।१८।।

आन कवि कृत । तिताल

बधावणो है हेली आज रली
भई भीर वृषभान भवन में, कीरति बेलि फली
ः वती वृंद घर-घर तै मंगल गावत आवत चली
'रसिक बिहारी' चंद हेत जनु प्रगटी कुमुद कली ।।५।।१६।।

आन कवि कृत । राग खमायच तिताल

होछै वृषभान रैं घर, लाखां री बधाई आज
कुँवरि लाड़िली जनम लियो छै, मोहन रैं सुख काज
हुलरावै मंगल गावैं ढाढ़नि, लीयां सुघर समाज
'रसिक बिहारी' मन आनँद हुवो, प्रगटी निज सिरताज ।।६।।२०।।

आन कवि कृत । तिताल

होछै वृषवान घर आनंद रली वधावणौं
जनमी राधा, वृज-सुख-साधा, निरखि नैणा सुख पावणौं

---

१६. हेली = सखी । रली = आनंद, बिहार । कीरति = कीर्ति; राधा की माँ का नाम ।
२०. होछै = है । वृषभान रैं = वृषभानु के । छै = है । लीयाँ = लिए हुए ।

आंगण ग्रह मह भीड़ हुई छैं, आज को दिवस सुहावणों
प्रगटी छै 'रसिकबिहारी' की जोड़ी, हुवो मनोरथ भावणों ॥७॥२१॥

राग बिहागरो, तिताल

कीरत जू की अबहीं पलक लगी हैं
सब दिन उच्छव जनम जगी हैं
पौढी निकट लली लघु वेसैं
मइया जागि जागि मुख देखैं
तुम मिलि तनक करो विश्राम
माई मन वांछित भए काम
अब भई निद्रा बस श्री रानी
ढिग सखी 'नागरि' कहत कहानी ॥८॥२२॥

राग सोरठ तिताल

भई भान जू कैं कन्या बधाई, बधाई चलि देखि तू निकर कैं
किधौ कीरत की कीरत प्रगटी स्वरूप धरि कैं
बरसानैं आजु हेली महा मगल धुनि छाई
सनि कान दैं निसान संग बाजत सहनाई
निकसी भवन भवन तै, तिय लागत भली हैं
उपहार थार लैं लैं, सब गावत चली हैं
नहि अँचरा सँभारैं, उर हार डोर टूटैं
गिरैं फूल बहो गलिन मैं, सिर केस पास छूटै
मिल खेलत औ नाचत, दधि कादौ भयो है
आनंद को कुलाहल, बढ़ि व्यौम लौं गयो हैं
सुख की चहल पहल अति, ह्वै रही महल मैं
तहाँ डोलत हैं उमगी 'नागर' सखी टहल मै ॥६॥२३॥

इकताल

री वृषभान कैं बधाई सुनि बाजैं, धुनि पूरि रही सहनाय
हैं कहा सखी आजु रावर मै, रंग रह्यो सरसाय

२१. भावणों = चाहा हुआ, वांछित।
२२. उच्छव जनम = जन्मोत्सव। माई = सखी
२३. कादौं = कर्दम, कीच।

बेर बेर पूछत नँदरानी, मोहि नीकी बात सुनाय
'नागर' तुव सुत स्याम की जोरी, प्रगटी है गोरी आय ॥१०॥२४॥

राग भैरूं तथा सोरठ, इकताल

बाजै बधाई बधाई वृषभान जू की पौरि
रावरि मे रँग होत, देखि सखी दौरि
भई कीरति कै कन्यका सुलोचन विसाल
मनहुँ चंद्र जोति रूप मंजरी रसाल
जसुदा अरु नंद हुवै आनंद मै अधीर
आए रनवास के निवास, भई भीर
सुनत नाहिं तहाँ तनक कान लगि रह्यो
गोपिका समूह गान गरजि वृज रह्यो
हौन लगे मंगल कौतूहलनि विधान
सबही आवेस चित्त, भूले हैं सयान
नाचत वृषभान नंद जोरैं दोउ बाह
खुलत पेच, हलत तोद, आनँद हिय माँह
महरानौ हसत सबै कोतिग निहार
दौरि दौरि दुहुँनि पै घट ढोरत वृज नारि
दधि कादौ माझ निकर भामिनी सलोल
मनौ छीर-सिंधु-मध्य दामिनी कलोल
झूमि झूमि झूमक तिय नाचती सुहात
घूमि घूमि लहँगनि की लावनि लहरात
जूरा सिर खुलत, डुलत मोतिन की माल
चूरा रहे चमकि चमकि, कुंडल की हाल
उत्सव रस मत्त, मिटत नाहि उर उमंग
छुटत बसन, टुटत हार, बेसम्हार अंग
आनँद कै आनँद ह्वै, आनँद रह्यो पूरि
'नागरिया' प्रगट भई आनँद की मूरि ॥११॥२५॥

---

२४. कहा = क्या ।

२५. पौरि = द्वार । ढोरत = ढुलकाती है । निकर=समूह । झूमक=झूमर के सथ नाचा जाने वाला नृत्य-विशेष । लावनि = लावण्य, सुंदरता, घेरा । चूरा = चूड़ामणि; सिर पर धारण किया जाने वाला आभूषण विशेष । हाल = हिलना; प्रकंप ।

आन कवि कृत । राग सोरठ तथा मलार, तिताल

वृषभान कैं मंदलरा बाजैं
सुभ घरी दिन, सुभ महूरत, गहरैं गहरैं गाजैं
गावो मंगल रहसि, बधाई पावों, रानी कीरत कैं वर काजैं
'रसिक बिहारी' की यह जोरी, भए मनोरथ आजैं ॥१२॥२६॥

राग काफी इकताल

हा हा मुबारक बादियाँ
अरी रानी ऐसी या नित सादियाँ
राधा चंद-मुखी प्रगटी बेटियाँ
और तारनि सी गोपजादियाँ
फूलिया अंग न मावैं सलौनियाँ, रग भरी रसवादियाँ
'नागरीदास' खुसी दिल मैं, आजु गोपी फिरैं उदमादियाँ ॥१३॥२७॥

तिताल

आजु छबि छाई हैं माई बरसानौं लागत सुहावनौं
भवन भवन कंचन कलसनि, धुजा फहर फहर फहरावनौं
तैसिय भादौं उमडि घुमडि घटा, घहर घहर घहरावनौं
राधा जनम उमड़ि 'नागर' मन महर महर महरावनौं ॥१४॥२८॥

राग आसावरी तिताल

अरी माई श्री कीरति रानी कैं कन्या अनूप भई
सु बरिस दिन को तिमिर गयो मिटि, भए प्रकासमई
महरानैं मंगल घर घर, कछु औरैं ओप ठई
'नागरिया' आनद चंद्रिका, सब वृज मांझ छई ॥१५॥२९॥

---

२६. मंदलरा = मदरी, ढोल के ढंग का एक वाद्य; मृदंग । गहरैं गहरैं = जोर जोर से । रहसि = आनंद । बधाई = मंगलोत्सव में आश्रतों को दिया जाने वाला उपहार ।

२७. मुबारक वादियाँ = वधाइयाँ । याँ = यहाँ । सादियाँ = प्रसन्नता; हर्षोत्सव । गोपजादियाँ = गोप बालिकाएँ । मावैं = समाती हैं । रस-वादियाँ = रसमग्न । उदमादियाँ = उन्मत्त,

२८. धुजा = ध्वजा, पताका, झंडा । महर महर = प्रत्येक श्रेष्ठ व्यक्ति ।

२९. छई = छा गई ।

राग टोडी, चौताल

बृषभान भवन भई भीर, आँगनि तनि रह्यो मंगल धुनि वितान
टूटे हार मोतिन के, छूटैं सीस जूरा, बार बे-सम्हार
आनँद मैं गोपी झूमक दैं दैं करत गान
कीरत जई है कन्या, अनूपम रूप गोभा,
सकल बृज की सोभा, सुख निधान
'नागरीदास' भुव मंडल अकास राजत निसान ॥१६॥३०॥

इन बधाई के बीच बीच गायबे मे दैने ए दोहा *

दोहा—बेटी हुई भान कैं, 'रु नंद कैं फरजंद
गयो है दुख दंद आज, बृज मैं आनंद ॥ १ ॥

हमसे गुनी बृज के, तुम बृज के सिरताजा
हम से नहीं गुनी अरु तुमसे महाराजा ॥ २ ॥

नाचै हैं ग्वालिनी, नाचै हैं ग्वाल
कीरत कै कन्या भई, जसोदा कैं लाल ॥ ३ ॥

वे गावैं कौतूहल करि, नाचैं खुसियाल
दूध दही हरद जरद, रंगे सब ग्वाल ॥ ४ ॥

बैठे हैं आय कैं बृषभान राय बाहिर
बखसैं दिल खुसी हुए, जर जरी जवाहिर ॥ ५ ॥

नित नित होय सादियाँ, जैसी हैं आज
भानराय नंदराय जीयो महाराज ॥ ६ ॥
अरे लोगौं आज इहा सादी सी क्या हैं
गोपियांहु गोप दान देते ल्या ल्या हैं ॥ ७ ॥

---

* ए दोहा नहीं हैं। इनके विषम दलों में १२-१२ एवं सम दलों में ६-६ मात्राएँ हैं।

३०. जई है = जन्म दिया है। गोभा = अंकुर। निसान = झंडा।

दोहा १—फरजंद = पुत्र।

४. हरद = हल्दी। जरद = जर्द, पीला।

५. बखसैं = प्रदान करते हैं। जर = दौलत, धन। जरी = स्वर्ण जटित कपड़ा। जवाहिर = माणिक्य।

सादी वृजराज जू कैं रोसनी लगाई
फिर रिरि ररि ररि ररि, छूटति हवाई ॥ ८ ॥
गाय वखसी, वैल वखसे, और वखसे घोडे
हुये निहाल अमलदार, टूटे अरु खोडे ॥ ९ ॥
खुसी सब हुए, वृषभान कैं उत्साह
जड़ू जिसके लठा, जो इनका बदखाह ॥ १० ॥
ठाढ़े है भट्ट थट्ट, देखते मिसर्र
सुवा मोर मैना, उड़ते हैं सर्र ॥ ११ ॥

तिताल

आज वृषभान कें दरबार खुसवखतियाँ
लिया जनम जहान की साहिब, घोलि यामैं रस वखतियाँ
खरे खवान भरि भरि कें, आगें फरस फरूस
'नागर' गुनी गवैया, गावैं अजब जलूस जलूस ॥ १७ ॥ ३१ ॥

हुई अजब जलूस जगमगी
आईं गोपियाँ सकल रगमगी
गोया घर घर मंगल काज
वखसत जरी जवाहर आज
ए हो ऐसी होय सदाई सादियाँ
सादियाँ दिल उदमादियाँ
ले ले नजर फजर उठि आई
बडडी साहिव गोप जादियाँ
अगर धूम अरु बटैं अरगजा अतर वगर तंबोल
'नागर' अंदर महल महल मैं चहल पहल कल्लोल
चहल पहल कल्लोलनि डोलनि
झनक मनक पग नूपुर बोलनि
मनि मोती पट लेहो लेहो
रावरि यह धुनि सुनियत ए हो ॥ १८ ॥ ३१ ॥

तिताल

कीरति के कन्या होत माची दधि कादौ अति
मानौ लोपि तीर कों चल्यो समुद्र छीर को

---

८. हवाई=वान या आसमानी नाम की अतिशबाजी।
९. निहाल=प्रसन्न।

वेद धुनि, गान धुनि, पटह निसान धुनि,
ब्रह्म लोक गई, पुर भेदि सुनासीर को
मोतिन के भार भरी मोतिन के हार देत,
जुरी हैं रमा सी गोपी, पार है न भीर को
'नागरिया' देव नभ देखि कहैं बार बार,
धन्य आज अवनी मैं भवन अहीर को ।।१६।।३३।।

तिताल

अरी रानी तेरी चिरजीवो राधा सोहनी
होत ही प्रगट महा आनँद की डारि दई व्रज मोहनी
नंद सुवन अरु कुँवरि तिहारी, जोरी बढ़ो जग जोहनी
'नागरीदास' असीसत ढाढ़नि, महल महल सुख बोहनी ।।२०।।३४।।

तिताल

तू सुनि बाजत आज बधाई, बाजत आज बधाई री
मोहन मंगल धुनि छाई री,
बहि पूरि रही सहनाई री
चलि बेग बधायैं कीरति कन्या जाई
छिन छिन उत्सव अब सरसानैं
उठि बेग बधू, जिन अरसानैं
दधि कादौं माचौ बरसानै
सुख बरस रह्यो री, बरनि न जात ही काई
मिलि चली चपल गज गामिनी
उपहार लिए अभिरामिनी
आई सलिता ज्यौं भामिनी
रस सागर उमग्यो, गावत गीत सुहाई
वृषभान भवन मैं सुखकारी
माच्यो कोलाहल अति भारी
झूमक दैं नाचैं वृज नारी
तन नाहिं सम्हारै 'नागरिया' सुखदाई ।।२१।।३५।।

---

३३. लोपि = लुप्त करके । तीर = तट । छीर = क्षीर, दूध । पटह = एक बाद्य विशेष । निशान = डंका, नगाड़ा । सुनासीर = शुनासीर, इंद्र ।

३४. जोहनी = दर्शनीय । बोहनी = डुबा देने वाली ।

३५. पूरि रही = भर रही । काई = किसी से ।

अथ वृषभान जी की वंशावली

दोहा—मोहन मोहनि पद कँवल, धर उर करनि प्रसंस
बरनौं श्री वृषभान को, जगत प्रचुर वर वंस ॥१॥१५॥

बरीसान परवत सुखद, तिहि ठा बस्यो सु गाम
ताही तैं याको भयो, सुख बरसाना नाम ॥२॥१६॥

विमल महल ऊँची अटा, रतन किरनि मिलि जोति
विविध रंग मणि नग जटित, जगमग जगमग होति ॥३॥१७॥

भूपति बंदी जनन की, भीर रहति नित द्वार
आन नृपति वंचित रहैं, करैं कृपा प्रतिहार ॥४॥१८॥

ऐसो बरसानौ प्रगट, गावत वेद पुरान
महाराज वृषभान को, सरवोपरि अस्थान ॥५॥१९॥

चौपाई—भए प्रथम नृप नीप उदार, तिनके जूप प्रसिध संसार
नृप दयादि तिन के सुत जानौं, अधिक प्रताप जगत जिहि मानौं ॥१॥

धर्म धीर तिनके अति धीर, कुल अवतंस वंस आभीर
महीभान नृप तिनके सागर, सुत तिनके नव भान उजागर ॥२॥

महीभान महि मंडल नाथ, जिनकी जग सब पावन गाथ
सत्यभान सुभ सत्य की सीवां, दई जगत में जसु की नीवां ॥३॥

श्री गुनभान भान सम राजैं, दुरित तिमिर देखत तिहिं भाजै
धर्मभान धर धर्म धुरंधर, जाको जस सुनि लजित पुरंदर ॥४॥

श्री रुचिभान रुचिर जगमंडन, ता सम और नाहि नव खंडन
भीवर भान महा वर जानौं, बंदीजन पंकज रवि मानौं ॥५॥

श्री सुभान रतिभान महामति, अति अनूप सम और नाहिं छिति ॥६॥

दोहा—चंद्र वंस अवतंस कुल, महाराज वृषभान
सुर नर पग बंदित सदा, गावत वेद पुरान ॥६॥२०॥

अष्ट सिद्धि नव निद्धि जिहिं, टहल करत नित धाम
कॅवला दासी लौं फिरति, महल टहल दिन जाम ॥७॥२१॥

मुक्ति रहति द्वारैं खरी, आज्ञा बस कर जोर
किंकर के किंकर जेऊ, चितवत नहिं द्रग कोर ॥८॥२२॥

चौपाई ४—दुरित = पाप। टहल = सेवा।

जब वैभव बड़ भाग सुख, अति ऐश्वर्य उदार
इन बातन को नेकहू, पावत नाहिन पार ॥६॥२३॥

ऐसे श्री वृषभान कै रानी कीरति नाउँ
हौं वाके बड़ भाग को, तनक पार नहिं पाउँ ॥१०॥२४॥

ताके कन्या पुत्र भए, जग प्रसिद्ध हैं नाम
वरणौं अब श्री राधिका, तिनसौं मेरे काम ॥११॥२५॥

प्राची कीरति कुक्षि तैं, कन्या भई अनूप
भान-सिंधु आनंददा, चंद्र मंजरी रूप ॥१२॥२६॥

कुल मंडन वृषभान की, भूषन जगत अभूत
वारौं कोटिक नृपन के, या कन्या पर पूत ॥१३॥२७॥

बेग बढ़ो आरोग्य तन, भाग बढ़ो उत्साह
नंदराय के कुँवर सौं, बेगहि होहु बिबाह ॥१४॥२८॥

हो वृंदावन-ईश्वरी, गुन पूरन सुखरास
विधिनां सौं माँगत रहैं, जाचक 'नागरिदास' ॥१५॥२६॥

इति वृषभान जी की वशावली ।

आन कवि कृत राग गौरी

आजु बरसानैं मंगल माई
कुँवरि लली को जनम भयो है, घर घर बजत बधाई
मोतिन चौक पुरावो, गावो, देहु असीस सुहाई
'रसिक विहारी' की यह जीवनि, प्रगट भई सुखदाई ॥२२॥३६॥

आन कवि कृत । रागनायकी ताल चपक

आजु बधावो वृषभान कैं धाम
मंगल कलस लिए आवत गावत वृज की वाम
कीरति कैं कीरति प्रगटी हैं, रूप धरैं अभिराम
'रसिक बिहारी' की यह जोरी होनी राधा नाम ॥२३॥३७॥

इति राधा उत्सव

———

३ दानोत्सव

या पद की आलापचारी मे देने ए दोहा

दोहा—हरि मूरति चित मे चुभी, नैननि पुलकित नीर
सीस गगरिया गिरत सी, जकि रही जमुना तीर ॥ १ । ३० ॥

घैरु होत जान्यो न, उर उड़त न जांन्यो चीर
गिरत न जानी गगरिया, रहत न छानी पीर ॥ २ । ३१ ॥

हरी हरी कहि लेहु री, बिसरी दधिं को नॉव
कृष्णमई ग्वारिन भई, कौतग लाग्यो गाँव ॥ ३ । ३२ ॥

महा रूप-मदिरा-छकी, चलत डगमगत पाय
जो देखत ग्वारिन छकी, तिन्हैं छकनि चढि जाय ॥ ४ । ३३ ॥

गिरैं न ग्वारि न धुकि उठैं, घायल मन रिझवार
'नागरिया' रन सुभट ज्यौं, रहत सम्हारि सम्हारि ॥ ५ । ३४ ॥

राग देवगंधार। चौताल

मोहन मुख लखि मोही रह्यो न परत घरीहू घर माई
बीथिन मैं फेरी करैं, हरैं हरैं पैंड़ भरैं,
सीस पैं दहेरी धरैं, प्रेम रस छकनि छकाई
संग भौंर भीर चलैं, नैनन मे नीर वीर,
धीर हियैं नेह-विष लहरि दबाई
'नागरिया' कृष्ण रूप भई, भूली देह,
दधि नाम भूली, कहैं टेर, 'लेहु री कन्हाई' ॥ १ । ३८ ॥

दोहा १।३०—नैननि पुलकित नीर = नैन विपुलकित नीर (मु) ।
पद ३८—'मोही' 'मोहि' पढा जा सकता है । घरी हू घर = घरी हू न घर (मु) ।
दोहा १ जकि रही = भौंचक्की हो गई, बकने लगी ।
२. घैरु = निंदा, अपयश । छानी = गुप्त, छिपी हुई ।
३. कौतग = कौतुक, तमाशा ।
४. छकनि = नशा
पद ३८—हरैं हरैं = आहिस्ता आहिस्ता; धीरे धीरे । पैंड = डग, कदम । भरै = धरै, रखती है । दहेरी = दहेंडी; दधि-भांड ।

या पद की अलापचरी मे देने ए दोहा

दोहा—दान केलि जो मन बसैं, ताहि न कछू सुहाय
तजि वृंदावन माधुरी, अनत त कबहूँ जाय ॥ १ ॥ ३५ ॥
मेरे नित चित मे बसा, दंपति दान विहार
मुख पर झूठी झगरई, नैननि करत जुहार ॥ २ । ३६ ॥

मो मन लागी दुहुँन की, दान केलि बतरानि
नैननि हा हा खान इत, उत भौहै सतरानि ॥ ३ । ३७ ॥

गउर घटा अरु साँवरी, उनई नीर सनेह
खोरि साँकरी गिरि तहाँ, दान रग झर मेह ॥ ४ । ३८ ॥

गोरस माँगत करत दोउ, नैन सैन सनमान
'नागरिया' के हिय बसो, दान रंग बतरान ॥ ५ । ३९ ॥

राग बिलाबल ख्याल, तिताल

माँगे घनश्याम दान दई
गोरस दान सुन्यो नहि कबहूँ, यह अब कैसी भई
दियो नहिं लेत, हाय हँसि हेरत, नेक न करत गई
'नागरीदास' कौन बिधि बनिहैं, यह ब्रज रीति नई ॥ २ ॥ ३९ ॥

तिताल

नित दान माँगै गहबर गैल मैं, कित जाउँ री
साँवरो सो धोटा अरबीलो, है मनमोहन नाँव री
अंचर गहि, हँसि, चाहि रहैं मुख, हूँ जिय मैं सकुचाँव री
'नागरीदास' उतै उरझेरो, इतै चबइया गाँव री ॥ ३ ॥ ४० ॥

दोहा १. अनत = अन्यत्र ।
२. जुहार = प्रणाम ।
३. हा हा खाना = बहुत ही गिड़गिड़ाकर (दीनतापूर्वक) विनती करना ।
सतराना = क्रुद्ध होना ।
४. खोरि = गली । साँकरी = संकीर्ण, पतली ।
५. नैन सैन = कटाक्ष ।
पद ३९. गई करना = जाने देना । अर्थात् = मामला [illegible] होना ।

राग सारंग । तिताल

तजि दीजै गौंहन सौंहन मनमौंहन गुमानी
परी बुरी यह टेव, निडर अति, अंचर छुवत नए दधि-दानी
झूठैं झगरत, डगर तजत नहिं, अहा कहा लँगराई ठानी
'नागर' कुँवर तिहारे मन की, मैं अब सब जानी जू जानी ॥ ४ ॥ ४१ ॥

तिताल

जो तो अब इनहिं छुवोगे दधि-दानी
तो ए गोप कुँवरि हमहू तैं नाहीं रहैगी, सतरानी
ज्यौं तुम नंद नंदन, त्यौं एऊ अपने कुल अभिमानी
जाहु चले 'नागर' गुन आगर, सूधैं गैल गुमानी ॥ ५ ॥ ४२ ॥

राग इकताल

गई हुती वेचन गोरस कैं
रोकी आनि दान मिसु मोहन, बांकी चितवनि मेरे हिय मांझ कसकैं
अँचरा गहि, फिर बहियां गही री, कर मेरो मसक्यो, सु अब लौं चसकैं
'नागरीदास' कठिन मोहिं बीतत, उहि तो मन लीन्हो हसि हसि कैं ॥ ६ ॥ ४३ ॥

राग गौरी तिताल

दान दै री वृषभान कुँवारि
छाड़ि देह अब चार विचार
करत झगरई होत अबार
हा हा गोरस प्यारी पाय
क्यौं झुकि झिझकत है अनखाय
'नागरि' नैननि करि सनमान
हसि बस करि लए श्याम सुजान ॥ ७ ॥ ४४ ॥

तिताल

लाल नैक मारग दीजै, एती न कीजैं बरजोरी
ठाढ़ै झगरत साँझ भई, अब हारि पसारत झोरी

---

(४३) 'वाँकी' को वाकी भी पढ़ा जा सकता है।

४१ गुमानी = अभिमानी। गोहन = साथ। टेव = आदत। लँगराई = नटखटी, शरारत। कँवर = कुँवर।

४३. हुती = थी। मिसु = मिस, वहाने से।

४४. चार = आचार। अवार = विलंब, अवेर। अनखाय = रुष्ट होकर।

थहरत देह, न ठहरत सिर पर गरई लगत कमोरी
टरत नहीं हो, डरत नहीं हो, करत नहीं हो थोरी
जिनकौं तुम यह अँचरा गहत हो, सो हैं कुँवरि किशोरी
हियैं और कुछ लालच ललकैं, पलकैं करत निहोरी
प्यारे कुँवर छबीले 'नागर', पाई चित की चोरी ॥ ८ ॥ ४५ ॥

तिताल

छाँड़ि छाँडि दैं रे अंचल छैला
इती करत लँगराई लला क्यो, रोकि मही को गैला
जान न देत, दान मांगत हठि, ठाढ़ो ह्वै आड़ो अरैला
सीखे कहा अनोखे 'नागर' ए जोबन के फैला ॥ ९ ॥ ४६ ॥

राग तिताल

लीनौ हठ है री मेरो कान्ह मही री
आवत देखि बैठि मारग मैं, अचानक आनि गही री
दीनौं नहीं मोल, कीनी बरजोरी, कहा कहौं सबही सही री
'नागरीदास' भई, सु भई, अब बात न जात कही री ॥ १० ॥ ४७ ॥

---

४ सांझी* उत्सव

या पद की अलापचारी मैं दैने ए दोहा

दोहा—मिलत नवावत नव लता, अंचर छुटत दुकूल
इत उत बाढ़ी दुहुँन मन, फूलनि बीनत फूल ॥ १ ॥ ४० ॥

दुहुँ मिलि फूलन बीनहीं, जमुना कूलनि सांझ
रंग रली अति ह्वै रही, कुंज-गलिन कैं मांझ ॥ २ ॥ ४१ ॥

---

४५. निहोरी = विनती।

४६. महीको = मेरा। आडो = अड गया है। अरैला = अडने वाला, हठी। जोबन = यौवन, जवानी। फैला = फैल, काम।

* सांझी = मंदिरों में भूमि पर रंगीन चूर्णों से बनाई हुई बेल-बूटों की सजावट, जो प्रायः सावन में या उत्सवों के समय होती है।

दोहा १—नवावत = झुकावत। दुकूल = साड़ी। फूल = प्रसन्नता, प्रफुल्लता।

बन फूल्यो, फूल्यो जु मन, फूल बेस अभिराम
सबैं करी फूलनि सफल, मिलि कैं गोरी श्याम ॥ ३॥४२ ॥
नील पीत पट छोर छबि, उरझे द्रुम की भीर
मुरि सुरझावन दुहुन की, मेरे उरझी बीर ॥ ४॥४३ ॥

फूलनि मिस तिय सौं मिलत, सखी रूप रचि छैल
'नागरिया' के हिय बसौ, फूल रँगीली सैल ॥ ५॥४४ ॥

राग गौरी, तिताल

जमुना कैं कूल कूल, लता रही झूल री
तहाँ द्वै सखी हैं नीले पियरे दुकूल री
गोधूलक बेरहू तैं, ह्वै गई अबेर मैं
देखत ठगी-सी रही, दोऊ तिहिं बेर मैं
बीनत हैं फूल फूल, फलहिं लहत हैं
झमकि झुकावैं झूमि, डारनि गहत हैं
साँवरी औ गोरी छबि, सोहैं अलबेली हैं
सब ही तैं न्यारी न्यारी, डोलत.अकेली हैं
बेसरि अलक माल, अरुझत पात री
ताकी सुरझावनि मै, अरुझी ही जात री
मेरी सौं कपट तजि, खोलि मुख मौन हैं
'नागरिया' मोसौ कहि, सखी वहि कौन हैं ॥ १ ॥ ४८ ॥

श्री राग, तिताल

रंग सरसानैं बरसानैं बन बाग श्यामा
खेलें साँझी साँझ बहु साथनि सिंगारि कैं
नूपुर-निनाद पूरि रह्यो है द्रुमनि माँझ
जहाँ तहाँ लेत लड़कीली कुसुम उतारि कै

---

३. फूलनि = प्रफुल्लता।

४. मुरि = मुड़कर।

५. सैल = सैर सपाटा; आनंदार्थ भ्रमण।

पद ४८ पात = पत्ता।

साँवरी नवेली बाल नीलमनि बेली सी,
अकेली फिरैं वाहाँ जोरी, संग सुकुवारि कैं
डारहि नवावैं मिलि बीनैं फूल, पावैं फल,
'नागरिया' वारैं मन, कौतिक निहारि कैं ।। २ । ४६ ।।

श्री राग, तिताल

सोहैं मुख कमल पैं भौंहैं लट भृंग पाँति,
नैन अलसौहैं कलगा की जनु पखियाँ
नासिका सरू सी, क्यारी अधर दुपैरिया की,
मुसकनि मंद मकरंद सी मै लखियाँ
प्रीत-साँझी-काज कीनी काम-काछी छबि आछी,
और साछी को हैं, ताकी साछी सब सखियाँ
फूली बय-संधि साँझ, राधा रूप बाग माँझ,
डोलैं आज फूल भरी, 'नागर' की अँखियाँ ।। ३ । ५० ।।

राग गौरी, तिताल

दुहुँन की अँखियाँ अँखियन माँझ
अँखियाँ ही साँझी खेलत हैं, अँखियन फूली साँझ
रूप-बगीचनि फिरत फूल भरी, गरबहियाँ दैं अँखियाँ
गउर श्याम अँखियन की उरझनि, उरझी 'नागर' सखियाँ ।। ४ । ५१ ।।

तिताल

रूप लालची लाल ह्वै रूप मलिनियाँ
छबि बिछियनि छनकाय कै चली हैं छलनियाँ
तिहि बिरियाँ डरियाँ लै, भरिया हार की
सँग अलिंद धुनि मंद मंद गुंजार की

---

४९. लड़कीली = प्यार भरी । उतारना = चुन लेना ।

५०. कलगा = पुष्प विशेष । सरू = सरो, एक वृक्षविशेष, जो लंबा और सुंदर आकार का होता है । दुपैरिया = दुपहरिया का लाल लाल फूल; बंधूक सुमन । वय-संधि = बाल्यावस्था एवं युवावस्था का मिलन काल; कैशोरावस्था । फूल भरी = प्रसन्नता से परिपूर्ण ।

५१. आँखों में साँझ फूलना = आँखों क अरुण वर्ण हो जाना ।

पहुँची जाय सुभाय सुभायक हेत मैं
मीनकेत-रस-खेत सु बन संकेत मैं
उत तैं गावत आवत देखी भावती
वृज जुवतिन जूथनि मिलि छबि सरसावती
तरु तरु अंतर सबै रगमगी मानिनी
मनु बादर बादर प्रति दमकत दामिनी
परम प्रवीन नवीन सु फूलन बीनहीं
द्रुम बंसी उरझी जनु कंचन मीन ही
रहि गई कुँवरि इकौंसी श्री वृषभान की
जगमग रही मुख-जोति, दबी द्युति आन की
प्रेम जँजालनि मालिनि लखि सुकुवार कौं
नियरैं ठाढ़ी आनि लिए उपहार कौं
बोली मालिनि बैन मैन अनुकूलियैं
बनदेवी कैं धाम चढ़ैए फूल यैं
लै गई बन अँधियार गउर कौं साँवरी
बैठि अकेले नैननि परसे पाँवरी
पहराई माला मालिनि तिहि काल मैं
उघर्‍याई सब बात करनि चल चाल मैं
कुँवरि सकुचि मुसकाइ दसन अँगुरी धरी
छली छबीलैं छैल रसिक अंकनि भरी
'नागरिया' दोउ मीत अधर आसव पियैं
गउर-श्याम-तन-उरझनि उरझी मो हियैं ॥ ५ । ५२ ॥

तिताल

कुँवरि अलबेली री अति सुन्दर सुकुवारि
श्री राधे के रूप पर वारौं सुरनि नरनि की नारि

---

२२. बिछिया=करधनी। बिरियाँ=वेला, समय, अवसर। अलिंद=भौंरा। सुभाय सुभायक=स्वभाव से ही अच्छा लगाने वाला। हेत=प्रेम, स्नेह। मीनकेत=कामदेव, अनंग। सकेत=मिलने का पहले से निश्चित स्थल, सहेट। भावती=प्रिया, जी को अच्छा लगने वाली। बंसी=मछली फँसाने की कटिया। इकौंसी=अकेली। आन=अन्य। नियरैं=निकट। आनि=आकर उघरयाई=प्रगट हो गई। आसव=शराब।

वारौं सुर नर नारि, निरखि मुख तनक पलक नहिं लागैं
बदन बिमल राकेस-चंद्रिका जगमगाय रही आगैं
सीसफूल श्रीमंत अलक, भुव बंक छबीलैं नैन
नथ की ढुरनि अरुन अधरन पर, बरनत बनैं न बैन
चिबुक चारु, झलक कपोलनि कुंडल रतन सुरंग
उर ऊपर पदकनि की पाँति, कटि छीन, छरहरैं अंग
मनहु लता अनुराग की, पूजत साँझी साँझ
त्यौं उडगन मैं चंद्रमा, त्यौं स्यामाजू सखियन माँझ
स्यामा जू सखियन मांझ छबि भरी, आरती आय उतारैं
सोभा रहि सब देखि तिहि समैं, अपनौ मन धन वारैं
बजि उठैं बीन मृदंग महुवर, गीत महर गावैं
अचंत देवी गहगड माच्यो, तियन पहुप बरसावैं
यह सोभा दुरि देखत हे पिय, धरनि धुकत तिहिं बार
'नागरि' सखी हाथ दै कखियाँ, राखे स्याम सम्हारि ॥ ६ । ५३ ॥

राग पूर्वी इकताल

रहे दोउ बदन निहारि निहारि
फूलन बीनत स्याम सखी उत, इत श्यामा सुकुवारि
लता करनि मे रहि गइ इत, उत सकैं कौन निरवारि
'नागरिया' मिलि नैन दुहुनि के, बड़े ठगनि ठगवारि ॥ ७ । ५४ ॥

आन कवि कृत । इकताल

खेलैं सांझी सांझ प्यारी
गोप कुंवारि साथणि लियां साथे, चाव सौं चतुर सिंगारी
फूल भरी फिरैं फूल लेण, ज्यो फूल रही फुलवारी
रह्यां ठग्या लखि रूप-लालची प्रीतम 'रसिक विहारी' ॥ ८ । ५५ ॥

---

५३. श्रीमंत=(१) स्त्रियों का एक शिरोभूषण। (२) स्त्रियों की माँग। उर=वक्षस्थल। पदकनि=हीरों। छरहरैं=पतले। स्यामा जू=राधा। धुकत=झुकत। कखियाँ=बगल, कक्ष, काँख।

५४. निरवारि=अलग करना, सुलझाना।

५५. साथणि=साथिन। लियाँ=लिए हुए। साथे=साथ में। लेण=लेने को।

राग कामोद इकताल

अरी आज साँझी मैं जमुना कैं कूल, फूल लेत फल पाए
हेरत हेरत सघन द्रुमन मैं, चितवत ही ताहि चायन चित चिकनाए
महा मुदित वृषभान भवन कौं गावत चली बधाए
'नागरिया' साँझी के पूजत, इहि वृन्दावन भए मनोरथ भाए ॥ ६ । ५६ ॥

तिताल

कोऊ गोप किसोरी साँझी पूजन आवैं
साँवरे अंग कँवल-दल-नैननि, सुन्दरता उफनावैं
भान-भवन राधे जू के सँग, मिलि लिलि गीतनि गावैं
कारन कौन कुँवारी 'नागरि' दिसि देखि देखि मुसक्यावैं ॥ १० । ५७ ॥

राग गौरी, तिताल

फूलनि बीनन हौं गई, जहाँ जमुना कूल द्रुमनि की भीर
अरझि गयो अरनी की डरियाँ, तिहिं छिन मेरो अंचर बीर
तब कोउ निकसि अचानक आयो, मालती सघन लता निरवारि
बिनही कहे मेरो पट सरुझावत, इक टक मो दिस रह्यो निहारि
हौं सकुचनि झुकि दबी जात इत, उत वहि नैननि हा हा खात
मन उरझाय बसन सुरझायो, कहा कहौं और लाज की बात
नाम न जान्यो, श्याम अग है, पियरे रँग वाको हुतो दुकूल
अब वहि बन लै चलि 'नागरि' सखी, फिरि साँझी बीननि कौं फूल ॥ ११ । ५८ ॥

तिताल

आजु रंग है साँभी माँझ
भई परम सलौनी साँझ

दोहा—हरी भूमि सौं भूमि कैं, मिले कुसुम झुकि झौर
मिल्यो जु पवन सुगध सौं, मिले लता अरु भौंर ॥ १ । ४५ ॥
पीत जुही कुबलै कुसुम, मिले खेलि झिलि झेलि
मिले बिंब-फल फल भलैं, अरु तमाल सौं बेलि ॥ २ । ४६ ॥
कदली मिली जु अंब सौं, अरु कदम्ब कचनार
मिला-मिली नित ही रहो, इहि बन करत बिहार ॥ ३ । ४७ ॥

---

५६. चायन = प्रेम के कारण ।
५८. अरनी = गनियारी नामक वृक्ष ।

'नागरि' मन भाए भए, चली भवन मिलि बाल
पायो फूलन बीनतैं, रतन अमोलक लाल ॥ ४ । ४८ ॥ १२ । ५६ ॥

तिताल

आई हैं मालिनियाँ कोऊ, फूल लियै रंग रंग
नख सिख लौं अति सोहनी, मानौं मोहनी साँवरैं अंग
चलत ललित गति हंस की, तन ओढ़े झीनो चीर
रूप अचंभो ह्वै रह्यो, वाके चहुँ दिस माची भीर
फूल फूल सौं भेटि किए, जहाँ साँझी रचैं सुकुँवारि
ताहि लाड़िली रीझि कैं, दई मोतिन माल उतारि
बाला माला परसि कैं, भए कंप रोमांचित गात
बिस्मय ह्वै सखियाँ रहीं, लखि कन-अँखियाँ मुसक्यात
क्यौं कंपत बूझ्यो लली, उहि कह्यो जोरि बिबि पानि
तुम महींद्र वृषभान कुँवरि, हौं दीन प्रजा भय मानि
ज्यौं ज्यौं कर प्यारी गहैं, कहैं तू मति मानैं भीत
साँझी चीत नचीत ह्वै, बसि सकै न साँझी चीत
स्वेद सिथिल सियरी भई, वहि रही थहरि थहराय
छुवत छबीली की छाँह कौं, वाको तन पिघल्यो सो जाय
रीझि व्यथा प्रगटन लगी, जब स्यामा स्याम निहारि
निज मन्दर लैं आइ कैं, भरी रंग अँकवारि
'नागरिया' रस रंग रगमगे, दोउ कुसुम सेज कै माँझि
साँझी पूजत पिय मिले, परम सलौनी साँझ ॥ १३॥ ६० ॥

---

५ अथ शरद उत्सव

समय वेणु गीत

राग विलावल तथा धनाश्री तथा सोरठ ताल फिरती । प्रथम चपक, पाछे इकताल

सुनि री सखी सुखदाई
देखि अमल सरद ऋतु आइ

---

५६. झौंर = गुच्छ । कुबलय = कमल । बिंबफल = लाल कुनुरू (अधर के उपमान)।
६०. बिबि = दोनो । पान = पाणि, हाथ । चीत = चित्रित कर । नचीत = निश्चिंत ।
सियरी = शीतल, ठंडी ।

आई सरद, गत पंक भुव भइ, स्वच्छ अम्बु अकास हैं
कुञ्ज कानन अति प्रफुल्लित, छ्ई कुसुम सुवास हैं
ठौर ठौर सरोवरी बिच, अमल कमलनि पुंज री
तहाँ भ्रमत अलिंद माते, करत आतुर गुंज री
सुभग वृन्दावन अवनि, बहैं त्रिविध रोचक पवन हैं
'दास नागर' देखि तिहि ठां, करत मोहन गवन हैं ॥ १ । ६१ ॥

उर मंडित बनमाला
डोलैं गायनि संग गुपाला

संग गायनि कैं गुपाला भेप नव नटवर कियें
मोर पच्छ प्रसून पुञ्ज प्रवाल जूरा सिर दियें
कंज करननि करनिका, तन धात गुंजावलि लसैं
दसन-किरननि-जार को उर हार फैलत जब हसैं
मद-विघूर्णित नैन सोहैं, वंक भौहैं मन हरैं
'दास नागर' श्याम घन लखि, मुरलिका अधरनि धरैं ॥ २ । ६२ ॥

पसु पंछी चहुँ दिसि री
सुनि धुनि गान देह सुधि बिसरी

बिसरी जु सुधि खग मृग चकित चित, मुख न कहुँ कन त्रिन छियैं
धैंनु बरषत नीर नैननि, नाहिं बछरा पय पियैं
थक्यो मन्द समीर सुनि, द्रुम पातहु न पल्लव हलैं
बिथकि जमुना जल रह्यो, रथ भान नहिं आगे चलैं
नभ बिमाननि गिरत सी तिय, पति उछंग निवार दी
'दास नागर' सुनत धुनि, सुर-वधू देह बिसार दी ॥ ३ । ६३ ॥

री तैं कौन पुण्य तप कीन्हौं
पिय को अधर सुधा-रस-लीन्हौं

लीनौं अधर-रस-सुधा बन मैं, अरी बैरन बांसुरी
हम भवन तलफत परी परी, कियो धीरज नासु री
उड़त अंचर, उरज उघरत, बैन-धुनि सुधि हरि लई
कबरि छुटि, भइ सिथिल नीवी, मदन पीड़त निरदई
कह सम्हारि सम्हारि कबहू, कबहु आवत साँवरो
'दास नागर' ध्यान तनमय, भरत अंकनि साँवरो ॥४॥६४॥

टि०—पद ६१, ६२, ६३, ६४ 'पद प्रबोध माला' के क्रमशः २८, २९, ३०, ३१ संख्यक पद हैं।

अथ सरद रास बाँसुरी

राग केदारो

सुनि धुनि बैंन चली हैं वृज जुवतिन की भीर
ज्यों दुंदुभि सुनि सनमुख निकसत समर सुभट रन धीर
प्रेम-खेत बृंदाबन मग रह्यो, छयो घोष मंजीर
'नागरि नागर' मिलत ही मैं, चले काम कटाछनि तीर ॥५॥६५॥

ताल चरचरी

चतुर अह दूतिका बांसुरी स्याम की
नवल वृज वधुनि के आय कानन लगी
दूरि करि लाज कुल कानि सब बाम की
भवन प्रति भवन तैं लैं चली विपन कौं,
भुरकि दइ डारि कैं मंत्र पढ़ि काम की
करिकैं तिय अतन-मई, मिलई नागरि नई,
दई न सुधि रहनि अप-अपनैं सुख धाम की ॥६॥६६॥

---

६ सरद रासोत्सव

या पद की अलापचारी में दैनैं ए दोहा

दोहा—निसि सरदोत्फुल मल्लिका, ककुभ किरन राकेस
गही वेणु हरि निहारि वन, रास रमण आवेस ॥१॥४६॥

पूरन ससि, निसि सरद की, चल बन मलय समीर
होत वेणु रव रास हित, तरनि तनइया तीर ॥२॥५०॥

बंसी धुनि-दूती पठै, बोलि लई बृज-बाल
समर बिजैं आरंभ रस रास करन नँदलाल ॥३॥५१॥

परम प्रेम आरूढ़ रथ, विषम पंथ धुनि बैंन
रास केलि-संग्राम हित, चढ़ी मदन-गढ़ लैंन ॥४॥५२॥

---

६५. मंजीर = नूपुर, घुँघुरू ।
६६. भुरकि दइ = छिड़क दिया । अतनमई = अनंगमयी ।
दोहा १. मल्लिका = चमेली । ककुभ = दिशा । राकेश = पूर्णिमा का चंद्रमा । आवेस = मन का प्रबल वेग ।
२. तरनि तनइया = सूर्य की पुत्री, यमुना ।

विमल जुन्हैया जगमगी, गई बैन धुनि छाय
प्रेम-नदी-तिय रगमगी, वृंदा कानन आय ॥५॥५३॥

सुनत बैन बन तिय चली, मुनि मन भए अधीर
'नागर' लखि रस-रास नभ, भई बिमानन भीर ॥६॥५४॥

राग बिहागरो । इकताल

जुरे करनि कर-कमल तियनि के
मंडल होत निर्त चल अंचल, चंचल कुंडल, हार हियन के
वाय बँध्यो, कल गान बाँसुरी, बिबस सुर-बधू अंक पियन के
अंग अनंगनि परिरंभनि बहो, हाव भाव भौंहैं अँखियन के
प्रिया संग लैं, दुरि गए हरि बन, हेरत सघन बृंद सखियन के
'नागरिया' छबि-सागर बिन मनौ तलफत जूथ मैंन-मछियन के ॥१॥६७॥

इकताल

हरि सँग हुती सो अकेली वहि ठाढ़ी
दामिनि सी देह को प्रकास आस पास देखि
रही द्रुम बेलिनि मैं चित्र की सी काढ़ी
कासि-कासि पिय-पिय कहि टेरत, महा बिरह की बेदन बाढ़ी
"नागरीदास" रास रस बरसाय, हाय,
कित दुरे घनस्याम, दुखित हैं गाढ़ी ॥२॥६८॥

इकताल

बैठे जाय पुलिन मैं रसिक बिहारी
बीच आप बृज-चंद मनोहर, उड-मंडल बृज-नारी
नव निचोल अप-अपने सब मिलि लाय बिछाय दए
तन थिर दामिन से निकसे, पट बदरा उतरि गए
बंक भौंह, नैना रस माते, छुटि अलकैं अलबेली
प्रेम बिबस बूझत पिय कौं तिय, हसि हसि प्रेम पहेली
इक भजते कौं भजत, एक बिन भजते भजई
कहो कुँवर ते कौन आहि, जे इन दोउन कौं तजई
समुझि अर्थ, मुसकाय, नैन भरि, कहत जोरि कर प्यारो
'नागरिया' हित सौं नहिं ऊरन, हौं नित रिनी तिहारो ॥ ३ ॥ ६९ ॥

पद ६७ पियन के=पतियों के। जूथ=यूथ, समूह। मैंन=मदन, अनंग।
मछियन=मछलियों।

ताल चपक तथा तिताल

रास रच्यो नँदलाला
लीनैं संग सकल ब्रज-बाला
अद्भुत मंडल कीनौं
अति कल गान सरस सुर लीनौं
लीनौ सरस सुर राग रंजित बीच मिलि मुरली कढ़ी
हौन लाग्यो नृत्य बहु बिधि, नूपुरनि धुनि नभ चढ़ी
डुलत कुंडल, खुलत बैंनी, झुलत मोतिन माला
धरत पग डगमग बिबस रस, रास रच्यो नँदलाला

चित हाव भावनि लूटै
अभिनय दृग भौंहनि सर छूटै
ललित ग्रींव भुज मेलत
कबहुँक अंकमाल भरि झेलत

झेलत जु भरि-भरि अंक निसँकित मगन प्रेमानंद मैं
चारु चुबन अरु उगारहि धरत तिय मुख-चंद मैं
उड़त अंचल; प्रगटि कुच वर, ग्रंथ कस पट छूटै
बढ्यो रंग सुअंग अंगनि, हाव भावनि लूटैं

पगनि गति कउतक मचैं
कटि मुरि मुरि मध्य लचै
सिथल किंकिनी सोहैं
मुकट लटक मन मोहैं

मोहैं जु मन नट मुकुट लटकनि, मटक गति पग धरन की
भँवर भरहर चहूँ दिस, छबि पीत पट फरहरन की
गिरयो लखि मनमथ मुरछि, लैं भजी रति मुख मधु अँचैं
नचत मनमोहन तृभंगी, पगनि-गति कौतुक मचैं

वृंदाबन सोभा बढ़यो
तापर व्योम बिमाननि सौ मढ़यौ
दुंदुभि देव बजावै
फूलनि अंजुली बहु बरसावैं

बरस जु फूलनि अंजुली बहु, अमर गन कौतुक पगे
बिबस अंकनि ब्रज बधू हिय, निरखि मनमथ सर लगे

ह्वै गए चर थिर, सुथिर चर, सरद पूरन ससि चढ़्यो
'दास नागर' रास औसर बृंदाबन सोभा बढ़्यो ॥४॥७०॥

इकताल

रह्यो रंग खेलत रास रसाल।
तुटि गए हार, छूटि गए अंबर, श्रम डगमगन मराल।
जुवति जूथ जुत धँसे जमुना बिच, मदन मोहन तिहिं काल।
क्रीडत जनु करनी सँग लीनै, मत्त द्विरद नँदलाल।
गोरे अंग महा छबि पावत, भीजे बार बिसाल।
मानौ सीतल चंदन पन्नगिनि सौ लगी लपटि अहि-माल।
छबि सौं छीटनि खेल मचावत, प्रेम बिबस ब्रज-बाल।
जनु उत्सव कालिंदी-ग्रह, उछरत मुक्तनि के जाल।
बाहु-सुंड अवगाहि नीर, बलबीर चले गज-चाल।
'नागरीदास' ब्रह्म रात्री रमि, आए गेह गुपाल ॥५॥७५॥

राग केदारो ताल जात्रा

आजु सखि रसिक-सिरमौर नाचत भलैं
जुवति जन मंडलाकार बृंदा बिपुन,
बीच घनस्याम पिय दामिनी झलमलैं
बीन रसलीन बजि, रुणित कल किंकिनी,
मैंन के मंत्र सी जंत्र धुनि धुनि रलैं
भ्रमत तन चपल मिलि, परत नहिं दृष्टि जब,
दरस हित परस मन नैंन दोउ कलमलै
मुकट सिर झलक, अरु रलक हारावली,
झुलत बिबि अलक लखि, परत नाहिन कलैं
'नागरीदास' भुज अंस धरि दोउ चलत,
कोटि कंदर्प तब चरनि तर दलमलै ॥६॥७२॥

टि०—पद ७०,७१ पद प्रबोध माला के ३६, ३७ संख्यक पद हैं।

(७२)—यह पद मुक्तावली का ३८३ वाँ पद है। वहाँ प्रथम चरण इस प्रकार है :—'आजु सखि रसिकनी रसिक निर्तत भलैं।'

७२. रुणित = क्वणित, ध्वनित। रलैं = प्रवाहित होती है। कलमलैं = उद्विग्न होते हैं। रलक = हिलना। बिबि = दो। कलै = कल, चैन। अंस = कंधा।

राग इमन इकताल

वृंदाबन सरद रैंन राका अभिराम
रची हैं रुचिर रसिक केलि राधा सँग भाम
बैन, बीन, बलय मिले, किंकिनी, मृदंग
नूपुरादि गान घोष छायो हैं सुधंग
अंस-अंस बाहु बँध्यो मंडला अखंड
गोपिन बिच-बिच गोपाल, धरै सिखि सिखंड
निर्त होत, अंचल चल, लसत पहुप रैंन
ज्यौं धुजा समूह फरहरात मैंन सैंन
मनहु पवन प्रेरक मिलि, गडर स्याम संग
मेघ चक्र चंचला बिलास रास रग
बास बस अधीर सग-संग भौंर भीर
झुलत हार खुलत बार, नहिं सम्हार चीर
गिरत कुसम कबरिनि तैं, बिबस रसाबेस
लटपटाय लगत कंठ, पुलक तन सुदेस
नीबी कुच परस पान चुंबन उगार
हाव भाव लहर बढ़्यो सिंधु रस अपार
मुरछ परेउ मदन, बजी दुंदुभी अकास
पहुप वृष्टि होन लगी जहँ बिलास रास
विथकित लखि रही रैंन, होत हैं न भोर
'नागर' नट निरखि भयो चंद्रमा चकोर ॥७॥७३॥

७ निकुंज रासोत्सव

या पद की अलापचारी में देने ए दोहा

कबहुक प्रिय मंडल कढ़त, अति गति बढ़त सुधंग
हरि के मन लोचन फिरत, उरझे पायन संग ॥ १ ॥ ५५ ॥

लाल लई उर लाय लखि, रीझे गति सरसांन
मंडल मै सुरझैं नहीं, अंकमाल उरझांन ॥२॥५६॥

---

७३. भाम = मानिनी, रमणी। सुधंग = सुढंग, सुघड़, सुंदर। सिखि = सिर पर। सिखंड = मोर पंख। सैन = सेना। कबरी = जूड़ा।

उत उरझी कुंडल अलक, इत बेसर बनमाल
गउर स्याम उरझे दोऊ, मडल रास रसाल ।।३।।५७।।

गर बहियाँ गति लेत मिलि, श्रम-बस सिथिलित पाय
डारे मन लै सबनि के, डगमग डगनि डुलाय ।।४।।५८।।

लेत बलैया रीझि दोउ, दोउ पोछत श्रम-वारि
नचत सनी अति रग सो, बनी मदन मनुहारि ।।५।।५६।।

उतै झुक्यौहैं नव मुकुट, इतैं चंद्रिका चार
भए रास-रस मगन मन, सरके सकल सिंगार ।।६।।६० ।

खूटि खूटि अंचर गए, छूटि छूटि गए बार
श्रमित रास-रस रंग मैं, टूटि टूटि गए हार ।।७।।६१।।

'नागरिया' कहँ लगि कहैं, कवि मति मंद प्रकास
तिनके भौंह-विलास मैं, कोरि कोरि ह्वै रास ।।८।।६२।।

पद, राग ईमन। तिताल

थेई तथेई थेई थेई थेई थेई थेई,
उघटत रास रसिक मन मोहन, रंग भरी निर्तत हैं प्यारी
मुरज मृदग टकोर मिलावत, गावत सखी सुघर दैं तारी
ललित अग भुव-भंग चितैं, पिय बिबस भए बोलत 'बलिहारी'
जगमग रही रास-मंडल मैं, 'नागरिया' मुख चन्द उज्यारी ।।१।७४।।

राग छाया नट तिताल

बोलत थेई तथेई थेई रंग भरे निर्तत हैं पिय प्यारी
बजवत बीन प्रवीन लीन धुनि, गुन-सलिता ललिता री
अरझी अलक छबि सौ बेसरि मैं, अरझी पीत पट सारी
'नागरि नागर' रीझि परसपर कहत 'वार्यो', 'हौ वारी' ।।२।७५।।

राग अडाणौं चौताल

रास मण्डल मधि छबि छके स्यामा स्याम,
लै लैं गति लपटि लपटि जात भरे रंग

दोहा ६—चार=चारु।
७. खूटि-खूटि=खुल खुल।

गान, धुनि नूपुर रह्यो है रंग पूरि तैसौं,
मधुर मधुर बीना बाजत मृदंग
चंद्रिका सिथिल इत मुकुट झुकौहौं उत,
ह्वै गए बिबस रस, सुधि न रही है अंग
'नागरीदास' गति नैंननि की भई पंग
मुरछि गिरयो हैं रति सहित अनंग ।।३।।७६।।

तिताल

दीनैं गरबाहीं, गति लेत डोलैं मंडल मे,
बोलैं ततथेई-थेई-मुख रूप ललकैं
ह्वै गए बिबस मन, श्रमित भए री तन
खिसैं फूल सीस तैं, सिथिल भईं अलकैं
इत किंकिनी छूटी, उत बनमाल टूटी
लोल हार, कुंडल कपोल झाईं झलकैं
'नागरीदास' राधा मोहन नचत देखि
भूली सखी गान तान, लागत न पलकैं ।।४।।७७।।

चौताल

देखि श्यामा जू श्रमति भईं रास मैं
बहु निर्त भेद खेद, सरके सिँगार हार, सिथिल कुसुम केस-पास मैं
रसिक-रवन निज कर ते पवन करैं, हरैं हरैं ल्याए निवास मैं
'नागरिया' सोए कुंज कँवलनि की सैंनी पर, बैंनी बिथुरैंनी हैं विलास मैं ।।५।।७८।।

तिताल

आजु सखी प्यारी जू स्यामहिं सिखावहीं
लैं लै गति भेदनि बतावहीं
चतुर सिरोमनि जानि अजान भए, डुलत सुलप सरसावहीं
तालिम कौं देत स्यामा, नाचत मैं रंग बढ़्यो, सखी सुख निरखि सिहावहीं
'नागरि' कटाछनि की लगत चमोटी चोट, त्यों त्यों पिय गतिहिं भुलावहीं ।।६।।७९।।

---

(७९) डुलत = ललित (पद मुक्तावली ६०३)

७९. सुलप = सुंदर आलाप । चमोटी = पैना; चमड़े का कोड़ा ।

राग केदारो, ताल चर्चरी

सरस सुघर नव किसोर गति सुधंग नाचैं
नूपुरादि मिलि मृदंग, बीन लीन अनुपम धुनि,
सहचरि कल गान रंग, चहचरि हु मार्चैं
कहि न परत भुव विधान, नव घन तन लहलहान,
बिलुलित बनमाल, भृंग लपटत सँग आवैं
अभिनय-जुत उरप तिरप, धरत चरन चपल चारु,
मंजुल झुकि मुकुट सीस, गति मति बिसरावैं
दांवन बिच पवन परसि, फैलि फैलि परत फिरत,
गति तरंग सागर बढ़ि, रंग मांझ बोरैं
'नागरिया' निरखि बदन, श्रम-जल-कन झलमलात,
प्रेम बिबस बाल, नील अंचर मुख ढोरैं ॥७॥८०॥

ताल चर्चरी

रसिक रस रास नवरंग निर्तत लला
संग गउरंग गरबाँह छबि देत प्रिय,
सजल घन मांझ मनु चमकि रहि चंचला
बलय कंकन कुणित, छीन कटि किंकिनी,
पगनि छिगुनीनि के छोर छनकत छला
'नागरीदास' दोउ निर्त श्रम डगमगे,
रगमगे बार खुलि, उरनि चलि अचला ॥८॥८१॥

इकताल

रास रंग वर सुधंग निर्तत हैं प्यारी
ततरंग धुमकटि तकथेई तथेई थेई थेई थेई थेई,
उघटत जुवती समूह, बाजत सम तारी
बीन परन आवज मिलि, गावत ललिता प्रवीन,
छीन सु कटि भंग सी है, भंग भुव अन्यारी,

---

(८०) सँग = गति (मु) ; परत फिरत = जात फिरत (मु) ।

८०. चहचरि = चहककर, प्रसन्न होकर । भुव = भ्रू, भौंह । उरप तिरप = नृत्य के अंग विशेष ।

८१. बलय = चूड़ी । छिगुनी = कानी उँगली, कनिष्ठका । छला = छल्ला, मुँदरी ।

८२. परन = वाद्य विशेष । आवज = तासा ।

'नागरि' छबि लखि रसाल, इक टक पिय द्दग बिसाल,
बरसत मनि-माल, लाल बोलत 'बलिहारी' ॥९॥८२॥

राग सोरठ, ताल चर्चरी

बोलत तत्थेइ थेई रच्यो रस रास सरद रैंन
निरखत भयो चंद चकित, थकित रह्यो गैंन
गान तान मान परनि मिलि मृदंग बीन
उरप तिरप अलग लाग लचकत कटि छीन
नचत रवनी रवन, मदन मथत अंग अंग
चलि कटाछ भ्रकुटि भंग रंग रंग रंग
प्रेम मगन भरत अक, लंक लगि निसंक
छाड़त नहिं लालहिं तिहि कालहि निधि रक
उर बिहार तुटत हार, छुटत बार बास
बिबस रस बिलास, 'दास नागर' सुख रास ॥१०॥८३॥

तिताल

दोउ मिलि मडल निर्तत डोलैं
इक दिस कुंडल लोल, एक दिस लगे कपोल कपोलैं
गरबहियाँ, तन अरझे, अरझे पियरे नील निचोलैं
'नागरिया' गति मैं गति बदलैं, बदलैं बदन तमोलैं ॥११॥८४॥

राग काफी तिताल

हो प्यारी जू मोहि दीजै यह दीजै
हा हा वारी, गाय गाय कैं गति लीजै, अब तो गति लीजै
दयो बिछाय पीय पीतांबर, सुलप कीजै यापैं सुलप कीजै
बढ़यो निर्त, 'नागर' रस भीजत, निस भीजै त्यौ त्यौ निस भीजै ॥१३॥८५॥

ताल चर्चरी

करत सुख संग नव रंग ललना ललन
स्याम जुग भुजनि बिच गउर तन भामिनी,
सजल घन माझ मनौ दामिनी झलमलन

---

८३. गैंन=गमन, जाना ।
८४. निचोल=वस्त्र; आच्छादन ।

छुटत बर बार अरु तुटत हारावली,
खोलि ही बिमल बिधु बदन घूँघट बलन
नैन हँसि हँसि मिलत, रस छकी दृष्टि सो,
तैसियै छबि भरी बंक भृकुटी चलन
महकि रही मालती कुंज कुसुमित महल,
टहल ललितादि, तहाँ भूलि लागत पल न
'नागरीदास' सुख रास लीला ललित,
कोर कोरकनि मद मदन दल दलमलन ॥१३॥८६॥

ताल चर्चरी

कुज-रस-केलि कवनीय दंपति करत
परस्पर हित बिबस, रूप मादिक छके,
दूर करि बसन उर, सुदृढ़ अंकनि भरत
पियत मधु अधर, सुख-सिंधु मैं मगन मन,
निकट तिहिं समै चख चार खजन लरत
कबहुँ भ्रुव भंग जुत, 'सी' करत रंग सौं,
अंग प्रति अंग पिय परस दैं मन हरत
बिथुरे बिच कचन, मुख गउर निकसत अमित,
चंद तैं सघन मनु स्याम बादर टरत
सुरत सुख स्वेद तै महकि केसरि चली
बास लहि 'नागरीदास' धीर न धरत ॥१४॥८७॥

इकताल

नद नंदन चद्रमा, बल्लव कुल कुमुद वृंद
जलद सघन कुंज चारु, श्रवत सुधा बेणु गान,
बिपुन बिपुन प्रति प्रकास, अनुपम छबि दुति अमंद
अद्भुत स्वयं रूप दिव्य, बिमल जोन्ह प्रवर्त रास,
केलि कला कोविद आनंद कंद

८६. बलन = बल पूर्वक ।
८७. कवनीय = कमनीय, सुंदर । भ्रुव = भ्रू, भौंह ।
८८. बल्लव = वल्लभ, प्रिय । प्रवर्त = प्रवृत्त । पस्यत = पश्यति, देखता है ।

'नागर' ब्रजपति-कुमार, पस्यत मुख संबरारि,
बिस्मय जुत नम्र ग्रीव चरन कमल बंद वंद ।।१५।।८८।।

तिताल

अरी प्यारी राधा गति लेत अलबेलीय सुजान
रंग भरी भौंहै मन मोहैं, चितवनि अलबेली, अलबेली मुसक्यान
बदन-चद आनंद सु ललकैं, अलकैं अलबेली, अलबेली बतरान
कमल-नैन 'नागर' पिय मोहे, रास मै अलबेली अलबेली लै लै तान ।।१६।।८६॥

राग

क्रीड़त रसिक रास रस रंगे
प्रफुलित विपुन, बहत मलयानिल, उदयति ससि सर्वांगे
सरद-बिमल-राका-निसि-सुख कृत कलरव वेणु तृभंगे
रासारभ व्योम धुनि पूरत महुवर मुरज मृदंगे
गउर स्याम भुज ग्रीव विरचि पद संगीत सुधगे
अंदोलित अलकावलि कुंडल गुनि मुक्तावलि भगे
रसानंद आवेस बिवस पट, नीवी सिथिल सुअंगे
रूढ़ बिमान अमर प्रेमातुर, मूर्छित अवनि अनंगे
श्री बृंदावन राधा मोहन केलि कलप बहु संगे
'नागरिया' गोलोक अंडित, कथत कथा सुक भृंगे ।।१७।९०॥

ख
राग केदारो

रास मंडल मधि छबि-छके स्यामा-स्याम,
लै लैं गति लपटि लपटि जात भरे रग
गान धुनि नूपुर रह्यो है रंग पूरि तैसौ,
मधुर मधुर बीना बाजत मृदग

संबरारि = शंबर नामक दैत्य के मारनेवाले प्रद्युम्न जो कि कामदेव के अवतार कहे जाते है ; कामदेव । वंद वंद = वंदना करते हुए ।

८६. ललकना = प्रेम से भरना ।

९० उदयति = उदित हो रहा है । सर्वांगे = संपूर्ण रूप से । कृत = किया । सुधंगे = सुंदर । रूढ़ [illegible] ढ़, सवार ।

चंद्रिका सिथिल इत, मुकुट झुकौहौं उत,
हवै गए विवस रस, सुधि न रही है अंग
'नागरीदास' गति नैननि की भई पंग
मुरछि गिरयो है रति सहित अनंग ॥१८॥६१॥

इकताल

अरी रास मै रंग भरी नचत सरस स्यामा प्यारी
चितवत चक्रित रहि गई चपला, मींड़त हाथ विचारी
गान सुनत खग मृग मन मोहे, लज्जित भईं कोकिला नारी
'नागरीदास' चकोर साँवरो, देखत इक टक वदन-चंद उजियारी ॥१६॥६२॥

तिताल

सरद-निस रास-रस सिंधु बढ़यो, अनूंपम उपजत तान-तरंग
सुघट संगीत सुधंग सुलफ गति, होत दुहुनि मैं हाव भाव भुव-भंग
मधे मंडल श्री राधा मोहन, लखि मुरछित रति अवनि अनंग
'नागरीदास' अकास चंद्र-रथ, चलत चक्र-गति पंग । २०।६३॥

चर्चरी

चली सिंगार सजि सहज अभिरामिनी
हार अरु वार कैं भार लचकत लंक,
डगनि डिगुलात आनंद भरि भामिनी
सुनत झंकार निज दाबि रसना दसन,
सकुचि फिर धरत पग मद गज-गामिनी
उरसि अंचल उड़त, सरस परसत पवन,
रवन पैं गवन विच खिलिय मधु जामिनी
कुंज घन द्रुमन की पाँति तर जाति छिपि
छाँह छाँड़त नहीं चतुर-मनि-स्वामिनी
'नागरीदास' सुख रासि माधव मिली
अंग प्रति अग छवि मनहुँ घन दामिनी ॥२१॥६४॥

—*—

६३. सुघट = सुघर, सुंदर । सुधंग = सुढंग । सुलफ = सुलप, सुंदर आलाप । चक्र= पहिया ।

६४. डिगुलात = डगमगाती है ।

८ गोवर्द्धनोत्सव

या पद की अलापचारी मैं दैने ए दोहा

दोहा—प्यारी ढिग पिय रस पगे, गिर कर धरैं तृभंग
रंग भरे के संग मैं, त्रिपत माँझहू रंग ॥१।६३॥

जे बसी के भार सौं, झुके जात सुकुवार
तिन प्रिय व्रज जन के लियैं, कर पर धरयो पहार ॥२।६४॥

गये तिमिर ऊपर जहाँ, बरसत है घन जोर
गिर तर चंद उदैं भयो, भामिनि भई चकोर ॥३।६५॥

'नागरि' सो ललिता कहत, सब व्रज गिर की छाँह
तुम चितवत पिय ओर उत, त्यौं त्यौ कपै बाँह ॥४।६६॥

राग अड़ानो । इकताल

हमारो गोपाल लाल, बल्लभ-कुल-तिलक-भाल,
बृज जन सुखदाई कुँवर, साँवर तन रूप जाल
इन्द्र कोपि मेघमाल, भीजत लखि गोपी ग्वाल
राखि लीनौ गिरि कर धर छत्र छाँह भुज-मृनाल
सात द्यौत गोवर्द्धन तर, रूप उत्सव भीर बाल,
मनु चकोर मडली मधि सरद-चंद नंद-लाल
'नागरीदास' नग निवास, इत कुतूहल बढ्यो रंग,
मघवा उत मान भंग, ह्वै रह्यो सभै रसाल ॥१।६५॥

चौताल

देखि कैसैं धौं छबीलो ठाढ़ो सु ढार सौ
एक कर गिरि धरैं, एक कर कटि तट, नाचत ज्यौ नटवा सम्हार सौ
गोबरधन तरैं चदमुख कैं उजारे माँझ, दीठ न टरत इक तार सौ
'नागरिया' सबकी भई है इक ठोरी आँखै, याही तै तृभंग, भार सौ ॥२।६६॥

---

(६५) भीजत=पीवत (मु)।

दोहा (१) रंग भरे=प्रेम भरे, प्रिया या प्रिय। रंग=आनंद, हर्ष।

पद ६५ नग=पर्वत। मघवा=इंद्र। रसाल=मधुर, सुंदर, सुखद।

६६. ठोरी=जगह। इकठोरी=एकत्र।

ताल

कुँवरि किसोरी कहूँ दरसी कुँवर कान्ह
ता छिन तैं मिलिबे की मति यह ठानी है
गोपन की मति फेरी, मघवा को बल मेटी
बरख्यौ पुरंद्र तब प्रलै पौंन पानी है
छुटि गई सहजै बिपत मांझ लोक-लाज
राखी गिरि धरि नीरैं राधा रस सानी हैं
'नागर' विषम विष सींची हित-बेली ऐसै
लगन लगे की हेली अकह कहानी है ॥२।६७॥

ताल

जानैं री बलैया, कित बरसै प्रबल पानी
कित परै ओला, कित मेघमाला अ-नीकी
पायौ प्रान पीतम निहारैं छवि गिरि धरैं,
चंदहि चकोरी जिमि नेह चितवनी की
नीरी मुख बीरी देत, लेत रूप नैन सुधा,
पगि रहे बातनि परम हित सनी की
'नागर' दिन सात रैंन, चैन मै न जाने जात,
घनी घन बरसा मैं, बनी बना बनी की ॥४॥६८॥

राग

मत्त मोर चंद्रिका रतन पेच पागिया पै
सुन्दर सुमन गुच्छ सोभा नव भाल की
घूर्नित नयन, बंक भुव, मुख चंद हास
परसत पौंन जुग अलक सचाल की
ठाढ़ो ह्वै त्रिभंगनि सौं, गिरिराज कर धरैं,
'नागर' झुलनि झुकि सोभा बनमाल की

टि० ६७, ६८, ६६ संख्यक कवित्त 'गोवर्द्धन धारन के कवित्त' ४, १, २, हैं।

६७. दरसी = देखी। पुरंद्र = पुरंदर, इंद्र, मघवा। नीरैं = निकट। हित = प्रेम। बेली = लता। हेली = सखी। अकह = अकथ।

६८. ओला = उपल (वृष्टि)। अ नीकी = बुरी; जो नीकी (भली) न हो। नीरी = निकट। बीरी – पान का बीडा। बनी = बन आई; काम सिद्ध हुआ। बना = दूलह। बनी = दुलहीन

होत मद भंग मनमथ राज सुरराज
देखि सखी देखि आजु छवि नंदलाल की ॥५॥९९॥

राग

सजनी निरखि नंद कुमार
धरैं गिर कर बढ़ी छबि, लखि मदन बहो बलिहार
ललित अंग त्रिभंग, कटि-तट कनक किंकिनि जाल
बंक भुव दृग अलक परसत, चरन परसत माल
उदित बिच बृज-चंद पूरन, तिमर मेट्यो घोर
तहां गोपी-गन तरइया, भान-कुँवरि चकोर
उहाँ बाहिर इंद्र बरसत, प्रबल घन लियै संग
'दास नागर' गोबर्द्धन तर, इहां बरसत रंग ॥६॥१००॥

ताल चर्चरी

जैति गिरिराज कृत छत्र बृजराज सुत,
सहज सुरराज-गति-गर्व-हारी
वर्य हरिदास जन घोष सुख रास हितु,
सर्वदा हरित, हुल्लास कारी
सकल रस बर्द्धनं, देव गोबर्द्धनं,
प्रणत इंद्रादि सुरलोकचारी
बिपुन मधि नायकं, भूमि छबि भायकं,
पायकं नील मणि पीत प्यारी
परम प्रिय हेत संकेत सुख कंदरा,
तहाँ निस दिवस बिहरत बिहारी
'नागरीदास' लघु बुद्धि बरनैं कहा,
उतहि नग प्रगट जग महिमा भारी ॥७॥१०१॥

राग सारंग, तिताल

कैसैं रही देखि वृषभान की किसोरी, नैननि पल न लगावैं
वेऊ कर गिरि धरे, सबनि की ओर चितैं, फिर दृग इत ठहरावैं

(१००) 'पद प्रबोध माला' का ३५ वाँ पद है।

९९. घूर्नित = घूमते हुए; विलुलित। सचाल = चंचल।

१०१ कृत = किया। वर्य = श्रेष्ठ। हुल्लास = उल्लास, आनंद। प्रणत = नत। चारी= विचरण करने वाले। भायकं = सुहावना। पायकं = सेवक।

दुहुनि कैं दुहूँ ओर स्वेद रोम कंप होत, चहूँ ओर भार पैं मरम कौंन पावैं
'नागरीदास' उत इंद्र कोपि बरसत, इत गिरिधारी प्यारी रंग बरसावैं। ८॥१०२॥

रागटोडी

गोवर्द्धन धारी नाम कुँवर को, अबही तै हम लीनो
सात दिवस गिरिवर कर राख्यो, इंद्र-मान भंग कीनो
भले खावो, चोरि दधि वृज मे, भलैं दान दधि छीनों
'नागरिया' घर घर को माखन, आजु सुफल करि दीनों ॥९॥१०३॥

---

९ दीप-मालिकोत्सव

या पद की अलापचारी मैं देने ए दोहा

दोहा—और ठौर दीपावली, धरैं दिवारी होत
सदा दिवारी स्याम कैं, प्यारी जगमग जोत ॥१॥६७॥
दीप-माल स्यामा सहज, बिहसि जबै बतरात
हसत लसत ऐसे जनूं, फूलझरी छुटि जात ॥२॥६८॥
दीप-माल प्रिय हार उर, लसत सु मुक्ता आब
पिय चख लखि चखचौंध है छुटत मनौ महताब ॥३॥६९॥
दीप-माल नव नागरी, नव नागर सुख रास
उर मैं बसो हिय भवन ए, नित्य 'नागरीदास' ॥४॥७०॥

राग इमन तिताल

कुहू कच, चूनरी सितारेदार सोई नभ,
अंग आभा सहज प्रकास-पुंज धारी हैं
मनि गन भूषन सु दीपक जगी हैं जोति,
मोतिन की आब महताब उनहारी है
फूल झरी हास मैं निवास महा मोहनी को,
कुंजनि के पुज चखचौंध बिसतारी हैं
और ठौर दीपन की दुति तैं दिवारी होत,
'नागर' विहारी कैं दिवारी नित प्यारी हैं ॥१॥१०४॥

---

१०२. नग = पर्वत।

दोहा—३ आब = कांति। महताब = (१) चाँदनी (२) महताबी, नली के आकार की वह आतिशबाजी जिससे केवल रोशनी होती है।

१०४—कुहू = अमावस्या की रात्रि। कच = बाल, केश। सितारेदार = सलमा सितारे से टंकी हुई। उनहारी = सदृश।

इकताल

धरि दै दीप, सँवारै जिन बाती
दीपनि की दुति फीकी लगत है, तुव मुख-चद जोति सरसाती
निकसि आव दीपक मडल तै, दीप मालिका तुही सुहाती
'नागरीदास' करी न्यारी प्रिय, लाइ लई उर मोहन घाती ।।२।।१०५।।

कवित्त

सुन्दर सुघर स्याम राधा ठकुरायन जू,
जोरी जगभूषन सु आनँद अगमगी
तारकसी बसन जवाहिर की जेब लसी,
बैठे कुरसी पै प्रीत नौतन सगमगी
जरबफ्ती समियानैं, समैदान किस्त सोज,
'नागर' अगर धूमि धूंधरि रगमगी
दिपैं दीप-माल छबि, छूटैं अग्नि जब्र जाल,
अजब्र जलूस जोति जीनत जगमगी ॥३॥१०६॥

सवैया

जसुदा के फिरैं मुकतान की बेलि सी 'नागरि' राधे सिंगार करैं
बर बेनी के भार औ हारनि के, डग पाइन की डिगुलात धरैं
अति आनन जोति-मई अँगना भयो, रूप कथा कहि को उचरै
जित जाय सँवारत बाती बधू, तित दीपन की दुति फीकी परैं ॥४॥१०७॥

सवैया

नव कुंज कै चौक, दिवारी की राति, सु प्यारी जहाँ अति सोभा सची
जरतारी की सारी औ अंग जवाहिर, सीस मुकेस की खौर रची

---

१०५ सरसाती = सुहाती। घाती = अपने दाँव में लगा रहने वाला; मौका ढूँढ़ने वाला।

१०६. अगमगी = आपूर्ण। तारकसी = स्वर्ण-तार-स्यूत; जेब = शोभा। नौतन = नूतन। सगमगी = सगबगी, परिपूर्ण। जरबफ्ती = जरबफ्त के बने हुए। जरबफ्त वह रेशमी कपडा है जिसमे जरी या कलाबत्तू के बेल बूटे बने हों। समियानै = शामियाना, तंबू, वितान। समैदान किस्त सोज = दीपाधार प्रकाश कर रहा है। धूँधरि = धुँधला। रगमगी = आनंद में मग्न। जलूस = शोभा। जीनत = ज़ीनत, छवि।

१०७. डिगुलात = डगमगाते हुए। अँगना = (१) अंगना, रमणी (२) आंगन में।

इहि बानक 'नागरि' संग सखी लखि, लालन की मनसा ललची
सब पांति ह्वै छोड़त फूलझरी, तहॉ हौज पैं रूप की मौज मची ॥५॥१०८॥

कवित्त

जहॉ तहॉ दीपन की दीपत दिपत दूनी
ज्यो जरी सजीवनि के पौधा ले लगाए हैं
धौं देखि दंपति की संपति बिहार चार
इन्द्र पारिजात के पहुप बरसाए हैं
कैधौं पुखरागनि के 'नागर' परे हैं ओला
कैधौं अंग अवनि सु नैन सरसाए हैं
कैधौ नभ मडल ते वृंदावन-चंद जू पैं
ह्वै कैं पांति पांतिनि नछत्र जुरि आए हैं ॥६॥१०९॥

या पद की अलापचारी मै दैने ए दोहा—

दोहा—प्यारी-पिय सखियन सहित, चौपरि खेलत बैठ
मनो मदन पुर चौहटै, लगी रूप की पैंठ ॥१॥७२॥

छला झनक, चुरियॉ झनक, पासे ठनकत संग
बजवत गुनी अनंग मनु, जल-तरग जुत-रंग ॥२॥७२॥

स्याम सारि गोरी चलत, चॉपि चहुटियनि चार
मनहु कॅवल के अग्र है, आवत भृंग कुमार ॥३॥७३॥

जरद नरद घन स्याम पिय, द्वै ऑगुरिन गहि लेत
मनु कोयल की चंचु मै, पीत अब छबि देत ॥४॥७४॥

---

१०८. सची = सजी। जरतारी = स्वर्ण-तार-जटित। मुकेस = मुक्कैश (अरबी;) जरी का बना हुआ एक प्रकार का कपड़ा। खौर = स्त्रियों का एक शिरोभूषण। बानक = वेश; सज धज। मौज = लहर, तरंग, मस्ती, बहार।

१०९. दिपत = दीप्ति, आभा। जरी = जड़ी; बूटी। चार = चारु। पुखराग = (संस्कृत पुष्पराग) पुखराज, एक प्रकार का पीला रत्न। ओला = उपल वृष्टि।

दोहा—१ पैंठ = बाजार।

२. ठनकत = बज रहे हैं, ठन ठन की ध्वनि कर रहे हैं। जुत रंग = रंग (आनंद) के सहित।

३. सारि = गोटी। चॉपि = दबाकर। चहुंटियनि = चुटकी।

४. जरद = जर्द, पीत। नरद = चौसर खेलने की गोटी। चंचु = चोंच।

'नागरि' पासे परनि की, ईंह उपमा दरसानि
हात-रूप-सर तें मनो, लहरें निकसत जानि ।।५।।७५।।

रगमग रहि चौपरि चहुल, प्रीतम रहे निहारि
दीपक ढिग जगिमगि रही, लड़कीली सुकुवारि ।।६।।७६।।

नथ लटकनि, कुंडल हलनि, हारनि झुलनि निहारि
जब झुकि पासे डारहीं, लड़कीली सुकुवारि ।।७।।७७।।

रूप लोभ पक्के पिया, कच्चे होत हैं सार
त्यौं त्यौं चितवत सतर ह्वै, लड़कीली सुकुवारि ।।८।।७८।।

बचन निरादर खेल में, लालहिं लगत सु प्यार
चलि रुगटी हसि कहत यो, लड़कीली सुकुवारि ।।९।।७९।।

समझि दाव पिय चूकि कैं, सारहि चलत सम्हारि
पकरि पिछौंहौं देत करि, लडकीली सुकुवारि ।।१०।।८०।।

बेसरि, बंसी पीत-पट, हार दए पिय हारि
मनहू लीनो जीति कैं, लड़कीली सुकुवारि ।।११।।८१।।
लाल चले जुग जोरि के, नील पीत रँग सारि
समुझि सकुचि हँसि झुकि रही, लड़कीली सुकुवारि ।।१२।।८२।।
बाजी-बाजी उठि चली, बाजी लगनि बिचारि
हिय बाजी 'नागरि' मिली, लड़कीली सुकुवारि ।।१३।।८३।।

आन कवि कृत तिताल

हो रँगीली बाजी लागि रही छै नैणां मैं
जांणी काम कटाछां ही का देखि दाव दैणां मैं
कांपे अंग, अनंग रंग, सुरभंग हुवो बैणां मैं
'रसिक बिहारी' मन फूल बढ़ी, हुई हार-जीत सैंणा मैं ।।७।।११०।।

---

५. हात = हाथ ।
६. चहुल = चुहल, चकल्लास । लाड़कीली = प्रिय; प्यार भरी ।
८. कच्चे होत है सार = गलत गोटें चला देते है । सतर = क्रुद्ध ।
९. रुगटी = खेल में बेईमानी या कपटाचरण ।
पद ११० — छै = है । नैणां = नेत्रों । जाणी = जानी । दैणां = देना । बैणां = वचन, वाणी । सैणां = सैन, कटाक्ष, चितवन ।

१० श्री गुसांई जी को उत्सव

या पद की ०लापचारी मे देने ए दोहा

दोहा— परम पुष्टि-रस-जल अमित, उर्मी प्रेमावेस
'नागर' प्रगटि अनद निधि, वल्लभ-सुत बिटलेस ।।१।।८४।।

वलभाचारज कलपतरु, फल लाग्यो बिठलेस
या फल को रस रूप है, गोकुलनाथ व्रजेस ।।२।।८५।।

धन वल्लभ, बिठलेस धन, धन्य सात सुत बंस
भव निस्तारन हित प्रगटि, 'नागर' जक्त प्रसस ।।३।।८६।।

राग

श्री बल्लभाचारिज कुमार, कुमद कुल निसेस
भक्त जन प्रसंसित श्रीमत बिठलेस
विष्णु स्वामि संप्रदाय चूड़ामणि चार
'नागर' प्रणमाम्यहं अंघ्रि कल्हार ।।१।।११०।।

चर्चरी, यथा समै राग

वेई गाय गोप वृंद गोकुल मधि सतत सुख,
सपदानि घोष मोष पगनि पेलि डारी

दोहा (१) पुष्टि = बल्लभाचार्य प्रतिपादित पुष्टि मार्ग, भगवान की कृपा, अनुग्रह। उर्मी = ऊर्मि, लहर। प्रगटि = प्रगट किया। बल्लभ = महाप्रभु बल्लभाचार्य। बिठलेस = बल्लभाचार्य के द्वितीय पुत्र गोसाईं विट्ठलनाथ।

२. गोकुलनाथ = बल्लभाचार्य के पौत्र एवं बिट्ठलनाथ के सात पुत्रों में से एक, वार्ता साहित्य के मूल कर्ता।

३. जक्त = जगत, संसार।

पद ११०—निसेस = चंद्र। विष्णु स्वामी = बल्लभ संप्रदाय, विष्णु स्वामी की परंपरा मे है; उसीकी एक शाखा है। यह चार प्रारंभिक वैष्णव आचार्यों मे से है। वे संप्रदाय और आचार्य ये है :—

१. श्री संप्रदाय = श्रीरामानुजाचार्य।
२. शिवसंप्रदाय = श्री विष्णु स्वामी।
३. सनकादिक सम्प्रदाय = श्री निबार्क स्वामी।
४. ब्रह्म संप्रदाय = श्रीमध्वाचार्य।

अंघ्रि = चरण। कल्हार = श्वेत कमल।

वेई नंद बल्लभ सुत भए हैं प्रगट बल्लभ ग्रह,
सोभित द्विज कुल ललाम धाम बृज बिहारी
वेई प्रेम परिकर निति गोविंद कुंभनादि संग,
ललित लुब्ध लीला-रस-पुष्टि-कोस-तारी,
वेई 'दास नागर' के प्रेरक मन, मनुष बेस,
वेई बिठलेस, वेई गोवर्द्धनधारी ॥२॥११२॥

राग

प्रगटि बिठलेस दिनकर, किरन स सुत,
भक्तकुल के बल, आनन्द-दयने
नरनि उर जघनि विध्वसि, मंगल करन,
कृष्ण प्रतिबिंब, जगमगत नयने
त्रिटप खण्डन कठिन काठ मायावाद,
पुष्टि-रस बरसहीं, बिमल बयने
'नागरीदास' द्विजराज जानौ वेई
समै सुरराज गिरिराज लयने ॥३॥११३॥

छप्पय

धनि श्री बल्लभ विदित, धन्य धनि कुँवर विभूषन
विट्ठलेस सुत सात धन्य, हरि अंस बंस धन
धन चौरासी भक्त, जक्त हित पुरुष रूप छित
धनि गोविंद कुँभनादि प्रीत गिरधरन अपरिमित

---

११२. मोष = मोक्ष। परिकर = (१) परिवार (२) सेवक। गोविंद = अष्ट छाप के प्रसिद्ध कवि गोविंद दास; यह विट्ठलनाथ के शिष्य थे। कुंभन = कुंभन दास, अष्टछाप के एक प्रसिद्ध कवि, वल्लभाचार्य के शिष्य। पुष्ठ = पुष्टि मार्ग। कोस = कोश, निधि। तारी = ताली, कुंजी। मनुस = मनुष्य।

११३. काठ = शुष्क लकड़ी, नीरस। लयने = (उठा) लेने वाले।

११४. वल्लभ = वल्लभाचार्य। कुँवर विभूषन = वल्लभाचार्य के कुँवर विट्ठलनाथ। विट्ठलेस सुत सात = विट्ठलनाथ और रुक्मिणी के संयोग से ६ पुत्र हुए, जिनको भगवान के विभिन्न स्वरूप बँटवारे में मिले जो अब निम्नांकित स्थानों पर स्थित हैं :—

पुत्रनाम	स्वरूप	स्थान।
१. गिरिधर जी	श्री मथुरेशजी	कोटा।
२. गोविंद राय जी	श्री विट्ठलनाथजी	नाथ द्वारा
३. बालकृष्ण जी	श्री द्वारिकाधीशजी	काँकरौली।

धन्य भानु भुव भागवत 'नागरिया' हिय-तम-हरन
धन्य धन्य फिर धन्य है, महामंत्र केवल सरन ॥४॥११४॥

---

११ वसंतोत्सव

वसंत उत्सव के या पद की अलापचारी मे देने ए दोहा

दोहा—काम जनम अभिराम दिन, वृंदा धाम लसंत
हरि राधा वदत तहाँ, मगल कलस वसंत ॥१॥८७॥

सुभ कारक वृंदा विपिन, नव वसत दिन आज
आगम मगल गान धुनि, होत लगन को राज ॥२॥८८॥
इहि वसत रितु उठत बहु, द्रुम नव पल्लव लागि
जडहू कै रोमांच ह्वै, व्यथा मदन तन जागि ॥३॥८९॥

कुसुमित द्रुम गहवरनि अति, रितु बसंत अभिराम
छबि छाए वृंदा विपिन, मनु सर पजर काम ॥४॥९०
फूल भरे मजुल कलस, पिय प्यारी रसवंत
'नागर' नित वृंदा विपिन, मूरतिवत वसंत ॥५॥९१॥

राग हिंडोल इकताल

खेलत बसंत वृज पति कुँवार
बिच वृंदा विपिन विहार चार
झुकि द्रुम नव पल्लव कुसुम भार
उड़ि रज प्रसून, बिच अलि गुँजार

---

४. गोकुलनाथ जी श्री गोकुलनाथ जी गोकुल।
५. रघुनाथ जी श्री गोकुल चंद्रमा जी कामबन।
६. यदुनाथ जी श्रीबालकृष्ण जी सूरत।

रुक्मिणी जी के देहावसान के अनंतर विट्ठलनाथ जी ने पद्मावती देवी से विवाह किया था, जिनसे 'घनश्याम' नामक सातवाँ पुत्र हुआ था। घनश्यामजी को 'मदन मोहन' जी का स्वरूप मिला। इनकी गद्दी आज कल कामवन में है।
चौरासी भक्त=ये वल्लभाचार्य जी के शिष्य थे। इनकी वार्ता गोकुलनाथ जी ने लिखी थी।
पुरुस=ईश्वर। छित=छिति, पृथ्वी पर।
दोहा २. लगन=प्रेम।

तहँ सखा संग गावत धमार
बाजै मृदंग डफ झाँझ तार
इत लिये बंदन कलस नारि
मिलि देत मधुर सुर सरस गारि
चलै त्रिविध रंग पिचकारि धार
गए च्हुँटि चीर सब तन सुढार
दृग पल न लगत, लगे सर हैं मार
भए रोम कंप, लोयननि वार
रहे ललित परस्पर छबि निहार
'नागर नागरि' नहिं प्रीति पार ॥१॥११५॥

तिताल

वहि हो हो हो खेलत बसंत पिय सँग राधे सुकुमारि
गावत हिंडोल, बाजत मृदंग, डफ, झाँझ, तार, कठतार
चलत पीत पुहुपनि की पँखुरी, सोभा रही निहार
'नागरिया नागर' वृंदावन मधु रितु रंग बिहार ॥२॥११६॥

चौताल

फूले द्रुम, बल्ली बन झूलैं, अलि गंध बोलैं,
मदन सदन मानौ मंगल बधावनौ
जहाँ तहाँ आवत धुनि गान हिंडोल तैसो,
कोकिलनि कोयल को सोर मनभावनौ
उमही सकल बाल आईं वृषभान जू कैं,
सीस लै कलस संग सोहैं महरावनौं,
हिये हुलसत बिकसत कंज तिय मुख,
'नागर' बसंत बरसाने मै सुहावनौं ॥३॥११७॥

पद ११४ कुँवार = कुमार। चार = चारु। तार = (१) करताल आदि बाजे।
२. उच्च स्वर से। ३. सुंदर ढंग से। बंदन कलस = (१) पूजा के लिए मंगल घट। २. रोरी से रँगा हुआ कलश। सुर = स्वर। चहुँटि = लिपट। सुढार = सुडौल; सुघर, सुगठित। मार = स्मर, अनंग। लोयनन = लोचनों। वार = प्रहार।
११६. हिंडोल = राग विशेष।
११७. बल्ली = बेलि, लता।

तिताल

अति सुखदाई री, द्रुमनि कोयलिया कुहुक मचाई, नव वसंत रितु सरसाई
छई सुवास, भ्रमत मधुकर मिलि नूत मंजरिन की डरियाँ,
कदली कुंज गहबरि आई
अंब मौर नव बाल बाल लैं लालहि बहसि बँधाई
पिय प्यारी 'नागरिया नागर' हिय फाग खेलि सुधि आय छाई ॥४॥११८॥

इकताल

हो धुंधुंकार डफ बाजत ताल मृदंग झाँझ मिलि, बिच मुरली धुनि थोरी
बूका, बंदन, चंदन छिरकत, कुमकुम रँग केसरि लै घोरी
दिन बसंत गावत नाचत तहाँ बनिता गन दुहुँ ओरी
'नागरिया' खेलत वृंदावन पिय घन स्याम प्रिया तन गोरी ॥५॥११९॥

इकताल

बनि मद-माते पिय प्यारी खेलत बसंत, हसि हसि, छकि छकि, डारि गर बाहीं
कँवल-पराग लिए कर-कँवलनि, कँवल-बदन लपटाहीं
परसपर आन देत मन माहीं,
सखी कंज किंजल्कनि खेलत गावत ससि सरसाहीं
'नागरि नागर' बन बिहरत फूल मनिन की छाहीं
रंग भरे अंग अग उरझाहीं ॥६॥१२०॥

---

१२ होरी उत्सव

या पद की अलापचारी मे दैने ए दोहा
कुसल नंद वृषभान की, तिन के द्वै जग-बंद
होरी डाँडो आज सुभ, ओप्यो ब्रज आनंद ॥१॥९२॥
'नागरि नागर' भावतैं, मगल रूप रसाल
नित मंगल वृंदा बिपिन, नित्य फाग रस ख्याल ॥२॥९३॥

---

११८. नूत = नूतन । गहबरि = सघन ।
११९ बूका = बुक्का, अभ्रक । बंदन = रोरी । किंजल्क = पराग ।
दोहा — १. जग बंद = संपूर्ण संसार के लोगो द्वारा वंदनीय । डाँडो = दंड, डंडा ।
ओप्यो = प्रकाशित हुआ ।
२. भावतैं = प्रिया, प्रिय । ख्याल = खेल ।

ग्यारे नहिं प्यारे लगै, सोफी सदा उदास
इस्क ऐस मदिरा पियैं, कैफी फागुन मास ॥३॥९४॥

कियैं रँगीले फाग मैं, हियैं रँगीले ऐन
महा रँगीले दिन सबैं, महा रँगीली रैन ॥४॥९५॥

फाग जु रसिकनि हित भयो, रसिक फाग के हेत
चंदा बिन निसि साँवरी, निसि बिन चंदा सेत ॥५॥९६॥

जाकौं होरी खेल सौं, तनकहु हुवो न हेत
खाल ओढ़ि सो मनुस की, कियो मुलम्मा प्रेत ॥६॥९७॥

फाग मास रितु उठत वहो, द्रुम नव पल्लव लागि
जड़ हू के रोमांच ह्वै, व्यथा मदन तन जागि ॥७॥९८॥

इहि रितु औसर फाग कैं, होत लगन को राज
डफ मोहन मुरली सुनत, छुटत वधुन की लाज ॥८॥९९॥

इहिं होरी के खेल की, जग सौं उलटी रीति
जीतन ही मैं हार हैं, हारन ही मैं जीति ॥९॥१००॥

सुनि री डफ बाजन लगे, सिर पर आयो फाग
अब कैसै दबिहैं दई, अंतर को अनुराग ॥१०॥१०१॥

सुलगी लगन हियेन मैं, जु लगी होरी आय
खुलि गी ग्रंथि बिचार की, मींत मिलन दरसाय ॥११॥१०२॥

छिन देखैं बिन देत दुख, लोयन परै जु गैल
फाग-बावरे दिनन मैं, रूप-बावरो छैल ॥१२॥१०३॥

---

३. ग्यारे=फागुन को छोड़ कर शेष ११ महीने। सोफी=सूफी। इस्क=प्रेम। ऐस=ऐश, विलास। कैफी=प्रेमोन्मत्त।

४. ऐन=अयन, निवास। (अरबी) ऐन=बिलकुल; पूरा पूरा।

५. सेत=श्वेत, निष्प्रभ।

६. हेत=हेतु, स्नेह, प्रेम। खाल=मुर्दा चमड़ा। मुलम्मा=पालिश, कलई।

८. लगन=प्रेम।

११. जु लगी=जो

ग्रह कोनैं जात न रह्यौ, परत अगौनैं पाव
नित होरी के खेल मैं, चित चोरी को चाव ॥१३॥१०४॥

बरसानैं नँद गाँव अति, उमगे दल दुहुँ ओर
समर खेत संकेत मैं, आज फाग जुध जोर ॥१४॥१०५॥

ढोलकि ढोल मृदंग बजि, मुरली डफ सहनाय
गहगट गान धमार धुनि, रह्यौ कुलाहल छाय ॥१५॥१०६॥

उड़ि गुलाल आंधी पहल, डफ गरजन अभिराम
रंग धार बरसन लगी, गउर घटा अरु स्याम ॥१६॥१०७॥

मची दुहुंनि मैं फाग, इत राधे, उत नँदलाल
जमुना, धर, गिरि, तरु, लता, खग, मृग भरे गुलाल ॥१७॥१०८॥

लालमई सब देखियत, घुमड्यो गगन गुलाल
मनु दंपति अनुराग को, डार्यो बृज पर जाल ॥१८॥१०९॥

राजत धूँध गुलाल मैं, भरि भरि भाजत बाल
मानों फूली साँझ बिच, चमकत चपला जाल ॥१९॥११०॥

दृग ही चाहत लाल कों, तन चह उड्यो गुलाल
धूधरि मैं दुरि औचकां, भुज भरि लीनैं बाल ॥२०॥१११॥

सकैं न दृग भरि देखि कैं, तिनको वदन मयंक
जिनकों होरी खेल मिस, अंकनि भरत निसंक ॥२१॥११२॥

कौंधि उठत ज्यौं दामिनी, भरत भामिनी आय
पिय मन लैं कैं पलटि फिरि, मिलैं झुंड मैं जाय ॥२२॥११३॥

आवत मुठी गुलाल की, छबि सौं छैल बचात
पैं अचूक दृग लगि हियें, वार पार भय जात ॥२३॥११४॥

(दोहा ११३) जाय = आय (सु) ।

१३. ग्रहकोनैं = घर के कोने में । अगौनैं = आगे ।

१४. जुध = युद्ध ।

१६. पहल = पहलदार ।

१९. भरि भरि = (भुजाओं में) भर भर कर; अंक भरना ।

२०. लाल = कृष्ण, प्रिय ।

२३. भय जात = हो जाते हैं ।

रोकत घूंघट ओट सौं, मुरि पिचकारी धार
यहै बचावन देख उत, बचत नहीं रिझवार ।।२४।।११५।।

अजू कहा आँखें भरो, कौन रीति को खेल
इन बातनि रहिहैं नहीं, हमसौ तुमसौ मेल ।।२५।।११६।।

लगै सु फिरि निकसै नहीं, करी न भावति ओट
होरी मै ऑखियान की, ऑखिन ही पैं चोट ।।२६।।११७।।

ऑखें भरत गुलाल सौं, यह धौं कौन सुभाय
बदन माधुरी-पान मै, अंतर पारत हाय ।।२७।।११८।।

चतुराई करिकैं दयो, पौछनि दृगनि गुलाल
कहत चलावत उत गयो, भोरै छूटि रुमाल ।।२८।।११९।।

चलत गुलालनि झोरियॉ, माचो धूम धमारि
फाग केलि झकझोरियॉ, फिरत गोरियाँ ग्वारि ।।२९।।१२०।।

हार छुटत छूटत नहीं, रहे खेलि रस भोय
हार टूटि पायनि परत, हार न मानत कोय ।।३०।।१२१।।

'नागरिया' गति रीझि की, क्यौं हूं जात कही न
दपति-फाग विहार-सर, भयो लीन मन-मीन ।।३१।।१२२।।

राग भैरूँ ताल चरचरी

होरी खेल खेलत जब रही रैन थोरी
साए है रसिक लाल, सग लै किसोरी
पियरी पह, जगि, लगि, दोउ चले है रग भीनैं
सगबगे गुलाल बसन, अंसनि भुज दीनैं
अस्त विस्त अभरन नग, टूटे हार ही के
अलक भौह-मूल रग, अधर रग फीके

---

२५. ऑखैं भरी = आंखो मे गुलाल डालते हो।
२६. भावति = भावती, प्रिया।
२७. अंतर पारत = व्यवधान उपस्थित करते हो।
२८. भोरैं = धोखे से, असावधानी से।
२९. गोरियाँ = गौरवर्ण।
३०. भोय = भीगे हुए।

फाग भरे, लाग भरे, रजनी के जागे
फिर फिर रस उरझत, नहीं सुरझत अनुरागे
गउर स्याम ललित अंग, भुज-लतानि कसिया
'नागरिया' हीय बसे, फागुन के रसिया ॥१।१२१॥

राग रामकली तिताल

तैं ऊबट बाट चलाई बहुत दिन, अब क्यौं नारि नवइयां
आई हम बरसानैं वारी, निकसि अरे नँदगइयां
आगे आय 'रु हा हा खाय कैं, परि सखियन के पइयां
यौं कहि 'नागर' ऐंचि लए गहि, उड़ि गुलाल नभ छइयां ॥२॥१२२॥

राग षट तिताल

इत मत निकसि चौथ के चदा, देखत कलंक मोहिं लगि जायगो रे
दूरि तै गुलाल भरि, जिन छुवै छैल मोहि, तेरो स्याम रंग मेरैं लगि जायगो रे
पाय परौ हा हा अब नियरैं न आव, करन चबाव गॉव लगि जायगो रे
'नागर' तू लोभी फाग, स्वारथ ही को हैं मीत,
मो मन निगोड़ो भूलि लगि जायगो रे ॥३। १२३॥

तिताल

सॉवरे छैल छबीले खिलार सौं, गोरी किसोरी जू होरी मचावैं
हो हो कहैं इत तारी बजाय, जबै उत प्यारी गुलाल लैं धावैं
जाहि सबैं अवसान, जकी, लगि कंप है लाल हिये हहरावैं
'नागरि' की न अवाई थॅभैं, जब रूप हवाई सी छूटि कै आवैं ।४॥१२४॥

पद १२१ सगवगे = भीगे हुए । अंस = कंधा । अस्त विस्त = तितर-बितर । ही के = वक्षस्थल पर के । लाग = लाग डाँट, प्रतिद्वंदिता । कसिया = कस लिया, बाँध लिया ।

१२२. ऊबट बाट = ऊँचा नीचा रास्ता । नवइयों = दबने वाली । निकसि = बाहर निकलो । नंदगइयां = नंद गाँव के रहने वाले । परि = पडो । पइयौं = पैरों । ऐंचि लए = खींच लिया ।

१२३. चौथ के चंदा = भाद्र कृष्ण चतुर्थी का चंद्रमा । चबाव = निंदा । मन लग जायगो रे = मन प्रेम के फंदे में पड जायगा ।

१२४. अवसान = होश हवास, चेतना । जकी = भौंचक्की हो गई । लगि = गले से लगाकर । हहरावैं = कॅपा देती हैं । थॅभैं = रुकती है । हवाई = आतिशबाजी । छूटि कै = (१) हवाई छूटना; (२) अंक से छूटना ।

राग टोडी इकताल

अरी यह कौन हैं री नंदगांव-वारेनि मैं, पेच ही पेंच भरी बातैं गावैं
ओट किये उत कौ डफ की, इत कौं लखि कैं अँखियाँ ठहरावैं
साँवरे अंग, कँवल से नैंननि, सैंननि हा हा खावैं
'नागरि' होरी भई तो कहा, इन्हैं कोऊ सखी समुझावैं । ५॥१२५॥

राग सारंग इकताल

होरी या बगर मैं माचि रही है, पनियाँ भरन कैसैं जाउँ
लाज लिए मेरी, घूँघट पट सौं किहि बिध निबहनि पाउँ
दौरि दौरि रँग भरत परसपर, तिनसौं कहा बसाउँ
'नागरि' कान्ह छुवो मोहि तो फिरि नाँव धरै सब गाउँ ॥६॥१२६॥

तिताल

छैल वहि काहू सौं न डरैं
आधी रात वृंदावन माहीं ठीक दुपहरी करैं
आय निकट ललचाय लालची, और ही ढार ढरैं
'नागरिदास' रंग भरि भरि, फिरि भुज भरि अंक भरैं ॥७। १२[illegible]

इकताल

मोहन लए हैं दबाय, लँगरि होरी की
मुरली माला छीनि, बहुरि डारी सौंज झटकि झोरी की
खैंचत झपटि पीत पट कटि सौं, दै भाजत बैंदी रोरी की
जीती नाहि जात हैं क्यौं हूँ, 'नागर' नव नागरि ओरी [illegible]

तिताल

खेलैं होरी मन मोहनां
फैंटा सीस केसरी सुन्दर, छूटि अलक मुख सोहनां

---

१२५. पेंच = दाँव पेंच, घुमाव फिराव, उलझन, [illegible]
१२६. बगर = बगल, घर । किहि बिध = किस [illegible] बदनाम करेगा ।
१२७. और ही = कुछ दूसरे [illegible] । ढार = [illegible]
१२८. सौंज = सामग्री । [illegible] ी ।

भरत रंग, मन हरत, फिरत, लाग्यो रस बस ह्वै तिय गोहनां
'नागरि' कँवल कँवल प्रति लपटत, भँवर कुँवर बृज जोहनां ॥९॥१२९॥

इकताल

फूटैं कर की चूरियाँ, मोहि हा हा लँगर दैं जान
होरी मै भली ए करत बरजोरी, मच्यो है कौन खेल सुखदान
तरकत कस दरकत हैं अँगियाँ, धर धर धरकत प्रान
दूरि ही तैं जु भलो पिय 'नागर', नैननि को सनमान ॥१०। १३०॥

तिताल

छैल लँगर घनस्याम, मग मेरो रोकि रह्यो री
उर पर डारि रग पिचकारी, अचरा आनि गह्यो री
नैन लगे, अरु दिन होरी के, यातैं सबै सह्यो री
'नागरिया' छिन कल न परत अब, चार बिचार बह्यो री ॥११॥१३१॥

तिताल

न सहिहो री याकी इतनी ए लँगराई
अरी ए अति ही ढीठ है कान्ह, हमसो करि बरजोरी, धूम मचाई
सब याकी लैं लकुटी, बंसी, उर माला, छीन लेहु पिचकाई
अब तुम सकल सिमटि, लैं लैं कर गागरि, नागरि' भरो री कन्हाई ॥१२॥१३२॥

आन कवि कृत राग खंभायची तिताल

आज बरसानौ हेली लागै सुहावणौ
फाग गीत सुर छायो सुहायो, आजु नद कुँवर आयो पाहुणौ
उठो जी किसोरी गोरी, ल्यो नै गुलाल ओली, भर होली अब सुख सरसावणौ
गहगड खेल धूम धूंधर अबीर माहि, 'रसिकबिहारी' कठ लगावणौं ॥१३॥१३३॥

---

१२९. सोहनां=अच्छा लगनेवाला। गोहनां = पास। जोहनां = दर्शनीय।

१३०. तरकत=तड़ाक की ध्वनि करके टूटती है। दरकत = फटती है। अँगिया = चोली।

१३१. उर=उरोज। चार विचार = आचार विचार। बह्यो री = बह गया, नष्ट हो गया।

१३२. लँगराई = शरारत। पिचकाई = पिचकारी।

१३३. ल्यो नैं = ले नहीं लेती। ओली = झोली। भर होली=होली भर; सारे फागुन महीने मे।

आन कवि कृत तिताल

फागुणिया रा घुमड़ि रह्यो छैं ख्याल
कुज भूमि सो लाल लाल हुइ, हुवा लाल तमाल
उड़ी गुलाल की लाल धूंधरि मैं, झलकैं वैंणा भाल
सखी लाल, अरु लाल बिहारनि, 'रसिक विहारी' लाल ॥१४॥१३४॥

आन कवि कृत

या पद की अलापचारी मै दैंने ए दोहा

उड़ि गुलाल धूंधर भई, तन रह्यो लाल बितान
चौरी चारु निकुंज मैं, ब्याह फाग सुखदान ॥१॥१२३॥

फूलन के सिर सेहरा, फाग रगमगे.बेस
भाँवर ही मैं चलत दोउ, लै गति सुलप सुदेस ॥२॥१२४॥

भीजे केसर रंग सौ, लगे अरुन पट पीत
डोलै चाचर चौक मैं, गहि बहियाँ दोउ मीत ॥३॥१२५॥

रच्यौ रँगीली रैंन मैं, होरी के बिच ब्याह
बनी बिहारन रस-सनीं, 'रसिक विहारी' नाह ॥४॥१२६॥

आन कवि कृत तिताल

कुज महल मैं आजु रग होरी हो
फाग खेल मै बनां बनी की, ह्वै रही पट गठजोरी हो
मुदित ह्वै नारि गुलाल उड़ावैं, गावैं गारि दुहुँ ओरी हो
दूलह 'रसिक बिहारी' सुन्दर, दुलहनि नवल किसोरी हो ॥१५॥१३५॥

राग धनाश्री, इकताल

मेरैं लाग्याई आवैं साथ री, नंद-नंदन मन-मोहनां
वृज बीथन निकुंज निकुंज मैं, आनन-तन-द्युति जोहनां

---

१३४. फागुणिया रा = फगुहारों का, फाग खेलने वालों का। वैंणा = वेणी।

दोहा (१) तन रहयो = तान दिया गया। चौरी = वेदी। (२) सेहरा = मुकुट। रगमगे = प्रेम में डूबे हुए। सुलप = सुंदर आलाप। सुदेश = सुंदर। (३) लगे = शरीर से सटे हुए। चाचर = एक प्रकार का नृत्य। चौक = चौकोर खुली भूमि; आँगन। (४) बनी = दुलहिन। नाह = नाथ, स्वामी, दूलह।

१३५. बना-बनी = दूलह, दूलहिन।

सैंननि हा हा खात लालची छाड़त नहीं छिन गोहनां
'नागर' नवल छैल होरी कौं, चित ललचत लखि सोहनां ॥१६॥१३६॥

इकताल

फागन खेलत फाग, रह्यौ क्यों जाय री
सास ननद डर, आगै परत नहिं पाय री
अरी नंद नंदन सों नेह, सुनैं दुख कौन री
क्यौं चितवैं दिन रैन, अकेलैं भौन री
सूनौं सदन निहारि, मदन पायो दाव री
मारत बान निसंक, करत उर घाव री
डफ मुरली धुनि आनि, परत जब कान री
श्रवन रहत ठहराय, चलत ए प्रान री
अरी नाहिं रहूँ घर घरी, बहुरि कब फाग री
फिरि मोहन सों भई, दृगनि की लाग री
तोरि कैं लाज कपाट, चली गज-गामिनी
मिली 'नागरीदास', मनौ घन दामिनी ॥१७॥१३७॥

तिताल

फेरी दै दै बोलहीं राजबैद गुनबैद
बिरह-बिथा बस एक बृज-बधू, ताहि कुटंब की कैद
दौरि पौरि लौ झाँकि सकत नहिं, भए दिवस दस बीस
डफ मुरली धुनि सुनि सुनि काननि, परी धुनत है सीस
तापै ल्याई स्याम तबीबैं, एक सखी हित पाइ
इत उत तैं अँसुवनि जल भरि भरि, मिले नैंन अकुलाइ
छिन सियरो, छिन तातो तन हैं, चमकि चल्यो मुख स्वेद
कंपत हाथ नारि कैं देखत, को समुझै यह भेद
ओखद कैं मिस लैं, मुख दीनौं कर तें पान उगार
बहुरि कह्यो यह नीकी ह्वै है, बन की लगे बयार

---

१३६. जोहना = देखने वाला। गोहना = पास। सोहना = शोभा वाला; सुहावने रूपवाला।

१३७. पाय = पाँव, पैर। दाव = अवसर। लाग = लगन।

१३८. फेरी दैं दैं = चक्कर दे देकर, घूम घूमकर। पौरी = द्वार। तबीबैं = हकीम।

'नागरिया' इहि फाग मै, हरि सब बिधि पूरे काम
तपत बुझाई बाल की, बनि नए गुनी घनस्याम ॥१८॥१३८॥

राग काफी, तिताल

कोई यक जोगी रूप किये
भौहै बंक, छकौहै लोचन, चाल चलि कोयनि कान छिये
देखि स्याम तन बेस मनोहर, बार बार जल वारि पियैं
'नागर' मनमथ अलख जगावत, गावत काँधे बीन लियैं ॥१९॥१३९॥

इकताल

स्याम घन घेरयो नवल किसोरी, दामिनि तन दुति गोरी
करि बिचार खिलवारि नारि सब, दुरी साँकरी खोरी
तहाँ गह्यो चित चोर आपुनौ, करत प्रेम झकझोरी
उड़त गुलाल लाल, गहवर बन, धुनि सुनियत होरी होरी
मन कौ हरनि तहाँ अक भरन ह्वै, अधर-पान की चोरी
बढ़ि गयो रंग खेल होरी मैं, क्यौं बरनौं मति थोरी
बृज जीवनि नँदलाल 'नागरी', चिर जीवो यह जोरी ॥२०॥१४०॥

तिताल

न कीजिए नजर भरि दिल इस्क की निगाहैं
देखैं सब, खेल बीच छूवो मति बाँहैं
क्या पूछना गुलाल का, रुमाल की अदा है
'नागरिया' नेह की न जाहरी सला है
लगैगा कलक, फेर बनैगी निबाहैं ॥२१॥१४१॥

तिताल

जान दै तेरैं पइयां परत हौ रे कन्हइया
टुटि गए हार, छूटि गयो अचर, भीजि गई अँगिया दइया

नारि = (शरीर की) नाडी । ओखद = औषधि । उगार = पान की पीक ।

१३९. छकौहैं = मस्त, नशे मे चूर, । कोयनि = आँख के कोने, अपांग । छियैं = छूते हैं।

१४१ इस्क की निगाहै = प्रेमपूर्ण चितवन । सला = तौर, तरीका । फेर = फिर, पुनः ।

या मग माँझ न कर बरजोरी, हैं गोकुल के लोग चबइया
'नागरिया' धन नीति तिहारी, धन्य खेल, तू धन्य कन्हइया ॥२२॥१४२॥

इकताल

अँखियाँ रँगराती जोबन मतवारी
छुटी लटैं, झुकि झूलत बेसरि, केसरि खौरि सँवारी
भौहैं कसौंहैं, हसौंहैं से ओठनि के बिच दामिनि कौंधैं
अंचर छोड़ि चलैं गज ज्यौं, दरसैं अँगिया रँग सौंधैं
होरी मै रूप ठगौरी भरी, मुसकाय करी चित चोरी
साँवरे की लगवारि, वडी ठगवारि है, ग्वारनि गोरी
फाग भरी, अनुराग भरी, निकसैं जब घूँघट मारी
'नागरिया' लखि, लाग्यो फिरै सँग, रँग मोहन रिझवारी ॥२३॥१४३॥

आन कवि कृत। तिताल

हौ राज थे छोड़ौ जी किसोरी जी रो छेहड़ो
राखो राखो मन मे चार बिचारि
थे फागुण रस बावला, ए लाज भरी सुकुँवारि
कांई हुवो होली, हुवा सुण हससी सोह संसारि
थे गायां का ग्वालिया छौ, अरु ए छैं राजकुँवारि
थांहरि यांहरि नहीं छैं बराबरी, नाय परसो दूजी नारि
'रसिक बिहारी' रो नांव छैं, कांई खेलो ख्याल गँवारि ॥२४॥१४४॥

तिताल

अणी कोई सावला खेलनवाल
सोहना मुख,सोभा जगमगियाँ, लगियाँ रंग गुलाल

---

१४२. चबइया = निंदक।

१४३. खौरि = टीका, तिलक। कसौंहै = कसी हुई, टेढ़ी। अंचर छोडि = अंचल खुला छोडकर। सौंधैं = सुगंध। लगवारि = पास वाली, निकटस्थ। ठगवारि= ठगनेवाली। ग्वारनि = ग्वालिनी। घूँघट मारी = घूँघट निकाले हुए।

१४४. थे = तुम। किशोरी जी रो = राधा जी का। छेहडो = छेडछाड़। चार विचार = आचार विचार। कांई=क्यों। सुण=सुनकर। हसी = हँसेगा। गायाँ का ग्वालिया =गायें चरानेवाले, ग्वाल। छौ = हो। अर = अरु, और। थांहरि = तुम्हारी

कर्नफूल पर फूल, जुलफ बिच हाल हाल करैं हाल
'नागरिया' मेरे आगैं अखी सौं, लैं आवदा हाथ रुमाल ।।२५।।१४५।।

इकताल

सइयो मैनूं कांन्ह बुलावैं
चढ़ि कैं अपनी ऊँची अटारी, नैंनौं दी सैन चलावैं
केसरि दा रँग भीना चोला, होरी दा छैल कहावैं
'नागरीदास' कहा कहौं री लखि, मैड़ा भी जी ललचावैं ।।२६।।१४६।।

इकताल

खेलिहौं नहीं होरी हौं होरी री
लैं उर सौं मसकी कस मैं, ससकी भरि नाक सकोरी,कीनी हैं बरजोरी
छैल कैं हाथ परी छल सौं, नहिं छूटि सकी, बिच खोरी, रस सिंधु झकोरी
वे बहु छंद भरे,गुन आगर,'नागर' हौं मति भोरी,की अधरा-रस चोरी ।।२७।।१४७

इकताल

नंद-कुँवर देखि कैं, कछु भी न रही ताब
छूटि गया घूँघट पट, हुई बेहिजाब
जोबन मद होस हुस्न, जादु हैं निगाह
लियैं पिचकारी दस्त, अजब खुस अदाह
इस्क-बाज, होली-बाज, साँवला छछंद
दुदामी इकतई, पोसे वसती, फैंटा कजबद
तिसपैं चलैं मूठ उसकी, सो हो मस्त हाल
गोया पढ़ि पढ़ि कैं, सिर डालता गुलाल
मुझकौं कछु किया हैं उसनैं, खेल बीच आय
पाय परौं हाय वही, 'नागर' दिखलाय ।।२८।।१४८।।

---

१४५. अखी=अरी, री । ले आवदा = ले आता है ।
१४६. सइयो = सखियो । मैंनूं = मुझको । नैनौं दी = नयनों की । सैन = कटाक्ष ।
केसरि दा = केशर का । चोला = वस्त्र । मैडा = मेरा ।
१४७. मसकी = मसल दी, दबा दी । छंद = छल ।
१४८ ताब = सामर्थ्य । बे-हिजाब = बेपर्दे । जोबन मद होस = यौवन के मद में
मस्त । हुस्न = सौंदर्य । दस्त = हाथ । अजब = अद्भुत । खुस अदाह = सुंदर

तिताल

हुस्न तमासे का है अजायब, होली का खिलवार
पिचकारी दर दस्त अजायब, सजि फैंटा कजदार
रंग साँवला, जर्द दुपट्टा, उर मरवारि दा हार
है 'नागर' स्यामा साहिब के, यह फरमाबरदार ॥२६॥१४६॥

इकताल

दइया रे सब लोग जागैं
धरकै हियरा,तन काँपै, जिय डर अति लागै
मकर चाँदनी रात है, मोहि आवत लाजै
सेज मोहन की न चढौं, पायल मोरी बाजै
फाग रँगीली रैन, दई मोहि, मैन सतावै
'नागर' सुन्दर स्याम को अधरा-रस भावै ॥३०॥१५०॥

इकताल

रसिया तेरे कारनैं नैननि भई हौं कनौड़ी
अपनें स्वारथ रीति मगन तू, प्रीति रीति अति औंडी
तैसोई फागन,तैसीये बृज को चार चबायनि भोंडी
'नागर' घर घर डगर बगर मैं, बजी नेह की डौंडी ॥३१॥१५१॥

तिताल

खेलि न जानै , नयो होरी को खिलवार
उररानौ हौं गरै परत, नहिं समझत चार विचार
पुन्य बड़न कै सीख्यो यह ढँग, या नीति की हौं बलिहार
'नागरवा' घर जाहु चल्यो किन, आतुर निलज उतार ॥३२॥१५२॥

भाव भंगी वाला । इस्कबाज = प्रेम वाला । छुछंद = छलिया । दुदांमी = (?) । इकतई = ? । पोसें = पोश, पोशाक । कजबंद = टेढा । मूठ = (१) जादू (२) मुट्ठी भर गुलाल । पढि पढिकैं = मंत्र पढ पढकर । कुछ किया है = कुछ जादू किया है ।

१४६. अजायब = अजायब घर; विचित्रागार । दर दस्त = हाथ में । कजदार = टेढा, वक्र । मरवारि = (?) । दा = का । फरमाबरदार = आज्ञाकारी ।

१५०. मकर = छलपूर्ण ।

१५१. कनौडी = दबैल । औंडी = उमडी, तरंगायित । भोंडी = भद्दी, बुरी । डोंड़ी = डंका ।

१५२. खिलवार = खिलाडी । उररानौं = जबरदस्ती आगे बढते हुए । चार विचार = आचार विचार । उतार = अधम, छोटा ।

इकताल

चुरियाँ झनकै गोरी बाहु बहुरियाँ
बाजू-बंद फफूँदनि फुँदवा, अँगिया गड़ रही गाढ़ी मउरियाँ
आ जा री मिलि साँवरे सों गोरी, डारि दैं री दिवरानी लहुरिया
'नागरिया' पिय ठाढ़े गरी दुरि, भई जात हैं पीरी पहुरियाँ ॥२३॥१५३॥

तिताल

तू सुनि मोहन बैन बजावै
मन मोहन बैन बजावै
रितु फाग लाग सरसावहीं
मुख नाँव तिहारे गावहीं
दूती-धुनि सैन बुलावहीं
चलि बेग छबीली अब नहिं भवन सुहावै ॥१॥

सुनि चली चपल जब भामिनी
होरी अभिसारिका कामिनी
बिच खिली बिमल मधु जामिनी
चलि मिली स्याम घन दामिनी
अति रस बरस्यो हैं फाग, चैत मिलि गावैं ॥२॥

बिच रची रास मंडल होरी
मिलि बाहुनि बाहु-लता जोरी
पिय स्याम सुघर, राधा गोरी
गति लै लै, लेपति मुख रोरी
अति रंग बढ़यो री, कहत कह्यो नहिं आवैं ॥३॥

बज मृदल मुरज टंकार तार
किंकिनि नूपुर झं झं झंकार
चचल कल कुंडल, अलक, हार
छुटि छुटि अचर गए, खुले बार
मनु तिय छवि बेली पवन लगैं डिगुलावैं ॥४॥

---

१५३. बहुरियाँ = बार बार। फफूँद = नीबी, फुफुती। फुंदवा = झब्बा, डोरी के सिरे पर लगा हुआ फूल के आकार का सूत का गुच्छा। मउरियाँ = छोटे मुकुट। दिवरानी = देवर की स्त्री। लहुरिया = कनिष्ठ, वय में अपने से छोटी। गरी = गली में। दुरि = छिपकर। पीरी = पीली। पहुरिया = प्रहर।

छिरकैं केसर कुमकुमा संग
चिहुटे पट, उघरे अंग अंग
लखि मुरछि गिरयौ आतुर अनंग
रस रास फाग मिलि बढ़यौ रंग
थकि रह्यौ चंद नभ, पवन गवन बिसरावैं ॥५॥
उड़ि गुलाल घन भई घुमंडनि
पलटनि गति लै लै भरि रंगनि
बढ़ काम तरंगन पिय संगनि
लखि गउर स्याम उरझे अँग अंगनि
नैननि गति भूली, बैननि मैं न समावैं ॥६॥
नित दंपति संपति सुख सुहाग
नित रास रसहिं अरु नित्त फाग
नित वृंदावन आनंद बाग
नित केलि कुतूहल हिय अनुराग
'नागरिया नागर' इहिं सुख समै बितावैं ॥७।३४।।१५४॥

इकताल

रंग हो हो हो हो होरी, उल्हयो फाग सुख लाग संग
बेगि आव सखि दौरि दौरि कै, देखि अटा चढ़ि कैं उतंग
सुनियैं गान, गहिरी धुनि आवत, बरसानैं की ओर आज
या नँद गाँव के साँवरे ऊपर, गउर घटा आई गाज
है बिच कुँवरि किसोरी गोरी, दामिनि सी द्युति चमचमात
प्रीत-पवन इत प्रेरि चलाई, उमडी आवत उत्तर कौं आत
नदीसुर तें है आनि रंगमगी, बन उपवननि सरसि कैं फूल
पीत रंग सब रँगी देखियत, सरसौं सी रही फूल फूल

१५४. लाग = लगन, स्नेह। सैन = संकेत, इशारा। अभिसारिका = प्रिय से मिलने के लिए गमन करनेवाली नायिका। लेपति = लगाती है, पोतती है। मुरज = पखावज, मृदंग। तार = करताल। डिगुलावैं = हिलती हैं, काँपती हैं। कुमकुमा = लाख का बना हुआ वह पोला गोला जिसमें अबीर या गुलाल भर कर एक दूसरे पर फेंकते हैं। चिहुटे = चिपक गए, सट गए। उघरे = उद्घाटित हो गए, खुल गए। बिसरावैं = भूल गए। तरंगन = तरंगिणी, नदी।

गली गली मै अली रली सब, समध्याने की गारि गाय
रुकी डगर, महरावने मैं आनंद-कुलाहल रह्यौ छाय
पहुँची आय राजमंदिर मै, जसुमति भीतर लईं गेह
उड़ि गुलाल, छूटी पिचकारी, बरसि पर्‌यो अति मेह
मिलि मिलि देत झमकि झूमक तहाँ, बाजत चंग, मुह चंग, उपंग
छूटत बसन, हार उर टूटत, रावरि मैं मचि पर्‌यो रंग
दुरे लाल, लखि लए सबनि, मिलि पकरे तोरि किवार
भई मनोहर भीर भुजनि बिच, भरि लाईं अँकवारि नारि
नंद-जसोदा हसत दुरि ठाढ़े, देखि रहे रस-रीत प्रीत
सुंदर कुँवर लाड़िलो 'नागर', फगुवा मै लै गई जीत ।।३५।।१५५।।

इकताल

कहा करौ रे कहा करौं, दइया दिन कठिन बिहाय
जब तैं लग्यौ है मास फागुन आय
भरन न दै ननदिया पनघट पानी
नाहर सी बैठी रहै बाहर जिठानी
हौं ही एक रूपवंत बैस किसोरी
औरहु न कोऊ कहा गोकुल मै गोरी
बंसी डफ सुनि सुनि हियो अकुलावैं
मेरे घर आसपास छैल मँड़रावैं
'नागरि' कुँवर आयो तोरि किवार
होरी के खेल मिसि मिल्यो लगवार ।।३६।।१५६।।

इकताल

होरी के खेल मै गुमान कैसा, गुमान गुमान की ठौर
को राना को रक फाग मै, जहाँ प्रेम की रौर

---

१५५. उलह्यो = उमडा । उतंग = उत्तुंग, ऊंची । बेगि = शीघ्र । गाज = गरज कर । आत = अती । नंदीसुर=नद गाँव । आनि = आकर । रले = मिली । महरावने = महर के महल्ले मे । लाईं = ले गईं । चंग = डफ की तरह का, हाथ से बजाया जानेवाला, एक बाजा । मुहचंग = मुंह से बजाया जानेवाला एक बाजा । उपंग = एक प्रकार का बाजा । रावरि = रार महल, रनवास, राजाओं का अंतःपुर ।

१५६. बिहाय = बीतता है । नाहर = सिंह । बैस=वयस्क, युवती । लगवार = जिससे लगन लगी हुई है; प्रिय ।

करत मनोरथ साँच, सबनि के फाग मैं
'नागरिया' नँदलाल, भरे अनुराग मै ॥ ३६ । १५६ ॥

राग

दिट्ठा ग्वार, गारि सुर मिट्ठा गावत इस्क लपेटा
मद अलसौंही नैन सैन दैं, मारत मैन चपेटा
पिय गोरी दा, छैल होरी दा, सुन्दर अग अँगेटा
'नागरीदास' दिवानी हुइयाँ, देखि अजब महरेटा ॥ ४० । १६० ॥

तिताल

नैना सोहनैं रंग खुमार
दोहा— काम केलि रस रगमगी, सब निस जगी बिहार
हम जानी मनमोहना, तेरो हैं लंगर लगवार ॥ १ । १२७ ॥
आवैं आधी रात उठि, अगवारैं पिछवार
तू 'व कँवल, अलि साँवरो, रस लंपट रिझवार ॥ १ । १२८ ॥
रहे टुटे ही हार उर, छुटे छबीले बार
पीक कपोलनि ही रहै, सब तन सिथिल सिंगार ॥ ३ । १२६ ॥
हाथ परी तू छैल कै, 'नागरिया' सुकुँवारि
तन झकझोरी सी रहै, रँग-होरी की मार ॥ ४ । १३० ॥ ४१ । १६१ ॥

तिताल

हौं जमुना जल भरन गई तहाँ, दुहुँ दिसि री द्रुम गहबर गैल
निकस्यो है तहाँ आय अचानक, रँग भीनौं होरी को छैल

---

(१६०) यह 'होरी की मांझ' की पांचवीं मांझ है।

१५६. मनिहारिनि = मनिहार का स्त्री लिंग, चुरिहारिनि; स्त्रियों के शृंगार की सामग्री बेचनेवाली। कव्यात = कंटकित होता है। छियैं = छूते हैं। चांपि = दबाकर। सिसकि = सी सी करके। सतरात = क्रुद्ध होती हैं। कढी = निकल गई; खिसक गई। वलया = चूडी। ठई = स्थित किया; निश्चय किया। इकौंसी = अकेली। अंकमाला = अँकवार।

१६०. दिट्ठा = देखा। मिट्ठा = मीठा, मधुर। रा = का। अँगेटा = अंगों की आभा, दीप्ति। महरेटा = महर का लडका।

१६१. मोहनैं = सुहावने। खुमार = नशे का उतार। अगवार = घर के आगे। पिछवार = घर के पीछे।

चलि न सकी, लखि के पग कंपत, रहि जु गई तब हौं सिर नाय
मद गजराज की चाल लाल धुकि, गहि लियो री अंचर मुसकाय
तब घूँघट पट छूटि गयो है, निलज रहे नैना मुख चाहि
मींडत दुहुँनि कपोल गुलालनि, आयो अति उर मदन उमाहि
लई भुजनि कैं बीच सखी कसि, कंपत सीत सिथिल भयो गात
धीरज हरी, हरयो मन मेरो, कहा कहो और लाज की बात
गुरजन लई कछु बात जानि अब, निकस न देत भवन कैं बार
अति व्याकुल जिय, मरत मसोसनि, सुनि सुनि मुरली डफ धुंकार
लाज सौ काज सरयो नहीं मेरो, स्याम अंग ह्वैहौं बनमाल
जिहिं तिहिं बिधि लै चलि 'नागरिया', जहाँ होरी खेलत नँदलाल ॥ ४२ । १६२ ॥

तिताल

पनिया न जाउँ री, आगैं मचि रह्यो ख्याल री
बीच बटपारो ठाढ़ो, मदन गुपाल री
तैसेई उपाधी हैं री, निलज सँग गुवाल री
हाथनि मै पिचकारी, फैंटनि गुलाल री
वहि देखि आवै छैला, मद गज चाल री
अब कित जाऊँ री दइया, दुरि इहिं काल री
'नागरिया' कंपे पग, होत है बिहाल री
मेरो रूप भयो, मेरे जिय को जंजाल री ॥ ४३ । १६३ ॥

इकताल

सुन्दर साँवरी कोउ आई है नइनियाँ आज
बैंदी दिये जराय की, हैं लिये दृगनि मै लाज
घूँघट भीनौ चीर को, पहिरैं हार हमेलि
अंग जोति जगमग रही, मनु रची नीलमनि बेलि
झवा, महावर, उबटनौ लियैं, धरत मंद गति पाँव
रूप अचभो ह्वै रह्यो, वाकैं कौतुक लाग्यो गाँव

---

१६२. रंग भीनौं = प्रेम में डूबा हुआ। नाय = नमित कर, झुकाकर। चाहि = देख। मींडत = मीजते समय, लगाते समय। उमाहि = उमाह, उमंग। और = अपर, अन्य। बार = बाहर। मसोसनि = कुढ़न, अफसोस। धुंकार = धुंधकार, गरजना। सर्यो नहि = नही निकला, नहीं पूरा पड़ा।

१६३. बटमार = बटपार; रास्ते मे लूट पाट करने वाला, डाकू। उपाधी = उपद्रवी। देखि = देखो।

समझि नैन की सैंन मैं, घर लई बिसाखा बोलि
नायन नायो सीस पायनि कौ, कह्यो भेद सब खोलि
लै आई जब निकट, कुँवरि रही निरखि रूप अभिराम
'नागरिया' ढिग बसी महल मैं, पूरे मन के काम ॥ ४४ । १६४ ॥

इकताल

अरी देखि ए मुरली वाला प्रान जान
फैटा जरदईअमैठा तिस पर, तुरराना फरवाँन
जुल्फ के पेच परे, लखि आनन पान चबान
भौंहैं कसौंहैं, चस्म छकौहैं, मारत है मुसकान
दिल कूँ भावत, गैंद चलावत, गावत होरी तान
ठेसि लगी दिल, ओ री भई मन मोहन पर कुरबान
यहो सदा हैं अंग अदा हैं, देखि फिदा है ज्यान
किया घर घर इस्क उजागर, 'नागर' स्याम सुजान ॥ ४५ । १६५ ॥

राग ईमन इमन इकताल

इस होरी खेल बिच, इतनी इज्तराबी क्या
टुक रोक चलो दिल कौ, इहाँ रुकता नहीं क्या
छूवो मत, देखते है नजरबाज लोग
जाहिर जहान बीच, इश्क करना है क्या
आप ही गुलाल साथ, आते हो क्या
लिपटे ही जाते हो, क्या जी यह क्या
मस्त हाल साहिब हो, तुमको नहीं नंग
'नागर' पियारे जान देखो, इतना भी क्या ॥ ४६ । १६६ ॥

---

१६४. जराय = (नग) जटित। झीनौ = महीन, बारीक। झबा = झावों। सैंन = संकेत, इशारा। काम = कामना।

१६५. अमैंठा = लपेटा। तुरराना = तुर्रा, कलँगी। फरवांन = फहरा रहा है। जुल्फ = अलक। पेंच = घुमाव-फिराव। छकौहैं = नशे से चूर। मारत हैं मुसकान = मुसकुरा रहे हैं। तान = संगीत में स्वरों का कलापूर्ण विस्तार। ढोरी = किसी के पीछे पीछे लगे रहने की प्रवृत्ति। कुरबान = निछावर। अदा = हाव भाव,। फिदा = मुग्ध।

१६६. इज्तराबी = घबराहट, विकलता। नजर बाज = देखने वाले। नंग = निर्लज्जता, बेहयाई।

राग अड़ानौ, इकताल

गाँस गँसीली ए बातें छिपाइए, इश्क न गाइए, गाइए होलियाँ
गेंद बहानें न बीरा चलाइए, सूधें गुलाल चलाइए झोलियाँ
लोग बुरे चतुरे लखि पावेंगे, दाबे रहो दिल प्रीत कलोलियाँ
पाँय परो, न डरो पिय 'नागर', हाय करो मति बोलियाँ ठोलियाँ ॥४७॥१६७॥

तिताल

भरि भाजत इहिं ओर सबनि मिलि, गहि लीनौं चित चोर
उरझि गयो पिय बाहु लतनि बिच, परे प्रेम झकझोर
अप अपनौं मन भायो करि, लई पिचकारी करन मरोर
'नागरिया' लैं आई प्यारी ढिग, बाँधि पीत पट छोर ॥४८॥१६८॥

इकताल

जात कितैं कतराए, लाल रँग होरी हैं
है रहे या ब्रज बीच दुबहियाँ आई नवल किसोरी हैं
दाबे रहो अब, बचे बहुत दिन, कहा चाचर मैं चोरी हैं
'नागर' छैल छछंद छली तुम, मैं करी ए सो थोरी हैं ॥४९॥१६९॥

राग बिहागरो, इकताल

रँग हो हो हो, होरी खेलैं लाडिली वृषभान की
दामिनि अंग, रूप अभिरामिनि, स्वामिनि तिय रसखान की
मास माघ सुदि राका निसि-मुख प्रथम खेल आरंभ है
होरी डाडो रुप्यो गवैरवैं, मनौ मदन रन खंभ है
बाजत डफ दुदुभि सहनाई गोमुख आनक भेर
सरसानौं फाग सुख औसर बरसानौं तिहिं बेर
नवसत अंग सिंगार साजि जे रंग भगी खिलवारि हो

---

१६७. गाँस = व्यंग, रहस्य। गँसीली = रहस्यमयी। बीरा चलाना = छेड़छाड़ में पान के बीड़े से मारना; पान के बीड़े के स्थान पर लोग मदार का गोफा, बतासा, चावल, महुए के पत्ते का बीड़ा आदि भी चलाते हैं। कलोलियाँ = कल्लोल, लहर, तरंग। बोलियां ठोलियां = वाणी के द्वारा छेड़ छाड़।

१६८. भरि = अंक भर कर। लई मरोर = हाथ मरोर कर छीन ली। ढिग = पास। छोर = (१) किनारा, (२) छीनकर।

१६९. कतराए = रास्ता छोड़कर। चाचर = होली का एक नृत्य। दुबहिया = हाथा-बाही, एक दूसरे की बाँह को पकड़ना।

अप अपनैं भवननि तें निकसी, बिच वृषभान कुँवारि हो
कुँवरि किसोरी जू की सोभा, लखि सबही तृण तोरैं
सूरजमुखी झुकि जात फिर, कँवल मनौं चौंर ढोरैं

बाबा औ' कीरति जू ता छिन, वारे रतन अमोल हैं
खेलन चली राजमंदिर ते, कुंडल हार सलोल है

देखी प्रिया जबै आवत उत, मनमोहन अति सुख बनैं
सावधान भए गोप सिमटि सब, बाजि उठे बाजे घनैं

दुहुँ दिसि गारि धमारिन को सुर, मिलि मंडप गयो छाय कैं
शिव समाधि छुटि गई श्रवन सुनि, मुनि मन रहे लुभाय कैं

उत नँद-नंदन रसिक-सिरोमनि, इत राधा अभिरामिनी
उडत अबीर गुलाल गगन चढ़ि, भई दिवस तै जामिनी

वृजनारी पिचकारी-धारा, दे रोकी अंचर पानि कैं
मुरि मुरि भरनि बचावनि छबि सौं, को करि सकै बखान कै

रूप लालची लाल बाल कौं, भरत हैं नियरैं आय के
गहि लीनै घनस्याम सबनि मिलि, दामिनि सी लपटाय के

अंग परस मै रंग बढ्यो, दोउ परिरंभन उरझानैं
'नागरिया' जब फिरी जीति कै, बजत चले सहदानैं ।।५०।।१७०।।

तिताल

रंग हो हो हो होरी मची
अगनित छुटत करन पिचकारी, चहुँ दिसि चमकत रतन खची

१७०. निसि-मुख = संध्या। डांडो = दंड; रेंट का पेड़ जो होली में गाड़ा जाता है। ग्वैरवैं = ग्वैंडे, गाँव के पास की भूमि। रुप्यो = रोपा गया; स्थापित किया गया। गोमुख = एक प्रकार का बाजा। आनक = बड़ा ढोल, विशेषतः युद्ध मे बजाया जाने वाला। भेर = भेरी, तुरही। नव सत = ९ + ७ = सोलह श्रंगार। सूरजमुखी = बड़े पंखे के आकार का एक राज-चिह्न। बाबा = पिता। (वृपभान)। कीरति = राधा की माँ का नाम। सलोल = चंचल।

लाल गुलाल लयो मुख मीड़नि, मृगनैनिनि की भौंह नची
लिपटि गई घनस्याम लाल सौं, चमकि चमकि चपला ललची
दुरत गइत फिर करत मनोरथ, दंपति ऋँखियाँ पीक रची
'नागरिदास' मिलनि, झकझोरनि, हो हो बोलनि, कोउ न बची ॥५१॥१७१॥

इकताल

होरी खेलि ठाढ़े दोऊ, केसरि की कीच बीच,
मोती बेसुमार परे हारनि रलक मै,
रंगनि बसनि भीजे, अंगनि लपटि रहे,
सरके सिंगार देखि, बिसरी पलक मै
स्यामा के सम्हारत है 'नागरिया' भूषन कौं,
त्यौं ही सखी स्याम की सु आनंद ललक मै
लालन के बेसर सु पाई प्यारी बेसरि मै,
प्यारी कर्नफूल पायो लाल की अलक मै ॥५२॥१७२॥

तिताल

चल मिलि भावते रस ऐन
खेलि भाग भुज अस मेलि दोऊ, मत्त द्विरद गति गैंन
सोहत बसन गुलाल सगमगे, अरु आलस बस नैन
'नागरीदास' दोउन मिलि कीनो, नव निकुंज सुख-सैंन ॥५३॥१७३॥

राग परज इकताल

आजु होरी खेलत साँवरो
पिचकारनि धारनि बूका बंदन उड़ि, छाय रह्यो नँदगाँव रो
निरखि मदन जारी रँगबोरी, आय गिरयो तन तावरो
'नागरीदास' चतुर हसि डारत, चितवनि मे उरझाव रो ॥५४॥१७४॥

---

१७१. रतन खची= यह पिचकारी का विशेषण है। रत्न खचित (पिचकारी)। पीक रची=(चुंबन लेने के कारण) पान की पीक से रँगी हुई।

१७२. स्यामा=राधा। ललक=लालसा, उमंग। रलक=हिलते हुए।

१७३. मिलि=मिलो। भावते=प्रिय। ऐन-अयन, सदन। रस ऐन=रस के अयन; परम रसीले। अंस=कंधा। गैंन=गमन। द्विरद=दो दाँत वाला; हाथी। सगमगे=भीगे, सिक्त। सैंन=शयन।

१७४ बूका=बुक्का, अभ्रक के कण। बंदन=रोरी। तावरो=ज्वर; ईर्ष्या, जलन; गर्मी के कारण सिर मे आनेवाला चक्कर।

तिताल

होरी खेलै मोहनी मोहन संग
धावनि भरनि बचावनि री, रह्यो चाचर मे मचि रंग
बीननि परनि प्रवीन मिलावैं, नूपुर मधुर मृदंग
गावत गारि धमारि नारि नव, निर्तत स्याम सुधंग
रंग भरे लपटात भुजनि बिच, रुकत न प्रेम उमंग
'नागरीदास' भई अँखियनि की, निरखि निरखि गति पंग ॥५५॥१७५॥

तिताल

रँगीली गलिन बिच हो हो होरी
इत नँद-नंदन रसिक लाडिलो, उत वृषभान किसोरी
उड़त गुलाल कछू नहीं सूझत, झकझोरा झकझोरी
'नागरीदास' परसपर ढारत, भर भर कनक कमोरी ॥५६॥१७६॥

इकताल

गले बिच इस्क परया जंजाल
क्यों मैं गई दिवानी पेखनि नँद-नंदन दा ख्याल
मुह-गुलाल-पूछण नू मेरे लाया रिंद रुमाल
'नागरीदास' हुई उस छिण तैं, सब सुख दी हटताल ॥५७॥१७७॥

तिताल

अरी वृजमंडल परम सुहावनो, इहाँ सदा सहज रस रीत
नंद गाँव बरसाने की अब, बहु बिधि बाढ़त प्रीत
उतै कुँवर नँदराय को, इत श्री वृषभान कुमारि
लगन लाज उरझौं हैं दोऊ, नाहिं सकत निरवारि
गनत रहत दिन फाग के, यह आयो सो फाग
ठौर ठौर डफ बाजहीं, अब दबत नहीं अनुराग
आजु खेलि आरंभ है, उमग्यो हियैं हुलास
ये इत उत तैं आए दोऊ, बिच सकेत निवास

---

१७५. परनि = परन नामक वाद्य विशेष।
१७६. कमोरी = गगरी।
१७७. पेखनि = देखने के लिए।
पोंछने के लिए। रिंद—

गान रंग गहगड मच्यो, ब्रज रह्यो कुलाहल छाय
उडत अबीर गुलाल सौं, नभ दिनमनि नाहीं दरसाय
छैल छली छिपि साँवरो, फिर चल्यो प्रिया भरि भाजि
तब जुवतिनि मिलि गहि लयो, इत उटी दुंदुभी बाजि
रोकि दिये बिच कुंज कें, रही ढिग श्यामा मीत
'नागरिया' इहि बिधि रहो, नित बरसाने की जीत ।।५८।।१७८।।

तिताल

रगमगे बसन गुलाल रंग, दोउ छबि सौं लगि लपटाय खरे
प्रतिबिंबित तन मौज हौज पर, छुटत फवारे रंग भरे
कुंज महल रस फाग मनोहर, रूप रीझि भीजि उघरे
'नागरि नागर' बदन-चंद मैं दृग-चकोर फिरि फिरि न टरे ।। ५६ । १७६ ।।

इकताल

दुहुनि मैं आजु रहसि रस फाग
ताल तान बधान गान धुनि, परज गरजि रह्यो राग
बीन रबाब मृदंग मुरज मिलि चल्यो झमकि झंकार
सखिन सहित दंपति गति लै लैं, चलि छोड़त पिचकार
दुहुँघाँ ते आवनि उलटनि की, छबि बरनी नहिं आवैं
अलबेली सहचरि चाचर मैं, चहचरि चहुल मचावैं
नूपुर नाद सुनत बिथकित रहे, कोकिल मधुप मराल
उड़त गुलाल, गगन आँगन सब हरित कुंज भई लाल
हुई अरुन, सगबगे बसन तन, रंगमगे नेह नवीनैं
लटपटाय लपटानैं तिहि छिन, गउर स्याम रँग भीनैं
सिथिल अलक, टूटी उर माला, गर बहियाँ, मुसकाते
'नागरिया' हिय बसे महल मै, होरी के मदमाते ।। ६० । १८० ।।

---

१७८ निरवारना = निवारण करना, छोड़ना । दिनमनि = सूर्य । भरि = छाती से लिपटाकर ।

१८० रहसि = आनंद । परज = एक राग विशेष । बीन = वीणा । रबाब = एक प्रकार की तंत्री; तार का एक वाद्य विशेष । मुरज = एक प्रकार का मृदंग । दुहुंघाँ = दोनों ओर । चहचरि = आनंद । चहुँल = चहल पहल । सगबगे = भीगे । रगमगे = रंग (प्रेम) में मग्न ।

राग खँभायची, तिताल

आजु फाग सुख सरसानौ, बरसानौं सोभा देत,
आए श्री वृषभान जू कै गोपराज
सुन्दर सिंगारे सब बीच बलराम स्याम,
सोहैं संग रंग भरयो कुँवर समाज
कीरति जसोदा मिलि जारिन मैं झाँकैं झूमि,
मिले वृज राजा दोउ उर लपटान
होत रस रीतिन के बिबिध बिनोद तहाँ,
धन-धन बरखै महिन्द्र बाबा वृषभान
ठौर ठौर बाजैं डफ, गावै वृज नारि गारि,
गहमह भीर भई, उमग्यो हुलास,
होरी को त्योहार, फिरि मिल्यो समधानौ तामें,
आनँद कुलाहल ह्वै बीच रनिवास
नंद को कुँवर वृषभान गोद लियै बैठे,
लियै नँद वृषभान की कुमारि
दुहुनि कैं हाथ दै गुलालहि खिलाए जब,
'नागरिया' बहुतनि दीनौ प्रान वारि ।। ६१ । १८१ ।।

आन कवि कृत । तिताल

रह्यो रंग होली सरसाय
एकण दिस प्यारी हुई, हुवा एकण दिस पिव आय
गायै सखी सुहावणी साथे, रुंज मुरज सोहैं साज
कुंज सदन रे आगणौ, रह्यो मदन झुझाऊ बाज
फागुण समै सुहावणौ, खेलै नवल रँगीला खेल
उड़ि गुलाल घुमड़ी घणौ, बहि चली धरणि रँग रेल
लूमि झूमि लपटाइया दोन्यौं, मुख मांडण रै ख्याल
रसिक बिहारनि लाडिली, पिय 'रसिकबिहारी' लाल ।।६२।।१८२।।

---

१८१. जारिन = जाली; दीवाल में कटी हुई जालियाँ । खिलाए = खेलवाया ।

१८२ एकण = एक । रुंज = (?) कोई वाद्य विशेष । साज = वाद्य सामग्री । झुझाऊ = जुझाऊ; युद्ध का बाजा रेल = हेला, प्रवाह । लूमि = लटककर । मांडण = मंडन, (गुलाल मलकर) सुशोभित करना । रे = के । ख्याल = विचार ।

राग सोरठ

कान्हा निलज गारी जिन दैं रे
हौं हारी हा हा अब तोसों, नैक लाज मुख लैं रे
अब या बगर भूलि नहिं ऐहौं, सौंह बबा की हैं रे
'नागरिया' नव वधू बिगोई, होरी मांझ सबैं रे ॥ ६३ । १८३ ॥

इकताल

हौं पिय नैननि कीनी बौरी ।
कहा कहौं कल न परत दिन रतिया,
सोवत जागत चलत फिरत अब,
मोहि तलफत ही बीतत छिन छिन,
लगी इहिं मुख की ढोरी ।
इन नैननि के हाथ बिकानी, देखनि कौं उठि दौरी ।
'नागरिया' घर बरजि तरजि रही, हौं न रही, जिय लरजि
डारी तुम होरी मैं रूप ठगोरी ॥ ६४ । १८४ ॥

इकताल

मोहन वारी, बसि कीजैं
हँसि लीजैं होरी मैं हो हरि, ऐसी गारी क्यो दीजै
हा हा पाय परत हौं प्रीतम, मो जिय लाजन भीजै
'नागर' नवल बिहारी प्यारे, जो चाहैं सो लीजै ॥ ६५ । १८५ ॥

तिताल

प्यारी जू के खुलि गए सौंधैं भीनैं बार
देखि सखी यह रीति अनोखी, बँधि गयो मन रिझवार
झूलि रह्यो बैना ग्रीवा ढिग, टूटि रहे उर हार
'नागरिया' यह छवि हियैं बसी, बिच मनमथ रंग बिहार ॥ ६६ । १८६ ॥

इकताल

बोलैं रंग होरी होरी होरी, डोलैं रस मत्त गोप वृंद
ता मधि मधिनायक बृज-चंद नन्द-नन्द

---

१८३ सौंह = सौगंध, शपथ । बिगोई = (१) भिगोई (२) खराब किया (३) तंग किया । सबेरे = प्रातः काल ही । बगर = घर ।

१८४. हौं = मुझको । बौरी = बावली, पगली, दीवानी, मत्त । कल = चैन, आराम । ढोरी = प्रवृत्ति ।

१८५. वारी = मैं बलिहार गई ।

निकसत जहाँ जहाँ हौज, केसरि की कीच
करत हैं कुलाहल, वृज बीथिन के बीच
भरत हैं निसंक जाय, तोरि कैं किवार
छाँडत मन भायो करि, फाग मगन ग्वार
सुनि सुनि डफ दुंदुभी, बिच मुरलिका रसाल
झुंडनि मिलि झूमि झूमि, आईं वृज-बाल
गाइ उठी गारि, गरजि रूप की घटा
उडि गुलाल दुहूँ ओर, अटि गई अटा
होत विविध खेल, बढ़यो सिंधु-रस-हिलोर
गिरि गिरि तहाँ परत गलिन माँझ हार डोर
नीकैं नहिं सकत लखि, जिनके मुख मयक
तिनकौं लाल धूँधरि मैं, निसंक भरत अक
छूटि छूटि अंचर गए, खूटि खूटि बार
हार टूटि पगनि परत, मानत नहिं हार
राधे सैन पाय सिमटि, धाईं सब बाल
कहि हो हो होरी होरी पकरे नँदलाल
खैंचत इक किंकिनि कटि, फिरत संग संग
गोरी लपटात एक, लपटत अंग अंग
गउर स्याम उरझनि छबि, बढ़यो रंग रंग
'नागरिया' निरखि नैन, भए पंग पग ॥ ६७ । १८७ ॥

इकताल

रस फाग आजु, बाजें डफ दुंदुभि सहनाई
कल गारनि धमारनि धुनि, गान रंग छाई
सब खेलनि को उल्हए, उतकंठित मन नैना
बहु साजि कैं चली हैं, मानौं अनंग सैना
उत मोहना रँगीले, इत राधे रग बोरी
वृज बीथिन परसपर, माची हैं रंग होरी
पिचकारी रंग धारा, बहु छूटत सुहाई
घुमड़ि गुलाल धूँधरि, कछु देत ना दिखाई

१८७ भरत हैं = अंक मे भरते है। रसाल = मधुर। अटि गई = भर गई, परिपूर्ण हो गई। धूँधरि = धुँधलापन। डोर = डोरा, तागा। खूटि खूटि = खुल खुल। सैन = इशारा, संकेत।

भरि भाजत, पकरि लै, सिर नावत कमोरी
दुहुँ ओर ह्वै रही हैं, झकझोरा झकझोरी
पट अचर उसरिगे, उर हार डोर टूटे
झुकि झूलत हैं बैंना, बर बार पीठ छूटे
तिय दामिनीन घेरयो, घन स्याम रंग भीनौं
कोउ लै गई है बसी, पट पीत खैंचि लीनौं
वनमाला कौं उतारत, बनमाल होत प्यारी
यह छवि 'नागरिया', टरै न जिय सौं टारी ॥ ६८ । १८८ ॥

आनकवि कृत तिताल

विच वृज नारयां रै झुंड, राधा रूप हैं रूड़ो
ग्रीव झुकाया झूमक नाचैं, सीस के सारो जूड़ो
केसरि रंग भीजि साड़ी में, झलक रह्यो छैं चूड़ो
देखि छक्या पिय 'रसिक बिहारी', रह्या धीर धर कूड़ो ॥ ६९ । १८९ ॥

इकताल

वृज फागुन आज सुहायो
आनन्द रूप धरि आयो
हुल्लास हिये न समावैं
नट नागर धमारि गावैं
इत वधू वृंद सुखरासी
उत रंग भरे वृजवासी

दोहा—वृजवासी रहे रग भरि, मोहन कैं अनुराग
जुवति जुत्थ सनमुख चले, मुदित मचावत फाग ॥ १ । १३१ ॥

मुदित ह्वै फाग मचावै
डफ कुंज गुजरित आवै
भीनैं रँग सौ भाँति भली हैं
मनु काम की फौज चली हैं

---

१८८. गारनि = गाली । धमारनि = (१) एक प्रकार का गाना (२) धमा-चौकडी । भरि भाजत = आलिंगन करके भागते हैं । कमोरी = कमोरी में घोरा हुआ रंग । उसरिगे = हट गया, बैंना = वेणी ।

१८९. नारयां रै=नारियो के । रूड़ो = सुंदर । झुकायाँ = झुकाने पर । झूमक=सनोरा; साड़ी के शिरोभाग में टँके हुए घुँघुरू । सांरो = संपूर्ण । छैं = है । चूडो = चूडामणि, एक शिरोभूषण । छक्या = मस्त हो गया । कूडो = ? ।

सब करत कतूहल ग्वाला
मधिनायक नन्द के लाला

दोहा—मधिनायक नँदलाल उत, इत राधे सुकुवारि
संग छिपाकर कैं मनौं, उडगन सब वृजनारि ॥ २ ।१३२ ॥

उडगन सब वृजनारी
उमड़ी आवैं गावत गारी
मुख तै कछू घूँघट टारे
सौहै सुन्दर स्याम निहारे
चली अछनि अलच्छ कटाछैं
माच्यो नैन खेल अति आछै

दोहा—नैन खेल आछे मच्यो, दुहुँ दिसि चतुर खिलार
रहै जु इत उत रीझि कै, गउर स्याम रिझवार ॥ ३ । १३३ ॥

रिझवार स्याम अरु गोरी
महा मची पररपर होरी
पिचकारिन को झर लायो
घन सावन सौ दरसायो
भयो उड़ि गुलाल अँधियारो
बिच झलकत लाल टिपारो

दोहा—लाल टिपारो झलकहीं, धूँधरे मांझ गुलाल
तिहिं सुध धावत भरन, मनहरनि तरुनि वृजबाल ॥ ४ ।१३४ ॥

मनहरनि तरुनि वृज-बाला
मनु खेलत दामिनि माला
इक भरत अक घनस्यामैं
इक खैंचत मुक्ता दामै
इक पौछति हैं मुख पानन
इक लेत उगारहि आनन

दोहा—आनन लेत उगार इक, घायल बानन मैन
इत उत दोऊ रसपगे, खगे नैन बिच नैन ॥ ५ । १३५ ॥

खगे नैन बिच नैना
रँग कह्यो परत नहिं बैना

छूटे हार डोर, मनि माला
छूटे छबीले बार बिसाला
फूटी चुरिया, नीवी खुटी सी
ठाढी मैन की सैन लुटी सी

दोहा—लुटी मैन की सैन सी, थकी खेलि रस फाग
जीति लाल कौ लै चली, भरी महा अनुराग ॥ ६ । १३६ ॥

अनुराग भरी रँग माहीं
दई गउर स्याम गरबाहीं
मोहैं फाग खेल गठजोरी
मनमोहन सग किसोरी
आए काम के कुंज निवासनि
सुख दीनो 'नागरी' दासनि ॥ ७० ।१६० ॥

आन कवि कृत, राग

मनमोहन सोहन स्याम नन्द ढटोना री
बिन देखे पल कल न परत हैं, मेरो जीव लगोनां री
होरी मै मोपैं ठगोरी सी डारी, हौं रिझई रीझि रिझौनां री
खेलौंगी मिलि 'रसिक बिहारी' सौं, वा बिन खेल अलोनां री ॥ ७१ । १६१ ॥

राग धनाश्री, इकताल

तूही कहि कैसैं करूँ, मेरो रूप दुराऊँ किहिं भाँत री
घूँघट मैं नहिं दबत निगोडी, मेरे गउर बदन की कांत री
निकस न सकौ भौंन तै बाहर, कौन बन्यौ यह जोग री
हौं सुन्दर अरु या बृज के हैं, रूप बावरो लोग री

---

१६०. हुल्लास = उल्लास, प्रसन्नता । जुत्थ = यूथ, समूह । मधिनायक = मुख्य नेता, प्रमुख। छिपाकर = चद्रमा । उडगन = तारे । सौंहें = सामने । अछनि = अच्छनि; आँखो से । अलच्छ = अलख, अदृश्य रूप से । आछें = अच्छे । झर = झडी । टिपारो = मस्तक मे लगा हुआ टिप्पा । मुक्ता दामैं = मोतियों की माला को । उगार = पान की पीक । खगे = धँसे । नीवी = फुफुती । खुटी = खुली ।

१६१. ढटोनां = लडका । पल = एक क्षण । कल = सुख, चैन । लगोना = लगा लेने वाला । अलोना = फीका, रस-हीन ।

मोहन कुँवर लग्यो हैं, आतुर अधिक अधीर री
मोहि रूखी लखि, नारि नाय रही, जात नैंन भरि नीर री
बिन होरी यह गति जासौं, कैसें रहूँ बचाय री
अब 'नागर' डफ फाग झुम्झाऊ, मेरे सिर पर बाजे आय री ॥ ७२ । १६२ ॥

राग

मोहि होरी खेलन दे नंद-बारे सौं
छाड़ि छाड़ि बहियाँ ननदी, यह ऊधम देत सबारे सौं
लै लावन, कसि लाग, बस गहि, खेदि आऊँगी द्वारे सौं
'नागरि' ये अब तो टरिहै नहि, फागुन-रग-अखारे सौं ॥ ७३ । १६३ ॥

राग

सबकी हैं चोट निसाने पैं
नैना-बान छुटैं चहुँधा तैं, चन्द्रिका-बहरक-बाने पैं
लाखनिहू की भीर लगि रही, मन लोचन परसाने पै
जा नागर' पर यह ब्रज अटक्यो, सो अटक्यो बरसाने पै ॥ ७४ । १६४ ॥

आन कवि कृत, राग नाइकी तिताल

हो हो होरी कहि बोलैं सब बृज की नारि
नन्द गॉव बरसानै खेल मैं, गावत इत उत रस की गारि
उड़त गुलाल अरुन भयो अंबर, चलत रग पिचकारी की धारि
'रसिक बिहारी' भान-दुलारी मधिनायक दोऊ खिलारि ॥ ७५ । १६५ ॥

आन कवि कृत, इकताल

ए जू नीकैं तुम जाहु चले, जिन भरो मेरी सारी

---

१६२. कांत = कांति। जोग = योग, संयोग। नारि = गरदन। नाय = झुकाकर।

१६३. बारे = पुत्र। सबारे = प्रातः काल, सबेरे। लावन = रस्सी, पगहा। लाँग = फाँड़। कसि लाँग = कछोटा मारकर। बंस = बाँस, लाठी। खेदि आउंगी = भगा आऊंगी।

१६४. निसानां = लक्ष्य-बिंदु। चहुंधा = चारों ओर। चंद्रिका = मोर-पंख की चंद्रिका। बहरक = बैरक, सैनिक झंडा। बाने = (सैनिक) वेश। परसाने = प्रसन्न।

१६५. अंबर = (१) आकाश। (२) वस्त्र। भान-दुलारी = वृषभान-दुलारी, राधा।

सुनि स्याम सुनि स्याम, सौहैं तिहारी
याही वेर छिनाय लैहुं, कर तें पिचकारी
अब कछु मोपैं सुन्यौ चाहत हो गारी
घर यैंई सीखे ढंग 'रसिक बिहारी' ॥ ७६ । १६६ ॥

तिताल

क्यौं सतरानैं होरी हैं जू सुकुँवार
गरें परैं बिन न्यारो रहौ क्यौ, तिहारे हिय को हार
पंडित मदन दयो मोको यह, फागुन मंत्र बिचार
गारि तिहारी प्यारी प्यारी लागत है, ए 'नागरिया' इहिं बार ॥ ७७ । १६७ ॥

राग नाइकी इकताल

साँवरो खेल अटपटो खेलैं
को खेलैं वाके सँग सजनी, बरबट धीठ भुजन भरि झेलैं
मोही सौं कछु वैर पर्यो, तकि पिचकारी उर बिच पेलैं
'नागरीदास' लाज हौं भीजौं, बड़ड़े नैन नैन सौं मेलैं ॥ ७८ । १६८ ॥

आन कवि कृत

खासा चाकर रहस्यां जी म्हेराज रा,
चाकर रहस्यां राज कुँवर किसोरी जी
फूल बिछाता जास्या आगैं, लियां पीत पट झोरी जी
सूरजमुखी हाथ लिया फिरस्यां, छांहि कियां मुख गोरी जी
'रसिक बिहारी' रह्या टहल मैं, होसी रंग रली भरि होरी जी ॥ ७६ । १६६ ॥

आन कवि कृत, तिताल

भीजै म्हारी चूनरी हो नन्दलाल

---

१६६. यैंई = ये ही । भरो = घरो ।

१६७ इहिं बार = इस समय ।

१६८ वरवट = बलपूर्वक, बरबस । झेलैं = अपनी ओर खींच लेते हैं । पेलैं = धँसाते है । बडडे = बडे, विशाल ।

१६६. खासा = अच्छा । चाकर = नौकर । रहस्यां = रहवा है । म्हेराज = महाराज का । जास्यां = जाता है । लियाँ = लिए हुए । सूरजमुखी = बड़े पंखे के आकार का एक राज चिह्न । फिरस्याँ = फिरता है । होसी = होती है । भरि होरी = फागुन महीने भर ।

मति नाखौ केसरि पिचकारी, हा हा मदन गुपाल
भीजे वसन, उघड़्यासी अँग अँग, कौंण निलज यह ख्याल
'रसिक बिहारी' छैल निडर थे, मानै तो जंजाल ॥ ८० । २०० ॥

दोहा—मति टोको, रोको मती, चला जाहु इण गैल
रंग भरो मति भांवता, मति जी मति पिय छैल ॥ १ । १३७ ॥

मनही मैं ए रहण द्यौ, इसा अटपटा फैल
रंग लग्यो छिपसी नहीं, मति जी मति पिय छैल ॥ २ । १३८ ॥

चुगल चवाई गाँव यो, बुरा लोग अण खेल
काईं खेलो ख्याल ए, मति जी मति पिय छैल ॥ ३ । १३९ ॥

'रसिक बिहारी' ख्याल ए, सीख्या भला अड़ैल
पगां पड़ांछां हाथ जी, मति जी मति पिय छैल ॥ ४ । १४० ॥

राग

कन्हैया माई आँखिन होरी मचावै
आँखियन मैं अनुराग अरुनई, आँखियन रंग रचावै
आँखियन मै ललचाय लालची, आँखियन मैं ललचावै
'नागरीदास' पैठि आँखियन मैं, फिर आँखियन तरसावै ॥ ८१ । २०१ ॥

राग झँझौटी राग झुरमटरा

अनीहा हो नंद महर दा नागर, मैंन रंग भरै बरबट रा
क्यो कर पनियाँ जाऊँ सजनी, राह ठाढ़ो पनघट रा
हा हा करत, भरत जुवतिन कौं, 'रसिक बिहारी' न टरा ॥८२॥२०२॥

---

२००. नाखौ = डालो, चलाओ । उघड़्यासी = उघर जाता है, खुल जाता है । कौंण = कौन, कैसा । ख्याल = खेल । थे = तुम । मानै = म्हांनै = मुझको ।

दोहा = १ इण = इन ।

२. रहण द्यौ = रहने दो । इसा = ऐसा । फैल = काम । छिपसी = छिपता ।

३. चवाई = निंदक । अण = यह । कांईं = क्यों ।

४. अड़ैल = अड़ जाने वाला । पगां = पैरों पर । पड़ाँछां = पड़ते हो, रखते हो ।

२०१. रचावै = रँगाता है ।

२०२. अनीहा = (विपरीत लक्षणा से) लोभी । दा = का । भरैं = आलिंगन करते हैं । बरबट = बरबस, जबरदस्ती । रा = का । भरत = आलिंगन करते हैं ।

आनकवि कृत, राग काफी

कैसैं जल जाऊं मैं पनघट जाऊं
होरी खेलत नंद लाड़िलो री, क्योंकर निबहन पाऊँ
वे तो निलज फाग मदमाते, हौं कुल-बधू कहाऊँ
जो छुवै अंचर 'रसिकबिहारी', तो हूं धरती फार समाऊँ ।८३॥२०३॥

राग काफी, आनकवि कृत

मनमोहन मेरी अँगियाँ रँग डारी रे
या होरी मै लाज रहैं क्यूँ, सास नणद डर भारी रे
तुम तो छैल गैल नित रोको, हौं आऊं सँग नारी रे
काहे निडर धीट बटपारे, हुवा 'रसिकबिहारी' रे ॥८४॥२०४॥

तिताल

हरि सौ अटकी ग्वारनि गोरी
लगि रही रूप सुरत चित डोरी
मद मोकल गज ज्यौं गोकुल मै, कुल संकुल गहि तोरी
बिन दधि ही दधि बेचत बीथनि, कछु सुधि रही न थोरी
बिरह बिबस जानी न, गई कहूँ सिर तैं गिरत कमोरी
'नागरिया' कौतिक सब लागी, बालक बैस किसोरी
खुलि गए बार, सुधि न अंचर की, फिरत प्रेम झकझोरी ॥८५॥२०५॥

बादणो

प्रथम बीज नैननि बए, मुसकनि अंकुर जागे री
नेह बेलि रही फूल कैं, भर होरी फल लागे री
खेलो हो रँगीली होरी रंग सौं
प्रगट होन लगी यारियाँ, ब्रज फाग-अमल सरसानौ जू
'नागरिया' उरझै नंदीसुर, सुबस बसो बरसानौं जू
खेलो हो रँगीली होरी रंग सो

---

२०३. निबहन पाऊं = बचने पाऊं ।

२०४. नणद = ननद ।

२०५. मोकल = मुक्त, छूटा हुआ । संकुल = शृंखला ।

बरसानै नँदगाँव मैं, फाग खेल है गरवा री
जीति रही वृज नागरी, हारे हरि भरिवा भर वा री
खेलो हो रँगीली होरी रंग सो ॥८६॥२०६॥

आजु खेलत होरी साँवरो
पिचकारनि धारनि बूका वंदन, उड़ि छाय रह्यो नँदगाँव रो
निरखि मदन जोरी रँग बोरी, आय गिरयो तन तावरो
'नागरीदास' चतुर हँसि डारत, चितवनि में उरझाव रो ।८७॥२०७॥

होरी खेलैं मोहनी मोहन संग
धावनि भरनि बचावनि री, रह्यो चाचर मे मचि रंग
बीननि परनि प्रवीन मिलावै, नूपुर मधुर मृदंग
गावत गारि धमारि नारि नव, निर्तत स्याम सुधंग
रंग भरे लपटात भुजनि बिच, रुकत न प्रेम उमंग
'नागरीदास' भई अँखियनि की, निरखि निरखि गति पंग ॥८८॥२०८॥

रग

रँग मोहन के अनुरागी
लोचन कहा दुरावत हेली, नवल रैन मिलि जागी
झलकत उर आनंद रंग तुव, अंग-अंग रस पागी
या होरी मै 'नागरिया' दृग, प्रीत स्याम सौ लागी ॥८६॥२०६॥

राग इमन

मुखारी बेसरि कान्ह सुधा री
नैन मिलाय सकुचि उरझावत, उरझे बाल विहारी
उरझि गए बनमाल पीत, किंकिनि उरझी सारी
'नागरीदास' फाग मे उरझे हिय, उरझे पिय प्यारी ॥६०॥२१०॥

———

२०६. यारियाँ = दोस्ती, प्रेम।
गुरु, बड़ा, भारी। भरि
२०६. दुरावत = छिपाती है
मिल कर।
२१०. मुखा री = मुख की

१३ फूल रचना

दोहा—फूले फूलनि स्वेत बिच, अलि बैठे मधु लैंन
दंपति हित वृंदा बिपिन, धारे अगनित नैंन ॥१॥१४१॥

रँग-रँग भूषन फूल के, रहे फूल तन भूल
अंतर की बाहिर मनौं, प्रगटी अँग अँग फूल ॥२॥१४२॥

बन फूल्यो, फूल्यो जु मन, फूल बेस अभिराम
सबैं करी फूलनि सफल, मिलि कैं गोरी स्याम ॥३॥१४३॥

फूले फूले लसत हैं, दोउ दिए गर बाँह
लखि फूली 'नागर' सखी, फूली कुंजनि माँह ॥४॥१४४॥

राग बिहागरो, ताल चपक

फूले बहु फूलनि सौं वृंदावन सोभा देत,
तामैं फूली राका निसि, अति छबि छाई हैं
कुंज-कुंज फूल पुज गुंजत मधुप माते,
फूलनि सौं मिलि मंद पौन सियराई हैं
सोहैं स्यामा स्याम पै सिंगार सजि फूलनि के,
फूल भई हिये लखि फूली बनराई हैं
'नागरिया' मिले दुहूँ फूलनि सफल करि,
भुज धरि अस, फूले फिरैं सुखदाई हैं ॥१॥२११॥

इकताल

फूलनि के वेष नव बसन बनाय लिए
फूलन की क्यारी सी कुँवरि अलबेली हैं
फूलनि के भूषन, बसन भाँति फूलन के,
फूल भरी छबि भरी, हरी ए नबेली हैं
अधर मधुर मकरद लैन फूलनि कौं,
फूल सौं अलिद स्याम भुजनि सकेली हैं

---

(२११) माते - मति (मु)। मिले-दूहूँ = दुहूँ (मु)।

दोहा (२) फूल तन = फूल के समान शरीर पर। फूल = प्रसन्नता।
पद २११—सियराई है = शीतल हो गई है। बनराई = बनराजि।

फूली हैं जुन्हाई, तामैं फूल पिक बानिन की,
निरखैं अकेली 'नागरि' सहेली हैं ॥२॥२१२॥

ताल चपक

फूल महल मैं फूली जोन्ह जगमगी
तामैं फूलि करैं केलि, स्यामा स्याम सुख झेलि,
फूलनि मरगजी-बास रगमगी
फूलनि की सैनी पर राजत बिथुरि बैंनी,
फूली है बदन जोति मदन अगमगी
फूल सर अरसानौं, फूल रंग भोए सोए,
'नागरिया' मोहे मन रीझनि डगमगी ॥३॥२१३॥

राग परज तिताल

सखि आजु निरखि सुख पुंज री
तहाँ मैन गान अलि गुंज री
दंपति हिय फूलनि लियैं हैं, बहु फूलनि सौं फूली नव कुज री
फूलनि की सैंनी पर दीन्हे गरबाहीं, तन फूलनि के सोहत सिंगार री
फूलनि की फूही हलि बरपैं लता हैं हो, तैसी फूल की बहत बयार री
फूली है जुन्हाई, फिरी मदन दुहाई हो, रहे अरुझि गउर स्याम गात री
फूलनि सफल करी 'नागरिया' आजुहो, भई परम सलौनी यह रात री ॥४॥२१४॥

राग खमायची ताल

सखि देखि नवकुंज, छबि पुंज कुसुमित महा,
करत अलि गुंज मनु रुंज बाजैं
जौन्ह जगमग, सुमन बास रगमग तहाँ,
मदन डर डगमगत लाज भाजैं
कमल सैनीय पर, कमल नैंनी कमल नैन,
चैंनी रँगे रंग रैंनी

---

२१२. सकेली है = समेट लिया; (भुजाओं से) खींचकर गले लगा लिया।
२१३. मरगजी = मसली हुई। सैंनी = शैया, सेज। बिथुरि = बिखरकर, खुल कर। बैंनी = वेणी; केश-पाश। अगमगी = अग्रवान; बढी हुई। फूलसर = पुष्पशर, कामदेव। भोए = आसक्त या लीन होकर।
२१४. फूही = वर्षा की नन्हीं-नन्हीं बूँदें। हलि = हिलकर।

लाल की अलक पर बाल फूलहि धर्यो,
फूल सौं लाल रची बाल चैंनी
हार मै हार, पिय करत मनुहार,
कर हार टूटैं, चिथुर वार छूटैं
सुरत-सुख सुभट दोउ, लिपटहीं निपट दृढ,
कंचुकी-पट-कपट-ग्रंथ खूटैं
गउर सांवर अंग संग, अति रग भुव भंग,
दृग दृगनि मैं पग कीनैं
मंद बतरानि मै दामिनी रदन दुति,
छबि सदन-बदन रस-मदन भीनैं
मधुर-मधु-अधर रस रसना रसत,
हसत-मुख हसत ताम्बोल दैंहीं
बँधे भुज पास, सुभ वास पुलकित अग,
'नागरीदास' सुख-रास लैंहीं ॥५॥२१५॥

राग केदारो, तिताल

फूलभरे पिय प्यारी, फूलनि सौं खेलहीं
फूलनि के हार, भूलत झबा फूलनि के, फूलनि चलाय झुकि झेलहीं
फूली है जुन्हइया कुंज, फूल के बिछौना तहाँ, दोऊ चढ़े आनंद अलेलहीं
'नागरिया' सखी सब फूलभरी आँखिनि मैं, फूलनि की कलिहि सकेलहीं ॥६॥२१६॥

---

(२१५) हार मे हार=हार (म)। (२१६) कलिहि=केलिहि (मु)

२१५. रुंज=वाद्य विशेष। रैनीय=शैया, सेज। चैंनी=चैन, आराम, सुख। रंग=आनंद, प्रेम, रति। रैंनी=रजनी, रात। मनुहार=खुशामद, मनावन, बिनती। सुरति=रति, इंद्रिय-संभोग। ग्रंथ=गांठ, ग्रंथि। खूटैं=खुल जाती हैं। भीनैं=भीना हुआ, सिक्त। वास=सुगंध। रास=राशि।

२१६. फूल भरे=प्रसन्नता से परिपूर्ण। झबा=झब्बा; तार या सूत का गुच्छा जो गहनों या कपड़ों में शोभा के लिए लगाया जाता है। फूलनि चलाय=फूलों से एक दूसरे को मारते है। झेलहीं=फूलों के आते हुए वार को अँगेजते है या रोकते हैं। अलेलहीं='अलेलह', मनमाना; जितना चाहे उतना या उससे भी अधिक।

इकताल

महकि रही फूलनि की नवल निकुंज सुवास
फूलनि की रचना लखि, ह्वैं जहाँ महकि काम हुलास
फूलनि के भूषन दंपति तन, चंद्रिका रही प्रकासि
'नागरिया' गावत केदारो, तहाँ सखी सुघर आस पास ॥७॥२१७॥

राग अडानौ, इकताल

एक गुलाब के फूलनि की, पँखुरी बिखरी सुख सेज झकोरैं
एक ही माला गुलाब के फूल की, झूलि रही तन साँवरे गोरैं
एक गुलाब की सीसी लसी कर, रंग सौ अंग सुढारनि ढोरैं
एक गुलाब के फूल कौ 'नागर', सूँघै दोऊ मुख सौं मुख जोरैं ॥८॥२१८॥

तिताल

फूलनि की सैनी पैं पिय प्यारी, मदन रंग रगमगे
फूलनि के हार पर मरगजे ह्वै रहे, उर गुलाब सगमगे
कानन फूल लागि रहे, आनन परम प्रेम अगमगे
फूली सखी 'नागरि' के नैंन खुभे दंपति मैं, फिरि न तहाँ तैं डगमगे ॥९॥२१९॥

तिताल

फूल महल कालिंदी कूल
फूल भरी द्रुमलता ललित जहाँ, जल परसत झुकि झूलि
फूलनि मैं फल मैननि के, दोउ धरैं ग्रीव भुज मूल
'नागरिया' नागर रस बस, सखि निरखि रही सुधि भूलि ॥१०॥२२०॥

आन कवि कृत । राग खंभायची, तिताल

कुंज पधारो रंग-भरी रैंन
रंग भरी दुलहिन, रंग भरे पिय स्याम-सुँदर सुख-दैन

---

२१७. लखि = लखो, देखो । चंद्रिका = चांदनी । केदारो = राग विशेष ।
२१८. झकोरैं = सुगंध की लहरें उठती हैं । ढोरैं = ढुलकाते हैं ।
२१९. रगमगे = रंग मे मग्न; विभोर । मरगजे = मसले हुए । सगमगे = सगबगे, सकुचाए हुए । अगमगे = अग्र-गमित; आगे आगे चल रहे हैं; पहले ही से प्रकट हो रहे हैं । खुभे = चुभे, गड़े । डगमगे = विचलित हुए ।

रंग भरी सैनीय रची, जहॉं रंग भरयो उलहत मैन
'रसिकबिहारी' प्यारी मिलि दोउ, करो रंग सुख सैंन ॥११॥२२१॥

आन कवि कृत। या पद की अलाप चारी मैं दैने ए दोहा

गहगड साज समाज जुत, अति सोभा उफनात
चलि बिलसां मिलि सेज-सुख, मंगल गलती रात ॥१॥१४५॥

रही मालती महकि तहॉं, सेवत कोटि अनग
करौ मदन मनुहार मिलि, सब रजनी रस रंग ॥२॥१४६॥

चले दोऊ मिलि रसमसे, मैन रसमसे नैंन
प्रेम रसमसी ललित गति, रग रसमसी रैंन ॥३॥१४७॥

'रसिकबिहारी' सुख-सदन, आए रस सरसात
प्रेम बहुत थोरी निसा, ह्वै आयो परभात ॥४॥१४८॥

आन कवि कृत, तिताल

सुरंगी सेजां रगमग रह्या सुख सैंण
हारां उरभ्या हार हिया रा, नैंणा उलभ्या नैंण
मनमथ अमल अगाधा बोलैं, आधा आधा बैंण
'रसिकबिहारी' प्यारी मिलि आनंद मै सोहत बितई छै रैंण ॥ १२॥२२२॥

———

२२१. सैंनीय = शैया, सेज। उलहत = उल्लसित हो रहा है। सैंन = शयन, सोना।

दोहा १. गलती = शीतल होती हुई।

२. मनुहार = मनस्तोष, तृप्ति।

३. रसमसे = रसमय, अनुरक्त।

पद २२२—सुरंगी सेजां = रंगदार, प्रेममयी सेज पर। सैंण = शयन। हिया रा = छाती का; सीने पर लटकता हुआ। नैंणा = नयनों से। अमल = नशा। बैंण = वैन, वचन। छै = है।

१४ राम जनम बधाई

दोहा—बढ़ि गहगड गहमह मची, घन सो धुरत निसान
उदयाचल अवधेसपुर, प्रगट्यो रघुकुल भान ॥१॥१४६॥

कोलाहल कल गान लखि, आनँद चहुल उतग
इत छिति के रहे छकि, उतै छके विमानी खग ॥२॥१५०॥

जनम समय आये जिते, बिप्र गुनी वृध बाल
लोकपाल से ते किए, दसरथ अवध नृपाल ॥३॥१५१॥

बिधिना तो सौ कहत हौं, ए पुरवो मम आस
बेगि बढ़ो फूलो फलो, जाचत 'नागरिदास' ॥४॥१५२॥

राग बिलावल ताल जात्रा

उदधि अवधेस, अर्धाग प्राची दिसा,
प्रगटे श्री राकेस जग-तम-हरन
गीत बहु बाद्य बेदादि आनंद रव
पूरि रह्यो नाद सुजस कृत गगन-मंडल धरन
बरषै नृप नगर पर अमर पहुपांजुली,
कनक मणि महल के सिखर सुखमा परन
'नागरीदास' रघुबीर बर जनम दिन,
डरत बिध्वंस बिच विश्व मगल करन ॥१॥२२३॥

दोहा १—गहगड = गहगड्ड, गहरा, घोर। गहमह = चहल-पहल। धुरत = शब्द करते है। निसान = नगाड़ा, डंका आदि बाद्य। उदयाचल = पूर्व में स्थित पौराणिक कल्पित पर्वत विशेष, जिसके पीछे से सूर्य निकलता है।

२. उतंग = उत्तुंग, उच्च। चहुल = चहल-पहल। छिति = पृथ्वी। बिमानी = आकाश मे विमान पर स्थित। खग = आकाशचारी, पक्षी, सूर्य चंद्र आदि सभी ग्रह, उपग्रह, तारे आदि।

३. वृध = वृद्ध।

४. विधिना = ब्रह्मा। पुरवो = पूर्ण करो।

पद २२३—अवधेस अर्धांग = महाराज दशरथ की अर्द्धांगिनी, कौसल्या। धरन = धरणी। अमर = देवता। पहुपांजुली = अंजलि मे भरे हुए फूल। पुष्पांजलि। परन = 'पर' का बहुबचन; पर = उच्चतम, सर्वाधिक।

राग बिलावल ताल जात्रा

अवधपुर धाम आराम विश्राम मुनि,
प्रगटे जहाँ राम अभिराम नयन
स्याम तन वरन, मनहरन, मंगलकरन,
घरन बिच उरनि निति अमल अयन
हंस के वंस मैं हंस ही उदित,
अवतंस जग, योग्य प्रसंस बयनं
'नागर' रघुनंद सुर बृंद बर वंद सो,
सच्चिदानंद करैं पलना सयनं ॥२॥२२४॥

राग सारंग तिताल

भयो है आज अवध आनंद झर, भीजि रहे नर नारि
राम जन्म सुख-सिन्धु बढ़यो, सब भूले अंग सम्हारि
गान निसान दान मगल धुनि, छई भवनि प्रति द्वार
'नागर' देव बिमाननि बिथकित, आए लोग बिसारि ॥३॥२२५॥

इकताल

राम जनम दसरथ घर बाजै बधाई
इतै अवध अरु उतै अमरपुर, दुहुँनि की मिलि धुनि छाई
खोजत रहे सदाशिव सुर मुनि जाकी रूप-रसायन, हाथ न आई
'नागर' धन्य अयोध्या-वासी, सो घर बैठे निधि पाई ॥४॥२२६॥

राग काफी तिताल

चलि री आजु है मंगलचार
राजा दसरथ कैं दरबार
अति सुन्दर श्री राम स्याम तन, प्रगटे राजकुमार
पावत गुनी दान बहु कंचन, अरु मनि मुक्ताहार
'नागरीदास' अमंगल मिटि गए, मगल लोक अपार ॥५॥२२७॥

---

(२२४) यह 'रामचरित माला' का पहला पद है ।

२२४. विश्राम मुनि = मुनियो के विश्राम की भूमि । अमल = मल रहित, पवित्र । स्वच्छ । अयनं = घर । हंस = सूर्य । हंस = राजहंस । अवतंस = (१) माला (२) कर्ण भूषण । (३) शिरोभूषण । वंद = वंदनीय, पूज्य ।

२२५. झर = झड़ी । अंग सम्हारि = अंगों का सम्हालना । छई = छा गई ।

राग काफी तिताल

श्रवध पुर बाजत आज बधाई
भई नगर पर भीर विमानन, प्रगट भए रघुराई
बरसत कुसुम धुजा कलसनि पर, अति सोभा उफनाई
'नागरीदास' गान मंगल धुनि, छाय रही सुखदाई ।।६।।२२८।

१५ श्री महाप्रभु जी को उत्सव

राग

राधा कृष्ण गोबर्द्धनधारी
वृंदाबन यमुना-तट-चारी
ललितादिक बल्लभ बिठलेस
मो मन करो कृपा आवेस
श्री नगेंद्रधर नागर नायक
निज बल्लभ-रस-पुष्टि-प्रदायक
तस्य कृपा ब्रज-भक्त-उपासी
सॉवतेस वृंदाबन-बासी ।।१।।२२६।।

राग

प्रगटे है श्री बल्लभदेव
बहु जीवन कैं भए सगुन सुभ, सो समुझो मैं भेव
गोकुल हरष, हरष गिरिराजहिं, ह्वैहीं बृज वैभव सुख सेव
'नागरीदास' गोबर्द्धनधारी, हरषे नेह लाड़ की टेव ।।२।।२३०।।

छप्पय

समैं घोर कलि काल, धर्म पद छेदन कीनैं
विफल क्रोध कंदर्प, जीति जीवनि कौं लीनैं

---

२२६. श्रावेस = श्रावेश , प्रवेश, संचार । तस्य = इसकी । सांवतेस = सावंत सिंह, नागरीदास ।

२३०. भेव = भेद, रहस्य । ह्वैही = होंगे । सेव = सेवा । लाड़ = प्यार । टेव = श्रादत, टेक । लाड़ की टेव = जिनको प्रेम की श्रादत है ।

लोभ मोह तैं करी, प्रवर्ति मारग मति पगी
चित चंचल अति अजित, नीच संगी बहुरगी
'नागरीदास' न और कुछ, त्रिविध ताप सीतल करन
प्रगटित वल्लभ वदन तिहिं-सरन-मत्र की हौं सरन। ३॥२३१॥

१६ हिंडोरा उत्सव

या पद की अलापचारी मैं देने ए दोहा

दोहा—भान भवन भइ भीर मिलि, झुंडनि झूलत बाल
सखी वेस तहाँ देखही, रूप लालची लाल ॥१॥१५३॥

झूलत झुंड उमड बहु, रँग रँग पहिरि दुकूल
बाला लाला को मनौं, रह्यो बगीचा फूल ॥२॥१५४॥

उतरि झमकि झूलैं चढ़ैं, रँग रँग पहिरि निचोल
लाल मुनीयन के मनौ, झुंडनि मची कलोल ॥३॥१५५॥

नील वसन गोरैं वदन, झूलत तिय रस-कंद
आवत जात विमान ज्यौं घटा लपेटैं चंद ॥४॥१५६॥

रमकत प्रिया हिंडोरनैं, छवि दुरि देखत पीय
वे झूलत, ये श्रमित कटि, लचकनि लचकत जीय॥५॥१५७॥

झूलत ठाढ़ी प्रियहि लखि, रहे लाल सुधि भूलि
फहरत अचर चद्रिका, वैंनी बरसत फूल ॥६॥१५८॥

---

(२३१) यह छप्पय "कलि वैराग्य वल्ली" में भी है।
२३१. प्रवर्ति मारग = प्रवृत्ति मार्ग, गृहस्थ धर्म। पगी = पंगु। सरन = शरण।
दोहा २. उमंड = उमड़कर। दुकूल = साड़ी। लाला = लाल रंग का एक फूल।
३. झमकि = नखरे की चाल के साथ। निचोल = वस्त्र, ऊपर से ढकनेवाला वस्त्र, ओढ़नी। लाल मुनिया = एक छोटी चिड़िया, जिसे एक पिंजडे में झुंड का झुंड पाला जाता है। कलोल = क्रीड़ा।
४. कंद = बादल। ५. रमकना = झूले पर बैठकर झूलना। ६. ठाढ़ी = खड़ी होकर।

झूलत छबि उमची अधिक, मचकत द्रुमची बाम
उचटैं चोटी पीठ मनौं, लगैं चमोटी काम ॥७॥१५६॥

दावन लावन दुहुनि के, बाजत आवत जोर
बेनी हार हिलोरहीं, बढ़ि झोटा झकझोर ॥८॥१६०॥

झूलत झोंटा चढ़ि गगन, बैंन गरज सम तूल
गउर घटा अरु साँवरी, बरसत हारनि फूलि ॥६॥१६१॥

बरजैं दूनी हठ चढ़ैं, ना सकुचैं, न सकाय
टूटत कटि द्रुमची मचकि, लचकि लचकि बचि जाय ॥१०॥१६२॥

'नागरिदास' हिंडोरनैं, सोभा मन अवरेखि
प्रेम झुलनि झूल्यो करैं, दपति झूलनि देखि ॥११॥१६३॥

राग मल्हार

झूलत रसिक मोहन राय
संग भामिनि, दामिनी घन बीच मनो दरसाय
कटि लचकि मचकनि चलत अद्भुत, लेत चित कैं चोरि
बढ़ि गई झूलनि, झनन झननन किंकिनी धुनि सोर
नील पीत दुकूल फहरत, टुटी नव बनमाल
गयो अंचर छूटि उर, डर मिलत झुकि झुकि बाल
छई चहुँ दिसि मेघ माला, छयो राग मलार
'दास नागर' तिहिं समैं, सुख बढ्यो विपुन विहार ॥१॥२३२॥

चर्चरी

नव कदंब अंब केलि चंपा गहबर तमाल,
परसत झुकि जमुना तीर लगि समीर लहर

---

(२३२) झनन झननन=झननन (ब)।

७ उमची=उछली। मचकना=झूले पर पेंग देना। द्रुमची=झूले पर दुहरी पेंग मारना। उचटैं=विलग हो जाती हैं। चमोटी=चमड़े का कोड़ा।

८. झोंटा=झूले की पेंग, झोंका।

६. बैन=वेणु, बाँसुरी। गरज=गर्जन। तुल=तुल्य, समान।

१०. बरजैं=वर्जन करने से। सकाना=डरना, शंकित होना।

११. अवरेखि=उरेह कर, चित्रित कर।

रच्यो है तहाँ वर हिंडोल, वल्लवीन कृत सलोल,
नव निचोल रंग-रंग, रमकत रहे फहर-फहर
पावस रितु वन विहार, गान रंग धुनि मलार,
बीच रली मुरली सुनि, आवत घन घहर-घहर
राधा हरि झूलत लखि, बरषै कुसुम सुर विमान
छवि निहारि 'नागर', मन रति-पति रहे हहर-हहर ॥२॥२३३॥

राग गौरी, तिताल

नई कौन यह झूलन हारि
दोहा—स्यामा कैं सँग छवि भरी, सोहत सखी नवेलि
अति सुन्दर तन साँवरी, (अरी) मनहुँ नील-मनि-बेलि ॥१॥१६४॥
स्वेद कंप रोमांच ह्वै, जान परत कछु तोत
झुकि झुकि झोटा मै मिलै, हसि कुँवरि लजौही होत ॥२॥१६५॥
निरखो फूलनि नेह की, सखी चतुर सिरमौर
हम जानी, जानी सबै, (अरी) यह झूलनि कुछ और ॥३॥१६६॥
सबै छकाए 'नागरी', दृगनि सुधा सो प्याय
कपट रूप धरि मोहनी, प्रगट भई व्रज आय ॥४॥१६७॥ ३ । २३४॥

राग इमन चौताल

भीजहीं, भीजहीं, रीझि भीजही,
झूलत लाल भींजही, नवल नेह रस अटके
झोटा लेत हरै हरै, भुज मूल ग्रीव धरै,
हसि हसि बातै करैं,निरखै निपट लूंवि लटके
भीजत पट लपटे, प्रगट अंग-अंग,
लखि रहे इक टक दृग नागर नट के
'नागरीदास' मेह बरसत, निसि भई, चपला चिराक ठई,
तऊ न परत चित हट के ॥४॥२३५॥

---

(२३४) यह = है (मु) । मिलै, हसि = हसहि (मु) ।
(२३५) अंग अंग = अंग (मु) । बरसत = बरस(मु) । चित = बीचि (मु) ।
पद २३३. गहबर = सघन । वल्लवीन = वल्लभाओं । कृत = किया । सलोल = चंचल । रली = मिली हुई ।
२३४. तोत = टोटका ।
२३५. हरैं हरैं = धीरे धीरे । चिराक = चिराग, दीपक । ठई = स्थित हुई । लूंवि लटके = झूलकर लटक गए ।

राग अडानौं इकताल

झूलत हिंडोरे लाल नवल वृंदा बाल संग
चहूँ ओर ठनक मनक, जुवतिन तन ठनिय बनक,
मनहुँ मदन-बाग बसन सोहत हैं रंग-रंग
फूलन के बरन बरन, नवला सी लीनैं करनि,
प्रीतम मन हरनि तरुनि, दीपति दुति-दामिनी अंग
बजवत बीना नवीन, गावत तिय गन प्रवीन,
गहगड गनि गान तान, परन मिलि मृदंग
घहरत नभ घटा कारी, ठहरत नहि चपला री,
फहरत पट नील पीत, निरखत मन-लोचन पंग
रमकनि मैं रंग रह्यो, जात नाहिं मोपैं कह्यो,
'नागरिया दास' रस प्रवाह बह्यो अति उमंग ।।५।।२३६।।

तिताल

एहो लाल झूलिए नैंक धीरै धीरैं
काहे कौं इतनी रमक बढ़ावत, द्रुम उरझत चीरैं चीरैं
क्यो तुम झुकि-झुकि झोंटा के मिस, आवत हो नीरैं नीरैं
यह बरजत त्यौं त्यो वे 'नागर', लेत भुजनि भीरैं भीरैं ।।६।।२३७।।

तिताल

हौ तो सोभा देखि लुभाई
मेरी अँखियाँ जल भरि आईं
झूलत कदँब तरैं जमुना तट, सुंदर कुँवर कन्हाई
झलकत निकसत मुकट लतनि बिच, पीतांबर फहरानि सुहाई
'नागरिया' तब तैं मोहि जिय मैं, फिरि रही मदन दुहाई ।।७।।२३८।।

---

२३६. ठनक मनक = वाद्य-झंकार । ठनिय = स्थित । बनक = सजावट, अलंकरण । परन = वाद्य विशेष । रमकनि में = झूलने में ।

२३७. रमक = झूलने की गति, पेंग । चीरैं चीरैं = साड़ियों से । मिस = बहाने । नीर नीरैं = निकट । भीरैं भीरैं = भुजाओं में भर लेना ।

राग अडानौ तिताल

बैठे हैं हिंडोरैं बीच, तखत मुरस्सैकारी,
जेब सरदारी की मजेजन भुलावहीं
दुहूँ ओर चँवर चलावै सखी चौंरदार,
सायबान संग सो झुकाए ही झुलावहीं
खुले बार हारनि जवाहिर जगमगात,
देखि सौंहैं लाल ठाढ़े दीठ न डुलावहीं
'नागरि' सुगंध की झकोर उठै झोटा संग,
झूलैं स्यामा साहिब, मुसाहिब झुलावहीं ॥८॥२३९॥

इकताल

सखि साँवरि गोरि ए झूलत कौन हैं, झूलत देखि हियो हहरैं
ढरक्यो अति स्वेद, रोमांच भए, लखि नैननि लाज छटा छहरैं
थहरैं तन, फूल दुकूल खिसैं, न सँभारैं दोऊ, अँचरा फहरैं
कर कंपत डोरी न जाय गही, नहिं 'नागरि' पा पटुली ठहरैं ॥९॥२४०॥

इकताल

झूलत रंग भरी अलबेली
मानौं पवन परस तैं लहकत, कंचन-लता नवेली
छूटि गयो उर अंचर फहरत, दरसत हार हमेली
'नागर' पिय लखि रीझि-रीझि कैं, बीच भुजनि भरि झेली ॥१०॥२४१॥

---

(२३९) यह 'हिंडोरा के कवित्त' का ६ ठां कवित्त है। तखत मुरस्सै = तख्त, मुरसैन (मु)। सुगंध की झकोर = अतर की सुगंध (हिंडोरा के कवित्त ६)।

२३९. मुरस्सैकारी = नगजटित। जेब = शोभा। सरदारी = प्रभुता, स्वामित्व। मजेज = (फारसी मिजाज); अहंकार। सायबान = छत्र, छाया करने वाला। सौंहैं = सामने। झोटा = पेंग, झोंका, रमक। साहिब = स्वामी (कृष्ण)। मुसाहिब = दरबारी।

२४०. हहरैं = चकित रह जाते है। छहरैं = फैल रही है। थहरैं = काँपते हैं। खिसैं = खिसक कर गिरते हैं। पटुली = पटरी। पा = पैर।

२४१. लहकत = लहरा रही है। दरसत = दिखाई देते है। झेली = (अपनी ओर) ढकेल लिया, खींच लिया।

राग बिहागरो इकताल

जमुना कैं तीर, बीर, जुवतिन की भीर तहाँ,
परम रंग बोरना, रच्यौ हिंडोरना
बजत मृदंग बैन बीन, संग राग रंग,
पावस रितु होत सिंधु रस झकोरना
झूलत प्रिय नवल किसोर, झोटा झकझोर जोर,
झननन किंकिनी सोर, छबि हिलोरनां
'नागर' बढ़ि नेह मेह, रमकनि मैं रंग रह्यो,
चलि कटाछ दुहूँ ओर, दृग निहोरना ॥११॥२४२॥

ताल चपक

तू देखि री सोभा या बिरियाँ
बढ़ि जु गए झोटा द्रुम परसत, अरझि रह्यो पीतांबर डरियाँ
तूटि गई बनमाल हिलोरत, छूटि किंकिनी कटि ढरहरियाँ
'नागरी दास' प्रिया अंचल चल, डरि लगि जात, देह थरहरियाँ ॥१२॥२४३॥

ताल चपक

उतरे झूले तैं सोभा सिंधु झकझोरे से
प्यारी छूटे बार बैंना, बेसरि सरकि गए,
उत तूटी बनमाला, सिथिल किंकिनी कटि,
खुले फैंटा पेच, सुख सुरति झकोरे से
सँवारत भूषन बसन, आय सखी जन,
मन वारैं रीझि रूप निरखि ठगोरे से
'नागरीदास' दोऊ श्रमित ह्वै सोए सेज,
देखि छबि भुरए री, मेरे नैंना भोरे से ॥ ३॥२४४॥

राग सोरठ इकताल

निति गरज गरज गरज कैं, बरसनि घटा लगी
पावस रितु ब्रज मैं, रस रंग रगमगी

---

२४२ बैन = वेणु, बाँसुरी। बीन = वीणा। झकोरना = तरंगायित होने वाले। हिलोरनां = हिल्लोर वाले। निहोरनां = मिन्नत करने वाले।

२४३. ढरहरियाँ = ढुलक गई।

२४४. बैंना = वेणी, केश-पाश। ठगोरे = ठगनेवाले। भुरए = विमोहित हो गए। भोरे = भोले, सीधे-सादे।

हरित भूमि गहब्बर रहे, नव कदंब अंब
कुसुम कलित भँवर भार, झुकि झुकि रही झंब

नित०—
झूलैं जहाँ झुंडनि मिलि, वल्लभ कुल नारि
जिन मधिनायक वृषभान की कुमारि
गान करत चहूँ ओर, जुवतिन की भीर
पहरैं मनहरनि तरुनि, बरन-बरन चीर

नित०—

रूप चहलपहल बिच, हिंडोरना सलोल
मानो मुनियन लाल कैं, झुंडनि मची कलोल
केकी सुर कुहकि कुहकि, गावैं नव बाल
सुनि सुनि मलार, मेघ घुमड़ि आवैं तिहि काल

नित०—
द्रुमनि माझ झूलत, बर बैनी खुलि जात
ज्यौं उड़त मोर तरल पच्छ, पुच्छा फहरात
छूटि गए अंचर, उर टूटि हार डोर
मचकनि मैं लचकत कटि, झोटा झकझोर

नित०—

आई श्री राधा जब, सोभा है बढ़ी
साँवरी सहेली झूलैं, संग लै चढ़ी
कहि न परत ता समैं की, बरस पर्‌यो रंग
'नागरिया' निरखि भई, नैननि गति पंग ॥४॥२४५॥

नित०—

तिताल
दोऊ मिलि झूलत रग हिंडोरैं
नील पीत अंचल चल चंचल, बैनी हार हिलोरैं

---

(२४५) जिन मधि = तिनकी मधि (पद मुक्तावली ६८१)।

२४५. झंव = गुच्छा, घौद, झौंर। वल्लभ = प्रिय। बरन बरन = रंग रंग के।
सलोल = चंचल। तरल = चंचल।

भॅवर भीर लपटत सॅग आवत, लगि सुगंध कै डोरैं
'नागरिया नागर' रमकनि मै, मिलि गावत थोरैं थोरैं ॥१५.२४६॥

आनकवि कृत । राग सोरठ, इकताल

हो प्यारी जीनैं रसियो पीव झुलावैं छै
रंग भरया झोला दे, सांम्है नैणां नैण मिलावै छै
वरस रह्यो रस रग हिंडोरै, मिलि मलार सुर गावै छै
या वाता सूं सॉवलियो म्हानैं 'रसिक विहारी' अर भावै छै ।।१६।२४७।।

आन कवि कृत । इकताल

हिंडोरैं हेली रंग रह्यो सरसाय
हौं तो वारी जी वारी गई देखि, (हिंडोरै हेली रंग रह्यो सरसाय)
झूलनि मैं झुकि झूमि रह्या पिय, प्यारी जी रो रूप लुभाय
भीजै तन, तरवर चूवै लागा, गल-बाही लपटाय
'रसिक विहारी' जी रो झूलबो, म्हारा मन मैं झोटा खाय ॥१७॥२४८॥

ख्याल तिताल

सुंदर नंद कुॅवर झूलत ललित कदंब तरैं,
जमुना तट, नव घन स्याम सरीर
सोहत है बनमाल मोहत, महकि मालती रही,
चहूॅ दिसि भई भॅवरन की भीर
चलि री चलि, बलि, आज नैंननि रूप-अमी-रस पान करहि,
किन हरहि मदन तन पीर
तू गोरी वे स्याम, जोरी जगत विभूषन
नवल 'नागरी' बसियैं धीर समीर ॥१८॥२४९॥

---

(२४६) डौरैं = झोरैं (पद मुक्तावली ६८६) ।
(२४९) है वनमाल = फहरत वनमाल (मु) ।

२४७. प्यारी जी नैं = प्यारी जी को । झुलावै छै = झुलाते हैं । साम्हें = सामने । यां बाता सूं = इन बातों (के कारण) से । म्हानै = मुझको ।

२४८. प्यारी जी रो० = प्यारी जी के । जी रो = जी का झूलना । म्हांरा = मेरे ।

२४९. किम = क्यों नहीं । धीर समीर = वृंदावन में यमुना के किनारे एक घाट विशेष, जहाँ कदंबकी डाल पर कृष्ण झूला करते थे ।

तिताल

झूलत रंग हिंडोरनैं नवल दोउ, मनमोहन मोहनी छवि पावहीं
द्रुम पर ह्वै ह्वै कढ़त, वढ़त छवि परसि परसि धुरवा मनौं आवहीं
खुलि वैंनी, उर हार टूटि, पट छूटि छूटि, अंचर फहरावहीं
'नागरिया' झोटा बढि रमक रँगीली तामै,
झुकि झकझोरनि मिस लपटावहीं ॥१९॥२५०॥

तिताल

झूलत है दोउ, सखी झुलावैं
सोधैं की झकोरैं स्याम तन गोरैं आवैं
हिंडोरैं हिलोरैं माझ थोरैं थोरैं गावैं
'नागर' झकझोरैं हार डोरैं उरझावैं ॥२०॥२५१॥

आन कवि कृत। राग काफी

धीरां झूलो जी राधा प्यारी जी
मचक रँगीली थारी मानैं वाली लागैं, झुलावत हैं सखी सारी जी
फरहरात अंचल चल चंचल, लाज न जात सँभारी जी
कुंजन ओट दुरे लखि देखत, प्रीतम 'रसिक विहारी' जी ॥२१॥२५२॥

राग मल्हार इकताल

हो कहा रँग भीनी रितु हैं सावन की,
फिरि फिरि झमकि भमकि भूमि मेह आवैं
चात्रिग मोर करत सोर, तैसियैं गहरी घन की घोर,
कारे कारे बादरनि बिच बिच बिजुरी चमचमावैं
सीतल सुगंध पवन गवन परसि परसि देखि,
फूलनि सौं भरी-भरी हरी-हरी डरियाँ लहलहावैं
तैसेई विलास पुंज, 'नागरिया' नागर निकुंज,
नेह मेह भिजए, मिलि-मिलि मल्हार गावैं ॥२२॥२५३॥

---

(२५०) रंग हिंडोरनैं = हिंडोरनैं (मु)। छूटि छूटि = छूटि (मु) (२५१) हार = होरैं (मु)।

२५०. धुरवा = बादल।

२५१. स्यामतन = कृष्ण की ओर।

२५२. थांरी = तिहारी, तुम्हारी। मानैं = म्हानैं, मुझको। वाली = बलपूर्वक झटका देने वाली।

२५३. चात्रिग = चातक। घोर = कठोर ध्वनि।

राग बड़हंस, ब्रह्मताल

बाल विनोदी मेरे हिय मैं, झूलत नित्त बसौ
रतन जटित कैं ललित हिंडोरैं, या छबि सहित लसौ
रमकनि मैं लड़ुवा माखन कौ, बिच-बिच लेत गसौ
'नागरिया' ससुरारि की कोऊ हसैं, सु भलैं हसौ ॥२३।२५४॥

---

(२५४) या छबि = वछिया (मु)।

२५४. रतन जटित कै = रत्न से जड़े हुए । रमकनि मैं = झूलने में। गसौ = गस्सा, कौर, ग्रास।

८ पद मुक्तावली

श्री राधावल्लभो जयति

अथ पद मुक्तावली लिखते

१ प्रात रस मंजरी

या अनुक्रम की अलापचारी में दैने ए दोहा

सखी भोर लखि छकि रही, स्यांमा स्यांम सुजान
मुँदी पलक अलकैं खुली, अधर थकित मुसक्यांन ॥१॥

पौह पियरी सियरी समैं, लखि दंपति सुकवार
रंग भरे लपटानि तन, अरुझे हार सिंगार ॥२॥

लता भवन ललितादि सखि, बजवत बेन विधान
मुँदे नैंन मुसकांवही, सुनि सुनि तान सुजांन ॥३॥

नींद भरे तन लटपटे, छके द्दगन की हेर
'नागरिया' के हिय बसौ, कुंज भुरहरी बेर ॥४॥*

१. पद राग भैंरू इकताल

प्रात समै नव कुंज द्वार ह्वै, ललिता ललित बजाई बीना
पौढे सुनत स्याम श्री स्यांमां, दंपति चतुर प्रवीन प्रवीनां
अति अनुराग, सुहाग परसपर, कोक कला निपुन नवीन नवीनां
'बिहारनिदास' बानिक पर बलि बलि, मुदित प्रांन निवछावरि कीनां ॥१॥

---

* ए चारो दोहे 'प्रातरस मंजरी' के क्रमश १,३,२,१७ संख्यक दोहे हैं।

(पद १) बांनिक पर बलि बलि = बलि बलि बंदिस पर (हरिदास वंशानुचरित्र, पृष्ठ ४० पद १)।

दोहा २. पौह = पह, उषः काल। पियरी = पीत, पीली। सियरी = शीतल। रंग = प्रेम।

३. विधान = आयोजन, ढंग।

४. छके = मस्त; तृप्त। हेर = हेरना (देखना) का भाववाचक रूप। भुरहरी = भोर, प्रातःकाल।

पद १—स्यामा = राधा। बानिक - वेश।

२. इकताल चर्चरी

देखि सखी दंपति पौढ़े हैं रंग भीनैं
पीय बिहारी प्यारी जीवनि भुजन बीच लीनैं
बोलत बहौ चिरियाँ, चतुर भोर भयौ जानैं
त्यौ त्यौ चंद बदन देखि, फिरि फिरि रति ठानैं
बाजत कटि किंकिनी, कल नूंपुर धुनि आवै
पाई पिय रंक सु निधि, छोड़ी क्यो भावैं
'नागरीदास' उरझे तन, सुरति सुरझि छूटे
चले हैं उठि सनांन-कुंज मदन-सैन लूटे ।।२।।

३. इकताल

भोर ही निकुंज तैं उठि चली है कुँवरि राधा
अरुन नैंन, सिथिल बसन, रूप-छवि अगाधा
बिथुरे बार, हार अरुझि, आलस बस गोरी
मनहु मधुप कनक लता, निधरक झकझोरी
सारदा सची सी लुठति, सहचरीन चरनैं
तिनकी चारु चूरामणि, कैसें कहि बरनैं
रंग भरी भामिन सब, संग सुघर सुख समाज
कँवला-सी करन लियैं, अपनौं अपनौ साज
काहू पै अतरबर गुलाब जुत सुगध सीसी
काहू बिमल दर्पन कल, कांति चंद्र की सी
काहू पैं सुठि सुगंध, पांन-दांन बीरा
काहू पैं हार, धरे उतार झलमलात हीरा
काहू पैं चँवर चारु, चपल भँवरनि निरवारैं
काहू पैं कुसुम कलित, बिजनां मंद-मंद ढारैं
काहू पैं माल मरगजी हैं, सुरति सेज टूटी
ध्यावति सुधि समैं बास, मदनपुरी लूटी
काहू पैं बनक बनिय ठनिय, कनक पीकदांनी
काहू पैं धूपदान बरत, बहौ सुगंध सानी

(२) जीवनि = जीवनि । ठांनैं = तांनै ।
२. बहौ = बहु । उरझे = उलझे हुए । सैन = सेना ।

काहू पै सुरजमुखिय सुच्छ, मोर-पच्छिवारी
मुकट भव उदै हेत, नहिंन करत न्यारी
काहू पैं सुघर सारि सुवा, मधुर वचन बोलैं
काहू पैं अंस बीन, सो नवीन वर अमोलैं
आवत धुनि जंत्र, मैंन-मंत्र से बजावैं
रैंनि के बिहार गाय, मादिक सो प्यावैं
रंग-राग नव-सुहाग, आनँद रस बोरी
'नागरिया' हृदै बसौ, भान की किसोरी ॥३॥

४. राग भैरू एक ताल

हौं जानत री भयो प्रात
लग्यो समीर परम अति सीतल, रोमांच ह्वैं गात
आहट होत है लता-भवन मैं, सोये से अरसात
'गोविंद' प्रभु गोबर्धन-धर सौं, कछु प्यारी बतरात ॥४॥

५. इकताल

अब तौ स्यांम सोवन दै, होत हैं पह पियरी
यह सुगंध मंद पवन, लागत हैं सियरी
द्रुमनि कुंज-कुंजनि मैं, पंछी हू जागे
हारन को मोती, तन सीतल कछु लागे
करनि करखि कंचुकि कौं, सु नैंक बांधि दीजै
देहु मेरो नील बसन, पीत बसन लीजै
तुम तौ मगन स्वारथ रस, नैकहू न अरसो
काहे कौं कुँवर कँवल से दृग, पायन सौं परसौ
बहुत प्रेम, थोरी निस, सुरभि सकत नाहीं
'नागरिया' रंग बढ्यो, पातन की छाहीं ॥५॥*

---

* 'नागरिया' छाप से युक्त होने पर भी यह पद मुद्रित प्रति में नहीं है।

(३) चूरामणि = चूडामणि। कँवला = कमला।

३. साज = (प्रसाधन की) सामग्री। बिजना = पंखा। मरगजी = दली मली। बास = सहवास, रति। बनक = सजावट। बनिय ठनिय = सजी हुई। सूरज-मुखी = बडे पंखे के आकार का एक राज चिन्ह। सुच्छ = स्वच्छ, निर्मल। पच्छिवारी = पंखे वाली। सारि = शारिका, मैना। सुवा = शुक, तोता। अंस = कंधा। जंत्र = (वा ०) यंत्र। मादिक = नशा। भान = वृषभान।

६. इकताल

देखि सखी देखि प्रात, समैं श्री गोपाल
कैसे बने हैं री आजु रसिक नंदलाल
जात हैं आपुन गृह कौं, आए कहूँ तैं रैंन जागे
द्वारे नंद ठाढ़े देखि, सकुचि ओट लागे
सुरँग पाग बीच, नहिं समात कुटिल अलकैं
ललित लोचन लाल, लगी आवत स्यांम पलकैं
सुन्दर बदन क्रांति सौ फबि, श्रम-कन-छवि-जोती
मनहुँ नील कँवल ऊपर, बने हैं ओस मोती
धनि यह ब्रज की ललनां, इहिं लाल कैं रँग भीनी
जावक भाल, अधर अंजन, जिन ये छाप दीनी
मोतिन के गुछा श्रवन, उनहीं पहिराये
तिन ये द्वैज ससि से नख, स्याम अँग लगाए
पिय की ऐंड़ानि निरखि, कोटि मदन लाजैं
डगमगात धरन धरत, नूंपुरादि बाजैं
'राम राय भगवान' सखी लालन जिय भाये
तन मन धन प्रान दै कैं, बीच ही बिरमाये ॥६॥

२ प्रात रस मंजरी*

या पदन के अनुक्रम की अलापचारी मैं दैंनैं ए दोहा—

नीठि नीठि उठि बैठहीं, पिय प्यारी परभात
दोऊ नींद भरे खरे, गरैं लागि गिर जात ॥१॥
लखि लखि अँखियाँ अधखुली, अंग मोरि अँगरात
आधिक उठि लेटत लटकि, आरस भरे जँभात ॥२॥
निस बीती सब रंग मैं, उठे भोर सुकवार
आय सँवारत सहचरी भूषन बसन सिंगार ॥३॥

---

* दोहा १, २ नागर समुच्चय में नहीं हैं। दोहा ३, ४ प्रात रस मंजरी के दोहा ८, ६ हैं।

६. क्रांति = कांति, आभा। जावक = अलक्तक, अलता, महावर। गुछा = गुच्छा।

दोहा—१ नीठि नीठि = कठिनाई से।

लगे लगे द्दग आवहीं, बैठे पगे किसोर
नील पीत पट पलट गे, जगे रगमगे भोर ।।४।।

अलसौही अँखियान की, चितवनि बलगत मैंन
'नागरिया' दोउ भोर लखि, भुरए मेरे नैन ।।५।।

१. पद राग विभास तिताल

नवल निकुज महल रस दोउ री, राजत हैं रँग भीनैं
कुसमित सेज भोर उठि बैठे, आलसजुत अंसनि भुज दीनैं
गउर स्याम तन नील पीत पट, संभ्रम बसन पलटि सँग लीनैं
श्री 'बिहारी' प्रिया संग सुरति-केलि-रस-सुभग-सिंधु ललिता-द्दग-मीनैं ।।७।।

२ ताल चौताल

प्रात काल नदलाल पाग बनावत,
बाल दिखावत दर्पन रह्यौ लसि
सुंदर करनि मै मजु मुकर की छबि रही फबि,
मानौ बिबि कमलनि गहि आन्यौं ससि
बीच बीच चित के चोर मोर चँदवा दियैं,
तापर वर रतन पेच बाँधत है कसि
'नंददास' ललितादिक ओट भयैं अवलोकत,
अतुलित छबि रही फबि, फूल डारैं हसि ।।८।।

३ ताल चर्चरी

आलस रस रंजित रमनीय रूप रासि मिथुन
लटपटात प्रात जगे बिथुरित बर बैंनी
चंचरीक चहूँ ओर बिचरत मुख गति मदंध,
महकत सुगंध अंग, छलकत रँग रैंनी

(दोहा ५) बलगत मैंन = बलग बनै न ।
(८) मनों = मानू (हस्त) । वर रतन = रतन (ब्रजरत्नदास ४७) । डारैं = डारि (वही)
५. बलगत = (१) उमगता है, उमड़ता है (२) वल्गा = लगाम । चितवन रूपी लगाम काम के हाथ मे है, वह उसे ढीला छोड़े हुए है, खींच नहीं रहा है ।
पद ७—संभ्रम = भ्रम से । पलटना = बदल लेना ।
८. बिबि = दो । रतन-पेंच · सिर पेंच, कलँगी ।

प्रबल पवन रवन केलि, बिलुलित प्रिय कनक बेलि,
बिहवल दृग सुरत सिथल देह, सु लसत सुख-सैंनी
बिस्मै ह्वै रहत कुँवर, निरखि बदन छबि अद्‌भुत,
पौंछत पल पीक पांन प्रीतम मृगनैंनी
घुरत, ढुरत, जुरत, मुरत, नैंन-मींन, सिंधु-सुरति,
थकि, छकि, चकि चलत चारु चितवनि मन लैंनी
'नागरिया' नेह उरझि, बिबस सकत नहिंन सुरझि,
उठि-उठि चलि-चलि मिलत, मगन मुरि-मुरि ढुरि चैंनी ॥९॥

४ ताल चर्चरी

चली हैं भोर भामिनि उठि, नव किसोर संग ताहि,
रस-बस अधखुलिय पलक, चितवत मुख मोरि-मोरि
मंद-मंद चलत चारु, चरनन मंजीर राव,
डगनि-डगनि कउतग लखि, मूर्छित रति कोरि-कोरि
ठाढ़े आइ कुंज-भूमि, झूंमि-झूंमि, ललितादिक,
लतनि ओट देखत दुरि, डारत तृन तोरि-तोरि
'नागरिया' संगम-सुख स्वेद खेद चिहुँटि चीर
सुखवत पिय छबीली-पीठ बिजनां-पौंन ढोरि-ढोरि ॥१०॥

५ ताल चर्चरी

पिय के सुख संग तैं चली भोर कुंज आवत प्रिया,
मरगजे उर हार हियें, बार पीठ छूटे
सिथल रसन बसन, हसन मंद मंद अधरनि,
मनौ चंचल दृग, रंजन पिय, खंजन जुग जूटे
अस्त बिस्त अभरन बर, बाजू-बंध ढरनि तैसे,
लगि रहे करनि निकर चलय खंड फूटे

---

(९) अद्‌भुत = अभूत । चलि चलि = चलि ।
(१०) चली० = चले हैं भोर नव किसोर संग लगे लालच ताहि ।
चितवत = चितवन (हस्त) । राव = सब्द । मुर्छित० = मदन लुटत कोरि कोरि ।
९. मिथुन = युग्म, जोड़ा, दंपति । बैंनी = वेणी । रँग = रंग, प्रेम । रैंनी = रेणु, पराग । रवन = रमण । सैंनी = शैया । चैंनी = सुख-चैन वाली ।
१०. मंजीर = नुपुर । राव = रव, स्वर, ध्वनि । कउतग = कौतुक । कोरि कोरि = कोटि कोटि, करोड़ों । चिहुँटि = चिपक गया । बिजना = पंखा ।

'नागरी' चहूँ ओर भीर, भँवरनि टारत अधीर,
कीर औ चकोर मोर निरखि परत टूटे ॥११॥

६ ताल चर्चरी

मरगजी उर कुंद माल, लोचन अरसात लाल,
डगमगात चरन धरन धरत, रैन जागें
भाल तैं खिसि मोर मुकुट, भृकुटी-तट आयौ लटकि,
चपल सिथल चंद्रिका सो बँधी पाग तागैं
अतसि कुसुम तन सुभाँति, कहुँ कहुँ कुँमकुँम की कांति,
मदन-नृपति-पीक-छाप जुग कपोलनि लागें
'छीत स्वामि' गिरवरधर, सोभित चहुँ ओर भ्रमर,
संग मैं गुन गान करत, फिरत आगैं आगें ।।१२॥

३ प्रात रस मंजरी

या पद के अनुक्रम की अलापचारी मैं दै नैं ए दोहा

चहियाँ सीस अदाह सो, धरि पौढ़े मिलि मित्त
सोवन की सोवन महीं, जगैं लगौंहौं चित्त ॥१॥

भई भुरहरी, करन दै, कुंज-छाँह सुख-सैंन
केलि पगे, सब निस जगे, अबहिं लगे हैं नैंन ॥२॥

कैसैं नींद निवारियैं, अरु अंगनि उरझानि
भोर भयो दिनकर किरनि, आई रंध्र लतानि ।।३॥

---

१२) पद टिप्पणी अष्टछाप परिचय, पृष्ठ २६८, पद २१ के अनुसार—
उर=और । अरसात=अलसात । खिसि=खस । भृकुटी०=भृकुटी के आयौ निकट । सो बँधी पाग=सुबंध पाट (हस्त) । अतसि=अतिसय; अलसि (हस्त) । सु भाँति=सुहाति । जुग कपोलनि=कपोलनि (हस्त) । सोभित चहुँ ओर भ्रमर=सउरभ रस मत्त मुदित (हस्त) ।

(दोहा १, २, ३, ४)—'प्रात रसमंजरी' के दोहा ४,५,६,७ हैं ।

(दोहा १)—मित्त=मत्त (हस्त) ।

११. रसन=रस के कारण । रंजन=अनुरंजन करने वाले । वलय=चूड़ी ।
१२. धरन=धरनि, धरणी पर । पाग=पगड़ी । तागैं=सूत से, डोरे से ।
दोहा १. अदाह=अदा । मिलि=साथ साथ । २. सैंन=शयन । ३. रंध्र=छिद्र ।

छुटत न आरस, रस पगे, जानत भयौ ६ प्रात
ओढ़ै पियरो पट दोऊ, फेरि-फेरि लपटात ।।४।।

चहत निवारयौ सैन-सुख, लोक लाज डर चित्त
'नागरिया' दोउ क्यो उठैं, तन मन अरुझे मित्त ।।५।।

१. पद, राग रामकली, इकताल

अबहीं नैंकु सोये हैं अलसाय
काम केलि अनुराग रंग भरे, जागत रैंनि बिहाय
बार बार सपनैंहूँ सूचत, सुरत रंग के भाय
यह छबि निरखि सखी जन प्रमुदित, 'नागरीदास' बलि जाय ।।१३।।

२ तिताल

जगाय री भई बेर बड़ी
अलबेली खेली पियके सँग, अलकलडे कै लाड़ लड़ी
तरनि किरनि रंध्रन ह्वै आई, लगी है निनाई जांनि
सुघर वर जहाँ, इकटक ह्वै रही अड़ी
'बिहारनिदास' छबि को कबि बरनैं, जो छबि मो मन माहि गड़ी ।।१४।।

३. तिताल

राधा नद-कुँवार कुज-मधि आलस-जुत जागे अनुरागे
घूंमत नैंन अरुन अनियारे, झूंमि झूंमि दोउ अंकनि लागे
बैना उरझि रह्यौ केशनि सौ, कुंचित कच कुंडल सौ खागे
श्री 'शिवराम' परसपर उरझे, नहिं सुरझत तन मन रस रागे ।।१५।।

४. तिताल

आवन मै उरझ्यौ मन मेरो, सो धौ बहुरि न आयौ
रसिक कुँवर की सोभा सपति, लोभी देखि लुभायौ

---

(१४) तरनि=तरून (हस्त)। सुघर वर जहाँ इक टक=सुकर परत वहो ही (हरिदास—वंशानुचरित्र, पृष्ठ ४०, पद २)। छबि को कबि बरने=रति को कवि बरने (वही)।

१३. बिहाय=बिताकर। सूचत=सोचते है। भाय=भाव।

१४ अलबेली=छबीली, सुंदरी। अलकलडे=लाड़ला, अलकलड़ैता। लाड=प्रेम। लड़ी=प्रेम की हुई। निनाई=नींद।

१५. बैंना=वेणी। कुंचित=घुँघुराले। खागे=मिले, सटे, उलझे।

सीस लटपटी पगिया, अलकैं चिहुँटि कपोलनि लागी
अलसौही अलेबली अँखियाँ, झपकत पल, निस जागी
छुटे बंध, उर माल मरगजी, भँवर-भीर चहुँ ओर
मनौं गजराज मत्त गति आवत, मैन मवासहि तोर
गहबर कुंज कुटी तैं निकसे, सुरत समर छत तन मैं
'नागरिया' लिये रैन-चैन की, वहै भावना मन मैं ॥१६॥

५. तिताल

(अरी) इन अँखियनि कैसे समझाऊं
ए उत जाय मिलत बरजोरी, हौं गहि गहि लै आऊं
तुम जु कहत ये निडर भईं, हौं बिन देखैं अकुलाऊं
'नागरी' स्याम गई हौं देखन, वा दिन कौं पछिताऊं ॥१७॥

६. तिताल

पलक परनि ही गनत कलप सी
भोरहि बिछुरनि भई अलप सी
आय मिले दोउ दै गर बहियाँ
जमुना कूल कदम की छहियाँ
अस्त बिस्त सिंगार लसौ हैं
निसि जागे नैना अलसौहैं
ललितादिक सहचरि जुरि आईं
गान रग बरषा बरषाईं
बिहरत मादिक प्रेम पियैं
सँग 'नागरि' नागरियाहि लियैं ॥१८॥

---

(१६) ओर = आरैं । तोर = तोरैं । छत = छित (हस्त, मु) ।
(१७) (अरी) इन = इन (हस्त) । ये निडर = यह निडर भईं । गई हौं = गई हूँ ।

१६. लटपटी = उलझी । चिहुँटि = चिपककर, सटकर । मवास = किला । गहबर = सघन । छत = क्षत, घाव ।
१७. हौं = मैं । वा = उस ।
१८ पलक परनिही = पलक-पात । कलप = कल्प ; १४ मन्वतंर या ४ अरब ३२ करोड़ वर्षों का दीर्घ काल । अलप = अल्प (काल) । अस्त बिस्त = शिथिल । मादिक = मदिरा ।

१०. तिताल

प्रफुलित कमल तरनिजा तीरे
विचरत अलि मकरंद अधीरे
कूजत हंस-वंस कल कीरे
कुसमित द्रुम तट धीर समीरे
छिन छिन छीन तिमिर गंभीरे
सूचत प्रात प्रभा, नभ पीरे
हरि राधा स्थित कुंज कुटीरे
गत निद्रा, रस वलित सरीरे
रति रण छत छवि मंडित वीरे
तंद्रित लोचन, विगलित चीरे
पश्यत अलछत तजि मंजीरे
(रही) 'नागरि' सखी पुलक दृग नीरे ॥२२॥

११. तिताल

आरस रस पागे री नैंना
छकि रहे रूप दरस मद माते, सुन्दर मन हरि लैंना
जात रहत तन धीर निहारत, लगि लगि उर सर सैंना
सिंधु सनेह लखी छवि, सो अव कहत वनै नहिं वैना ॥ २३ ॥

---

(२२) छिन० = छिण छिण छीण तिमर गंभीरे (हस्त, मु)। वलित = चलित (हस्त)। (रही) 'नागरि' = नागरि।

२२. तरनिजा = सूर्य-पुत्री, यमुना। अलि = भ्रमर। कीरे = कीर, शुक। धीर समीरे = धीर समीर, यमुना तट पर स्थित एक घाट विशेष। छीन = क्षीण, दुर्बल। गत निद्रा = जिनकी नींद उचट गई हो। रस-वलित = रस से परिपूर्ण। छत = क्षत, घाव। वीरे = वीर नामक स्त्रियों का कर्ण-भूषण। तंद्रित = अलसाए, झँपकौंहें। विगलित = शिथिल। चीरे = चीर, साड़ी। अलछत = अलक्षित, अदृश रूप से, छिपकर। पश्यत = देखती हैं (पश्यति)। मंजीरे = मंजीर, नूपुर, घुँघुरू।

२३. लैंना = लेनेवाले। सर सैंना = चितवन के बाण। वैनां = वचन, वाणी।

या पद में दैनैं ए दोहा

करि मतवारे केउन कौं, इन मतवारे नैंन
करे नियारे केउन कौं, इन अनियारे नैंन ॥ १ ॥*

करि उरसारे केउन कौं, इन सरसारे नैंन
करे बिसारे केउन कौं, इन बिसहारे नैंन ॥ २ ॥*

४ प्रात रस मंजरी

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैंनैं ए दोहा

लहि रति सुख लगियै हियै, लखी लजौंही नीठि
खुलति न, मो मन बँधि रही, वहै अधखुली दीठि ॥ १ ॥

अलसौंहैं निसि के जगे, सर बरसौंहैं मैंन
इक टक सौंहैं अधखुले, सहज हसौंहै नैंन ॥ २ ॥

आंनन सौ आंनन छियै, पानन रचे कपोल
लखि रीझै छबि आरसी, विहसैं लोयन लोल ॥ ३ ॥

आरस सौ अरुझी पलक, अलक जु बेसरि मांहि
अरुझ्यौ बैना देखिकैं, पिय मन सुरझ्यौ नाहि ॥ ४ ॥

पिय पौछत पट पीत सौं, प्रिया कपोलनि पीक
'नागरि' पौछत लाल के, अधरनि अंजन लीक ॥ ५ ॥

दोहा १. केउनकौं = कइयों को। नियारे = न्यारे, अलग। अनियारे = नोकदार, नोकीले।

२. उरसारे = धडकने वाले, ऊपर नीचे होनेवाले। सरसारे = रसदार, रंगीले। बिसारे = आत्म विस्मृत, बेसुध। बिसहारे = जहरीले

* ये दोनों दोहे मुद्रित प्रति में नहीं है।

(दोहा २, ३, ४)—'प्रातरस मंजरी' के १०, ११, १२ संख्यक दोहे हैं। दोहा १ बिहारी का है, (देखिए बिहारी रत्नाकर ६४५), इसीसे मुद्रित प्रति में नहीं है।

१. नीठि = कठिनाई से। २. सौंहैं = सुशोभित हो रहे हैं। ३. छियैं = छूते हैं। रचे = रँगे हुए। लोयन =

५. लीक = रेखा।

१ पद, राग ललित, तिताल

दोऊ जगि बैठे सेज, अँखियाँ सोहैं अलसौंही
खुली अलक, बिबि पलक अधखुली,
घुली हैं निस के रस, इकटक रहत हँसौंही
बैंदी टेढ़ी, रतन टेढ़ी, ढिग अधर अंजन पीक लीक लसौंही
'वल्लभ रसिक' सखी चतुरि चतुर दोउ रिझए'
मधि सधि राखि आरसी सौंही ॥ २४ ॥

२. इकताल

आली तेरे आंनन दृग आलस-जुत राजत रसमसे
नव किशोर अंग संग रैंन-रँग रसे
सिथल बसन, अधर रसन, दसननि-छत लसे
पीक-छाप जुग कपोल, पिय मुख लगि हँसे
मैं जांने पहिचाने, बचन पीतम गुंन गसे
पीय 'बिहारी' लाल ललित उरजनि बिच बसे ॥ २५ ॥

३. तिताल

नींद भरी अँखियाँ जु बड़ी बड़ी
लाल लाल डोरैं, कजरौंही कोरैं, पिय-हिय-माँझ अरी ये गड़ी गड़ी
सूचत रैंन-चैंन की बातें, रंग पीक-छबि-छाप मँड़ी मँड़ी
'नागरीदास' मदन मोहन कै बोहौ भाँतिनि निस लाड़ लड़ी लड़ी ॥ २६ ॥

२४—बिबि = दोनो । घुली है = अच्छी तरह मिल गई हैं। ढिग = पास। मधि = मध्य मे । सधि = निशाना ठीक बैठाकर।

२५. रसमसे = रस से भरे हुए । रैंन-रँग = रात्रि-विहार । रसे = रसमय बने हुए । रसन = रसना, जिह्वा । दसननि छत = दाँतों से काट लेने के कारण हो गए क्षत । गसे = ग्रसित, भरे हुए ।

२६. कोरैं = किनारे । मँड़ी मँडी = मंडित । बोहौ = बहु । लड़ी लडी = प्रेम की हुई; प्रेम-रता ।

४. तिताल

राधे तेरे नैंन महा मतवारे
मोहन-रूप-बारुनी पीकैं, मत्त भए छबि भारे
घूमत, झुकत, धुकत, उघटत से, रुकि रुकि चलत अवारे
देखि छकनि छकि गए छबीले, पिय 'नागर' नटवा रे ॥ २७ ॥

५. राग ललित का ख्याल, तिताल

अब तो बाँधि डारयौ मेरौ मन हँसि हँसि
मोहन इत अवलोकत रस बस, कहा करौं भौहैं कसि कसि
लोक लाज अरु धीरज अंतर ल्यावत हौं गहि, जात हैं नसि नसि
'नागरिया' इन सौं कहि, हा हा, जिन चितवो जू, बसि बसि ॥ २८ ॥

६. इकताल

रे मोहनां मीत, तैं तो मन हरि लीनौं
हौं ना जांनौं, लौंनां प्यारे, तैं टौंनां कहा कीनौं
दुरिहैं नाहिं प्रीत 'नागर' अब, इन सोचन तन भयो छीनौं
करिहैं चार चबाव अथाइनि, इह गोकुल मति हीनौं ॥ २९ ॥

७. तिताल

(जी) नैणां नींद घुलै छै आय, रही छै थोड़ी रात
कांई कैडे लाग्या छो नंदलाल अति अलसायो म्हारौ गात

---

(२७) पीकै = पिय कैं (हस्त०) । अवारे = अंवारे ।
(२८) हँसि हँसि = हँसि हँसि हँसि हँसि । इनसों = ई सों ।

२७. पीकैं = पीकर । छबि भारे = भारी छवि वाले । धुकत = झुकते हैं । उघटत = उघरते हैं । अवारे = आवारा । छकनि = नशे में चूर होने का भाव; मतवालापन । नागर नटवा = नटनागर ।

२८. भौहैं कसि कसि = भोहैं टेढी कर कर के, क्रुद्ध होकर । जात हैं नसि नसि = नष्ट हो हो जाते हैं । हा हा = मैं बिनती करती हूँ ।

२९. लौना = सलोना, लावण्य-युक्त, सुंदर । टौना = जादू । चबाव = निंदा । अथाइनि = सभा, बैठक, मंडली, जमावड़ा ।

घर घर चार चवाव चलै, लो निपट बुरी छै या बात
'रसिकबिहारी' थे रस लूधा, ह्वै आसी परभात ॥ ३० ॥

८. तिताल

हो कान्ह जी राति रा उणींदा रंग राता
निस रैं ध्यान ए मुँदी पलकैं आवैं, ललक मदन मद मांता
अलक माहि अणवट प्यारी रौ, ल्याया थे उलझाता
'रसिकबिहारी' लागौ छौ प्यारा, मुसक्याता अलसाता ॥ ३१ ॥

९. तिताल

उणींदा छै जी रात रा
वैण सिथल अरु नैण झुक्या ही आवैं, लगि बैठा परभात रा
पलका पीक, अधर फीकै रग, रस अलसाया रात रा
'रसिकबिहारी' प्यारी पूरण करी, मदन देव री जातरा ॥३२॥

१०. तिताल

तिहारी हँसि चितवनि घर घालनि
तैंसिय मेरी ए जु निगोड़ी अँखियाँ रूप जँजालनि
दिन नहीं चैंन, रैं न नींद न आवै, हियैं मैंन चल चालनि
'नागर' नवल रूप अभिमानी, क्यौ करी हम इन हालनि ॥३३॥

---

(३२) चार = चाव (हस्त०)। लूधा = लुब्धा। 'यह पद नागर समुच्चय' में नहीं हैं।
(३३) हम = हमैं।
३०. घुलै छैं = घुल मिल रही है। कांई = क्यों। केडे=लाग्या छौ = साथ लगे हो। थे=तुम। लूधा = लुब्धा। ह्वै आसी = हो गया।
३१. राति रा = रात का। उणींदा = निद्रित। रंग राता = रंग (प्रेम, बिहार) मे रक्त (रँगा हुआ)। निस रैं = रात्रि के। अणवट = पैर के अँगूठे में पहनने का छल्ला। प्यारी रौ = प्यारी का। लागौ छौ = लगते हो।
३२. छै जी = है। रात रा = रात का। वैण = वाणी, बात। लगि बैठा = (आँखों मे) नींद आ गई है। परभात रा = प्रभात का। देव री = देव की। जातरा = यात्रा।
३३. घालनि = नष्ट करनेवाली। जंजालनि = जंजाल में पड़ने वाली। चल-चालनि = उथल पथल, हलचल। हालनि = दशा वाली।

५. रूप चटपटी

या अनुक्रम की अलापचारी मैं देनैं ए दोहा

आवत भावत लाल छबि, छैल अदा है अंग
कँवल फिरावत फिरत मन, यह कछु हुनर फिरंग ॥१॥

अरी छैल इह गैल है, अबही निकस्यौ आय
नैंननि नैन मिलाय कैं, लै गयो मन बहराय ॥२॥

भौंह तननि मै तनत मन, मोहन रूप रसाल
होत चाल मै चाल चित, माल-हाल मै हाल ॥३॥

छुटे बंध, अलकै छुटी, जुटी भौंह मुसकाय
आय छकौहे नैन, मन डार्यो छैल छकाय ॥४॥

पीत फूल दियैं अलक पर, लियैं हाथ चकडोर
गयौ छैल कै हाथ मन, हाथ रह्यो नहिं मोर ॥५॥

'नागरिया' नँदलाल लखि, रही हियैं हहराय
छली छैल इहि गैल है, अली लियैं मन जाय ॥६॥

१ राग बिलावल, इकताल

मनहरन छैल नँदराय कौं, छबि सौं इत निकस्यौ आय
देखत ही दृग छकि रहे, मेरौ जीव रह्यौ ललचाय
चंपकली धरैं कुटिल अलक पर, ऐंडो ऐंड भरयौ ऐंडाय
सूँघत कँवल कँवल-दल-लोचन, चितै चितै मुसकाय

दोहा १—हुनर=गुण। फिरंग=जादू।
२. बहराय=फुसलाकर, बहला कर, प्रलोभन देकर।
३ तननि=खिंचाव। तनत=खिंचता है। होत चाल चित=चित्त चलायमान हो जाता है। माल हाल मैं हाल=माला के हिलने पर चित्त हिल उठता है, समाधिस्थ हो जाता है।
४ जुटी=सट कर इकट्ठी हो गई। छकौहै=नशे से चूर। डार्यो छकाय=नशे से चूर कर दिया।
५. चकडोर=चकई नाम का खिलौना। मोर=मेरे।
६ रही हहराय=(१) प्रकंपित हो उठी (२) चकित हो गई।

ए री अंग अंग छवि कहा कहौं, तन साँवल रंग चुचाय
मोहि देखि ठाढ़ौ रह्यौ प्यारौ, पगियाँ पेच बनाय
रोम रोम नखसिख्य रम्यौं, मन रमि, लई रमाय
कहि 'भगवान हित राम राय' पय, सब विधि रहे समाय ॥३४॥

२. इकताल

लाल के लोयन अति अनियारे
जिनकी ओर कोर भरि चितवत, ते घाइल करि डारे
बाँकी भौंह सौंहनी ऊपर, लटकत कच घुँघरारे
करत कटाछि, निरखि जुवतिनि के धीरज ढहत करारे
रँग भीने, ढरियारे, भारे, कोटिक खंजन वारे
सोभा ऐन, मैंन सर तीछन, तकि मारत बटवारे
कोउ घूमत, कोउ बिस्मैं ठाढ़ी, नहिं तन मन परत सँभारे
'कृष्णदास' गोपी-जन-वल्लभ, जीवन प्रांन हमारे ॥३५॥

३. इकताल

हूँ हरि हेरनि मांझ ठगी
सौंही मद अलसौंही अँखियाँ, हिय मै आय खगी
नाहि कछू ग्रह-काज बनत, जिय चितवन रहत लगी
'नागरिया' मौंहन मिलिबे की, चिंता-ज्वाल जगी ॥३६॥

---

(३५) कोउ घूमत कोउ = केउ घूमत केउ (ह्रस्व)। (३६) चितवन = ढौरी।
३४ ऐंडो = ऐंड़ाने वाला। ऐंड = अभिमान। ऐंडाय = अंगड़ाई ली। चुचाय = प्रस्रवित होता है; रसता है। पेच = घुमाव।

३५. करारे = (१) नदी का ऊंचा प्रलंबमान तट, जो बरसात में नदी की लहरों से कट कटकर गिरता है। (२) कठोर, दृढ़। रंग भीने = प्रेम-सिक्त। ढरियारे = ढुलकने वाले, प्रवृत्त होने वाले। वारे = निछावर कर दिए। ऐंन = अयन, निवास। बटपारे = रहजन, पथिकों को लूट लेनेवाले। केउ = कोई।

३६. हूँ = मैं। हेरनि मांझ = देखने में। सौंही = सुहावनी। आय खगी = आकर धंस गई।

४. इकताल

अरी वह सुंदर छैल छली
कबहूँ ठाढ़ौ पनघट, कबहूँ घन घट बीच अली
काहू की डोरी गहि तोरत, चोरत इंडुरिया जु भली
'नागरिया' बहो छंद-बंद करि, करत है रंग-रली ।।३७।।

५. इकताल

इँडुरिया लैं गयो कोउक स्यांम सरीर
कैसैं सीस धरौ री गगरी, जकि रही जमुना तीर
तब तौ मै कछु जांन्यौ नांही, तनक उठी ही पीर
'नागरिया' अब वा ढोटा बिन, नाहि रहत है धीर ।।३८।।

६. तिताल

मनमोहन सोहन रिझवार
गोहन लाग्यौ नदकुमार
बाट घाट ह्वै आड़ौ आन
नैंननि करत मैन सनमान
छौहन ह्वै चितऊं उहि ओर
तौहु न रहत चतुर चित चोर
अपनी अलक छुवन कै भाय
इक कर सैंननि लेत बलाय
कहा करौ दइया, कित जाउँ
चंचल कुँवर, चवाई गाउँ

---

(३७) घन घट = घट घट ।

(३९) चितऊं उहि = चित ऊही (हस्त) । इक कर = यकक (हस्त) ।

३७. घन घट = हृदय में । इंडुरिया = बेंडुली, गेंडुरी, कपड़े की बनी हुई छोटी गोल गद्दी जो बोझ उठाते समय सिर पर रख ली जाती है । छंद-बंद = कल बल छल । रंग-रली = प्रेम-क्रीड़ा ।

३८. जकि रही = भौंचक्की रह गई । तनक = थोड़ी सी । ही = (१) थी, (२) हृदय । ढोटा = लडका ।

मेरे हू उपजत ललचानि
'नागरिया' रोकत कुल कानि ॥३९॥

---

६. दान

इन दानलीला के पद के अनुक्रम की अलापचारी मैं दैने ए दोहा

दांन केलि जो मन बसै, ताहि न कछू सुहाय
तजि बृंदाबन माधुरी, अनत न कबहूँ जाय ॥१॥

मेरे नित चित मै बसौ, दंपति-दान-बिहार
मुख पर झूठी झगरई, नैंननि करत जुहार ॥२॥

मो मन लागी दुहूँनि की, दान-केलि-बतरानि
नैंननि हा हा खानि इत, उत भौंहैं सतरांनि ॥३॥

गउर घटा अरु साँवरी, उनई नीर सनेह
खोरि साँकरी गिर तहाँ, दान रंग झर मेह ॥४॥

गोरस माँगत, करत दोउ नैं न-सैं न सनमान
'नागरिया' के हिय बसौ, दांन-रंग-बतरान ॥५॥

१. पद, राग बिलावल, ताल चपक

"अरी यह को है जात ए गहबर मैं, खोर साँकरी आज
दान देहु तब आगैं जइयौ, इहाँ बबा कौ राज"
"लरिका बोल सम्हारि, और कोउ नाही इहाँ राधे जू आप
सकल भयानै कौ राजा बृषभान नृपति, जाकौ बाप"

---

३९. सोहन = सुहावना। गोहन = साथ। आडो = अडता है, दब जाता है। छौहन = दया मिश्रित प्रेम के कारण। भाय = बहाने,मिस, व्याज। सैननि = इशारे से। कांनि = मर्यादा।

दोहा—(२) जुहार = अभिवादन।

(३) हा हा खाना = विनती करना। सतराना = नाराज होना।

(४) उनई = झुकी, लटकी। झर = झडी।

(५) सैंन = संकेत।

"अजु तुम कहा लेहुगी इन बातनि मैं, हमरौ दांन चुकावौ
तिहारी नाइक हैं श्री राधा, ते तौ हम लौं लै आवौ"
"लरिका जीभ चलाय न ह्यां लौं, प्यारियै निकट बुलावै
जो तोहि चाड़ि दही पीवे की, पाइनि परि क्यौं न गावै"
"भली चुकी हम यौंही मांनी, प्यारी के पाय लगावौ
एक बोल हम सौं तुम सौं, दधि प्यारी हमैं पिवावौ"
अजू करि प्रनांम अरु ओक बाँधिकै, बैठे हैं नँदलाल
मद मद मुसक्याय प्याय रस, और लपेस्या गाल
चाहनि मैं चाहनि भई, भई कही नहि जाहीं
'कासीराम' सखी तन मन वारत, फूली अंगनि मांही ॥४०॥

२. ताल चपक

आजु हम करी है नंद जू की कानि
ग्वाल बाल सब सखा सँग लियै, मारग रोकत आनि
बरजि जसोदा अपने कांन्ह कौ, हम लूटी पहिचानि
या ब्रज कौ बसिबौ रह्यौ हेली, रस गोरस की हानि
बसन हार कंचुकि टकटोरत, यह यामैं बुरी बानि
'सूर' प्रभू सौं गई करी हम, प्रीत पुरातन जांनि ॥४१॥

३. ख्याल तिताल

मागै घनस्याम दान दई
गोरस दान सुन्यौ नहीं कबहूँ, यह अब कैसी भई
दियौ नाहीं लेत, हाय हँसि हेरत, नैंकु न करत गई
'नागरीदास' कौने बिधि बनिहै, यह ब्रज रीत नई ॥४२॥

---

(४०) जात = जात में (हस्त)। प्याय = पाय (हस्त)। चाहनि भई = चाहनि मैं भई (हस्त।)

पद ४०. खोर = गली। साँकरी = संकीर्ण, पतली। खोर सांकरी = बरसाना मे दो पहाडियों के बीच एक अत्यंत संकरा मार्ग। और = अन्य, अपर। आप = स्वयं। भयानै = स्थान विशेष। दान = कर। चाडि = रुचि, चाट, चाह, भाव। भली चुकी = बात अच्छी समाप्त हुई; खटपट खतम। ओक = अंजली, अँजुरी।

४१. कानि = मर्यादा का ध्यान। आनि = आकर। हेली = हे अली, हे सखी। बानि = आदत। गई करना = ध्यान न देना; छोड़ देना, जाने देना।

४. तिताल

नित दांन माँगैं गहवर गैल मे, कित जाउँ री
सांवरौ सो धोटा अरबीलौ, मनमोहन है नाउँ री
अंचर गहि हँसि चाहि रहैं मुख, हूँ जिय मैं सकुचाउँ री
'नागरीदास' उतै उरझेरौ, इतै चवैया गाउँ री ॥४३॥

———

७ रूप रसमसी अहीरी

या अनुक्रम की अलापचारी मै दैंने ए दोहा

लहरि लहरि जोबन करै, थहर थहर करैं देह
अरग थरग सिर गागरी, नए रसिक सौं नेह ॥१॥

हरि मूरति चित मै चुभी, नैंननि पुलकत नीर
सीस गगरिया गिरत सी, जकि रही जमुनां तीर ॥२॥

घैरु होत जान्यौ न, उर उड़त न जान्यौं चीर
गिरत न जानी गगरिया, रहत न छांनी पीर ॥३॥

हरी हरी कहि लेहु री, बिसरी दधि कौ नांव
कृष्नमई ग्वारनि भई, कौतग लाग्यौ गाँव ॥४॥

महा रूप मदिरा छकी, चलत डगमगत पाय
जो देखत ग्वारनि छकी, तिन्हैं छकनि चढ़ि जाय ॥५॥

गिरै न ग्वारनि धुकि उठै, घायल मन रिझवार
'नागरिया' रन सुभट ज्यौं, रहत सम्हारि सम्हार ॥६॥

---

(४३) सकुचाउँ = सकुचांव (हस्त)। गाउँ = गाँव (हस्त)।
(४२, ४३)—देखिए उत्सवमाला पद ३९,४०।
दोहा १—लहरना = तरंगायित होना। लहरना = प्रकंपित होना। अरग थरग = अलग-अलग
२. जकि रही = भौंचक्की हो गई।
३. घैरु = बदनामी, अपयश। छांनी = प्रच्छन्न, छिपी।
४. कौतग = कौतुक। छकी = नशे में चूर, प्रमत्त। छकनि = नशा, प्रमत्तता
६ धुकि = झुकि। रिझवार = मुग्ध हो जाने वाला।

१. पद, राग देवगंधार, ताल चपक

नैंकु ठाढ़ी बात सुनि धीरी
भोरहि तैं मटुकी लियै डोलत, ब्रज-बासिनी अहीरी
'माधौ माधौ,' कहि कहि बोलत, बिसरि गयो तोहि नाव दही री
जानति हूँ कहूँ मिली री स्याम घन, यह जक लागि रही री
मन मिलि रह्यौ माधुरी मूरत, मांनत नांहिन काहु की कही री
'चत्रभुज दास' बिरह गिरधर कैं, बन बन फिरत बही री ॥४४॥

२. चौताल

मोहन मुख लखि मोही, रह्यौ न परत घरीहू घर माई
बीथनि मै फेरी करै, हरैं हरैं पैंड भरैं,
सीस पै दहेरी धरैं, प्रेम रस छकनि छकाई
संग भौर भीर, चलैं नैंननि मे नीर बीर,
पीर हियै, नेह-विष लहरि दबाई
'नागरि' कृष्ण रूप भई, भूली देह,
दधि नांम भूली, कहै टेर, लेहु री कन्हाई ॥४५॥

३ तिताल चपक

अहीरी आली लियै फिरत दधि मटकी, रही न सँभारि उर-पट की
चकित नैन, बैननि उतंग, ढौरी लगी री कांन्ह कान्ह रट की
अति आतुर चातुरि बिन दरसन, मदन मूरति मौहन तन अटकी
'हरिनारायन स्यामदास' के प्रभु की प्यारी, रसिक ग्वाल-रस लटकी ॥४६॥

४. तिताल

गोरस बेचन मैं बिकानी हौही
जब तैं दृष्टि परे नँदनंदन, ठाढी रही सु त्यौंही
स्वेद, रोम, बिबर्न, कंप तन, मटकी सीस खिसौंही
गद्गद कंठ, उमगि नैंननि जल, सब सुख रही ससौंही

४४—नैंकु = जरा सी। ठाढ़ी = खड़ी होकर। धीरी = धीरे से। जक = रट। फिरत बही री = मारी मारी फिर रही है, दुर्दशा भोगते हुए भटक रही है।

४६ उर-पट = अंचल। उतंग = उत्तुंग, बहुत ऊँचा। ढौरी = प्रवृत्ति।

यह छवि देखि सकल सखियनि की, भृकुटी भई हरो ही
'कुसलसिंघ' प्रभु मदन मोहन की, अँगियो निपट रिझों ही ॥४८॥

५. तिताल
हरि सौं अटकी ग्वारनि गोरी
लगि रही रूप सुरत चित डोरी
मद मोकल गज ज्यों गोकुल में, कुल सकुल गहि तोरी
बिन दधि ही दधि बेचत बीथनि, कछु सुधि रही न थोरी
बिरह बिवस जानी न, गई कहू सिर तें गिरत कमोरी
'नागरिया' कौतिक सब लागी, बालक बैस किसोरी
खुलि गए बार, सुधि न अंचर की, फिरत प्रेम झकझोरी ।४९॥

—— — ——

८ पूर्व राग

या पद के अनुक्रम की अलापचारी में दैनें ए दोहा—
अँसुवनि जल ते बुझत नहिं, हिये स्याम घन गेह
यह कौनें कीवे दवा, लगी दवानल देह ॥ १ ॥

तुम बिन तन ग्रीषम तपत, कल न परत दिन रैन
उर निवास पिय रावरौ, छिरकत भिस्ती नैन ॥ २ ॥

बिरह बान बेधी गई, नॉहिन लगत उपाव
स्याम सुधर जरराह बिन, मिलें न उर के घाव ॥ ३ ॥

तनक दिखाई दे गए, पीताम्बर फहराय
सरसों सी फूल्यौ करें, तब तें नैननि आय ॥ ४ ॥

---

(४८) देखिए उत्सवमाला, पद २०९ । दोहा (३)—जग्राह=जलराह (हस्त) ।
४७. बिवर्न=वैवर्ण्य; चेहरे का रंग उड़ जाना । खिसौंही=खिसक कर गिर जाने वाली । ससोंही=प्रकंपित; घबराई हुई, दम घुटी हुई । रिझौंही=रिझा लेने वाली; मोह लेने वाली ।
दोहा १. कीवे=करेगा । दवानल=वन में स्वतः लग जाने वाली आग ।
२. भिस्ती=मशक मे भरकर जल देने वाला व्यक्ति, सक्का ।
३. जरराह=जर्राह; चीर फाड़ करनेवाला वैद्य, सर्जन (Surgeon)

तिरत सेज घर-नाव ज्यौं, नैननि के जल माहि
इही नीर मे बूड़िचौ, जो पिय मिलिहै नाहि ॥ ५ ॥
बिन देखें नहिं कल परैं, धीर कौं न ठहराय
जो जानै जाकैं लगै, दृग बिसहारे घाव ॥ ६ ॥
नैन लगे, लागैं नहीं, बकैं मौनि मैं हाय
'नागर' पिय ढिग नाँहि तउ, नित आगै दरसाय । ७ ॥

१. पद, राग आसावरी, तिताल

बिरह की बेदनि को पहिचानै
वरनि सकौं नहि दसा दुहेली, कहैं न कोऊ मांनै
तेरैं उर यह नैक मिदी है, तू ही तनक पत्यांनैं
अंतर जरत मसोसनि निस दिन, भरत उसास बिहांनै
अति दुखिया, सुखिया सौ आली, कहि कहि कहा बखानैं
अधिक अमोही हिलगनि मन की, 'मुरलीधरनि' पिछानै ॥ ४६ ॥

२. इकताल

गिरधर लाल सलौना
अँखियन लागि रह्यौ रँग भीनौं, पीत रंग उपरैना
नटवर वपु बांनिक बनवारी, ऐसौ हुवौ न हौना
कहि 'भगवान हित राम राय', पिय रिझई रीझि रिझौना ॥ ५० ॥

---

(७) बकैं = मुख बकैं (हस्त) ।
५. घर नाव = घट नाव; दो उलटे घड़ो की बनी छोटी नौका, जो सिंघाड़ा तोडने के काम मे आती है; घंडई ।
६. बिसहारे = जहरीले ।
७. नैंन लगे = प्रिय के नेत्रों से मिले हुए नेत्र । लागै नही = निद्रित नहीं होते है ।
पद ४६. को = कौन । दुहेली = दु.ख की; दुःखमय । भिदी है = प्रविष्ट हुई है । पत्यानैं = विश्वास करती है । हिलगनि = प्रेम । मसोसनि = अफसोस, चिंता, कुढन । उसास = उच्छ्वास । बिहानैं = (१) प्रातःकाल, बड़े सदके, (२) बीतता है ।
५०. उपरैंना = ओढ़नी, उत्तरीय ।

३ तिताल

पीय प्रीत करी हमैं बौरी
सुनत नाद मुरली स्रवननि मै, तजि तजि लाजहि आवत दौरी
जौ घर माझ रहै तौ इकटक, ठाढ़ी जोवत पौरी
'नागरिया' छिन कल न परत है, डारी कहा ठगौरी ॥ ५१ ॥

४ ताल चपक

डसी माई स्यांम भवंगम कारैं
आई लहरि मदन तन घेरैं, है कोऊ, बैद हकारैं
तत्र न लागै, मंत्र न फुरई, किते गुनी पचि हारे
आनि मिलावै मौहन गारड़ सौं, मेरी लहरि उतारैं
कितै दुरे वनमाली आली, मनमथ पीर हमारै
'सूरदास' प्रभु तिहारे दरस बिन, काम-कटक तन जारैं ॥ ५२ ॥

५. तिताल

लगनि की पीर न जात भरी
राति द्योस तलफत ही बीतैं, चैन नहीं जिय एक घरी
बिना मिलैं घनस्याम बरन तन, तपत बुझै नां, जात जरी
'नागरिया' व्याकुल बन बीथनि, टेरत डोलत हरी हरी ॥ ५३ ॥

६. इकताल

मैं की जाणू कमली पैरणां, वो इस्क कहर दरियाव
मुज धीरज दी बिचु पई, झकझोका खाटी नाव
बेपरवाई यार दी, चलै बुरा पवन पुरवाय
'नागर' एक मलाह बिहूंणा, सबही दाव कुदाव ॥ ५४ ॥

---

(५१) मांझ = सांझ । (५२) कटक = कपट । (५३) तपत = तपति । (५४) पुरवाव = परवाव ।

५१. जोवत = देखती रहती है । पौरी = द्वार ।

५२. भवंगम = भुजंग, सर्प । हकारै = पुकारे, बुलावे । फुरई = सत्य सिद्ध होता है । पचि = हठ करके । गारड़ = गारुड़ी; मंत्र के द्वारा सर्प का विष उतारनेवाला ।

५३. भरी = सँभाली, झेली, सही ।

५४ की जाणू = क्या जानू । कमली = (?) । पैरणां = तैरना । इस्क = प्रेम । कहर = विपत्ति । दरियाव - नदी । धीरज दी = धैर्य की । पई = पड़ी हुई ।

७. तिताल

पनघट मोहन री मेरैं किन दयो गौहन लगाय
जब झुकि जमुनां जल भरयौं ए री, मोहि छींटनि दै चौंकाय
चाहौं सिर गागरि धरयौ ए री, मेरी इँढुरिया लेत चुराय
जब मेरौ अँचरा छुटैं ए री, वह बिन कहे उरसत आय
घूँघट दिस टक बांधि कैं ए री, रहै इकटक नैंन मिलाय
नहिं मानै, सैंननि खिज्यौ ए री, वहि ढरयौ परत अकुलाय
'नागरिया' कहि कहा करूँ ए री, मन मेरौं हूँ ललचाय ॥ ५५ ॥

(८)

देख री कोऊ ग्वारनि गोरी, निति जसुमति घर आवैं
जोबन जोति जगमगैं, घूँघट बाहिर ह्वै दरसावैं
ललित अंग गति दीपक लोय ज्यौं, पवन लगे झिकुरावै
भूली तन सुधि ज्यौं मद पीयै, उर अंचलहिं भुलावैं
मोहन की दिसि अँखियाँ छाकी, इकटक रहि रहि जावै
सुधि आये तैं लाजत भीजत, घट पट ओट छिपावैं
फिरि वैसै ही रूप बिबस ह्वै, लोक लाज बिसरावैं
रोम रोम चितवनि-विष चढ़ि गयौ, मनमथ लहरि घुमावैं
स्वेद कंप भए सिथल चरन गति, घर लगि को पहुँचावै
देखत हसत ओट ब्रजनारी, नयो नेह उफनावैं
इत ये, उत वे नँद-नंदन रसिया, रस रूप लुभावैं

---

(५५) बहि ढरयो = बहि ढह्यो ।

५४. झकझोरा खांदी = झकझोरा खाती है । बेपरवाई = ध्यान न देने का भाव । यार = प्रिय । दी = की । पुरवाव = पूर्वा । बिहूणां = बिहीन, बिना । दाव = अवसर ।

५५ गोहन = साथ । इंढुरिया = गेंडुरी । टक बाँधना = निर्निमेष देखना । उरसत = उमडता है । खिज्यो = खीझ गई, चिढ़ गई । ढर्यो परत = लुढ़का पड़ता है; मेरे निकट चला आता है ।

५६. लोय = लौ । झिकुरावै = झिलमिलाती है । मद = मदिरा । छाकी = छकी हुई, प्रमत्त । घट = कुंभ, घडा; (कुच)-कलश । पट = (अंचल)-पट । को पहुंचावैं = कौन पहुंचावे । औंड़ी = उमड़ी । कनौड़ी = लज्जित । डौंड़ी = डंका । निगोड़ी = पैर हीना, दुष्टा ।

औंड़ी लगनि, कनोड़ी अँखियाँ, डौंड़ी प्रगट बजावैं
'नागरिया' यह प्रीत निगोड़ी, तनक दबन नहिं पावैं ॥५६।

९. तिताल

एक ब्रज बसत मोहनी बाल
अरी जिहिं कीने लाल निहाल
मोहन हू कौं मोहि लयो हसि, चितवनि नैंन बिसाल
अति अभिमानी भए रहत हे, फँसे रूप कैं जाल
ताहि तनक देखें बिन व्याकुल, बढ़त बिरह जंजाल
मुरली मैं ताके गुन गावत, लैं लैं नाम रसाल
निस दिन नहिं सुरझत 'नागर' वे, परे रसिक रस ख्याल ॥५७॥

१० राग आसावरी का ख्याल, इकताल

कैनूं दिठा है नंदलाल
किसनूं दिठा नद दा नंदन, हौंदा चंद निहाल
अमा नीधडक मैंनू बाबल मारैं, भाई दे दै गाल
वेखाणी बाज मैं कल नहि पावा, इस्क पया जंजाल ॥५८।

११. तिताल

साड़ी यारी बेदरदा दे नाल
रैंन दिहा वेषण नू तरसा, कछु नहिं बुझदा हाल
अदर गए हूवे अंदर दे, सांनू ज्वाब न स्वाल
'वल्लभ रसिक' दीदार दिवांने, तुझ बिन यह दिल बैतलमाल ॥५६॥

(५६, ५७) 'नागरीदास' छाप से युक्त होने पर भी ये दोनों पद 'नागर समुच्चय' में नहीं हैं; शेषांश में हैं।

५७. रहत हे = रहते थे।

५८. कैनूं = किसी ने। दिठा है = देखा है। किसनू = किसने। हौंदा चंद निहाल = उसके मुख चंद्र को देखकर प्रसन्न हो गया है। अमा नीधडक = मानी और निधड़क। मैनूं = मुझको। बाबल = बाप, पिता। गाल = गाली। वेखांणी बांजू = बिना देखे। पया = पड़या; पड़ा।

५९ साडी = तेरी। यारी = प्रेम, मैत्री। बेदरदां = निर्दय। दे = के। नाल = लिए। दिहां = दिवस, दिन। वेषणनूं = देखने के लिए। तरसां = तरसती हूँ। बुझदा = समझता है। हाल = दशा, हाल चाल। अंदर दे = अंदर के। सांनू = (?)। स्वाल = सवाल, प्रश्न। दीदार = दर्शन। दिवांने = मतवाले। बैतलमाल = लावारिस माल।

१२. तिताल

कहिए कौंन सौं, को मानैं
जो है बिथा हिये मैं हेली, सो मन की मन जांनैं
सब बे-पीर, पीर नहिं समुझैं, देत अनखि मोहि तांनैं
'नागरिया' मौहन बिन देखें, मन लोचन उररांनैं ॥६०॥

१३. तिताल

मन की मुख तैं कहा जात बखांनी
कौनैं कही, कहैगों को अब, लगी लगनि की अकथ कहांनी
मौंनहु सौं नहिं रह्यौ परत री, निकसत है हिय तैं उररांनीं
बारू मुठी, अनल बिच दारू, 'नागरीदास' रहै कहा छांनी ॥६१॥

१४. तिताल

रसिया रस रूप लुभाय रहे
सुनि री भट्ट लट्ट भयौ डोलत, बिरह राग अनुराग लहे
भरे रहत नित नीर धीर तजि, प्रेम प्रवाह बहे
जै श्री 'रूपलाल हित' ललित त्रिभंगी, रंगी रंगनि आंनि गहे ॥६२॥

१५ ताल तिताल

की करां नी माई मैड़ा मन बस नांही
मनमोहन दी जालिम जुलफैं, मैंड़े दिल दी फांही
बूड़े उलंभे लांवां लोकां, भावन इस्क सरांही
'चंद' गोबिंद नाल जिंदलगी, रँगी प्रेम रँग मांही ॥६३॥

---

६०. को मानै = कौन विश्वास करेगा। अनखि = रुष्ट होकर। तांनैं = ताना, व्यंग, कटूक्ति, गांस। उररांनैं = उमड़े पडते हैं।

६१. बखानी = कही। लगनि = प्रेम। बारू = बालू। दारू = (१) दारु, लकड़ी,

१६. तिताल

मन मोहन हूँ कीनी कनौड़ी
दोष यहै मोही कौं ए री, मेरी बैरनि अँखियाँ भौड़ी
प्रीति-वेलि फैली उर अंतर, अब लागी दुख बौंड़ी
'नागरिया' ब्रज बगर-बगर मैं, बजी नेह की डौंड़ी ।।६४।।

१७. तिताल

साँवलड़ा साढ़ा दिल लै गया बाँसुरी बजाय
ना जानू कछू चेटक दीता, आँगन असाढ़ डे आय
दरद दिवानी हाथ बिकानी, मोहन मृदु मुसकाय
'जै गोपाल' की माधुरी मूरति, नैंनो रही समाय ।।६५।।

१८ तिताल

जोगन रूप-सुधा की प्यासी
अंग विभूत, रच्यौ मुख पांननि, आनन चंद-कला सी
अटकी नवल जोगिया सौं सुख, पूरन प्रीत प्रकासी
'नागर' दोऊ नेह नगर के, मनमथ-नाथ उपासी ।।६६।।

१९. तिताल

कोई यक जोगी रूप कियैं
भौहैं वंक छकौंहै लोचन, चलि चलि कोयनि कांन छियैं
देखि स्याम तन वेष मनोहर, वार वार जल बारि पियैं
'नागर' मनमथ अलख जगावत, गावत काँधैं बीन लियैं ।।६७।।

२०. तिताल

प्यारे एइनि गलियाँ आव
नैंननि जल सौं धोय सँवारी, अछन अछन धरि पाव

---

(६७) देखिए उत्सवमाला पद १३६

६४. हूँ = मुझको । कनौडी = दबैल । भौडी = बुरी । बौंडी = कली । बगर-बगर = अगल बगल, आस पास, चारों ओर, घर घर । डौंड़ी = डंका ।

६५. साँवलड़ा = साँवला । 'डा' प्रत्यय स्वार्थे प्रयुक्त हुआ है, जैसे 'मुख' से मुखडा । साढा = हमारा । चेटक = जादू । दीता = दिया । असाढ़ डे = हमारे ।

६६. विभूत = भस्म, राख । उपासी = उपासक ।

६७. एइनि = इन्हीं । अछन = अदृश्य रूप से ।

व्याकुल तृषत चकोर दृगनि कौं, बदन-चंद दरसाव
'रसिक बिहारी' लाल सलौनैं, जिन करि निठुर सुभाव । ६८॥

———

६. पूर्वराग

या पद के अनुक्रम की अलापचारी मै दैंनै ए दोहा

कच समेटि कर, भुज उलटि, खसैं सीसपट डारि
पिय-मन कौं करखै न क्यौ, जूरै बाँधनिहारि ॥१॥

जूरा बाँधत देखि कै, भए मजूरा नैन
रहे हजूरा ही खरे, दरस अजूरा लैंन ॥२॥

छुटे छुटावैं जगत तैं, सटकारे सुकवार
बैंनी बाँधत मन बँधै, नील छबीले बार ॥३॥

बैठी न्हाइ सुगंध जल, दुरि देखत नँद-नद
इक टक दृग-खंजन फसे, जूरा बाँधनि-फद ॥४॥

मंजन करि खंजनि-नयनि, बैठी ब्योरति बार
कच अँगुरिन बिच दीठि दै, निरखति नंद-कुँवार ॥५॥

नीठ सँभारत साँवरौ, 'नागर' चितवन ईठ
जूरा बाँधत पीठ दै, लई बाँधि पिय दीठ । ६॥

१. पद, राग टोडी, चौताल

मंजन करि, कचन चौकी पर बैठी बाँधति केसनि जूरौ
तैसिय भुजनि की उचनि अनूपम, ललित करनि बिच झलकत चूरौ

(दोहा १, ३)— नागर समुच्चय मे नहीं हैं ।
दोहा १. करखना = आकर्षित करना, खीचना ।
२. हजूरा = सामने । अजूरा = अंजलि (भरकर खाद्य पदार्थ) ।
३. सटकारे = चिकने, लंबे और मुलायम ।
५. ब्योरति = एक एक बाल अलग कर रही है ।
६. नीठ = कठिनाई से । ईठ = इष्ट, प्रिय ।

लाल-जटित रुचि भाल सु बेंदी, कछुक रह्यौ फबि मांग सिंदूरौ
'आनँदघन' प्यारी मुख ऊपर, वारौं कोटि सरद ससि पूरौ ॥६९॥

२ चौताल

मुरली बजाई स्याम सघन विपुन जाय,
ता समैं बैठी ही बाल करि कैं जु मंजन
सुधि बुधि भूली आली, हिये बनमाली बस्यौ,
हाथ रह्यो कजरा, सकी न भरि अंजन
कहत अधीर बैन, भरि आए नैंन, मानौ
प्रेम-जल भीजे तरफत जग खंजन
'नागरिया' सखी ढिग थामैं औ सँवारैं बार,
खुलि गए तार, जे सिंवार-छबि-गंजन ॥७०॥

३ चौतालौ

मुरली बजावैं कान्ह गावत है तोड़ी,
बिन देखैं अँखियाँ न रहत निगोड़ी
करि कैं उपाय दाय, स्याम कौं मिलाय सखी,
तजी लोक-लाज, सबै सीस पर ओढ़ी
जब तें सुनी है तांन, तज्यौ सुख खांन पांन,
चिंता मैं चकित रहूँ, दिये कर ठोढ़ी
'लाल' कौ प्रभु देखिबे कौं मन नैन दोऊ,
छिन न रहत तरफत होडा होड़ी ॥ ७१ ॥

४ तिताल

देखौ (री) जाय नटवर रूप कियैं,
प्रेम मद, मादक सौ पियैं

---

(६९) रुचि = बर (घन आनंद पृष्ठ ५३१ पद ८३६)। मुख ऊपर = मुख छवि पै (वही)। पूरौ = सूरौ (हस्त)।

पद ६९. चूरौं = कलाई पर के कड़े, एक प्रकार की चूड़ी। सूरौ = सूर्य भी। बेंदी = मत्थे पर पहना जानेवाला एक गहना।

७०. बार = केश, बाल। सिंवार = शैवाल। गंजन = नष्ट करने वाले।

७१. तोड़ी = एक राग विशेष। दाय = उपाय; दाँव, अवसर। ओढ़ी = अंगीकार कर लिया। होडा होड़ी = प्रतिद्वंद्विता करके।

ठाढ़ौ रो कदंब तरैं, मुरली अधर धरैं,
श्रवननि कुंडल जगमगात, बांम वर भुज छियैं
फूल फल मंजरी प्रवालन के गुच्छा स्वच्छ,
बीच चारु चंद्रिका यों जूरा सीस दियैं
नट काछ काछैं, आछैं चलत कटाछैं जाकी,
गुंज माल बनमाल लहलहात हियैं
भुव बंक नैंन, लट मंडित पहुप रैंनु
बेसरि सुदेस, खौरि केसरि की कियैं
'नागरीदास' ऐसौ मोहन त्रिभंगीलाल,
चलि सखी बन बेगि, देखि देखि जियैं ॥ ७२ ॥

५. तिताल

सजनी नए नेह की बात, कहा कहौं हाय री
गहबरि आवत कंठ, कही नहि जाय री
मो दिसि रहे लखि लाल, रसिक रस ख्याल मै
तब उरझे ये नैंन, रूप के जाल मैं
मेरैं जिय अकुलानि, त्यौंही उत स्याम कै
मिलन बिना दिन रैंन, घुटैं बिच धाम कैं
घूमत घायल प्रांन, जैसैं मदिरा पियैं
लोक लाज ग्रह काज की, बिसरी सुधि हियैं
आज अचानक भेट, ह्वै गई बाट मैं
गई इकौसैं न्हावन, जमुना घाट मै
सघन द्रुमन कैं माहि, लै गयो मोहि री
मिले दोऊ लपटाय कहा कहौं तोहि री,

---

(७२) देखौ री = देखौ (हस्त)। मुरली अधर धरैं = हस्त० में नहीं है। 'बनमाल' = मुद्रित में नहीं है।

७२. मद = नशा। मादक = मदिरा। छियैं = छुए हुए हैं। प्रवाल = रक्त किसलय। चंद्रिका = मोर पंख की चंद्रिका; मोर की पूँछ पर का नीला गोल चिह्न। आछैं = आँखों से। गुंज = गुंजा, घुंघची, रत्ती। पहुप = पुष्प। रैंनु = रेणु। सुदेस = सुंदर। बेसर = नाक में पहना जानेवाला एक आभूषण बिशेष। खौर = टीका, तिलक।

'नागरिया' रस मगन अधर आसव-छकी
मिटी न अब लौं, देखि, हियै मे धकधकी ॥ ७३ ॥

६. राग तोड़ी के ख्याल, तिताल

मोकौं गयौ री ठगि ग्वार
कटि-तट पीत पिछौरी बाँधे, साँवरे अंग सुढार
मदन-मत्र से बैंन बोलि कछु, नैना वक निहार
'नागरीदास' मिलै फिरि मोहन, करि राखौं उर-हार ॥ ७४ ॥

७ इकताल

जरद दुपट्टेवाला नी साँवला
कैफ भरी सी भौहें चढ़िया, सिर कलगी, उर माला
बिन देखै दुख देत अमानी, मौंहन सौंहन ग्वाला
'नागरीदास' दिवानी अँखियाँ फिरि पिया इस्क पियाला ॥ ७५ ॥

८ इकताल

हौं कहाँ जाऊँ री, कौन घाट, कौंन बाट, कित पाऊँ नँद-नंदन
हरि गयौ री मन मानिक मेरौ, करि गयौ धीर निकंदन
मंद हासि हसि कैं कसि भौंहै, वसि कीनी रस-फदन
'नागरीदास' बचै कोउ कैसें, वा ठग के छँद-वंदन ॥ ७६ ॥

९. इकताल

पिया कोऊ ऐसी न करिहै, जैसी तुम कीनी
पहिलें प्रीत करी वैसें, अब ऐसी आनाकांनी दीनी
तुम तौ कपट अधीन नंद-सुन, हम नैननि आधीनी
'नागरिया' देखी न सुनी कहूँ, यह हित-रीत नवीनी ॥ ७७ ॥

---

(७३) यह पद नागरीदास छाप से युक्त है, पर मुद्रित प्रति मे नहीं है, शेषांश में है।

७२. गद्दवरि आवत = पूर्ण रूप से भर आता है। इकौसैं = अकेले।

७४. सुढार = सुन्दर गढ़ा हुआ।

७५. जरद = जर्द, पीत। नी = रे। कैफ = नशा। अमानी = न मानने वाला। सौंहन = शोभन, सुहावना।

७६ निकंदन = नष्ट। फंदन = फंदा, जाल। छंद वंदन = छंद-वंद; छल-छंद।

७७. आनाकानी = सुनकर भी न सुनना। हित-रीत = प्रेम प्रणाली।

१०. तिताल

कहा कहौं हे, अँखियाँ अमाँनी
हटक न मानत रूप लालची, ढही परत अकुलांनी
गोकुल-चन्द चकोरि दृगन की, घर घर चलत कहांनी
'नागरिदास' नेह की उरझनि, क्यौंहूं रहत न छानी ॥ ७८ ॥

११. तिताल

मैड़ा दरद न जानै हो आप बेदरदी
सोफी नूँ की खबर असाढ़े, गाढ़े इस्क असर दी
मैं नहिं नेह किया पहिलैं, वह चलि आया दिस घर दी
'नागरीदास' नंद दे नागर, मन लीता मरदौ मरदी ॥ ७९ ॥

१२. तिताल

तैंड़े नाल लगी हो जिंद निमॉणी
कित बलि कूका, कोई नहीं सुणदा, साड़ी दरद कहॉणी
जो मुड़ि बेखै तोसी जीवां, मांन न करि वे गुमानी
'आनंद घन' हुँण नूं तरसांवीं, वारी वारी श्रो दिलज्यानो ॥८०॥

१३. तिताल

बहियां मरोरी मेरी ऐ री तुम देखौ
चितै रही मुख पर अंचर दै, कहा दानि की कानि
अपनौं रस गोरस हम लाई, याके बबा कौ कहा,
नंदराय कुल कियौं उजगार, लगे बिरानौं खान

---

७८. अमांनी = न माननेवाली। ढही परत = गिरी पड़ती हैं। हटक = रोक। छांनी = प्रच्छन्न।

७९. मैंड़ा = मेरा। सोफी = सूफी। नूं = (?) असाढ़े = हमारे। असर दी = असर की। दिस घर दी = मेरे घर की दिशा में। लीता = लिया। मरदौं मरदी = जबरदस्ती, बलपूर्वक।

८०. तैंड़े = तेरे। नाल = लिए। जिंद = जिंदगी, जीवन। निमांणी = न मानने वाला। कित = कितना। कूका = पुकारा। सुणदा = सुनता है। साडी = हमारी। वेखै = देखे। वे = रे। तोसी = (?)। जीवां = जीवित हो जाऊँ। हुँण = अब। नूं = (?)। तरसांवरीं = तरसाओ। वारी वारी = मैं निछावर हूँ।

जित निकसौ तित आड़ोई डोलै,
बरजोरी करि करि देत नहिं जान
'साँवरी सखी' जसुमति रानी पै लैं जु चलैंगी
रे तोहि सिखाई बानि ॥८१॥

१४. इकताल
नित दान मागैं गह्वर गैल में, कित जाँव री
सावरो सो धोटा अरबीलो, है मनमोहन नाँव री
अंचर गहि हँसि चाहि रहै मुख, हूँ जिय में सकुचाँव री
'नागरीदास' उतैं उरझेरो, इतै चवैया गाँव री ॥ ८२ ॥

---

१०. भोजनानंद

या जुगल भोजन के पदन के अनुक्रम की अलापचारी मै दैनैं ए दोहा—

मिलि जेंवत दोउ सरस रस, रसनां रस बिसराय
गई छुधा सब उदर की, रही दृगनि मे आय ॥१॥

जो विंजन कर पल्लवनि, छुवत छबीली बाल
ताकौं रुचि सौं लेत है, नवल रँगीले लाल ॥२॥

देत गसा मुख तीय कैं, चितई करि भुव भग
रह्यौ कौर ही हाथ मैं, भई दृगनि गति पग ॥३॥

सरस परस कौं तरसि जिय, लाल कौर कर लेत
चतुर चौंकि तब लाड़िली, अधर छुवनं नहिं देत ॥४॥

कौर लेत कर कप है, देत बीच छुटि जात ।
स्वेद-सिथल सियराय तन, छुवत अधर मुसक्यात ॥५॥

---

(८२) देखिए उत्सव माला ४०, यही ग्रंथ ४३.

८१. कहा दानी की कांनि = क्या कर लेने वाले की यही मर्यादा है। उजागर = प्रख्यात । बिरानौ = पराए का, दूसरे का । आड़ोई डोलै = रोकता हुआ डोलता है । बांनि = आदत ।

दोहा १ रसना = जिह्वा । २. बिंजन = भोज्य पदार्थ । ३. गसा = ग्रास, कवर । भुव = भ्रू, भौंह ।

जैंवत स्यामा स्यांम दोउ, 'नागरिया' सुख दैन
को जन कवि बरनन करै, वह मिलि भोजन लैंन ॥६॥

१. राग सारग

मडल सहित आंनि मडल मै बैठे लाल,
मनिन के थारन कौ मंडल बनायौ है
सखिन समाज सनमुख सब सोभा देत,
मानौ कवलनि कौं विपुन लगायौ है
नए नए भोजन करत नाना भांतिन सौं,
जैसी जाकै रुचि ताकै तैसौ जिय भायौ है
बोलि बोलि देत दोऊ अपनी सहेलिन्ह कौं,
ऐसी 'माधुरी' सौ कोऊ कैसे कै अघायौ है ॥८३॥

२. तिताल

जैंवत लाड़िली लाल दोऊ, षट बिंजन चारु सबै सरसैं
हठि कै मनमोहन हार परे, भट्ट हाथ जिवावन कौं तरसै
कर कपत बीच ही छूटि परैं, कबहूंक गसा मुख लौं परसैं
सुख-सिंधु अपार कह्यौ न परै, 'सखी माधुरी' कुंज सबै बरसै ॥८४॥

३. चौताल

भोजन करत भावते जी के
अरस परस कछु खात खवावत, सो सुख समझत लोचन ही के
कीनौ कछुक मनोरथ मौहन, देत सँवारि गसा मुख ती के
हसि चितई भरि नैन 'माधुरी', रहि गयो कौर हाथ ही पी के ॥८५॥

४. चौतालो

जैवत रसिक रसिकनी संग
पिय हठि कौर देत प्यारी मुख, परसत अधर होत भुव भंग
बीच बीच बतरानि मधुरई, अति रस भोजन बाढ्यौ रंग
'नागरि' सखी सौंज लियै ठाढ़ी, इक टक भई दगनि गति पंग ॥८६॥

दोहा (१–६)—ये 'भोजनानंद' के क्रमशः ८, ३, ४, ६, १, संख्यक दोहे है।
(८५) यह सवैया छंद है।
पद ८३—अघाना ५. भावते = प्रिय। ८६. सौंज = सामग्री।

५. चौतालौ

अरी ए जैंवन हूँ नहिं पाए
इक टक रहे बदन चितवत ही, अँखियन हाथ बिकाए
जब कछु कौर परसपर दीनैं, तब तब मैं सम्हराए
अति आसक्ति स्याम स्यामा की, 'नागरिया' लखि नैंन सिराए ॥८७॥

६. चौताल

पान खवावत करि करि बीरी
इकटक ह्वै कैं बदन बिलोकत, लागत पल न अधीरी
हसत जात कछु नाहि सँभारत, तन की सुरति गई री
'रसिक प्रीतम' कै अंग संग सौं, मिलि छतियाँ भई सीरी ॥८८॥

---

११. जुगल-रस-माधुरी

या अनुक्रम की अलापचारी मै दैनैं ए दोहा
चंद मिटै, दिनकर मिटै, मिटै त्रिगुन बिसतार
दृढ़ ब्रत हित हरिवंस कैं, मिटै न नित्त बिहार ॥१॥

हरि राधा, वृंदा विपुन, नित बिहार रस एक
बिछुरत नाही पलकहू, बीतत कलप अनेक ॥२॥

प्रेम-रासि दोउ रसिकवर, बिलसत नित्य बिहार
ललितादिक नित लेत हैं, तिहि सुख कौ रस सार ॥३॥

उभै सरोवर रूप के, हस सखिन के नैंन
अद्भुत मुक्ता चुगत ही, मुसकनि चितवनि सैंन ॥४॥

नव निकुंज मन कौं अगम, सेवत कोटि अनग
जुगल केलि आनंद कौ, तहाँ अखडित रंग ॥५॥

दोहा (१, ४)--नागरसमुच्चय में नहीं हैं। दोहा २, ५, ६, ७ जुगल-रस-माधुरी के क्रमश. १, २, ३, १२ संख्यक दोहे हैं। दोहा (६)—जिय = जिहि (हस्त)।
८७. सिराए = शीतल हुए। ८८ सीरी = शीतल।
दोहा १—त्रिगुन बिसतार = त्रिगुणात्मिका प्रकृति से बना हुआ संसार।
४. उभै = (राधा, कृष्ण) दोनों। सैंन = इशारा। ५. मुहाचही = वदनावलोकन। सुतंत्र = स्वतंत्र।

नैंननि नैंन सिरावहीं, बैंन सजीवन मंत्र
मुहाचही जिय ज्यावहीं, स्यांमां स्यांम सुतंत्र ॥६॥

नित्त केलि आनंद रस, बिच वृंदाबनं बाग
'नागरिया' हिय मैं बसौ, स्यांमां स्यांम सुहाग ॥७॥

१ पद, राग सारंग, चर्चरी ताल

नव कुँवर चक्र चूड़ा नृपति साँवरौ,
श्री राधिका तरुनि-मनि पट्ट-रांनी
सेस ग्रह आदि वैकुंठ परजंत, सब
लोक थांनैत, बन राजधांनी
मेघ छप्पन कोटि बाग सींचत तहाँ.
मुक्ति चारौ तहाँ भरत पांनी
सूर ससि पाहरू, पवन जन,
इंदिरा चरन दासी, भाट निगम बांनी
धरम कुतवाल, सुक सूत नारद मुंनी,
फिरत चर चारु सनकादि ज्ञानी
सतगुन पौरिया, काल बंदुवा, करम डाड़िया,
काम रति सुखनि सानी
कनक मर्कत धरनि, कुंज कुसमित महल
मध्य कवनीय सैंनीय ठांनी
पल न बिछुरत दोऊ, जात नहिं तहाँ कोऊ,
'व्यास' महलनि लियैं पीक-दांनी ॥८९॥

---

(८९) पाठ भेद 'भक्त कवि व्यास जी' पृष्ठ २१०, पद ७५ के अनुसार है। छप्पन= छय नवै। जन=जल (हस्त)। धरम कुतवाल०=धरम कुतवाल, सुक सूत, नारद चारु, फिरत चर चार सनकादि ज्ञानी। जात नहिं तहाँ कोऊ= हस्तलेख मे नहीं है।

७. सुहाग=सौभाग्य।

पद ८९—चक्र चूड़ा नृपति=चक्रवर्ती राजा। थानैत=चौकी या थाने का प्रमुख। बन=वृंदावन। जन=सेवक। इंदिरा=लक्ष्मी। सूत=कथा वाचक। चर= दूत। बंदुवा=बंधुआ, बंदी। कवनीय=कमनीय। सैंनीय=शय्या। ठांनी= बिरचा, बनाया।

२ चर्चरी

राय गिरधरन नव कुंज रजधानिं बिच,
संग श्री राधिका रांनी राज़
मोर चहुँ ओर हय हींस हलचल चमूँ,
गहर जल घोष नीसान बाजैं
कोकिला कीर कलहंस बंदी बहोत,
बड़े नित केलि के बिरद गाजैं
प्रेम परधान मति मदन मत्री महा,
देत रस मत्र सब सुखनि साजैं
मत्त मधु माधौ कुतवाल के दूत अलि,
फिरत कर कुसम सौरभ कैं काजैं
सुफल फल देत तरु देव बहो भाँति अरु
नगर कुल देवि बृंदा बिराजैं
रूप उतसव सदा, सहज मंगल दृगनि,
उभय आसक्त लखि लाज लाजैं
'दास नागर' निकट ललित ललितादि तहाँ,
रास आनन्द छकि चढ़िय छाजैं ॥ ९० ॥

३ चौतालौ

बृंदा विपुन रसिक रजधांनी
राजा रसिक बिहारी सुंदर, सुंदर रसिक बिहारनि रांनी
ललितादिक ढिग रसिक सहचरी, जुगल-रूप-मधु-पांनी
रसिक टहलनी बृंदा देवी, रचना रुचिर निकुंज रवांनी
जमुना रसिक, रसिक द्रुम बेली, रसिक भूंमि सुखदानी
इहां रसिक चर थिर 'नागरिया, रसिकहि रसिक सबै गुन-गानी ॥ ९१ ॥

४ ताल चर्चरी

कुंज छबि पुंज बहो चितन सेवत सदा,
जुगल आसक्त रस एक आनन्द

(९०, ९१) देखिए वन जन प्रशंसा पद ६६, ६८, ।
(९०) सौरभ कैं = सौरभ किं (हस्त)। देत तरु = देव तरु (हस्त)
९१. गानी = गानेवाले, गायक। पानी = पीने वाला।

लिपटि रही द्रुमलता मत्त अलि कुसम प्रति,
पलहु नहिं घांम रवि बिरह दुख दंद
मधुर कल कंठ ललितादि पूरित महा,
रंग मय राग सारंग धुनि मंद
'दास नागर' तहाँ स्याम स्यांमा निकट,
ठाढ़ी इक टक-जु रही निरखि मुख-चंद ।। ९२ ।।

५ ताल चर्चरी

नवल घनस्याम नव, नवल वर राधिका,
नवल नव कुंज, नव केलि ठांनी
नवल कुसुमावली, नवल सज्जा रची,
नवल कोकिल कीर भृंग गानी
नवल सहचरी वृंद, नवल बीनां मृदंग,
नवल सुर तांन, नव राग बांनी
नवल गोपीनाथ नव, नवल रस रीति,
नवल 'हरिवंस' अनुराग जांनी ।। ९३ ।।

६ ताल चर्चरी

करत सुख संग नव रंग ललनां ललन
स्याम जुग भुजनि बिच गउर तन भांमिनी,
सजल घन मांझ मनौ दामिनी झलमलन
छुटत वर वार अरु टुटत हारावली,
खोलिही बिमल विधु-वदन घूँघट बलन
नैंन हसि हसि मिलत, रस छकी दृष्टि सौं,
तैसियै छबि भरी बंक भृकुटी चलन
महकि रही मालती कुंज कुसमित महल,
टहल ललितादि तहां भूलि लागत पल न
'नागरीदास' सुख रास लीला ललित,
कोर कोरकनि मद मदन दल दलमलन ।। ९४ ।।

---

(९२) देखिये वनजन प्रशंसा पद ७० । लिपटि = लिबढ़ि ।
(९४) देखिए उत्सवमाला ८६, । विमल विधु = बरहिं बिधि (हस्त)

७ ताल चर्चरी

कुंज रस केलि कवनीय दंपति करत
परसपर हित विबस रूप मादिक छके,
छूरि करि वसन उर सुदृढ़ अंकनि भरत
पियत मधु अधर सुख-सिंधु मैं मगन मन;
निकट तिहिं समैं चख च्यार खजन लरत
कबहुँ भुव-भंग-जुत, 'सी' करत रंग सौं,
अग प्रति अंग पिय परस दै मन हरत
बिथुरे चिन कचन ,मुख गउर निकसत अमित,
चंद तैं सघन मनु स्याम बादर टरत
सुरत सुख स्वेद तैं महकि केसरि चली
बास लहि 'नागरीदास' धीर न धरत ॥६५॥

१२ गान तान

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैंनैं ए दोहा
नवल किसोरी चतुर त्यौं, तैसे चतुर किसोर
गान तांन रस रहसि की, बहसि बढ़ी दुहुँ ओर ॥१॥

होत राग सारंग धुनि, दंपति कुज नवीन
बिच बिच गाय बजावहीं, बीननि परन प्रवीन ॥२॥

धीरज पग ठहरैं नहीं, सुर गहरैं गुन गांन
राग रसासव सिंधु की लहरैं उपजत तांन ॥३॥

संग मृदग सुघंग गति, राग रंग अभिराम
स्यामैं रिझई नागरी, नागरि रिझए स्यांम ॥४॥

---

(६५) देखिए उत्सव माला ८७ । सुदृढ़ = दृढ । चली = भली ।
(दोहा १, २, ३) निकुंज विलास के क्रमशः ६०, ६१, ६२ संख्यक दोहे हैं ।
(दोहा २) परन = परनि ।
दोहा—१. रहस = आनंद । बहस = विवाद ।
२. परन = वाद्य विशेष ।
३. रसासव = रस + आसव = शराब ।
४. सुघंग = सुढंग ।

१ पद, राग सारंग, चौताल

बैठे हरि राधा संग, कुंज भवन अपने रंग,
मुरली मधुर सुर सारंग मुख गाई
मोहन अति सुजांन, सकल कला गुन निधांन,
जांनि बूझ एक तांन, चूकि कैं बजाई
प्यारी जब गह्यौ बीन, सकल कला गुन प्रवीन,
अति नवीन रूप सहित वाही तांन सुनाई
'वल्लभ' गिरिधरन लाल, रीझि दई अंकमाल,
कहत भलैं जु भलैं, सुन्दर सुखदाई ॥६६॥

२. चौताल

अब कैं फेरि लीजैं हो सुघरराय वह तांन
सरस मधुर नींकी चोख परी है (तारैं) तांन बँधान
अब घर विकट सरस, गिरधर तुमही पैं (बनि) आवत, मोहिं तिहारी आंन
'गोविंद' प्रभु प्रिय जांन-सिरोमनि, मदन मोहन प्रिय अति सुजांन ॥६७॥

१३ जुगल रस माधुरी

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैंनैं ए दोहा

दंपति ढिग नव कुंज सखि, करत गांन सारंग
बीन तँबूरा खंजरी, बजि दायर मुहचग ॥१॥
रस-संपति मिलि बिलसहीं, दंपति दै गर बाँह
ढिग बीनां बीनां सखी, बजवति द्रुम की छाँह ॥२॥
बड़े बार छबि सौ छुटे, अंस बीन, कटि छीन
सब रिझवारनि के मनौं, मन भरि कावरि लीन ॥३॥

पद ६६. रंग = मौज । सारंग = राग विशेष ।
६७. चोख = चोखी, सुन्दर । आन = शपथ, सौगंध । जान-सरोमन = चतुर शिरोमणि ।

दोहा १ दायर—वाद्य विशेष, मुहचंग ।
२. बीनां = वीणा । बीनां = प्रवीणा ।
३. अंस = कंधा । काँवरि = बाँस के डंडे के दोनो सिरों पर छीकों में लटकी हुई दो दौरियां, जिनमे तीर्थ-यात्री गंगा-जल आदि भर कर निकलते हैं ।

ललित तँबूरा बाल ढिग, सोहत है यह भाय
समर जीति सर दृगन सौं, तरगस लियौ छिनाय ॥४॥
सखी रूप की मंजरी, खंजरीट से नैंन
वजैं करन मैं खंजरी, लजैं परेवा बैंन ॥५॥
चलत दायरे मैं चपल, चारु अंगुरिनि रूप
अछियाँ मछियाँ सी नचैं, मनौ अमृत के कूप ॥६॥
चंगैं मुह महचग तिय, बजवति हैं गतिकार
बैठ्यौ कवल दरार बिच, मनौं अलि करत गुँजार ॥७॥
गहगड राग समाज जुत, राजत बिच नव कुंज
प्रेम रूप गहवर भरे, गउर स्याम रस पुज ॥८॥
नित्त केलि आनद रस, बिच वृंदावन बाग
'नागरिया' हिय मैं बसौ, स्यामा स्याम सुहाग ॥९॥

१ चौताल

राजत घूंमरे लोयन, माथैं केसरि खौरि सँवारी
पीत पाग पर पहुप गुलाब रचे हैं बिबिध,
कल केसनि सौं तनु चंदन चर्चित धारी
बैठे हैं संकेत महल मैं, छूटत है जल जंत्र,
भाँति भाँति ढिग फुलवारी
गावत सारँग राग परसपर, 'सदानद' बलिहारी ॥६८॥

(दोहा १–६) ए सभी दोहे नागर समुच्चय में नहीं है। वहाँ १२, १३ खंड एक ही हैं; १२ के दोहे और १३ का पद १०१। ए 'जुगल रस माधुरी' के क्रमशः ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १ , १२ संख्यक दोहे हैं।

(दोहा ६) अंगुरिनि = अंगुरियन (जुगल रस माधुरी दोहा ९)

४ तरगस = तूणीर, तरकस।

५. परेवा = पारावत, कबूतर।

६. अछियाँ = अक्ष, आँखें। मछियाँ = मच्छ, मछलियाँ।

७. चगैं मुह = सु-मुख। गतिकार = गत।

८. गहगड = चहल पहल; पूर्ण रूप से, कोलाहल के साथ। गहबर = गह्वर, गड्ढा।

पद ६८. घूंमरे = घूर्णित। लोयन = लोचन। खौरि = टीका, तिलक। जल जंत्र = फव्वारा।

२. चौताल

सीतल सदन मैं राजत प्रिया प्रिय,
मधि ललितादि सहचरी करैं केलि
महल उसीर रह्यौ पूरित गुलाब नीर,
अतर अरगजा चन्दन सुगंध रेलि
चहुँ ओर छुटत फुहारे, ठौर ठौर चादर परत,
गांन करत तहाँ जुवती नवेलि
सुमन सेज पर बिहरत स्यामा स्यांम प्रेम-बस
परसपर अंस भुज मेलि मेलि
असिता प्रवाह आगैं बहत तरल, तामै
तरु झुके भूमि भूमि लपटी माधुरी बेलि
त्रिविध समीर चलि, मंजु कंजु गुंजै अलि,
होत बलि 'मरली' नैंननि सुख झेलि ॥९९॥

३ चौतालौ

नव निकुंज रस पुंज पिया पिय करत है कल केलि
स्यांम तमाल रसाल सौं लाड़िली हसि कुसुम फल फलित,
मानौं बलित ललित बेलि
अंग अंग अनंग झलकत, रहे रति रस झेलि
'बिहारनिदास' दुलरावत गावत दंपति कौ सुख,
सोभित सग सहेलि ॥१००॥

(४)

बने माधुरी के महल
कूल जमुनां फूल फल भरि भँवर चहल पहल
सघन दल संकुलित डारैं, मिटत दिनमनि कहल
बिछुए, जल छींटनि छिरके बिच, कदली दल के पहल

---

(१०१) चहल पहल = चहला पहल (हस्त, मु) । सघन दल = सघन नव ।

९९. उसीर = खस । अरगजा = अनेक सुगंधित द्रव्यों का मिश्रण; सुगंधित लेप ।
रेलि = झोंका । असिता = काली (यमुना) ।

१००. रसाल = मधुर । बलित = संयुक्त, लिपटी हुई । सहेलि = सहेली, सखी ।

तहाँ बिहरत प्रिया हरि सँग, तजि सुरत रन दहल
'दास नागर' सखी फूली फिरत आनँद टहल ॥१०१॥

५. इकताल

जमुना तट नवल कुंज, द्रुम नव दल पौहप पुंज,
तहाँ रची नागर बर रावटी उसीर की
कुँमकुँम घनसार घोरि, पंकज दल बोरि बोरि,
चरचित चहुँ ओर ल्यावैं पंकर पटीर की
सोभित तन गउर स्यांम, सुखद सेज सुरत स्याम,
परसत सीतल सुगंध मंद गति समीर की
पिय 'बिहारीलाल' ललितादिक हरषि हियैं,
श्रवननि धुनि सुनि सुनि कल किंकनी मँजीर की ॥१०२॥

६. चौताल

सुनि री सुनि कांन दै तान, सखी, कहा गावत प्यारी विहारी कैं संग
वजावत बीन बिसाखा प्रवीन, कला सलिता.ललिता मृदंग
नागड़ दी, नागड़ दी, तकतागड़ टी, तागड़ दी,
थापरनि परैं दोऊ आंनि सुधंग
'वृंदावन' दपति रस-संपति भरि बरसत मिलि अद्भुत रंग ॥१०३॥

७. तिताल

श्री राधा मोहन कुंज भवन मैं करत बिहसि कल गांन
छाय रह्यौ सारंग रंगमय, लेत परसपर तांन

---

१०१. बनें = सुशोभित हो रहे हैं। दल = पत्ता। संकुलित = एकत्र, मिली हुई। दिनमनि = सूर्य। कहल = आलस्य। पहल = तह। दहल = भय, प्रकंप। टहल = सेवा।

१०२. पौहप = पुष्प। रावटी = राजमहल, रनवास। उसीर = खस। कुंमकुंम = केशर। घनसार = कपूर। पंकर = पंक, कीच। पटीर = पाटीर, चंदन। मँजीर = नूपुर।

१०३. सलिता = सरिता। थापर = थाप; मृदंग पर थप्पड की चोट। सुधंग = सुढंग। रंग = आनंद।

अनाघात आवत दुहुँघा तैं, जैसी सुनी न कांन
को घटि बढ़ि गुननिधि 'नागर' गुन आगर स्यांम सुजांन ॥१०४॥

८. तिताल

दोऊ सीस जूरा सोहै, हाथनि तँबूरा बीन,
परम प्रवीन गोरी गांन लैं उच्चारयौ है
छायौ सुर कांननि, छकाए प्रिय प्राननि औ,
छूटि गिरयौ अंस जंत्र, स्यांम न सँभारयौ है
रीझि मुरछावैं, मुरछाय ठहरावैं अग,
'नागरि' तरंग तांन मन बोरि डारयौ है
ताहि कियो बिबस, घुमाय गति मति डारी,
जाकी बाँसुरी नैं ब्रज बड़ौ सोर पारयौ है ॥१०५॥

(६)

बदन हसौंहैं, बैठी सौंहैं प्यारी प्रीतम कै,
उरज उठौंहैं, सोभा हारन समेत हैं
मंद सुर गावत, सु प्यावत सुधा सौं श्रौन,
किधौं मंत्र धुनि मीनकेतु के निकेत है
अधरनि रंग भरे, चौका की चमक होत,
अछनि अलच्छित कटाछ सर देत हैं
'नागरिया' ओट दै तंबूरा हरि हेरि हेरि,
फेरि फेरि तांननि फिरायें मन लेत हैं ॥१०६॥

(१०४, १०५, १०६) ये पद नागरीदास की छाप से संयुक्त हैं, ये नागर समुच्चय मे नहीं है, अन्यत्र शेषांश में हैं।

(पद १०५, १०६) ये कवित्त हैं।

(१०४) बिहसि = बहस (हस्त)। रंग मय = रंग मैं (मु)। दुहुँघा = दहुघा (हस्त)

(१०५) हाथनि = ललित (हस्त)। ताहि = जाहि। घुमाय = धुजाय।

(१०६) बैठी = बैदी (हस्त)

१०४. अनाघात = अनाघ्रात; न सूँघा हुआ (सुगंध)। दुहुँघा = दोनों ओर।

१०५. सोर पारयो है = शोर मचा रक्खा है।

१०६. सौंहैं = सामने। हसौंहैं = हास-युक्त। मीनकेत = कामदेव। निकेत = घर। चौका = दाँतों के चौके; आगे के चार दाँत। अछनि = आँखों से। सर = शर, बाण।

१४ छाक

इन छाक लीला के अनुक्रम की अलापचारी मैं देनैं ए दोहा
लकरी घोवै भैषनैं, विधि सौं करैं जु पाक
जा कारन खटखट करैं, ताकौं भावत छाक ॥१॥

आवै नहिं सुर मुनिन कैं, कियैं जग्य जंजाल
सो ग्वारन कै बीच मैं, जैंवत छाक गुपाल ॥२॥
जैंवत हरि लरिकॉनि मैं, द्रुम छहियाँ जल कूल
देखि मंडली छाक की, रह्यो कमंडली भूल ॥३॥
तजि रतनन के थार कौं, कर धरि जैंवत छाक
हरि कौं भावैं भवन तैं, या ब्रज के बन ढाक ॥४॥
हरि वन भोजन केलि लखि, थिथकी बानी बाक
'नागरिया' नित चित रहैं, चढ़ी छाक की छाक ॥५॥

१ पद राग सारंग, ताल चपक

छकिहारी च्यार पाँच की आवत मधि ब्रजराज लला की
बहौ प्रकार बिंजन परिपूरन, पटवन बड़े डला की
टटकि टटकि टेरत गोपालैं, चहुँधा दृष्टि करैं
सुनत बैन-धुनि चली चपल गति परासोली के परैं
'परमानंद' प्रभु प्रेम छुधित, मनु टेरि लई ऊँची कर बाँह
हसि हसि फैंट कटिन सौं बाँधत, बैंटत छाक बन ढाक माँह ॥१०७॥

२ इकताल

"आगै तू आव री, छकिहारी
जब तू बोली, तबहूँ टेरयौ; सुनी न टेर हमारी

(दोहा १ ४)नागर समुच्चय में इन दोहों का क्रम परस्पर उलट गया है।
दोहा १— भेसनैं = वैष्णव । पाक = पवित्र । खटखट = झंझट । छाक = दोपहरी का भोजन।
३. कमंडली = कमंडल वाला, ब्रह्मा।
४. ढाक = पलास।
५. थिथकी = थक गई। बानी = सरस्वती। बाक = वाणी। थिथकी बानी बाक = सरस्वती की वाणी थक गई; वे आश्चर्य से चुप हो रहीं। छाक = नशा।
१०७ छकिहारी = छाक लेकर आने वाली। बहौ = बहु, अनेक। बिंजन = व्यंजन, भोज्य पदार्थ। डला = डलिया। परासोली = गोवर्द्धन के निकट एक गाँव; वहीं सूरदास जी रहा करते थे और वहीं उनका देहावसन हुआ।

मइया छाक सबारी पठई, तू कित रही अबारी"
"अहो गोपाल लाल हूँ भूली, मधुरी बोलनि पर वारी"
श्री गोबरधन धरन धीर सौं, प्रीत बढ़ी अति भारी
'जन भगवांन' मगन भई ग्वारनि, तन सब दसा बिसारी ॥१०८॥

३. इकताल

सुन्दर सिला खेल की ठौर
मदन गुपाल तहाँ मधिनायक, चहुँदिस सखा मडली और
बाँटत छाक गोवर्द्धन ऊपर, बैठक नांनां बिधि के चौर
हसि हसि भोजन करत परसपर, चाखि चाखि लै राखत कौर
कबहुँक बोलत गाइ सिखर चढ़ि, लै लै नाम धूमरी धौर
'चतुर्भुज' प्रभु लीला रस रीझे, गिरधरलाल रसिक सिरमौर ॥१०९॥

४. चौताल

गोवर्द्धन गिरि शृंग सिलनि पर, बैठे छाक खात दधि ओदन
आस पास ब्रज बाल मंडली, मध्य बहौं बलि मोंहन बैठे,
खात खवावत प्रेम प्रमोदनि
कान्ह कौ छीकौ नोई छोरि गहि डारत, वह वा पर, वह वाकी हो कोदनि
बाल केलि क्रीडत 'गोविंद' प्रभु, हँसि गिरि जात सुबल की हो गोदनि ॥११०॥

(५)

छोटे छोटे ग्वारनि मैं छोटे नँद छइया
राजत दोऊ कुँवर अति सुंदर, गिरधर स्यांम, गउर बलभइया

---

(१०९) औरं=जौर (अष्टछाप परिचय पृष्ठ २८० पद २२)। बैठक० = बहु विधि कानन बैठे ठौर (वही)। राखत=आरोगत (वही)। बोलत गाइ सिखर चढि = बोलि गिरि के सिखर पर (वही)।

१०८. आव री=आ। टेर=पुकार। अँबारी=अबेर, विलंब किए हुए।

१०९. सिला=शिला, चट्टान। ठौर=जगह। मधिनायक=नेता, प्रमुख। चौर=चत्वर, चबूतरा, चौरा। कौर=ग्रास।

११०. ओदन=भात। नोई=पगही, गाय दूहते समय पैर बाँधने की रस्सी। कोदनि=कोद, ओर, तरफ़। सुबल=कृष्ण के एक सखा; अष्ट सखाओं में से एक।

लए बनाय ढाक के दौनां, एकैं वैस सब ग्वार-खिलइया
'नागरीदास' तहाँ मधुमंगल, मथि मथि देत दूध कौ घइया ॥१११॥

६. ताल चर्चरी

नवल गोपाल मिलि करन भोजन लगे
तीर जमुना विपुन भीर बहौ बालकनि,
हृदै आनंद भरि खेल रस रगमगे
छाक लीला ललित, कूल कोलाहलनि,
दिवस भयौ जानि मनु कोकिला गन ज़गे
चहूँ दिसि कुडलाकार ग्वालावली,
चारु व्रजचंद उडगननि बिच जगमगे
कइक छींकानि, कई फूल फल सिलनि पर
कइक दधि मधु धरन बकुल कल लैं न गे
किसलै दल कदलि दल, जलज दल, जघनि पर
धरत ब्रिंजन बिबिधि, परम कौतिक पगे
स्यांम कर बांम पर भात धरि खात फिर
'नागरीदास' हसि जात बातनि खगे
निरखि बिधि कहत मन कहाँ जगि-भोग ए
जूठ पसु पालकन की जु तैं नहिं भगे ॥११२॥

७. ताल चर्चरी

आजु वर विपन मै छाक लीला रची
गोप वड़डेन के कुँवर उडगन लसत,
बीच व्रजचद अति सरस सोभा सची
उरसि बन कैं किधौं चारु चमकत भई
इंद्रमणि नील कल कनक कुंदन खची

---

(११२) फूल फल = फूल (हस्त)। भोग ए = भोज ए (हस्त)।

१११. वैस = वयस, आयु। खिलइया = खेलने वाले। बलभइया = बलराम। मधुमंगल = अष्ट सखाओं मे से एक। घइया = ताजे दुहे दूध से निकाला हुआ मक्खन। छइया = पुत्र।

११२ बहौ = बहु, अनेक। बकुल = बल्कल, बोकला, छिलका। खगे = लीन होकर, जगि भोग = जो यज्ञ के भोग का अधिकारी होवे, देवता।

परसपर करत मिलि मोद जुत चपलता
बदन लपटात दधि, मार मोदक मची
लेत झुकि झपटि कर कौंर हरि सबनि तैं,
देत गडूक तकि तक्र अँखियाँ नची
'नागरीदास' भए बहुत बिस्मैं निरखि
चित्र लौं पाति सुर गगन मंडल खची ।।११३।।

८ चौताल

छाक खाइ खाइ, धाइ धाइ जाइ द्रुम चढ़ि
फैंटा मुख पौंछत, अँगोछत है कर कर
आँबरीन डंड डारि, दौरावत जाकी हार,
रोवन रुवाइ छाड्यौ, हसे सब हर हर
एक ग्वाल झाँकत, इक ताकत है दूरि भखि
डौरा खिजि गारी देत, काँपत है थर थर
'जगजीवन' गिरधारी, बहौत खेले बिहारी,
याही पर राखौ दाव, कूदे सब भर भर ।।११४।।

१५ कृष्ण रूप माधुरी

या अनुक्रम की अलापचारी मैं देनै ए दोहा
ठाढ़े हरि गिर की सिखर, चरन लकुट लपटाय
पीतांबर फहरात लखि, त्यौं त्यौं मन फहराय ।।१।।

---

(११३) खची = गची । अंखियाँ नची = इत मुख सची (हस्त) ।

११३. सची = सजी । उरसि वन कैं = वन के उर पर । खची = खचित, जड़ी हुई । मोदक = लड्डू । गंडूक = गंडूष, कुल्ला । तक्र = मट्ठा । देत गंडूक तकि तक्र = मुँह में तक्र (मट्ठा) भर कर, दूसरे साथियों को तककर, निशाना साधकर, कुल्ला कर देते हैं । खची = अंकित, लिखित ।

११४. अँगोछना = गीले अँगौछे से शरीर को रगडकर पोंछना । आँबरीन = अमराई, आम्र-वाटिका । डंड = डंडा । रोवन = रोनेवाले; खेल में बेईमानी करने वाले । भखि = कहकर । डौरा = छोरा, लड़का ।

दोहा १—लकुट = लाठी । सिखर = चोटी ।

कर गहैं डार कदंब की, ठाढ़े अति छबि ऐंन
प्रिया ध्यान मादिक छके, रहे लाल झुकि नैंन ॥२॥
ह्वै ठाढ़े छबि सौ रहे चढ़ि गिरि सिखर किसोर
जब ही मुरली धुंनि करत, कुहकि उठत बन मोर ॥३॥
लखि ऊंचे ब्रजचंद कौ, तिय ऑगुरीन बताहि
'नागरिया' मन-गिरि-सिखर, चढ्यौ सु उतरत नाहि ॥४॥

१ पद, राग सारंग, ताल चपक

गोवर्द्धन की सिखर ठाढ़ौ नंद कौ बालक
मोर मुकट, मकराकृत कुंडल, कॅवल नैंन, आछौ बदन झलक
कर गहै द्रुम डाल, उर बनी बनमाल,
मेरे मन कौ फंदा वाकी कुटिल अलक
बरन स्यांम घन, कंठ कउस्तुभ मनि,
छबि निरखत नैना लागै न पलक
वाकी चितवनि मेरौ चित वित हरि लीनौ,
कैसै कै दुरत आली प्रेम ललक
कहि 'भगवान हित राम राय' प्रभु,
और नेम व्रत सब डारे री छलक ॥११५॥

२ ताल चपक

सखी झीनौ झगा सौंधै भीनौ, छूटे बंद लपटि रह्यौ स्यांम अंगनि सौं।
कटि धोवती सौंहती, छबि सौ ठाढ़ौ री लाल त्रिभंगनि सौ
पीत पगा पर मोर पिच्छ ढिग कुसम-गुच्छ, फब्यौ अति रंगनि सौ
राजत उर वनमाल मालती, मन मोह्यो
'गोवर्द्धनेस' चपल दृगनि भुव भंगनि सौं ॥११६॥

---

२. ऐन = अयन। मादिक = मदिरा। छके = नशे से चूर। लाल = अरुण; नैन का विशेषण है।

११५. आछौ = अच्छा। बनी = शोभित हो रही है। ललक = तीव्र अभिलाषा डारे री छलक = बाहर उलीच दिया।

११६. झीनौ = बारीक, महीन। झगा = कुरते के समान पहना जाने वाला एक पुराना पहिनावा। सौंधै भीनौ = सुगंधि-सिक्त। धोवती = धोती। त्रिभंग = खड़े होकर बाँसुरी बजाते समय की कृष्ण की मुद्रा, जब घुटनों के पास, कटि के पास, ग्रीवा के पास, तीन मोड़ हो जाता है।

३ इकताल

ठाढ़ौ नट कौ गोपाल
बांम भुज तर लकुट दियै चरन परसत माल
रूप अदभुत जोति को चहुँओर मंडल जाल
'दास नागर' दृग रहे झुकि प्रिया ध्यांन-रसाल ॥११७॥

(४)

यह धोटा हठि हरत परायौ मन
देखत रूप ठगौरी सी लागत, जगत त्रिमोहन स्यांम बरन तन
दिन दिन चौप चौगुनी बाढ़त पावस रित मानौ नवतन घन
दामिन कोटि पितंबर की छवि, 'परमानंद' राजत बृंदाबन ॥११८॥

(५)

गई हूँ आज दुपहरी बरियाँ
सुन्दर स्यांम गहै कर ठाढ़ौ, जमुना कूल कदंब की डरिया
पीतांबर, बनमाल, अलक जुग मृदु पवन कैं बस फरहरियाँ
'नागरिया' लखि, जकि, रहि गई, फिर नहिं सकी, पिंडी थरहरियाँ ॥११९॥

१६ लगन

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा
जब तै चितए नैंन भरि, तब तैं छिन नहिं चैंन
मनमौहन गौहन परचौ, जागत सुपनैं सैन ॥१॥
मोहन लखि मोहन भई, कहा लग्यौ यह हौंन
सब सूझत मोहनमई, दई भई गति कौंन ॥२॥
सुधि बुधि सबही हरि लई, मनमोहन मुसकाय
ये दइया कैसी बनी, लागी बिरह बलाय ॥३॥

---

(११९) सकी = सखी ।

(दोहा १, २, ४, ५, ६, ७, ८, १०) ये लगनाष्टक के क्रमश. १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ संख्यक दोहे है ।

११८. चोप = उत्साह, ललक । नवतन = नूतन, नया ।

११९ जकि = मौचकी । पिंडी = पैर की पिंडुली । थरहराना = प्रकंपित होना ।

दोहा—१. गौहन = साथ । ३. बलाय = बला, आफत, विपत्ति ।

लगी लगनि हरि मुख निरखि, डारयौ सब सुख रूंद
जौ हूँ ऐसो जांनतो, रहती नैंननि मूँद ।।४।।
कौन घरी की लगनि यह, अरी भरी नहिं जात
मिटत नांहि, दिन रात जिय, स्यांम रूप उतपात । ५।।
घर बनहूँ नहिं लगत मन, रहत स्यांम तन लीन
अरी ढटौना नंद कै, कछु टौंना पढ़ि दीन ।।६।।
नैंननि दुख नैंननि लगैं, तन मन दुख, दुख गेह
ये दइया कौनैं दयो, दुख कौ नाम सनेह ।।७।।
हरि सौं लगनि लगाय कैं, भरी रहत नित नीर
रिझवारन अँखियानि सौं, हौं हारी री बीर ।।८।।
जात मरी बिछुरत घरी, जल सफरी की रीत
छिन छिन होत खरी खरी, अरी जरी यह प्रीत ।।६।।
नागर' सैंननि सैंन मिलि, बनी जु नैंननि नैंन
बनत बनत ऐसी बनी, कहत बनै नहिं बैंन ।। ०।।

१ पद, राग सारंग

कासौं कहौं, कौन यह जांनैं, कमलनैंन मेरौ मन जु हरयौ री
चितवत ही उर पैठि नैंन मग, कहा जांनौं इन कहा धौं करयौ री
मात पिता पति बंधु सबनि सौं, आँगन भवन भरयौ री
लोक बेद प्रतिहार पहरुवा, काहू पै राख्यो न परयौ री
धर्म धीर कुल लाज कुँची कै, हिय तारो दै दूर धरयौ री
खुलि गए कठिन कपाट कुटिलता, एते जतन कछू न सरयौ री
बुधि बिवेक बल आंनि सच्यौ सब, सो धन अटर, कहूँ न टरयौ री
लियौ है चुराय चितै हरि सरबस, 'सूर' सोच तन जात जरयौ री ।।१२०।।

(२)

तौ हूँ कहा करौं री माई
सुन्दर स्याम कवल-दल-लोचन, मेरो मन लयो चुराई
मात पिता पति बध सबन मिलि, बहौत भाँति समझाई
तदपि न मोहिं जसोदा गृह बिन, नाँहिन परत रहाई

(दोहा ६) यह बिहारी का है । (देखिए बिहारी । रत्नाकर २७७) मुद्रित प्रति में यह नहीं है ।

४. रूदना = पैरों से कुचलना । ५. भरना = सहना, झेलना, निबाहना । ६ टौंना = जादू । ७ सफरी = मछली । खरी = प्रखर । जरी = जली हुई ।
पद १२०—कुंची = कुंजी । तारो = ताला । सरना = काम निकलना । अटर = अटल ।

बार बार हिलग के कारन लाज सबै बिसराई
'कुंभनदास' प्रभु गोवर्द्धन-धर मुसकि ठगोरी लाई ॥१२१॥

३. इकताल

नैंननि सैंन तैं हूँ थकी
देखि पंकज दृगनि की दिस, दृगनि लागि जकी
टरत नहिं छिन चुभी चितवनि, प्रेम गह्वर छकी
'दास नागरि' रूप हरि की, मिटन नहिं धकधकी ॥१२२॥

४. ताल चपक

आवत ही जमुना भरैं पांनी
साँवरौ सलौनों ढोटा कौंन कौ है माई,
वाकी चितवनि मोहि डगर भुलांनी
हौं सकुची, मेरे नैंन न सकुचे, हूँ नैननि के हाथ बिकांनी
'परमानंद' प्रभु सौं हिलि मिली, ज्यौं जल मैं जल बूंद समांनी ॥१२३॥

५. इकताल

भई री स्याम सौं पहिचांन
ताही दिन तैं सुख सिगरौ री, बिदा भयौ लैं पांन
कौन घरी उत गई हुती हौं, जमुना करन सनांन
'नागरिया' बिन चाहैं मेरैं, बनि गई बात अजांन ॥१२४॥

६. ताल चपक

लगन लगी गाढ़ी, देखन की छैल छबीले लाल,
दिन नहिं चैंन, रैंन नहिं निद्रा, रहत अटा पर ठाढ़ी
सबही कहत मोहि, रहि री मौन गहि, एक अयांनी हौं ही काढ़ी
'हित घनस्यांम' कहा कोउ जांनैं, प्रीति परसपर बाढ़ी ॥१२५॥

---

१२१ हूँ = मैं । हिलग = प्रेम । ठगोरी = ठग + मूरी ; धोखा-धड़ी ।
१२२. सैंन = इशारा । जकी = भौंचक्की हो गई । गहबर = विषम । छकी = परेशान ।
१२३. आवत ही = आती थी ।
१२४ पान = पान का बीडा । विदा भयो० = प्रतिज्ञा करके विदा हुआ ।
१२५. अमांनो = जिसके लिए कोई रोक-टोक न हो; अ-निषिद्ध । काढ़ी = निकाली हुई ।

७. तिताल

प्रीति कान्ह सौं माई, लालच लायै बसत ब्रज
अनुदिन सहत गारि ग्वालन की, गुर सी लगत मोहि माई,
लोक-लाज कुल-कांनि मैंटि पथ आरज
यह उपहार मेरै उर जोइ 'ब कहत, तिनकी चरन रज
'खेम रसिक' पिय सौं रति बाढ़ी,
काढ़ी कढ़त नहिं, सही सूल अप-गरज ॥१२६॥

१७. दोहनानंद

या अनुक्रम की अलापचारी मै देनैं ए दोहा
अरे खरे चितवत बदन, कहा सरी जिय आस
गाइ गई बछरा सहित, मौंहन दुहत अकास ॥१॥

खरी खरिक गोपाल कैं, निज गौहैं तजि भौन
सौहै लखि भौहै रहै, दोहैं गइयाँ कौन ॥२॥

इक टक रहि रहि जांहि दृग, दियैं दीठ मैं दीठ
नेह-पूर रन-सूर ज्यौं, चलै न देंकैं पीठ ॥३॥

लाल गिरत ग्वालन गहे, तिय लइ तियन सँभार
इत उत दोउ सर भर रहे, है दृग सरनि सुमार ॥४॥

धैनु दुहत मौहन ठगे, राधा-रूप निहारि
परत दौहनी तैं निकसि, ऐंड़ी वैंड़ी धार ॥५॥
मुख चितवत गइयाँ दुहत, परत धरनि पय-सोत
मानौ मंगल दृगनि मनौ, दूधनि बरषा होत ॥६॥

(दोहा २) गौहैं = गोहन ।
(दोहा ६) पय = पिय (हस्त) ।
१२६. आरज = आर्य । पथ आरज = आर्य-मर्यादा । अप गरज = अपने मतलब से ।
दोहा १—सरना = पूर्ण होना ।
२. खरिक = गोष्ठ, गाएं बाँधने की जगह । गौहैं = गौं से; प्रयोजन सिद्ध होने का अवसर, सुयोग । सौहैं = सामने ।
४ सर भर = शरों से परिपूर्ण, पूर्णरूपेण शर-विद्ध ।
५. ऐंड़ी वैंड़ी = तिरछी, अगल बगल ।
६. सोत = स्रोत, धार ।

धेनु दुहत स्यामहि ठगे, रूप सौंहनी दीस
गिरी गोद तैं दौहनी, परी मौंहनी सीस ॥७॥

देत सौहनी दौहनी, लेत लाल मुसक्याय
भूलि हाथ उत ही रहे, दीठ दीठ ठहराय ॥८॥

धेनु दुहत जानी सबनि, गउर स्यांम की प्रीत
'नांगरिया' के हिय बसौ, खरिक टहल की रीत ॥९॥

१. राग सारंग, ताल चपक

बिसंरि गयौ लाल करन गौ-दौहन
निरखि अनूप चंद-मुख, इक टक रह्यौ है साँवरौ-मौहन
नव नागरो बिचित्र चतुर गुंन, अँग अँग रूप अनूप सुठौंहन
'कुंभनदास' लाल गिरधर मन, हरयौ कटीली मौंहन ॥१२७॥

२. ताल चपक

देखत बदन दसा भई और
दौहनी लेत रह्यौ कर उतही, चितवत चकित रसिक-सिरमौर
डगमगाय पग धुके धरनि कौं, भुज भरि लए ग्वार बिच दौर
आय गयो श्रम-जल आंनन पर, कंपित तन, मनमथ की रौर
मदन-मौहन कौ मन ताही छिन, ह्वै गयौ रूप असनि कौ कौर
'नागरीदास' स्यांम करि घायल, पलटि चली नागरि निज ठौर ॥१२८॥

३. ताल चौताल

स्यांम भूल्यौ री बन कौ जाइबौ
तैं कहूँ दई है दिखाई, ग्वालन के मधि,
चौंकि चकित रहे उत, पग परत न इत आइबौ

(दोहा २, ४, ५, ६, ७, ८, ९)—ये दोहनानंद के क्रमशः ३, ८, ४, ५, ७, २, ९ संख्यक दोहे हैं।

(१२८) उतही = उरही।

७. दोहनी = दूध दुहने का पात्र। दीस = दिखाई पड़ी। मौहनी = मोह लेने का मंत्र। सीस = सिर पर। ९. टहल = सेवा।

१२७—सुठौंहन = सुठि, सुंदर।

१२८. धुके = झुके। रौर = उपद्रव, उत्पात। असनि = वज्र। कौर = ग्रास। ठौर = स्थान।

जब हरि आय निकसे इहिं मारग, तबही भयौ तेरो री चितइबौ
आधैं कर-पल्लव, आधैं मुख, बीरी धरि रहे दसन खंड कैसे खाइबौ
अजहूँ री समझि, दरस दै री सुखनिधि, छाँड़ि 'ब री तूँ बातैं बनाइबौ
'सूरदास मदन मोहन' तै किये री बस, आगैं कहा नाच नचाइबौ ॥१२६॥

४. चौताल

स्यांमा तूँ अति स्यामहि भावै
बैठत, उठत, चलत, गो चारत, तेरी लीला गावै
पीतैं पीत बसन भूषन सजि, पीत धात अँग लावै
चंद्राननि, सुनि, मोर-चद्रिका सीसहि मुकुट बनावै
अति आसक्त दरस सभ्रम, मिलि अग अंग सचि पावै
बिछुरत तोहि क्वासि राधे' कहि, कुंज कुंज प्रति धावै
तेरोई चित्र करै अरु निरखै, बासर बिरह नसावै
'सूरदास' रस रास रसिक सौं, आनर क्यौं करि आवै ॥१३०॥

५. तिताल

वृंदावन बैठे मग जोवत बनवारी
सीत मंद सब सुगंध त्रिविधि पवन बहै,
    बंसी बट, जमुना तट, निपट निकट चारी
कुंजन की लता ललित कुसमनि की सज्या रचि,
    बैठे नटनागर नव लालन गिरधारी
'सूरदास मदन मोहन' तेरो मग जोवत
    चलहु बेगि दरस दीजै, तूही प्रांन-प्यारी ।१३१॥

६. चरचरी इकताल

चली है कुँवरि राधिका निकुंज-भवन रवन पास,
    सजि सुवास मत्त भँवर संग संग संग
आय रसिकराय निकट, लई है भुजन झेलि
    मेलि करत केलि, परसत सुख अंग अंग अंग

---

१२९. चितइबो = देखना। बीरी = पान का बीड़ा। नाच नचाना = परेशान करना।
१३०. स्यांमा = राधा। पीतैं पीत = पीला ही पीला; केवल पीला। धात = गेरू
    सचि = सचु, सुख। क्वासि = कहाँ हो।
१३१. चारी = विचरण करनेवाले।

जुरत नैन, तुटत हार, अंचल उर छुटत चार,
    चलि कटाछ, भृकुटि भंग, रंग रंग रंग
ता घरिया देखि दुहुँनि, 'नागरिया' लतनि ओट
    तन मन गति श्रवन नैन. पग पंग पंग ॥१३१॥

१८. दान

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा
दांन केलि जौ मन बसै, ताहि न कछू सुहाय
तजि वृंदावन माधुरी, अनत न कबहूँ जाय ॥१॥
मेरे नित चित मै बसौ, दंपति-दांन-बिहार
मुखपर झूठी झगरई, नैंननि करत जुहार ॥२॥
मो मन लागी दुहुँन की, दान-केलि-बतरानि
नैननि हा हा खात इत, उत भौहैं सतरांनि ॥३॥
गउर घटा अरु साँवरी, उनई नीर सनेह
खोरि साँकरी गिर तहाँ, दान रंग झर मेह ॥४॥
गोरस माँगत करत दोउ, नैंन सैन सनमांन
'नागरिया' के हिय बसौ, दांन रंग बतरान ॥५॥

१ पद, राग सारंग, इकताल

सिर धरे मटकिया जात है
जोबन रूप बदत नहिं काहू, बूझत ही सतरात है
दांन दांन करि आए हौ जू, यहाँ कहा सकरात है
'खेम रसिक' तुम जाहु जमुना तट, जहाँ जगत सब न्हात है ॥१३२॥

(२)

तुम पैड़ोही रोकि रहत, कैसैं आवें जाहि ब्रज-वधू,
    तुम ही बिचार देखौ परम सुजांन
खरिक दुहांवन दिन दिन आयौ चाहैं,
    ऐसैं कैसैं बनैं गुसाईं, इत उत गहबर, गैलौ नहीं आंन

(दोहा १-५)—दान लीला संबंधी ए दोहे इसी क्रम से अनुक्रम ६ के प्रारंभ में आ चुके है।

१३१. रवन = रमण; प्रिय। सुवास = सुगंध। लई है झेलि = खींच लिया। घरिया = घडी, समय, अवसर।

१३२ बदना = (१) किसी को कुछ न समझना ; (२) बोलना। बूझना = पूछना। सतराना = नाराज हो जाना। सकरात = (मकर)-संक्रांति।

ऐसी अटपटी कत देत हौ लाड़िले कुँवर,
परिहै जो कहूँ व्रजराज जू कैं कांन
'गोविंद' प्रभु सौं कहत प्यारी की सखी,
तुम नैंक उसरौ जू, हमहिं देहु जांन ॥१३४॥

३. तिताल

तुम लै लै गीधे हो दान, सौंहैं मोहि गोधन की गोपाल
तनक मटकिया छुइ नौ देखौ, कहा होय तिहिं काल
डरत नहीं हौ रोकत टोकत, बरसांने की बाल
'कुंभनदास' प्रभु आगैं पैड़ दैहो, तौ 'ब जैहो भूलि टेढ़ी चाल ॥ ३५॥

४. तिताल

दान दै री नवल किसोरी
माँगत दान लाड़लौ नागर, प्रगट भई दिन दिन की चोरी
नव नारंग, कनक हीरावलि, विद्रुम सरस, जलज मनि, गोरी
पूरित रस पीयूष जुगल घट, कवल कदलि, खंजन की जोरी
तोपै सकल सौंज दांमिन की, कत सतरात कुटिल दृग भोरी
नूपुर रव किंकिनी पिसुन घर, (जैश्री) हित हरिवंस कहत नहिं थोरी ॥१३६॥

५. इकताल

छाँड़ौ मेरा अँचरा जिन गहौ
बाबा की सौं, बहौत बचत हूँ, अब अनबोलेई रहौ

---

(१३५) गोधन = गोध (हस्त)।
(१३६) नारंग = नारिंग (हस्त)। जलज = सजल (हस्त)।
१३४. गैल = पथ। आन = अन्य। उसरना = दूर होना, हटना।
१३५. गीधना = (१) गृद्ध की तरह किसी के पीछे पड जाना, (२) बुरी तरह से लोभ करना, (३) परचना। गो-धन = गाय रूपी धन। पैंड = डग।
१३६. नारंग = नारंगी; उरोजों का उपमान। विद्रुम = मूंगा, अधरों का उपमान जलज = मोती। घट = कलश; उरोजों का उपमान। कवल = कमल; पद, कर, मुख, नयन का उपमान। कदलि = केला, जाँघों का उपमान। खंजन = खिडरिच पक्षी, नेत्रों का उपमान। सौंज = सामग्री। पिसुन = पिशुन, चुगुलखोर। कहत० = सब भेद प्रकट कर देते हैं, कुछ छोडते नहीं।

दांन दांन करि आए हौ उ' झूठी साची सो कहौ
जिन बेली पातौ नहिं, 'बीठल बिपुल' बिहारी फल चहौ ॥१३७॥

६. तिताल

तजि दीजै गौंहन, सौंहन, मन-मौंहन गुमांनी
परी बुरी यह टेव, निडर अति, अंचर छुवत, नए दधि दांनी
झूठें झगरत, डगर तजत नहिं, अहा कहा लंगराई ठांनी
'नागर' कुँवर तिहारैं मन की, मैं अब सब जांनी जू जांनी ॥१३८॥

७. तिताल

ो तौ अब इनहिं छुवोगे दधि दांनी
तो ए गोप कुँवरि हमहूँ तैं, नाहीं रहैंगी सतरांनी
ज्यौ तुम नँद नंदन, त्यौ एऊ अपने कुल अभिमांनी
जाहु चले 'नागर' गुन आगर, सूधें गैल गुमांनी ॥१३९॥

८. इकताल

गोकुल गॉव को पैड़ौ न्यारौ, यहै साच कहै दरसाई
कौनैं दान लयौ बृज मैं, तुम ऊबट बाट चलाई
अंचर छुयौ कुँवरि को, तौ अब निकसैगी ठकुराई
समझि जाहु 'नागर' जिय, अपनै राखै है नैंक बड़ाई ॥१४०॥

१६ संयोग

या अनुक्रम की अलापचारी मैं देनैं ए दोहा
तिय अधीर द्रुम भीर तहां, डोलत जमुनां तीर
कीर पढ़ावत, नीर दृग, स्यांम-मिलन हिय पीर ॥१॥
छुटे बार, डगमगत पग, श्रम-बस सिथल अँगेट
फिरत दुपहरी द्रुमनि मै, मोहन-मिलन सहेट ॥२॥

(१३८. १३९) — ये उत्सवमाला के पद ४१, ४२ हैं।

(१४०) यह नागर समुच्चय में इस स्थान पर नहीं है। अन्यत्र शेषांश में है।

१३७. बेली = लता। पातौ = पत्ता भी।

१४०. ऊबट = (१) ऊबड खाबड; विकट; (२) नीति विरुद्ध। अपने० = अपनी प्रतिष्ठा अपने बचाने से बचती है।

दोहा २—अँगेट = अंगों की छवि। सहेट = संकेत; गुप्त मिलन-स्थल।

सघन कुंज, अति तिमर तउ, मग पावत तिहि बेर
राधा रूप उजास कौं, है मंडल चहुँ फेर ॥३।

खुलि बैंनी, सुभ बास बस, लइ अलि-सैनी घेर
सारँग-नैनी फिरत बन, सारँग ही की बेर ॥४।

'नागरिया' द्रुम लतनि मै, दमकत गउर सरीर
मनु हेरत घनस्याम कौं, दामिनि फिरत अधीर ॥५॥

१. पद राग सारंग, इकताल

तरवर छाह तीर जमुनां कै, ती कोउ कीर पढ़ावत डोलै
रूप रासि कोउ नवल किसोरी, मोहन कहि कहि बोलै
झमकि झुकावत डार द्रुमन की, बैनी पीठ भवंग कलोलैं
'नागरीदास' ध्यान रस माती, मूंदि मूदि दृग खोलै ॥१४१॥

२. तिताल

कीर उठि बोल्यौ, "इक कांमनी कवलनैंनी
दिपै देह दामिनी सी देखी सति सति रे
हुती कुंज भीतर भयानक तिमर पुज,
उठि आई 'कन्हीराम' हंस की-सी गति रे
मोकौ व्रत नेंम ऐसौ, हूँ तौ कहौ राधे कृष्ण,
वे तौ श्रवन सुनत, पावै दुख अति रे
मोसौं कहैं बार बार, अँगुरी दसन दाबि,
कृष्ण कृष्ण कहौ, पर राधे कहौ मति रे" ॥१४२।

३. तिताल

"ऐसी दुपहरी मैं कहाँ चली मृगनैंनी
कवल सी कुम्हिलानी चरनं उबाहिनैं।"
"गई ही फूलन कौ, भूलि परी सखिन सौं,
प्यासी हौ, बताओ कहूँ जल बावैं दांहिनै।'

---

(१४१) द्रुमन की = कुंज की।
दोहा ४ बस = (१) वश (२) भरपूर। सैनी = सेना, भीड़। सारँग नैनी = मृगनयनी, कमलनयनी। सारँग ही की बेर = सारंग राग गाने की बेला। यह राग दिन के दूसरे पहर गाया जाता है।
१४१ भवंग = भुजंग, सर्प। १४२. सति = सत्य।

"जलहू बताय देहुँ, पिय कौं मिलाय देहुँ
आवौ क्यौं न प्यारी प्रांन, कुंजन की छाहिनै
'सूर' स्यांम मिलिबे कैं काज एतौ कियौ,
वाके तौ बसत नित तूही मन मांहिनै" ।१४३।।

४ इकताल

भूलि सघन बन फिरत अकेली
स्यांम स्यांम कहि टेरत हेरत, देखि दसा रोवत द्रुम बेली
ह्वै गयो बदन नवल कुम्हिलौहौ, ठीक दुपहरी, सँग न सहेली
'नागरिया' अकुलाय मनोहर, आय अचानक भुज भरि झेली ।।१४४।।

५. ताल चपक

कुंज भवन तै निकसि माधौ, राधा लै चले, मेलि गर बांहो
जब प्यारी अरसाय पाय धरति मंद,
प्रस्वेद कन होत, करत मुकुट की छाही
श्रमित जानि पट नील पीत सौ पौन ढुरावत,
घैरु होत ब्रज-वधुनि मांही
'जगन्नाथ कविराय' प्रभु की प्यारी, देखत नैंन सिराही ।।१४५।।

६. तिताल

चले जात गहबर बन कौं, मिलि गर बाही दीनै दोऊ जन
ठीक दुपहरी श्रमित जांनि मन, मुरली सौं लपटाय पीत बसन,
छांह करत मुख सुघर स्यांम घन
झलकत स्वेद अरुनई तिय मुख, फूक देत पिय सुन्दर अधरनि,
प्यारी जू हसत तबैं मन ही मन
'नागरिया' मृग बृंद मनोहर, निरखत रूप फिरत सँग बन बन,
इक टक ह्वै मनौं चित्र लिखे तन ।।१४६।।

---

(१४६) सुघर = घर ।

१४३. उबाहिनै = बिना जूती पहने, नंगे पैर ।
गई ही = गई थी । छांहिनै छाया मे । मांहिनै = में ।

१४४. भुज० = आलिंगन कर लिया ।

१४५. घैरु = निंदा, अपयश ।

७. ताल चौताल

कवल दल कान्ह बिछावत मारग करन सँवारि
तापर चितवनि रचे हैं पाँवड़े,
नेह लाज गहरैं रँग सौं रँगि,
चलति तापै मंद मंद सुकवारि
ललित लता लपटी गहवर बन,
मुकुट लगै हलि बरसत फूलनि,
बनी है मदन मनुहारि
'सहचरि सुख' ग्रीषम कौ दुपहरी,
सरद चांदनी भई जमुना तट,
रीझि हरि रहे हैं अपनपौ हारि ॥१४७॥

८. ताल चौताल

बैठे आप कुंज की छहियाँ
ढुरवत पवन पीत पट सौं पिय, प्रिया गहत हसि बहियाँ
तन मन सीतल करन स्याम घन, छबि बाढी तिहिं ठहियाँ
'नागरीदास' द्रुमनि दुरि देखत, रीझत हैं मन महियाँ ॥१४८॥

९. ताल तिताल

प्यारी ठाढ़ौ मोहन
परबस प्रांन जान चलि मिलियै साँवरे सोहन
कुंज कुटीर, समोर धीर ढिग, पल पल तुव मग जोहन
'जगन्नाथ' हसि कहत, स्वामिनी, पर्यौ है गौहन ॥१४९॥

१०. ताल तिताल

ए री हेलो, चालिबौ कि नांही
कहत कहत किती बेर भई री, ठाढ़े कुँवर वर छाही
सुनि पिय बचन, न आवति तेरैं तनक दया जिय माही
धारौ चरन हरन मन, मोहन गुननि 'सरस' बलि जांही ॥१५०॥

---

(१४८) सीतल = सिथल । रीझत हैं = रीझत (हस्त) ।
१४८. ठहियाँ = स्थान पर ।
१४९. सोहन = शोभन, सुहावना । जोहन = प्रतीक्षा करने वाला । गौहन = साथ ।

११. इकताल

री कपट की प्रीति सौं डरियै
मन और, मुख और, रुख छिन और और, लखि हिय माहि हहरियै
'नागरिया' गुन समझि स्याम के, अब परबस क्यौ परियै
अरी जांन दै, बहौनायक सौं भूलि नेह नहिं करियै ।।१५१।।

१२. ताल इकताल

व्रज के लोग हैं कपटी
चले जांन दै, बात करै मति, कहा परत रपटी
सुपनै हूँ न पतइए इनको, साँवरे लाल बड़े झपटी
'नागरिया' या देस न बसियै, यै अँखियाँ लपटी ।। ५२।।

१३ इकताल

कहूँ कैसै कैं मौहि भावत नंद ढटौना
करत उपाय मरम बिन जांनैं, हौं जु रही गहि मौना
दिन दिन हौंहु दूबरी दइया, कियो मंद हसि टौंना
'नागरीदास' नैंन अति भूखे, चाहत स्यांम सलौनां ।।१५३।।

१४. इकताल

सैंननि समझांवही तोहि, अजहूँ समझि नादान, पीय करै अपनी
सैननि ही दै ऊतर, तू लखि चितवनि चाह सनी
काज बिगारति लाज बावरी, सीख मानि इतनी
'नागरीदास' मिलाय, मनोहर नैंननि नैंन-अनी ।।१५४।।

१५. तिताल

हो साँवरे ग्वार, मेरी सौ तू इत आय
गरई गगरिया उठत न मोपैं, ताहि तू देहु उठाय

---

(१५२) यै अँखियाँ = पै अँखियाँ। (१५३) हौंहु = हौ।

१५१. हहरना = प्रकंपित होना; लालायित होना। बहौनायक = अनेक नायिकाओं का नायक।

१५२ रपटी पडना = फिसलकर गिरना। पतइए विश्वास कीजिए। झपटी = झपट्टा मार कर ले लेने वाले, चारों ओर हाथ पाँव फैलाने वाले। लपटी = लग गई है, मिल गई हैं।

१५४. सैंननि = इशारे से। नादान = मूर्ख। चाह सनी = स्नेह-सिक्त। अनी = नोक।

कवल-पत्र लै मो मुख ऊपर, छाँह कियैं तू जाय
'नागरीदास' चतुर पनिहारनि, संग लए स्याम लगाय ।।१५५।।

१६ तिताल

वारी री जाऊँ री मैं तो मोहनां की सोहनां की
मोर मुकुट, पियरौ पट राजत, चक दृगनि हसि जोंहना की
बिसरी काम धाम एरी सजनी, आनि परी वाकैं गोंहना की
सुख सागर 'सदाराम' के पिय कौ, देत न सुधि रही दोहनां की ।।१५६।।

१७ तिताल

कदम की छाँह गहरी सीतल सुखदैंनी
ठीक दुपहरी, घाम घनेरी, घरीक रहौ नै मृगनैंनी
सुनि मुसकाय फिरी छवि सौं, चलि, वैठी है चलि गज-गैंनी
'नागरिया' हरि पवन दुरावत, खोलि पीत उपरैंनी ।।१५७।।

१८. इकताल

झूमत मालती गहि, रंग भरी अलबेली
हरी लतनि मे अरझि रही, मांनूं कंचन लता नवेली*
वैनी वड़ी हिलोरत छवि सौं, खिसत हैं फूल चमेली
अंचर उलटि सीस पैं डारैं, प्रीतम प्रेम गहेली
गावत मधुर कंठ स रँग धुनि, गहबर कुंज अकेली
'नागर' रसिक स्याम सुँनि, स्यांमां आय भुजनि भरि झेली ।।१५८।।

१९ तिताल

मैं अपनौं मन भावन लीनों
इन लोगनि कौ कहा कीनौं
मन दै मोल लियो री सजनी,
रतन अमोलक नद दुलारौ नवल लाल रँग भीनौं

*यह चरण मुद्रित प्रति से नही है ।

१५५ गरई = गुरु, वजनी, भारी ।

१५६. जोंहनां = देखने वाले । गोंहना = साथ । दोहनां = दूध दुहने का पात्र ।

१५७ गज गैंनी = गज गमनी । उपरैंनी = ओढ़नी ।

कहा भयौ सबकैं मुख मौरैं, मै पायौ पीय प्रवीनौ
'रसिक बिहारी' प्यारौ प्रीतम, सिर विधनां लिखि दीनौं ॥१५६॥

२० तिताल

बीरा रे खेवटिया, ल्याव ल्याव नावरिया, पार रे उतार
देहूँ तोहि ककना हाथ कौं,
स्यांम बिन व्याकुल भई हौं, न करि रे अबार
वहि धुनि सुनि बंसी बन बाजत,
कहा करौं दइया, बिच गहरी धार
जैहौं पार, चलि भेंटिहौं भावतौ,
अब हौं रहौंगी नाँहि 'नागरिया' वार । १६०॥

२१. तिताल

मनमोहनां हो, लागी छूटत नाँहि
तुम तौ नख-सिख कपट भरे, पै नैननि सौं न बसांहि
जित तित चार चबाव चलत जब, सुनि सुनि मन पछितांहि
'नागर' इन अँखियन की घाली, तुमही कहौ कित जांहि ॥१६१॥

२२. तिताल

कवल के पात मैं लै आए प्रीतम पांनी, अँजुरिन पीवत हैं प्यारी
गइ प्यास, आई नैननि मैं, दोऊ दीठि टरत नहिं टारी
ठीक दुपहरी निरजन बन, जल कूल छाँह सुखकारी
'नागरिया' श्रम मेटत मोहन, महा मदन मनुहारी ॥१६२॥

२३.

अरी पिय चंदन लगावै तब प्यारी सतरावैं
मिस ही मिस रस फंद डारि कैं, मंद मंद बतरावैं
पुनि गुलाब सीसी कर लै लै, तन छिरकैं छिरकावैं
'नागरिया' दंपति ग्रीषम रितु, सखिन के नैंन सिरावैं ॥१६३॥

---

(१५६) सबकैं = सबकौं । प्यारो प्रीतम = प्यारौ नागर (हस्त) ।
(१६१) मनमोहनां हो = मनमोहनां (हस्त) ।
१५६ रँग भीनौं = प्रेम से भीगा हुआ; रसिक । मुख मोड़ना = उपेक्षा करना ।
१६०. बीरा = वीर, भाई । खेवटिया = केवट, मल्लाह । नावरिया = नौका । अबार = अबेर, देर, विलंब । वार = इस पार ।
१६१. न बसाहिं = बस नहीं चलता । घाली = (१) मारी; (२) बरबाद की हुई ।
१६२. मनुहारी = मनुहार, शांति, तृप्ति, आदर सत्कार किया ।

२४. चौताल

दंपति तन चंदन पट पहिरैं
चंदन खौर और लेप चंदन को, उर चंदन नहिं ठहरैं
दोउ मुख चंदन मैं छिरक्यौ गुलाब,
मानौं सोहत सुधा की बूंदें अति छवि छहरैं
'नागरिया' नागर बिहार चारु, चंदन कैं चहलैं—
परयौ है मेरो, निकसै न, मन-गज गहिरैं ॥१६४॥

२५. तिताल

महल उसीर दोऊ बैठे मौज में, हौज मैं पाय झुलावैं
गर बहियाँ झुकि लेत फुहारनि, मुख ढिग मुखहि जु लावैं
स्वेत मिहीं उपरैंननि मैं, छवि सोहत बार खुलावैं
'नागरिया नागर' सखी चितवत, इक टक पलक भुलावैं ॥१६५॥

२६. इकताल

सखि सुंदर मंदिर, सीरो बिछौना, समीर सुवासनहीं हरखैं
तहँ दंपति रंग विनोद करैं, ललितादि प्रमोदनि सौं परखैं
छवि सौं जहाँ छूटत हैं जल-जंत्र, सु यौं मन कौं उपमा करखैं
यह 'नागर' बादल के बदलैं, अवनी मनौं ऊरध कौं बरखैं ॥१६६॥

२७. इकताल

अरी घूँघट मैं तेरे, मनमोहन मँड़रावै री
मुख मैं मौंन, नीर नैंननि मैं, पीर न काहू जनावै री
नव तन नेह, सुगध की चोरी. को किहिं भाँति दुरावै री
'नागरिया' तरवनि तैं लागी, लगन आगि दरसावै री ॥१६७॥

२८ इकताल

रे रे पैरइया तनक रहि, भर दै मेरी गगरी
रहि गइ औघट घाट अकेली, गई और सगरी

---

(१६५) नागरिया नागर० = नागरिया दंपति ग्रीषम रितु सखियन के नैन सिरावैं।
१६३ वें पद का भी अंतिम चरण यही है।
(१६६) सखि सुंदर = सुंदर (हस्त) ।
१६५. मिहीं = महीन, बारीक, पतला, झीना ।
१६६. हरखैं = हर्षित करते है । रंग विनोद = प्रेम-क्रीडा । परखैं = देखती हैं । करखैं = खींचती है, आकृष्ट करती है । ऊरध = ऊपर ।
१६७. नव तन = नूतन, नवीन । को = कौन । तरवनि = (पैर के) तलवे ।

भूली मग, आवर्न द्रुमनि, जल पूरित विषम गरी
'नागर' पिय भीजे तन भेटी, भुज भरि रूप अगरी ॥१६८॥

२६. चौताल

सोहत रंग भरे दोऊ महल उसीर मधि,
भीजे हैं फुहारनि गुलाब नीर
बरुनी अलक भौंह बूंदै फबी हैं मानौं,
सरद कमल पर ओस जैसे,
गउर स्यांम अंगनि लपटे चीर
गावैं तहाँ दंपति, बजावै हैं बिसाखा बीन,
बैठी हैं प्रवीन सखी, सभा-मग तीर तीर
'नागरीदास' सुख निवास ग्रीषम विहार चारु,
सावन सौं लगि रह्यौ रस झर पुंज कुंज समीर ॥१६९॥

३०. इकताल

ढोरी लागि रहै इन अँखियन, कौंन परी यह बांन
नीर भरी तऊ प्यासी, चहैं छबि सागर स्यांम सुजांन
बासर गत, रजनी आगम, रहैं आसा अरुझे प्रांन
'नागर' मुख-ससि-सुधा लोभ लगि, छुवत नहीं कछु आंन ॥१७०॥

३१. तिताल

हमैं देखि आवत, क्यौं आए कतराय इतै,
ठाढ़े अब रोकि कैं, कदंबनि की छाही हौ
कहा धौ भयो जौ ब्रजराज के कुँवर तुम,
सुनौं जू काहू के परमेसुर तौ नांही हौ

---

(१६८) तनक = तनका (हस्त)। गई और सगरी = रहि गई० (हस्त)। मग आवर्न द्रुमनि = मग आवन द्रुम (हस्त)।
(१६९) बीन = बैंन (हस्त)

१६८. आवर्न = आवरण। रूप अगरी = (१) रूप में जो सबसे अग्र (आगे) हो; सर्व सुंदरी (२) रूप की आगरी। आगर (आकर) = खान, ढेर, रूप-राशि।
१६९. बिसाखा = एक सखी का नाम। सभा-सर = सभा रूपी सरोवर।
१७० ढोरी = धुन, रट। बांन = आदत। चहै = चाहती हैं। रजनी-आगम = संध्या। लगि = के कारण, के लिए। आंन = अन्य।

हम तुम एक जाति पाँति के हैं ब्रजवासी,
कौन कै भरोसैं लाला भूले मन मांही हौ
'नागर' माँगत दांन, राखत हैं मान, यातें
बाबा वृषभान ह्याँ बसाए दै दै बाही हौ ॥१७१॥

२०. फूल विलास

या अनुक्रम की अलापचारी मै दैंनें ए दोहा
बढ़त निकसि कुच कोर रुचि, कढ़त गउर भुज मूल
मन लुटिगो लोटन चढत, चौंटत ऊँचे फूल ॥१॥

मिलत, नवावत नव लता, अंचर छुटत दुकूल
इत उत चाढ़ी दुहुनि मन, फूलनि बींनत फूल ॥२॥

भूंमि झुकावत द्रुम लता, उघरत उर उर-माल
फूलनि तोरत देत फल, मनमोहन कौं बाल ॥३॥

दोउ मिलि फूलनि बीनहीं जमुनां कूलनि सांझ
रंग-रली अति ह्वै रही, कुंज-गली के माझ ॥४॥

फूलनि सौं बैंनी गुहत, रचत फूल के हार
फूल भरे लपटात दोउ, भुज भरि दृढ़ अँकवार ॥५॥

कौतिक लागे बाल कै सँग डोलत नँदलाल
छुवत जुही के फूल कौं, होत जुही की माल ॥६॥

दुरि दुरि भेंटन द्रुमनि मैं, फूल भरी सुकवार
लंपट मधुप नवावहीं, पीत जुही की डार ॥७॥

बन फूल्यौ, फूल्यौ जु मन, फूल बेस अभिराम
सबै करी फूलनि सुफल, मिलि कै गोरी स्यांम ॥८॥

(दोहा १) यह पहला दोहा बिहारी का है, (देखिए बिहारी रत्नाकर ६९८)। यह मुद्रित प्रति में नहीं है।

(१७१) ठाढ़े = गढे। हस्त)। भयौ जौ = भयो ज्यौं।

१७१. दै दै बाही = हाथ पकड़ कर, शरण देकर।

दोहा १—रुचि = छबि। लोटन = त्रिबली, उदर की रेखाएँ। चौंटत = तोडती हुई।

२. दुकूल = साड़ी। फूल = प्रसन्नता। ५. फूल भरे = प्रसन्नता से भरे हुए।

६. जुही की माल = जो हृदय की माला बनती है। ७. सुकवार = सुकुमार।

फूलन मिस तिय सौं मिलत, सखी रूप रचि छैल
'नागरिया' के हिय बसौ, फूल रँगीली सैल ।।६।।

१. पद, राग पूरबी, इकताल

सखियन सँग राधे कुँवरि बीनत कुसुम कलियाँ
एक ही बानिक, एक ही बय क्रम, रूप गुन की सियाँ
गुँन गावत सुंदर स्याम लाल के, कर सोभित रँगीली डलियाँ
एक अनूपम माल बनावत,
एक परसपर बैनी गूँथति, नव निकुंज गलियाँ
'सूरदास मदन मौहन' आनि अचानक ठाढ़े भए,
बिच मानी है रंग रलियाँ ।।१७२।।

२. चौताल

लाड़िली लटकि चलति जब पिय सनमुख अलबेली
लटकनि मैं लटक्यौ मन लाल कौं, गज गति पांयनि पेली
कवल फिरावत, नैंन ढुरावत, रीझि रिझावत, रवन सहेली
'अलि गिरधर' बैंनी गूंथन कारन, बीनत चंपक बकुल गुलाब चमेली ।।१७३।।

३. चौताल

पाछै पाछैं ललिता, आगैं स्यांमां प्यारी,
ता आगैं पिय मारग फूल बिछावत जात
कठिन कली बींन बींन करत हैं न्यारी न्यारी,
प्यारी के चरन कोमल जांनि सकुचत जिय, गड़िबेऊ डरात
द्रुम लता अपनैं कर निरवारत, ऊँचे लै धरत द्रुम पल्लव पात
'सूरदास मदन मौहन' पिय की अधीनताई देखत, मेरे नैंन सिरात ।।१७४।।

(दोहा २-६)- ये फूल विलास के क्रमशः ४, ५, ११, ८, ६, १०, २, १२ संख्यक दोहे हैं।

(दोहा ४)—गली = गलिन ।

(दोहा ७)—मधुप नवावहीं = मधुपन बावरी (हस्त)।

६. रचि = बनाकर । सैल = सैर सपाटा ।

१७२ बांनिक = वेश । सियाँ = सीमा । मानी है = की ।

१७३ लटकि चलति = झुककर चलती है। पेली = कुचल दिया, दलित कर दिया। रवन = रमण, प्रिय । नैंन ढुरावत = नेत्र कभी इधर करती है, कभी उधर ।

१७४ निरवारत = सुलझाते हैं; हटाते है ।

४ इकताल

आई है गेह स्यामा उपवन तैं लियैं भावतौ संग
डोलनि कौ श्रम दूरि करन हित, मंजन काज चली जब कुंज कौं,
ए री अगराए है बार सिवार पीठ पर, कारे सचिक्कन रंग
न्हावत अहा कहा छवि पावत, गोरी ढिग
नई बाल साँवरी टहल करत श्री अंग
'नागरि' सखी ओट लियैं ठाढी, कवल चरन की चं न पावरी,
ए री दुरि देखत बावरो सी जु रही जकि, भई नैंननि गति पंग ।।१७५।।

५ चौताल

सौंधै न्हाइ बैठी पहिरि पट सुंदरी,
जहाँ फुलवारी तहाँ सुखवति अलकैं
कर नख सोभा, कल केस सँवारत,
मानौं नव घन मैं उडगन झलकैं
विविध सिंगार लियै आगै ठाढ़ी प्रिय सखी,
भयौ भर आंनि रतिपति दल दलकैं
श्री 'हरिदास' के स्वामी स्यांमा कुंज बिहारी,
प्यारी की छवि निरखत लागत नाहिं पलकैं ।।१७६।।

६ ताल

अरी यह कौन जमुनां कूल
जुवति मंडल मध्य मंडित, द्रुमनि बीनत फूल
ललित भाल बिसाल बैंनी, गुही सिथल सँवारि
ज्यौं 'व चंदन लता प्रति. रही अरुझि पन्नग नारि
हाव भाव के भवन भ्रू, दृग दुरत, मुरत, लजात
जाल घूँघट मैं परे, जुग मीन ज्यौं अकुलात
उच्च नासा परि सु बेसरि, बिमल मुक्ता लोल
निरखि मो मन मग ताकै, रह्यौ आतुर डोल
अरुन अधरनि दसन दमकन, करत जब बतरांनि
मनहु बिद्रुम आलबाल मै प्रगटि हीरा खानि

---

१७५. मंजन = स्नान। पावरी = खडाऊँ।

१७६. सँवारत = सँवारते समय। भर होना = भ्रांत होना, परेशान होना। दलकना = प्रकंपित होना, चौंकना।

कांम क्यारी सुभग श्रवननि प्रति, प्रसून जराय
अलक ढिग सिंगार बेली, पवन लगि डिगुलाय
रतन झांई बिव कपोलनि परी, नहिं ठहरात
किधौं मेरी दीठ वह ठां, फिरत पग रपटात
चिबुक कूप कैं रूप पांनिप, परत लोचन-मींन
देखि मुख-सोभा, बढ़ी गोभा, सु काम नवीन
कंठ कंचन नाल, उपमां और यह सम है न
जलज-लर छवि-सिंधु-लहरनि, धीर पग ठहरैं न
ऐंच अंचर लेत आनन, लाज छिन छिन भोय
बदन-बिधु पट-नील-घन, दुरि-दुरि प्रगट पुनि होय
चाल चितइ न परत जब, उत लेत बांह सचाल
पीत नवला सी किधौं है, कनक कमल मृनाल
सर्व अंग सुढार, सुषमां कहि न आवत बैंन
नद की सौं, ज्यौं 'ब बीतत जान है मन नैंन
हार भूषन भार भामिनि, डुलत चारु सरीर
मनहु दीपक लोय लहकत, परस मद समीर
स्वास बस आमोद तैं, चहुं कोद अलि झंकार
तैसियै फेरनि कँवल की, छबि पगनि झंकार
भेद गति संगीत सहजइ, पाय पद्मनि-वास
चरन-नख-मनि चंद्रिका बनि, अवनि करत उजास
कौंन हैं, कहा नांव इनकौ, हरयौ मो मन बांम
कह्यौ 'नागरिदास' तब हसि, कुँवरि राधा नांम ॥१७७॥

---

(१७७) ज्यौं' ब = ज्यौं अंब (हस्त)। दुरत = दुरि। उच्च = ऊँच (हस्त)। उपमां और = उपमा। धीर = धार। पुनि = पुनि पुनि। नैंन = मैं न। झंकार = झं कार (हस्त, सु)।

१७७. पन्नग-नारि = सर्पिणी। लोल = चंचल। आलवाल = थाला। विद्रुम = मूँगा, प्रवाल। प्रसून = (कर्ण) फूल। जराय = जड़ाऊ, नग जटित। डिगुलाना = काँपना। बिव = दोनो। रपटना = फिसलना। गोभा = अंकुर। नाल = मृणाल। जलज = मोती। लर = लड़ी। भोय = (१) भीग कर (२) युक्त होकर। जान है = जानते हैं। लोय = लौ। आमोद = सुगंध। कोद = ओर। बास = सुगंध।

२१. नटनागर

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनें ए दोहा
नट नागर कल गावहीं, बीच राग नट बैंन
सुंदर तन नटवर चलत, नट चेटक से नैन ॥१॥

लटकि लटकि लटकत चलत, डटत मुकुट की छाँहि
चटक भर्यौ नट मिलि गयौ, अटक भटक मग मांहि ॥२॥

नटा नटी तू करत ही, अब लखि रूप रसाल
समैं भई नट राग की, आवत नटवर लाल ॥३॥

नटनागर लखि कैं डतै, वैऊ गुन सरसात
घूंघट ही मैं नैंन नट, उलट पलट करि जात ॥४॥

जूरा चीरा पीत पट, लसति काछ्र कटि लाल
'नागरिया' के हिय वसौ, नटवर रूप रसाल ॥५॥

१. पद, राग नट, ताल चर्चरी

सखी देखि नव नट भेप धरैं गुपाला
गावत नट राग, मुख कँवल धरि मुरलिका,
परसि चरननि-कँवल कँवल-माला
नट न अरी, चलि सफल करहि किन दगनि कौं,
नवल नटनागर अति रूप ज्वाला
'नागरीदास' छवि देखि इक टक रही,
बहुरि लगी नटहि नट रट रसाला ॥१७८॥

(दोहा २)—मुद्रित प्रति में यह दोहा नहीं है। यह बिहारी का है। देखिए बिहारी रत्नाकर १६२।

दोहा १—नटनागर = प्रवीण नर्तक कृष्ण। नट = एक राग का नाम। चेटक = जादू, माया।

२. लटकि लटकि = झुक झुककर। चटक = फुर्ती। अटक भटक मग = भूल भुलैया का रास्ता।

३. नटा नटी करना = अस्वीकार करना। करत ही = करती थी।

५. चीरा = कलँगी।

१७८. नट न अरी = इनकार न कर, अस्वीकार न कर। रसाला = मधुर।

२. ताल चपक

नैंना मेरे घूंघट मैं न समात
सुन्दर बदन नंद-नंदन कौ निरखत, छिन न अघात
अति आसक्त, रूप रस लंपट, जांनत न एकौ बात
कहा भयौ दरसन सुख माते, ओट भयैं अकुलात
बार बार बरजति हौं हारी, तऊ टेक नहिं जात
'सूर' रसिक गिरधर बिन देखैं, पलक कलप सम जात ॥१७६॥

३. इकताल

अँखियाँ काहू की न भईं
है प्रसिद्ध संसार कहांनी, कहत हौं नाहिं नईं
कहिए कहा महा अरबीली, बरजी जितहि गईं
'नागरीदास' लाल गिरधर कर, मोकौं बाँधि दईं ॥१८०॥

४. इकताल

गई हुती बेचन गोरस कैं
रोकी आनि दांन मिस मौंहन, वाकी चितवनि मेरे हिय मांझ कसकैं
अँचरा गहि, फिर बहियाँ गही री, कर मेरौ मसक्यौ, सु अब लौं चसकैं
'नागरीदास' कठिन मोहि बीतत, उहि तौ मन लीनौ हसि-हसि कैं ॥१८१॥

५ ताल चर्चरी

दांन मांगतही मैं आनि कछु कियौ
आइ लई मटुकिया धाइ गहि सीस तैं,
रसिकवर नंद-सुत रुच दधि पियौ
छूटि गयौ झगरौ हठ मंद मुसक्यांन मैं,
नखहि कर कँवल तैं परस्यौ मेरो हियौ

(१८०) अँखियाँ = ए अँखियाँ। कहत हौं नाहिं नईं = कहत पुकार कईं (हस्त)।
(१८१) देखिए उत्सवमाला पद ४३।
१७६. पलक = एक पल।
१८०. अरबीली = अड़ने वाली, हठीली। बरजी० = जिधर जाने से रोका, उधर ही गईं। कर = हाथ।

'चत्रभुजदास' नैंननि सौं नैंना मिले,
तबहि गिरिराज-धर चोरि चित लियौ ॥१८२॥

२२. गहवर-गिरि-मिलन

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा—
साझ भोर चित चोर कौ, तहँ दुरि मिलन बिहार
खोरि साँकरी सुखद गिर, गहवर बन अँधियार ।१॥

मिलत छैल भुज भरि प्रिया, खोरि साँकरी सैल
कबहुँ न छाड़त नित खरे, उहीं गैल की गैल ॥२॥

फिरत गऊ, श्री राग की होत बँसुरियनि टेर
गहवर गिरि दुरि मिलत दोउ, साँझ समैं तिहि बेर ॥३॥

अंकमाल दृढ़ दुहुनि मैं परी, सु छूटत नाहि
महा प्रेम गहवर छके, गहवर गिर कैं मांहि ।४॥

गहवर गिर कै तिमर मैं, परी चमकि चकचौंधि
सही स्याम घन सौं मिली, भामिनि दामिनि कौंधि ॥५॥

इत आवत वर रसिकनी, उतैं रसिक सिरमौर
'नागरिया' दुरि मिलत दोउ, गहवर गिर की ठौर ।६॥

१. पद, राग श्रीराग, ताल चपक

गहवर गिर साँकरी गली
रही न सँभार, देह सुधि बिसरी, मिली औचक वृषभान लली

---

(१८२) गहि = गई (हस्त) । छूटि गयो = भूलि गयो (चतुर्भुजदास, पद २३)
(दोहा २) प्रिया = त्रिया (हस्त) ।

१८२. आंनि = आकर । रंच = थोड़ा ।
दोहा २. सैल = शैल, पर्वत । गैल की गैल = रास्ते का रास्ता या केवल रास्ता ।
३. श्री = एक राग विशेष ।
४. गहवर प्रेम = प्रगाढ़ प्रेम । गहवर गिर = दुर्गम पर्वत प्रदेश । छके = पूर्ण रूप से तृप्त हुए ।
५. सही = निश्चय ही ।

दच्छिन कर गैंदुक कुसुमनि की, बांम अंस भुज सुहृद अली
अंचर डारे आधैं सिर, छवि-मत्त, दुरद गति आवत चली
गुंन प्रयोग सहचरि सँभरावति, हृदैं रूप मुर्छा सु चली
'नागरीदास' मिटाय ललक रति, मिलत उर जु, उर गति बदली ॥१८३॥

२. चौताल

ह्वै गई भैंट अचानक बन मैं, गहबर ठौर, विषम मग माई
गिर तरु सघन, साँझ अँधियारौ, तहँ दोउ लपटनि भुज भरनि सुहाई
सुपनौं समझि नैन मूदि रहे इत, उत छुटति न अकमाल, सुधि बिसराई
अति आसक्त, अमल मूर्छित मन, कंपित देह सिथल सियराई
आय सखी सँभराय निवारें, तब लोक लाज गुरजन सुधि आई
'नागरिया' चले चितवत फिरि फिरि, लगन अगाधा राधा कुँवर कन्हाई ॥१८४॥

३. चौताल

कनक कुंडल कपोल मंडित, गउ-रज छुरित सुकेस
मद गज चाल चलत सुरभिन सँग, लाड़िलो कुँवर ब्रजेस
नैंन-चकोर किए ब्रज-बनिता, पीवत बदन राकेस
अति प्रफुलित मुख-कँवल सबनि के, गोप कुल नलिन दिनेस
अति मद तरुन विघूर्नित लोचन, बिगसत कँवल, कृपा आवेस
लटकत चलत, माधुरी बरसत, 'गोविंद' प्रभु ब्रज द्वारें प्रवेस ॥१८५॥

४. तिताल

आवत काल्हि की सांझ, देख्यौ मैं गाइन मांझ
काहू कौ ढटौना माई, सीस मोर पँखियाँ

---

(१८३) दुरद = द्विरद (हस्त)।

१८३ गैंदुक = कंदुक, गेंदा। अंस = कंधा। दुरद = द्विरद. । गुन प्रयोग = रस्सी या बंधन का प्रयोग करके; भुज-बंधन द्वारा। ललक = उमंग, जोश। उर = अंक। उर = हृदय।

१८४. भुज भरनि = भुजाओं में समेट लेना, अंकमालिका लेना। अमल = नशा।

१८५ गउ रज = गौ के खुर से उडी हुई धूल। छुरित = चुरित। 'छुर' गाय के खुर को कहते है। छुरित = खुर से संबंधित, खुर से लगी हुई; खुर लगने से उडी हुई। सुरभिन = गायो। विघूर्नित = घूमते हुए।

ओढ़ैं पीत पिछौरी, मुरली मैं गावै गौरी,
सुनि भई बौरी, रही इकटक अँखियाँ
धात कौ तिलक किये, गुंजनि कौं हार हियें,
उपमां न बनैं दियें, जोती केती नखियाँ
अलसी कुसुम तन, दीरघ चपल नैंन,
रंग रस भरी ज्यों लरत जुग झखियाँ
डगमग परैं पग, चलत न सूझै मग,
भवनी भवन लाई, हाथ दियें कखियाँ
'मांनदास' प्रभु चित-चोर ही के देखैं जियैं,
और न उपाय दाय, सुनौ मेरी सखियाँ। १८६।।

५. तिताल

हौं जु गई खरिक कछु जान्यौं नाहि,
बाँसुरी की धुनि, सुनि, मेरी मति बाम की
हरि मुख हेरत हिरांनी हूँ बिकानी आली,
चितवनि चित चोरयौ, चेरी बिन दाम की
यातैं 'जगजीवन' हूँ जानती तौ जाती नाहि,
चातिग लौं रट्यौ करौ, प्यासी हरि नाम की
मो सौं कहैं बार बार, अब धाम काम करि,
मेरे कोऊ कांम कौं न हौं कांह्र के काम की।।१८७।।

२३. दान

या अनुक्रम की अलापचारी मै दैनै ए दोहा
दांन केलि जो मन बसै, ताहि न कछू सुहाय
तजि वृंदावन माधुरी, अनत न कबहूँ जाय ।।१।।

---

१८६. गौरी = राग विशेष। बौरी = बावली, पगली। धात = गेरू। केती = कितनी नखियाँ = नाखूनों में। झखियाँ = मछलियाँ। भवनी = भवन वाली; गृहिणी। कखियाँ = शरीर का बगल, पार्श्व। दाय = दांव; उपाय।

१८७ हेरत = देखते ही। हिरानी = खो गई। हूँ = मैं। यातैं = इसलिए; अतः।

मेरे नित चित मैं बसौ, दंपति दांन बिहार
मुख पर झूठी झगरई, नैंननि करत [illegible]ार ॥२॥

मो मन लागी [illegible]हुनि की, दांन केलि बतरांनि
नैननि हा हा खान इत, उत म[illegible] सतरानि ॥३॥

गउर घटा अरु सावरी, उनई नीर सनेह
खोरि सांकरी गिर तहां, दांन रग झर मेह ॥४॥

गोरस माँगत करत दोउ, नैन सैन सनमान
'नागरिया' के हिय बसो, दान-रंग-बतरांन ॥५॥

१. पद, राग गौरी, इकताल

अहो तुम, सब ही सयाने साथ के, अरु तुमहूँ सयांनै कान्ह
लिख्यौ दिखावो रावरौ जू, कैसे लैहौ दान
नंदराय लला घर जान दै

अहो प्यारी, लै आए, त्यौं लैहिगे, नई न करिहै आज
निज पहरा बैठायहैं, दै बीरी व्रजराज
वृषभांन लली अब दांन दै

अहो प्यारे, कहा भरे हम भार है, कहा लै लादे बैल
टेढ़े ह्वै ठाढ़े भए, तुम रोकि हमारी गैल
नंदराय लला घर जान दै

अहो प्यारी, अँग अँग बैल सुहावनैं, भरे रतन के भाय
नायक रूप लदानियाँ सो अब लादे जाय
वृषभान लली अब दांन दै

अहो प्यारे, देख भयांनौ भान कौ, ताकी बाँह बसै व्रजराय
यह घास खायौ रावरैं, तहाँ सुख चरती गाय
नंदराय लला घर जांन दै

अहो, प्यारी देस तुम्हारे बाप कौ, अरु मोपैं दीन्हौं साथ
सब संकलपित वा दिनां, तब पीरे कीनैं हाथ
वृषभांन[illegible]ी अब दांन दै

अहो प्यारे, याही तैं साँवर भए तुम, लै लै ऐसो दांन
क्यौं छूटौगे भार तैं, कहूँ तीरथहू नहिं न्हांन
नंदराय लला घर जांन दै

अहो प्यारी, गउ-रज गंगा न्हात हूँ, जपत गउन के नांम
परम पुनीत सदा रहूँ, लेत सँकौं नहिं दांन
वृषभांनु लली अब दांन दै

अहौ प्यारे, गुजराती डाकौतिया, लेत ग्रहन मै दान
तुम उनमै हो साँवरे, वृषभान बबा की आंन
नंदराय लला घर जांन दै

अहौ प्यारी, हूँ दांनी बहु भाँति कौ, जौ अब दानै देहु
जिहि जिहि विधि कोउ दैंहिगी, तिहि तिहिं विधि ही लैंहुँ
वृषभांनु लली अब दांन दै

अहौ प्यारे, दांन लै दांन ले दान लै, कछु नांचि बजाय रु गाव
जिहि जिहिं विधि हम दैहि, तूं तिहि तिहिं विधि ले आव
नंदराय लला घर जान दै

अहौ प्यारी, नट है नाच्यौ साँवरौ, अरु विरुद पढ़ै जैसै भाट
मुरली मै हेरी दई, इन मेटी कुँवरि मोरी नाट
वृषभांनु लली अब दान दैं

मिसही मिस झगरौ भयौ, या वृंदावन माहि
चतुर 'लाल' दोऊ जनै, दास बली बलि जाहि ॥१८८॥

२ तिताल

जान दै घर नँद कुँवार
तेरी बातनि मोहि परि गई साझ
सासु ननंद लरिहै घर मांझ

१८८. रावरौ = रावल का; महाराज का। भार = बोझ। भाय = सदृश। नायक = बनजारा। भयांनौ = वृषभानु का राज्य। पीरे कीने हाथ = मेरा विवाह किया। सँकौं = शंकित होता हूँ। डाकौतियाँ = पुरोहित, ब्राह्मण। हेरी = पुकार। नाट = अस्वीकार।

हा हा हरि नैंकु सूधैं हेरि
तेरी चितवनि मोहि राखी है घेरि
'गोपीनाथ' पिय चतुर सुजान
रस बस करि लई ग्वारि निदांन ॥१८९॥

३ तिताल

दांन देरी वृषभान कुँवारि
छाँड़ि देहु अब चार बिचार
करत झगरई होत अबार
हा हा गोरस प्यारी प्याय
क्यौं झुकि झिझकति है अनखाय
'नागरि' नैंननि करि सनमान
हसि बस करि लए स्यांम सुजांन । १९०॥

४. तिताल

लाल नैकु मारग दीजै, एती न कीजै बरजोरी
ठाढ़े झगरत सांझ भई, अब हारि पसारत झोरी
थहरत देह, न ठहरत सिर पर, गरई लगत कमोरी
जिनको तुम यह अँचरा गहत हौ, सो है कुँवरि किसोरी
हिये और कछु लालच ललकै, पलकै करत निहोरी
प्यारे कुँवर छबीले 'नागर', पाई चित की चोरी ॥१९१॥

५. तिताल

छाँड़ि छाँडि दे रे अंचल छैला
इती करत लँगराई लला क्यौं, रोकि मही कौ गैला
जांन न देत, दान मांगत हठि, ठाढ़ो ह्वै आड़ौ अरैला
सीखे कहाँ अनोखे 'नागर', ए जोबन के फैला ॥१९२॥

(१९०-९२) देखिए उत्सवमाला पद ४४, ४५, ४६ ।
(१९१) छबीले = छठेले (हस्त) ।
१८९. सूधैं = सीधे; तिरछे नहीं । हेरि = देख । निदांन = अंततः ।
१९२. फैला = फेल, काम ।

२४. गोधन आगम

या अनुक्रम की अलापचारी मैं देनैं ए दोहा
कवल-माल हिय, कर कमल, कँवल-नैंन सँग धैंन
प्रफुलित कवल-पराग जुत, यौं मुख मंडित रैंन ॥ १ ॥
घट की सटकी लाज सब, गोधन सँग लखि लाल
अटकी नट की दृगनि मैं, वह लटकीली चाल ॥ २ ॥
आछै काछैं वेप नट, गायन पाछैं लाल
चलैं कटाछं फूल-सर, भूलत सुधि ब्रजबाल ॥ ३ ॥
आवत लखि नँदलाल कौं, भूमि झरोखनि झाँक
कली फूल डारत अली, लिखि लिखि हित के आँक ॥ ४ ॥
गोधूरिक बिरियाँ भई, मिटयौ बिरह-दुख-दंद
प्रफुलित तिय-कुमुदावली, लखि 'नागर' ब्रज-चन्द ॥ ५ ॥

१—पद, राग गौरी, तिताल

हाँके हटकि हटकि, गायैं ठटकि ठटकि रही,
गोकुल की गली अति साँकरी
जारी, किंवारी, झरोखनि, माखनि दुरि-दुरि देखत,
ठौर ठौर तैं परत काँकरी
चंप-कली कुन्द-कली, रस भरी बरसत,
तामैं पुनि देखियत लिखे से आँकरी
'नन्ददास' प्रभु जाके द्वार ठाढे होत, सोई सों वचन देत,
काहू सौं 'हाँ' करी, काहु सौं 'ना' करी ॥ १९३ ॥

२—तिताल

गोवर्द्धन गिर सिखर स्याम चढि फेरत पीत पिछौरी
बोली बहुरि गऊ, बंसी मैं लै लै नाम धूमरी गौरी

(दोहा १—५) ए पाँचों दोहे 'गोधन आगम के क्रमशः ९ १०,४ ६,२ संख्यक दोहे हैं।
(१९३) पाठांतर ब्रजरत्नदास संपादित नंददास ग्रंथावली (पृष्ठ ३४३, पद ५०) के अनुसार हैं।
अति साँकरी=सब साँकरी। किंवारी=अटारी। दुरि-दुरि देखत=झाँकत दुरि दुरि।
रसभरी बरसत=बरसत रसभरी। लिखे से=लिखे है। जाके द्वार=जहीं जहीं।
सोई सों वचन देत=तहीं तही लटक लटक।

१९३—हटकि हटकि = वर्जित कर-करके। ठटकि ठटकि रहीं = ठिठक रहीं, आगे नहीं बढतीं। जारी = दीवाल में बनी हुई जाली। किंवारी = कपाट। झोखनि= गवाक्षों से।

सुनि धुनि धैंनु बैन श्रवननि मैं, मोहन मगन आतुर उठि दौरी
बिबिध भाँति भूषननि अलंकृत, रुनक झुनक बन सब्द छयौ री
उतरि गिनत गोधन अप अपनौं, बोलत मोहन बचन ठगौरी
'नागरीदास' चले नन्दीसुर, गोप कुँवर मिलि गावत गौरी ॥ १९४ ॥

३—ताल चर्चरी

आवत बनैं कान्ह गोप बालक संग,
नेचुको खुर रैंन छुरित अलकावली
भौंह मनमथ चाप, बक लोचन बांन,
सीस सोभित मत्त मोर-चन्द्रावली
उदित उडराज सुदर सिरोमनि बदन,
निरखि फूली नवल जुवति कुमुदावली
अरुन सकुचित अधर बिंबफल उपहसत,
कछुक प्रगटित होत कुंद दसनावली
स्रवन कुण्डल, भाल तिलक, बेसरि नाक,
कंठ कउस्तुभ मनी, सुभग त्रिबलावली
रतन हाटक खचित उरस पदकनि-पांत
बीच राजत सुभ्र पुलक मुक्तावली
बलय, कंकन, बाजूबंद, आजान भुज,
मुद्रिका करतल, बिराजत नखावली
कुणित मधु मुरलिका, मोहत सकल विश्व,
गोपिका - जन - मन सुग्रथित प्रेमावली
कटि छुद्रघंटिका जटित हीरा मई,
नाभि अंबुज बलित भृंग रोमावली
धाय कबहुँक चलत भक्त हित जांनि पिय

---

(१९४) गिनत = गे निव (हस्त)।

१९४—फेरत = फिराते है, घुमाते हैं। बोली = बुलाई। नन्दीसुर = नन्द गाँव। गौरी = राग विशेष।

१९५—इस पद का पाठांतर अष्टछाप परिचय पृष्ठ २२७ पद ६ के अनुसार दिया जा रहा है। बनै=बनहि। नेंचुकी=नई चकी (हस्त)। रेनु=नैंन (हस्त)। छुरित=छुरव(हस्त)। भौंह=भौंहैं। वंक=चक्र। मोर=मयूर अरुन०=सकुच अफुन विंबाफल हसति। कछुक प्रगटित होत=कहत कछु प्रगट होत। कउस्तुभ मनी= कौस्तुभ मनि। रतन=रत्न। उरसि=पुरसि। पुलक=जलक (हस्त)। करतल=कर

गंड मंडल रुचिर श्रम जल कनावली
पीत कौसेय परिधांन सुंदर अंग,
चरन नूपुर वजत गीत सब्दावली
ह्वै 'कृष्णदास' बलि गिरधरन लाल की,
चरन नख चद्रिका हरत तिमरावली ॥ १६५ ॥

४—ताल चर्चरी

आजु व्रजराज कौ कुँवर बन तैं बन्यौ
देख्यौ री आवत अधर मधुर रजित वैंन
मधुर कल गांन निज नांम सुनि श्रवन-पुट,
परम प्रमुदित, वदन फेरि हुंकृत धैंन
मद विघूर्नित नैंन, मंद बिहसत वैंन,
कुटिल अलकावली लुलित गो-पद-रैंन
ग्वाल बालनि जाल करत कोलाहलनि,
शृङ्ग दल ताल धुनि रचित सँचित चैंन
मुकट की लटक अरु चटक पट पीत की,
प्रगट अंकुर निकर गोपिन मनु मैंन
कहि 'गदाधर' जु यह न्याय व्रज सुन्दरी
विमल बनमाल कै वीच चाहत ऐंन ॥ १६६ ॥

५—इकताल

बन तैं बानिक बनि व्रज आवत
वैन बजाय, रिझाय जुवति जन, गौरी रागनि गावत
वारिज बदन लाल गिरधर कौं, निरखि सखी सचु पावत
रूप कटाछि करत प्यारी पर, 'रूप सिंघ अलि' भावत ॥१६७॥

दल। कुणित मधु=कर तर। सकल=अखिल। जन मन सुमथित=जनमसि प्रथित।
कबहुँक=बहुतक। रुचिर=रचित (हस्त)। वजत=वाद्य।

१६५—बनैं=सुशोभित होते हुए। सैंजुकी=नई ब्याई हुई गाय। छुरित=खुर से उड़ी हुई। त्रिबलावली=त्रिवली, उदर की तीन रेखाएँ। हाटक=स्वर्ण। उरसि=उर पर। पदक=हीरा। आजान=घुटनों तक लटकनेवाले। कुणित=क्वणित, शब्दायमान मुखरित। छुद्रघंटिका=घुँघरूदार करधनी। धाय=दौड़कर। गण्डमण्डल=कपोल। कनावली=बूँदें। कौसेय=रेशमी।

१६६—रजित=सुशोभित। हुंकृत=हुंकार करती हैं; रँभाती हैं। लुलित=लटकी हुई। शृङ्ग=सींग। प्रगट=प्रकट करते हैं। निकर=समूह। ऐन=अयन, निवास घर।

१६७—बानिक=वेश। सचु=सुख।

६–तिताल

आवत सखा अंस पर धुके
फेरत कँवल, कँवल दल से दृग मद आलस बस झुके
परसत चरन माल बैजंती, चलत मद गति रुके
'नागरिया' मन लोचन सबके, हरि ही के ह्वै चुके ॥१६८॥

७–इकताल

सब ब्रज की जीवनि साँवरो, सखि आवत है चलि देख री
जो निरखत सो रहत ठगी सी, दृग नहिं लगत निमेष री
नैन कुसुम सर, भौंह धनुष सो, तापैं कनक कृत रेख री
'नागरीदास' गउन कै पाछैं, काछैं नवल नट भेष री ॥१६६॥

८–इकताल

बन तें री आवत चारैं धैंन
सखा संग श्रुत देत मधुप गन, मुदित बजावत बैंन
अमृत मधुर धुनि, परत श्रवन सुनि, धाईं सब तजि ऐंन
हृदै लगाय ब्रजेस री, पट पौंछत मुख-रैंन
उत मर्दन भोजन करवावत, भूषन पीत बसैंन
'गोविंद प्रभु' षट्रस बिंजन करि, बिमल सेत सुख सैंन ॥२००॥

६–इकताल

लाल मनमोहन री

आवत गोधन संग लाल मनमोहन री
ललित अमैंठा झुकि रह्यौ मनमोहन री
फैंटा पियरै रंग, लाल मनमोहन री
फैंटा पियरे रंग, रग भरे अंबुज नैन बिसाल
छ ब सौं कर चकडोरि फिरावै, आवै मद गज चाल
सोहत सखा समूह चहूँ दिस एक देत मुख बीरी
गोकुल बधू निरखि रही इकटक लागत पल आधी री

---

(१६८) परसत=उरकत। हरि ही के=हरि रही के (हस्त)।
१६८—अंस=कंधा। धुके=झुके।
१६६—काछैं=कछनी काछे हुए।
२००— चारैं=चराए हुए; चराकर। श्रुत=श्रुति; संगीत के सातों स्वरों में से प्रत्येक स्वर के कुछ नियत और निश्चित
बसैंन=बसन, वस्त्र। सैंन

लाल मनमोहन री

देखि पौरि, हिय हिलग की, मनमोहन री
जहाँ ठाढ़े ठहराय, लाल मनमोहन री
मुक्ता माल तोरी तहाँ, मनमोहन री
सबकी दृष्टि बचाय, लाल मनमोहन री
सबकी दृष्टि बचाय, कियो मिस स्याम सुघर रँग भीनैं
चितवत आप खरे खिरकी दिसि और मोतियन बीनैं
स्वेद कंप घनस्यांम पुलकि तन, फुरत नहीं कछु बैनां
उत गई गइयाँ, इतैं उरझि रहे, 'नागर नागरि' नैंना ॥२०१॥

१०-ताल चरचरी

सुनत धुनि बैंन मधु राग गौरी रुचिर,
चढ़िय निज भवन तिय स्रवन हित अगमगी
जांनि घनस्याम आगमन गोकुल बधू
अटनि दुहु दिसनि मनु दामनी जगमगी
सांझ सुख समैं आनद गहमह लई,
उड़ी रैंन धैंन बहु गलिनि बिच रगमगी
संग गोपाल नट वेष रहीं देखि सब,
पलक नहिं लगत मुख अलक रज सगबगी
कइक हसि फूल डारत, चइक कांकरी,
कइक मग छांड़ रही साकरी लगमगी
'नागरीदास' हरि माधुरी पान करि,
रही न कछु ठौर मति मदन बस डगमगी ॥२०२॥

(१)

पीत पिछौरी कहाँ बिसारी
यह तौ औरै काहू की, लाल ढिगन की सारी
हौं गोधन लै गयो जमुनां तट, उहाँ हुती पनिहारी
भीर भई, सुरभी सब बिड़री, मैं मुरली भली सम्हारी

(२०२)—देखिए पद प्रबोध माला, पद २७।

२०१—अमैंठा = ऐंठकर बाँधी हुई पाग। फेंटा=कमर-बंद। रँग भरे=प्रेम से परिपूर्ण। चकडोरि = चकई नामक खिलौना। पौरि = द्वार। हिलग = प्रेम। मिस = बहाना। फुरत = फूटता, निकलता।

हौं लै भज्यौ औरै काहू की, सो लै भजी हमारी
'सूरदास' बलि बलि तियन पर, बलि जसुमति महतारी ॥२०३॥

१२- राग गौरी का ख्याल तिताल

रहे गहि भामिनी की बाँह
हरि जू बात करत राधे सँग, जहाँ जसोमति आई
झूठहि मिस करि रोवन लागे, इन मेरी गेंद चुराई
देखि जसोदा अपने सुत कौ, बरजत क्यो नहिं माई
एक कर लकुट एक कर मुरली गेंद कहाँ तैं पाई
समझि जसोदा अपनैं मन मै, मुसकि चली नँदरानी
'परमानद' अटपटी हरि की, सबही बात मन मांनी ॥२०४॥

१३-इकताल

मारग मोहि बताइहौ मुरलीवारे साँवरे
भूलि परी संकत सबन मैं, कितहि नंदीसुर गॉव रे
भई हूँ अकेली सँग न सहेली, हौं अबला कित जॉव रे
कहि 'भगवान हित राम राय' प्रभु, आय मिले उहिं ठॉव रे ॥२०५॥

१४-तिताल

बड़ड़े मोतिन वारी लाल मेरी वेसरि दै
घर सासु लरैगी मति हीनी
वेसरि अति रँग भीनी
कहि कौन कारन तैं लीनी
परत है सॉझ कन्हाई
मन की मैं सब पाई
चाहौ सो नहि होनां
प्यारे नागर' स्याम सलौंनां ॥२०६॥

१५-तिताल

मोहन जांन दे जमुना पानी
मोहि लई तेरी इन चितवनि, सूधैं देखि गुमांनी

---

(२०६) मेरी वेसरि दै=मेरी बिसरि दै (हस्त)।
२०३—डिगन = किनारा। सुरभी = गाय। बिडरी = तितर बितर हो गई।
२०४—मिस = बहाना। मांनी = स्वीकार कर लिया; समझ लिया।
२०५—नंदीसुर गॉव = नंदगॉव।
२०६—बड़डे = बड़े। मनकी मै सब पाई = तेरे मन की सारी बातें मैं समझ गई।

लाज जरी, उर बदन माधुरी निरखि न कबहुँ अघांनी
कहि दै जाय परोसिन घर, तो दहिहै ननद जिठांनी
सुनिहै नाह अनाहक लरिहै, सासु महा अनखांनी
'वृंदावन' प्रभु प्रीति निगोड़ी, क्यो हूँ रहत न छांनी ॥२०७॥

१६-तिताल

जांन दै रे घर नंद कुँवार
तेरी बातनि मोहि परि गई सांझ
सासु ननद लरिहैं घर मांझ
हा हा हरि नैंकु सूधैं हेरि
तेरी चितवनि मोहि राखी है घेरि
'गोपीनाथ' प्रभु चतुर सुजान
रस बस करि लई ग्वारिनि निदान ॥२०८॥

१७-तिताल

अरी इन बंसीवारे मेरौ मन लीनौं
मो तन मृदु मुसकाय भाय सौं, चितवनि मैं कछु कीनौं
इत उत चलत न चरन, थकी बिच, टौंना सौं पढ़ि दीनौं
'नागरिया' ग्वारनि मोही मग प्रगस्यो हैं नेह नवीनौं ॥२०९॥

१८-इकताल

आय आय हरि गली हमारी
गाय गाय निकसत गौरी, सुँनि बौरी, मति नहिं बात सँभारी
राग रूप की डारि ठगौरी, लयो सु लयो मन मांनिक भारी
'नागरिया' हम तो अति भोरी, वे जगत के ठगिया बड़े बटपारी ॥२१०॥

१६-तिताल

कोई यक साँवरौ अति सुंदर बैस किसोर
पीत बसन, बनमाल, बडे दृग, सीस चंद्रिका मोर
पांन खात, मुसकात छबीलौ, कर फेरत चकडोर

---

(२०७) लाज=लाल (हस्त)।
(२०८)-देखिए यही ग्रन्थ, पद १८९।
(२१०) मति नहिं=नहिं (हस्त)। जगत के=जगत के व। ठगिया=ठगि (हस्त)।
२०७. गुमांनी = गर्वीले। दहिहैं = जलाएँगी। नाह = नाथ, पति। अनाहक = व्यर्थ। अनखांनी = नाराज होनेवाली। छांनी = प्रच्छन्न।
२०९. तन = ओर। भाय = भाव; स्नेह।

माइल कै घाइल करि डारी, नैंननि पैंनी कोर
कहि न जात छवि माधुरी, नहिं उपमां कहि जोर
ललित कपोलनि मुरि मुरि लागे, कुटिल अलक के छोर
सो जानैं जिहिं चाहि परी है, प्रेम-समुद्र-हिलोर
कहि भगवान हित राम राय' प्रभु, चितहि बस्यौ चित-चोर ॥२११॥

२०–तिताल

नंद कौ नंदन मेरौ मन लै गयौ
साँवरौ सलौनां, अति ही लगौनां नेह, तरौनां सौं भयौ
निकस्यौ आय गोधनीं गावत, बिरह बीज तन मैं बयौ
अलक झलक कुंडल कपोल मिलि, पलक मूँदि, ललकनि चितयौ
'जगतराज' ब्रजराज अमी रस, अधर मधुर मुसकाय दयौ ॥२१२॥

२१–तिताल

मोहनां मनभावना मैंनू मिल्यौ आय
नेहभरी छिलवारी जुलफैं, पगिया सरस सुरंगी,
बैंदा भाल, सलोनैं नैनां, मंद मंद मुसकाय
बिन देखैं तलफत ये अखियाँ, भरि भरि आवत हियराय
'बिजै सखी' यह पीर दुहेली, कासौं कहिए जाय ॥२१३॥

२२–राग गौरी, गोधनी

अणी अमां सजन मैंडा बेपरवाही, कौनूं कूक सुणावां
टुक फिरिदा नहि गली असांढ़ी, बिण देखैं अकुलावां
दिल दी पीर न जांणैं दिलवर, कित्था जीव धरावां
कीता भूलि नेह 'नागर' सौं उस दिण नूं पछितावां ॥२१४॥

---

२११. माइल = प्रवृत्त; लीन। जोर = जोड़, जोड़ा। चाह = चाहि, देखकर।
२१२. तरौंना = ताटंक, तरकी, कर्णफूल। गोधनी = एक प्रकार का गीत। बयो = बो दिया। ललकनि = बहुत बड़ी लालसा से।
२१३. मैंनू = मुझको। छिलवारी = छल्लेवाली, छल्लेदार, कुटिल, घुँघराली। हियराय = यह हृदय। दुहेली = दुखद।
२१४. अणी अमां = अरी सखी। मैंडा = मेरा। कौनू = किसको। कूक = पुकार, क्रंदन। सुणावां = सुनाऊँ। फिरिदा = फिरता है। असाढी = हमारी। दिल दी = दिल की। कित्था = कुत्र, कहां। जीव = प्राण। धरावां = पकड़ाया। कीता = किया। दिण नूं = दिन को।

२३—इकताल

आजु सखी भेंट भई मोहन सौं
आय अचानक भुज भरि लीनी, फिर न सखी गोहन सौं
अजहूँ कंप, धकधकी हिय मैं, कहत तोहि सौंहन सौं
अब कैसैं नित बचूँ रोकि मन, 'नागर' बृज गौंहन सौं ॥२१५॥

२४—तिताल

आजु सखी यातैं भई अबेर
गई हुती हौं खरक नंद कैं, गो-दोहन की बेर
तहाँ ठाढ़ौ हुतौ कुँवर साँवरो, भई दृगन भट-भेर
घूँघट बिसरि, रहि रई इकटक, नट 'नागर' मुख हेर ॥२१६॥

२५. फूल-विलास

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा
मिलत नवावत नव लता, अंचर छुटत दुकूल
इत उत बाढ़ी दुहुनि मन, फूलनि बीनत फूल ॥ १ ॥
दोउ मिलि फूलनि बीनहीं, जमुनां कूलनि सांझ
रंग-रलो अति ह्वै रही, कुंज-गलिन के माँझ ॥ २ ॥
बन फूल्यौ, फूल्यौ जु मन, फूल बेस अभिराम
सबै करी फूलनि सफल, मिलि कै गोरी स्यांम ॥ ३ ॥
नील पीत पट छोरि छबि, उरझै द्रुम की भीर
मुरि सुरझावनि दुहुनि की, मेरैं उरझी बीर ॥ ४ ॥
फूलनि मिस तिय सौं मिलत, सखी रूप रचि छैल ।
'नागरिया' के हिय बसौ, फूल रँगीली सैल ॥ ५ ॥

१—पद

जमुनां के कूल कूल, लता रही भूल री
तहाँ द्वै सखी हैं, नीले पियरे दुकूल री

---

(२१६) बिसर रहि गई=बिसरि गई, रहि ।
(दोहा १-५ —चौथे दोहे को छोड़ शेष सभी अनुक्रम २० में पहले आ चुके है ।
ये फूल विलास के ४ ११, २,१३ संख्यक दोहे हैं । चौथा दोहा फूल
विलास में भी नहीं है ।
२१५—गौंहन = साथ । सौंहन सो = शपथपूर्वक ।
२१६—भटभेर = भिडन्त । हेर = देखकर ।

गोधूलक बेरहू तैं, ह्वै गई अबेर मैं
देखत ठगी सी रही, दोऊ तिहि बेर मैं
साँवरी औ गोरी छबि, सोहैं अलबेली हैं
सबही सौं न्यारी न्यारी, डोलत अकेली हैं
बीनत हैं फूल फूल, फलहि लहतु हैं
झमकि झुकावैं झूमि, डारनि गहतु हैं
वेसरि अलक माल, उरझत पातु री
वाकी सुरझावनि मैं, उरझी ही जातु री
मेरी सौ कपट तजि, खोलि मुख मौन है
'नागरिया' मोसो कहै, सखो वे कौन हैं ॥ २१७ ॥

२ – तिताल

अणी मै जोगन होय कित्थां जावा, मन लै गया बसीवाला
दोहा—इह गैलरियां आय के भुज पर फूल चलाय
इस्क लपेटी बात सौ, कछु कहि गया मुरि मुसकाय
जब तैं कल पावां नहीं, पलक लगैं दिन रैंन
कहर कलेजे मै लगी, उन नैंनूं दी सैंन
मन मोहन दे कारनैं फिरां उवाहन पाय
ढूँढ़ां गभरू साँवला, गया मनमथ अलख जगाय
रूप उजागर यार बिन, रैंदा नहीं सयान
आव गलै लगि भांवते ये नागरि' दिल ज्यान ॥ २१८ ॥

---

(२१७) देखिए उत्सवमाला पद ४८ । फूल फूल=फूल । उरझी ही=उरझी (हस्त) । मोसो कहै=मो सो कहि ।

(२१८) जगाय=जताय ।

२१८—अणी = अरी । कित्थां = कुत्र, कहाँ । जावाँ=जाऊँ । गैलरियाँ = गैल, पथ । नैनूँ दी = नेत्रों की । सैंन = संकेत,इशारा । दे = के । उवाहन = उपानह-हीन, बिनाजूते के; नंगे पैर । गभरू = उमड़ती जवानी का पट्ठा । अलख जगाना = (१) पुकार पुकारकर ईश्वर स्मरण करना, (२) भिक्षा माँगना । यार = जार, प्रिय । रैंदा = रहता । सयान = सयानप सज्ञानता । भांवते = प्रियतम । ज्यान= जान, प्राण-प्रिय ।

३—इकताल

जोगिया तेरैं कौंन टेव परी
भिच्छा देंदी, लैंदा नांही, आवत घरी घरी
पल नहिं टारत, हेरि रहत मुख, आँखैं लोभ भरी
'नागर' स्यांम चवाव चलैगो, यह जु बुरी नगरी ॥२१६॥

२६. 'रूप-धार घनस्याम की'

या अनुक्रम की अलापचारी मैं देनैं ए दोहा
रूप-धार घनस्यांम की, छवि-तरंग की झोक
प्रेम-प्यास कैसै मिटै, नैननि नान्ही ओक ॥१॥
पति कुटुम्ब देखत सबैं, घूंघट पट दियैं डारि
देह गेह बिसरै तिन्हैं, मोहन रूप निहारि ॥२॥
द्दग पौंछत अंतर अधिक, सही न जात निमेष
पल पल जल भरि आवही, रूप माधुरी देखि ॥३॥
बड़ौ मंद अरविंद-सुत, जिहिं न प्रेम पहिचानि
प्रिय मुख देखत द्दगनि कैं, पलक रची बिच आंनि ॥४॥
मनमोहन मुख निरखि कैं, अँखियाँ नांहि अघात
'नागरि' द्दगनि चकोर कैं, सब ससि कहाँ समात ॥५॥

१—पद, राग कल्याण, इकताल

लाल की रूप माधुरी नैंननि निरखि नैंकु सखी
मनसिज मनहरन हासि, साँवरो सुकवारि रासि,
नख सिख अँग अंग उमँगि, सौभग सीव नखी
रगमगी सिर सुरँग पाग, लटकि रही बांम भाग
चंपकली कुटिल अलक बीच बीच रखी

---

२१६. टेव = बानि, आदत। देंदी = देती है। लैंदा नाहीं = नहीं लेता है। हेरि रहत मुख = मुँह की ओर देखता रहता है। चवाव = निंदा।
(दोहा ४) द्दगनि कैं=द्दगनि कौं।
(दोहा ५) चकोर कैं=चकोर तैं (हस्त)।
(दोहा १) नान्ही = छोटी। ओक = अंजली, अँजुरी। (२) घूँघट० = घूंघट का पट दूर डाल दिया, घूँघट हटा दिया। (४) अरविंद-सुत = ब्रह्मा। (५) द्दग चकोर कैं = चकोर के नेत्रों में।

आयत दृग अरुन लोल, कुंडल मंडित कपोल,
अधर दसन दीपति की छबि, सो कहूँ न जात लखी
अभयद दै भुज-दंड मूल, पीन अंस सानुकूल
कनक निकष लसैं दुकूल, दामिनी घरषी,
उर पर मंदार हार, मुक्ता लर वर सुढार,
मत्त द्विरद गति तियन की, देह दसा करषी
मुकुलित वय नव किसोर, बचन रचन चित के चोर,
मधुरित पिक-साव नूत मंजरी चखी
जै श्री नटवत 'हरिवंस' गांन, रागिनी कल्यान तांन
सप्त सुरनि कल एते पर मुरलिका बरषी ॥२२०॥

२—तिताल

अनियारे लोचन मौंहन
माधुरी मूरति देखन लालच, लागि रह्यौ मन गौंहन
हटकत मात, तात यौ भाखत, लाज न आवत तौंहुन
हौ अपनैं गोपाल रँग-राती, काहि दिवावत सौंहन
संध्या समै खरिक तै निकसी, लियैं दूध कौं दौहन
'रूप सिंघ' प्रभु नगवर नागर, बस कीनैं भौंहन ॥२२१॥

३—ताल चापक

इन अँखियनि मोसौं बैर कियौ
आप मिलीं जाय, रस बस करिबे कौं, मो मन बांधि दियौ

---

(२२०) पाठान्तर 'श्रीहितामृत निधि' पृष्ठ ७ पद १२ के अनुसार।
सौभग=सुभ (हस्त)। सो कहूं =क्यों हूं। अभयद =अभय दै (हस्त)।
तियन=त्रियन (हस्त)।

२२०. सौभाग्य=सौंदर्य। सीव =सीमा। नखी = डाँक गए, लाँघ गए। बांम भाग = बाईं ओर। आयत =विशाल। अभयद=अभय प्रदान करने वाले। घरषी = घर्षित हुई, दबोच ली गई। करषी =कर्षण कर ली, खींच ली। पिक-साव =कोयल का बच्चा। नूत =नूतन प्रशंसनीय। नटवत =नृत्य करते हुए।

२२१. अनियारे लोचन =नोकीले नैनोवाले। गौंहन =साथ। हटकना =हरकना, रोकना, वर्जन करना। तौंहुन =तोभी नहीं। सौंहन =शपथें। भौंहन =भृकुटि (विलास) से।

२२२. रस बस करिबे कौं =आनंद को अपने वश मे करने के लिए।

घरी घरी, पल पल, कल न परत है, जानत मेरौ हियौ
'कृष्न दास' प्रभु तिहारे दरस बिन, अब नहिं जात जियौ । २२२।।

४—ताल चपक

इन ऑखियन हौ हरि कौ बेची
पर बस भई, दई कहा कीजै, परि गई बात कुपेंची
प्रेम-दाम तैं बॉधि लई हौ, आतुर मदन-दलाल
क्यौं छूटौ ब्रज चारु चौहटैं, छाप दई कर भाल
'नागरीदास' जगत सुखियारौ, मोहि नांहि छिन चैंन
जानैं सोई लागी होय जाकैं, मुसकनि चितवनि सैंन ।।२२३।।

५—इकताल

निपट लालची लाल बिहारी
दृगन की टगटगी टरत न टारी
आनाकानी जब देत राधिका प्यारी
पिय पुतारिंन सौं करत हा हा री
बेसरि को मोती देखि धीरज न धारी
'अलि भगवांन' पिय होत बलिहारी ।।२२४।।

६—इकताल

फिरि फिरि आत है लोइन भारे
रूप गरब सौं भरे छबीले, प्रीतम हित मतवारे
मृदु मुसकनि सौं भीजि रहे, बिच घूँमत मदन अखारे
'नागरिया' रहि जात चित्र से, चितवत नंद दुलारे ।।२२५।।

२७. पनघट की लगन

था अनुक्रम की अलापचारी मै दैंनैं ए दोहा -
खिलत कमोदनि कुसुम, ज्यौं निरखि चद की कोद
यौं जिय सुनत प्रमोद ह्वै मधुमय राग कमोद ।।१।।

---

(२२३) पर बस=परस (हस्त)।

२२३—कुपेंची = कुदॉव; बुरे पेंच वाली, मुश्किल । दाम = रस्सी । हौं = मुझको
चौहटैं = चौरस्ता, चतुष्पथ । सैंन = ऑखो का इशारा ।

२२४—टगटगी = टकटकी; अपलकता; निर्निमेपता । आंनाकांनी = सुनकर भी न सुनना ।

२२५—भारे = विशाल । अखारे = अखाड़ा; मल्ल-युद्ध करने का क्षेत्र ।

४—इकताल

अरी आज मोहि मोंहन अति भाए, उन्हैं हौं हूं गई री जु भाय
हौंहूँ रही लखि थकित इतैं, उत वेऊ रहे लुभाय
लोग कुटंब सब कछु कहौ अब, जिय धरि भाय कुभाय
'नागरिया' द्दग लगनि लाल सौं, लगि गई सहज सुभाय ॥२२६॥

५—इकताल

मीत पियारौ मेरौ चोरी चोरी आवै
जो सोऊँ दुरि अपनीं अटा, तऊ अचानक आंनि जगावै
लोक लाज डर डरी जाति हौं, मति कोऊ लखि पावै
'नागरिया' निधरक मोहन जिय, रस बस रैंनि बितावै ॥२३०॥

६—राग ईमन का ख्याल, इकताल

मन हरि लीनौं मेरौ साँवरे सलौने, बिन देखैं रह्यौहू न जाय
सुंदर-बदन-छबि - सुधा - पांन - चसकै चख रहे हैं लुभाय
कहिए कहा, महा दुख दहिए, पल पल कलप समांन बिहाय
प्यासे प्रांन रटत चातिग ज्यौं, 'आनँद घनहिं' मिलाय ॥२३१॥

७— तिताल

मोह्यो री मन हे मधुरी मुसक्यांन
निपट निसंक बंक चितवनि मैं, मारत कटाछिन बांन
नागर छैल चलत ऐंड़त कछु, गावत रस भरी तांन
'संतसखी' लखि रूप छकी, चुभी सौहनी-छबि उर आंन ॥२३२॥

८—तिताल

स्याम सुजांन कैं बिन देखैं, अटपटाय कहूँ न लागै मन
नैंकहू के न्यारे भयैं नीर भरि आवैं, मेरे नैंननि यह लीनौ है री पन
कहा री कहौ मन पर बस परि गयौ, इनहिं दुखनि छिन छिन छीजत तन
'आनँद घन' पिय सो कहा कहिए, उनकी हाँसी औरन कौ मरन ॥२३३॥

२३०— मति = जिन, नहीं। २३१— चसकै = चसका, शौक, आदत।
२३२— आंन = आदर। २३३— अटपटाना = लड़खड़ाना।

९—तिताल

परी है अनोखो नैंननि बांनि
बरजि रही बरज्यौ नहि मानत, नैंकु करत नहि कांनि
सासु ननद मोहिं दहत रहत हैं, निपट अटपटी औगुन खांनि
'दयाराम' घनस्यांम लाल बिन, मदन सतावै मोहि आंनि ॥२३४॥

१०—तिताल

एरी मनमोहन रूप ठगौरी डारि दई
बिसरी लाज काज गृह कौ सुख, दुसह दुखनि हूँ घेरि लई
या रस सौ पहिचानि नाहिनै, अब ही तौ हूँ बैस नई
सुनी कहानी श्रवननि में यह, 'मुरलीधर' पिय अति निरदई ॥ २३५ ॥

११—तिताल

मीत मिलन की मोहि खुमारी लागी रहै दिन रैंन
अंग अजक, जक परत नहीं जिय भरि भरि आवैं नैंन
जब तै मनमोहन भेटी हूँ, बिसरि गई सुख सैंन
'नागरिया' फिरि अधर-रसासव, पियै बिना नहिं चैंन ॥ २३६ ॥

१२—इकताल

सुन्दर स्याम सलौंने री हरि लीनौं मेरौ मन
बीतत पलक कलप सम सजनी, परत न चैंन भवन आँगन बन
चेटक सौं कछु कीनौं, दृगनि मैं लगियै रहत चटपटी निस दिन
तरसि तरसि बरसत घन ज्यौ चख, 'मुरलीधर' प्रीतम प्यारे बिन ॥ २३७ ॥

१३—इकताल

वा ठगिया कहि बात, मेरौ मन बाँधि लीनौ साथ
नेह-डोर दृढ़ बँधी गरैं इत उत मोहन कै हाथ

---

(२३५) सुनी=श्रुती (हस्त)। (२३८) कहतै न बनैं=कहत न बनै।
२३४—कांनि = मर्यादा का ध्यान। अटपटी = नटखटी, शरारत।
२३५—बैस = बयस; आयु।
२३६—खुमारी = नशा। अजक = कष्ट। जक = आराम। सुख सैन = सुख-शयन
फिरि = पुनः।
२३७—चटपटी = व्यग्रता, व्याकुलता।

मन पर-बस परि गयौ बिचारो, जैसे कोऊ अनाथ
'नागरिया' कहतैं न बनैं कछु, कठिन हिलग की गाथ ॥ २३८ ॥

१४–तिताल

जालिम यार हो ऐसी किन बदी
इस्क लगाय खबर नहिं लीती, अब करदे मुटमरदी
अपनें सुख स्वारथ दे लाभी, न जानैं और क दरदी
'नागरीदास' मोहनां प्यारे, भले कढ़े बेदरदी ॥ २३९ ॥

१५–तिताल

नैंनां योही लगे री, आछे नीके जियरा कौ पर्यो री जजाल
काहे कौ गई आज पनियाँ हौं, हसि चितवत नँदलाल
बिन जानें भई भेंट अचानक, लिखी टरत नहिं भाल
'नागरिया' मेरे दृगनि कौ अब सब सुख की हटताल ॥ २४० ॥

२८. गति

या अनुक्रम की अलापचारी में दैनैं ए दोहा
अँधियारी घूँघट लियैं, नव जोबन छक पूर
गज-गौनी चलि कै करत, गज-गरूर कौं चूर ॥१॥
अति गति रूप सकौं न कहि, मन अदाइनि गौंन
पीठ कटाछिन सौं गिरैं, दीठ सँहारै कौ न ॥ २ ॥

---

(२३९) स्वारथ दे=स्वारथ के ।

(२४०) जियरा कौ=जियरा क्यों (हस्त) । पनियाँ हौं=पनियाँ हू ।
हटताल=हठ ताल (हस्त मु) ।

(दोहा २ सम्हारै=सहारै (मु), सँहारै (हस्त) ।

२३८—हिलग=लगन स्नेह । गाथ=गाथा, कथा ।

२३९—जालिम=जुल्म करनेवाला, निर्दय । यार=प्रिय, जार । किन=(१ किसने, (२) क्यों ।
बदी=(१) भाग्य मे लिख दिया, (२) बुराई । लीती=लिया । करदे=
करते है । मुटमरदी=धींगा धींगी । दे=के । और क=अन्य का । दरदी=
दर्द, दुःख पीड़ा । कढे=निकले । बेदरदी=निर्दय ।

२४०—आछे नीके=अच्छे, भले, नीरोग, चंगे । हटताल=हड़ताल ।

ललन रिझाए चलनि मैं, कल न परत दिन रैंन।
गति कउतक लागे फिरैं, पाइन कै सँग नैंन ॥ ३ ॥

लावनि ढिग चमकत, जरी पायजेब पन्नानि
बसी पीय कै हीय, पग ठुमकि धरनि की बांनि ॥ ४ ॥
जहँ जहँ पग प्यारी धरत, तहँ पिय नैंन बिछात
'नागरिया' सुधि स्याम की, चलन देखि चलि जात ॥ ५ ॥

१—पद, राग ईमन, ताल चपक

ठुमकि पग धरति री धरनि पर, चलति प्रीतम मन हरति
अति ही लजीली, लाड़ गरबीली, ताहि देखि सौ दहि मरति
रूप रासि वृषभान नंदनी, मौंहन-दृग-मग डगहिं भरति
'चतुर' बिहारी बिहारनि मोहे गति कौनिग ही,
चितवनि हसनि क्यों कहि परति ॥ २४१ ॥

२—ताल चौताल

आली मनमोंहन तैं मोहे री, वाके नैंननि तै चलत न तेरी ये चलनि
मंद मंद हसि पग धरनि रही है पगि, हालि हालि उठैं नट कुण्डल हलनि
हौ हौं आई तेरे गति कौतिग कै हित प्यारी, छाड़ि ऐंड़, दै री पैंड़ गलनि-गलनि
'नागरीदास' लाल तलप रचन छाड़े, सघन निकुञ्ज मांझ कवल-दलनि ॥२४२॥

३—चौताल

तलप रचन जौ लौ हरि आंन पहुप लैंन गए,
तौ लौ स्यांमा जू कौं ललिता लै आई
जब हरि नहीं देखे, सकुच भई आयें की,
चकित चहूँ दिस, मिसि ही उलट्यौ चाहत जब.
जांन्यौं मन मान्यौं मुरली तबैं पाई
जब पिय आवत देखे, कुंज ओट ठाढ़ी भई
अधर भरि मधुर मधुर तांननि गाई
'सूरदास मदनमोहन' संभ्रम ह्वै चितै रहे,
यह को हैं जिन मेरी बंसी बजाई ॥ २४३ ॥

४—चौताल

बजावत मुरली रग हो गुननिधि नव नागरि वर।

---

(२४२) रचत छाँडे=रचत।

सुनत श्रवन मन नैंन प्रान करि, एक ठौर व्रजराज कुँवर
रूप निहारत, सरवसु वारत, बंक बिलोकनि मंद हसनि पर
रीझि रीझि कर पल्लव चटकत, नटकत पिय 'मुरलीधर' ॥२४४॥

५. चौताल

नवल नारि नवल नागर सो, थोरैं थोरैं रस बहुत भयौ
देखे तैं देखि रहैं, बातैं कहैं बातैं करैं, हसि हसि हसि हाथैं हाथ दयौ
तन तन सौं मिलि, मन मन सौं मिले, अनमिलिबे कौं मत सबै गयौ
'धोंधी' के प्रभु प्यारी रिझई, अरु प्यारी प्यारौ रिझयौ ॥२४५॥

६. ताल चपक

अहो नेंकु पल लागन दै, सिगरी रैंनि जगाई
अनि की आतुरता छाड़ि मनमोहन, लेत हैं बहुत खिझाई
अति सुकुँवारि, कवल हू तैं कोमल, अंग अंग अरसाई
हा हा पाइ लगो जिन बोलौ, 'मदन मोहन' सुखदाई ॥२४६॥

७. चौताल

सोए दोऊ सुख सेज रगमगे, स्यांमा स्यांम परम सुखदाई
नेह बिबस खुलि नींद, घरी घरी चौंकि परत, भुज भरत कन्हाई
मुँदि मुँदि खुलत, महा छबि पावत, दंपति अँखियाँ अति अलसाई
'नागरीदास' रैंनि यो बितई, नहिं बितई छबि हिय मैं छाई ॥२४७॥

८. इकताल

बृंदावन सरद रैंन राका अभिरांम
रची है रुचिर रसिक केलि, राधा सँग भाम
बैन, बीन, बलय मिले किंकिनी मृदंग
नूपुरादि गान घोष, छियो है सुधग
अंस अंस बाहु बँध्यौ, मंडल अखंड
गोपिन बिच बिच गुपाल, धरैं सिख सिखंड
निर्त होत, अंचल चल, लसत पहुप रैंन
ज्यौं धुजा समूह फरहरात मैंन सैंन

---

(२४४) रंग = रग (हस्त)। पल्लव = पलव (हस्त)।
२४६ ... मनोद। २४७ नहिं बितई = दूर नहीं हुई।

मनहु पवन प्रेरक मिलि गउर स्यांम संग
मेघ चन्द्र चंचला बिलास रास रंग
बास बस अधीर संग संग भौंर भीर
झुलत हार, खुलत बार, नहिं सम्हार चीर
गिरत कुसुम कबरिनि तैं बिबस रसावेस
लटपटाय लगत कंठ, पुलक तन सुदेस
नीबी कुच परस पांन चुंबन उगार
हाव भाव लहर बढ्यौ सिंधु रस अपार
मुरछ पर्यौ मदन, बजी दुंदुभी अकास
पहौप वृष्टि हौन लगी, जहँ बिलास रास
बिथकत लखि रही रैंन, होत है न भोर
'नागर' नट भयौ निरखि चंद्रमा चकोर ॥२४८॥

९. तिताल

थेई तथे ई थेई थेई थेई थेई थेई थेई
उघटत लाल रसिक मन मोहन, रंग भरी निर्तत हैं प्यारी
मुरज मृदंग टकोर मिलावत, गावत सखी सुघर दै तारी
ललित अंग भुव भंग चितै, पिय बिबस भए बोलत बलिहारी
जगमग रही रास मंडल मैं 'नागरिया' मुख चंद उजारी ॥२४९॥

१०. राग कांनरा का ख्याल, तिताल

राधा प्यारी तैं साँवरे कौ मन हर्यौ
तेरैं ही रस लीन रहत नित, ज्यौं जल मीन पर्यौ
मदन-मोहन पर तैं जु मोहनी, मोहन मंत्र कर्यौ
इत उत चितवतहिं चलत, 'नागरी' रूप-जाल जकर्यौ ॥२५०॥

११. तिताल

ए हो प्यारे नंदलाल रसिया
कौंन बाल उर बसी है तिहारैं, तुम जु कौंन उर बसिया
इती रैंनि बितई जु कहाँ पिय, प्यारी बाहु जुग कसिया
मोहि भले लगत इते पैं 'नागर', अंग अंग रसमसिया ॥२५१॥

(२४८-२४९) देखिए उत्सव माला, पद ७३, ७४।
(२४८) रची है = रचिहै। फरहरात = फहरात।
(२५०) चितवतहिं = चितव नहिं (हस्त), चित नहि (मु)
२५१. कसिया = कस लिया, जकड़ लिया। रसमसिया = रस-रंग मे भीगे हुए।

१२. तिताल

माई इन अँखियनि लगन लगाई
पहिलैं आप जाइकैं उरझी, फिरि मोकौं उरझाई
बिन देखैं मुख-कवल कान्ह कैं, अब नहिं परत रहाई
'नागरीदास' आगि रुई बिच, कैसैं दबै दबाई ॥२५२॥

१३. तिताल

साँवरे मोहि तेरी सौं रे
बिन देखैं छिन कल न परत है, नैंननि हाथ बिकांनी हौं रे
ठगत फिरत गोरी भोरिनि कौं, कछु हसि चितै चितै यौं यौं रे
'नागरिया' अपनैं बस करिकैं, बहुरि चलत तू अपनी गौं रे ॥२५३॥

१४. तिताल

प्यारे के बिन देखैं कल न परैं
अतन दहत तन मन सुनि सजनी, छिनु छिनु प्रति पजरैं
नैंननि जल उर परत निरन्तर, तउ तहँ बुझि न टरैं
'मुरलीधर' उत पिय अनलेखैं, इत कबहुँ न बिसरैं ॥२५४॥

१५. तिताल

ए री नैंना अटके, हटक न मानैं
घूँघट ओट, लाज गुरजन की, तनक नहीं जिय आनैं
जबही दृष्टि परत मोहन-मुख, इकटक ह्वै उररांनैं
'नागरीदास' प्रीति अतर की, रहन देत नहिं छांनैं ॥२५५॥

१६. तिताल

जांन दै री जान दै, ऐसे कपटी सों को बोलै
अति ही धीट, लँगरायो देत है, उझकत झाँकत डोलै

---

(२५३) चितै चितै=चितै। (२५५) नैंना=नैंन (हस्त)। इक टक कै=इक टक ह्वै।
(२५६) ऐसे=ऐसी (हस्त)।
२५३. गौं=दाँव, अवसर, गरज।
२५४. अतन=अनंग, कामदेव। पजरैं=प्रज्वलित करता है। बुझि=बुझकर, जलाना बंद कर। अनलेखैं=कुछ नहीं समझते हैं; तुच्छ समझते हैं।
२५५. उररांनैं=उमडे पड़ते हैं। छांनैं=प्रच्छन्न, छिपा हुआ।

इनकी रीति निहारि, नारि कोउ कैसैं कै मन खोलै
'कृष्ण जीवन लछिराम' छछंदी, झूठी बातनि गढ़ि गढ़ि छोलै ॥२५६॥

१७. ताल चपक

ए री कान्ह तैं जु कहा करि जांन्यौ, तरकि तरकि उत्तर देत उतावरी
घोषराज श्री नन्द-सुवन सौं, झुकि झुकि झझकत है तू बावरी
कोटि काम-बिजई मनमोहन, ताकी तूँ बलि जाव री
'नागरिया' अनखांवनि कौ छिन छाड़िहु छाड़ि सुभाव री ॥२५७॥

(१८)

कन्हैया तुम राधे जू कैं आवत हौ निकट-निकट चले,
ऐसे कब तैं भए हो धीठ
या बन घन बिच रोकि रहत नित,
अँगुरि गहत फिरि गहत हो पहुँचा
चलि न देत मग नींठ
ऊपर रिस अंतर रस पूरत, मुख झूठी बातैं, जुरे नैंन बसीठ
'नागरीदास' हिलि मिलि दोऊ एक भए,
रहे हैं कुञ्जनि, निस रच्यौ अति रंग मजीठ ॥२५८॥

१९. इकताल

दुरत नहीं पट ओट आँखैं कनावड़ी
मोहन तन दै रही पीठ यह, ईठ पंग पग पाँवड़ी

---

(२५७) उत्तर = उतर (हस्त)। झझकत = झपकत। छाडिहु = छाड़ि।
(२५८) कब तैं भए हो धीठ = कब तैं धीठ (हस्त)।
(२५९) आँखैं कनावड़ी = कनावडी (हस्त)। पंग पग = पंग पंग (हस्त)। उमड़ि न = उमडिनि (हस्त, सु)।

२५६. लँगरायो देत है = नटखटी करता है। मन खोलना = रहस्य प्रकट करना। बातें छोलना = बहुत बढ बढ़ के बातें करना।

२५७. कहा करि जान्यो = क्या समझ रखा है। तरकि तरकि = तडक तड़क कर; जोर जोर से, गुस्से में। झझकत - जजफ़त; गुर्राती है।

२५८. नीठ = जरा भी; कठिन। बसीठ = दूत। रंग मजीठ = मंजिष्ठा राग; परिपक्व प्रेम।

झुकी लाज कैं भार परत हैं, उमड़ि न नेह अमांवड़ी
सब दिसि सूधैं चलत 'नागरी', उहि दिसि आँवड़ी बाँवड़ी ॥२५९॥

२९. चितवन की चोट*

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैंनै ए दोहा
आवत राधे सखिन मैं, निरखि रसिक सिरमौर
परन लगी डग डगमगत, गति बदली कछु और ॥१॥
झमकि मिले दृग दहुँनि के, रुके न झीनैं चीर
हलकी फौज हरौल की, परत गोल पर भीर ॥२॥
तिय लखि मग मौहन रही, गौहन परैं न पाव
दुहूँ ओर सुरझै नहीं, नैंननि कौ उरझाव ॥३॥
सिंघ-पौरि ठाढ़े कुँवर, नैंननि सर बरसात
उही बाट आवत जोई, खाट धरी घर जात ॥४॥
इतैं उतैं इक टक रहे, फसे नेह कै पंक
नैंननि ही मैं मीत दोउ, अकनि भरत निसंक ॥५॥

१. पद राग कांनरौ, ताल चपक

जुवती जूथ मे बनी आवत माई राधिका प्यारी
निकसीं सकल ब्रजराज भवन तैं,
आगैं सिंघ द्वार ठाढे ललन कुँवर गिरवरधारी
निरखि बदन, भौंहैं मोरि, तोरि तृंन,
औरै चाल औरैं चितवनि तिहिं छिन,
अवर सँवारि लियो है लाल मनुहारी
'गोबिंद' प्रभु दंपति रस मूरति, दृष्टि सौ भरत अँकवारी । २६०॥

---

* यह अनुक्रम मुद्रित प्रति में नहीं है ।

(२६०) ललन = ललना (हस्त) ।

२५९. कनावड़ी = लज्जित । तन = ओर । ईठ = इष्ट, प्रिय, अभीष्ट । पंग = पैर के सदोष होने से उत्पन्न चलने की असमता । पग पाँवड़ी = पैर की जूती । अमांवड़ी = अमाती है, समाती है । आँवड़ी = आती है । बाँवड़ी - चक्कर काटती हैं ।

दोहा २—हरौल = हरावल; सेना में सबसे आगे चलने वाली टुकडी । गोल = मंडली, दल । भीर = विपत्ति, आफत ।

२६०. मनुहारी = मनस्तोष, तृप्ति ।

२. इकताल

भरी भीर मैं मिली री नैंननि सौं,
दूरि जाय फिर चितई कनखियनि, कीने बिवस जु मार,
तबही तहाँ तैं लाई कुंज मांझ सखियाँ,
सु हाथ दियें कखियाँ, डगमग चरन सु मार
नाम सुनि राधे राधे, खोलत हैं नैंन आधे,
कहाँ तैं मंत्र साधे, मूर्छित नन्द कुँवार
'नागरी दास' सुनि तेरौ कृत, तेरैं कांन औरहू कहैंगी आनि,
बाढ़ी दृग-बांन-खुमार ।।२६१।।

३ इकताल

चितयौ चपल नैंन की कोर
मनमथ दुसह बांन अनियारे, निकसे फूटि हियैं दुहुँ ओर
अति बिह्वल ह्वै परे धरनि धुकि, तरल-तमाल पवन कें जोर
कहुँ लकुटी कहुँ मुरलि मनोहर, कहुँ पट पीत, चंद्रिका मोर
बचन न फुरत, नैंन नहिं उघरत, जैसैं कवल भयैं बिनु भोर
प्रेम-सलिल भीज्यौ पिय कौ उर, पौंछि निचोरत अंचल छोर
छिनु बूड़त छिनुही छिनु उछरत, प्रेम-समंद के परैं हिलोर
'सूर' मधुर मधु सींचि जिवावौ, जागैं मूर्च्छित नंदकिसोर ।।२६२।।

४. चौताल

आकुल भई सुनि पिय की पीर
नांहि सँभारत लोचन नीर
अस्त बिस्त करि भूषन चीर
पहरि चली जमुनां कै तीर
गुरु, कुल, लाज, सील मति धीर
प्रेम-कृपान करे चहुँ चीर
जाय मिली जब कुज कुटीर
तब 'वल्लभ' मन भए सुथीर ।।२६३।।

---

२६१. कनखियनि = आँखों के कोनों से। मार = कामदेव, अनंग। कखियाँ = काँख में, बगल; बाहुमूल के नीचे का गड्ढा। खुमार = नशा।

२६३ चहुँ = चारों (गुरु, कुल, लाज, सील)। चीर = चीर फाड़कर।

५. चौताल

कुंज मैं मूर्च्छित स्याम जगाए
अलक-माल सुरझावत पौंछत, नैंननि नैंन खगाए
'नागरिया' चितए बड भागनि, इहिं रस प्रान पगाए
आतुर आय पियाय अधर मधु, भुज भरि कंठ लगाए ॥२६४॥

६. इकताल

राधिका आनद रूप, पिय कौ आनन्द दीनौ
रची है अति आनन्द कलि, वाहु जुगनि झेलि मेलि,
उर सौं उर, आनन्द भीनौं
आनन्द सखी श्रवन नैंन, आनन्द निकुंज ऐन,
मिलि कै आनन्द घन सौं दामिन आनन्द कीनौं
पूरनानन्द बढ्यौ, जात नहीं मुख तैं कढ्यौ,
'नागरिया दासि' भए आनन्द रस लीनौं ॥२६५॥

७. ताल

कीनौ कुसुम सज्या सैंन
गउर स्यांम सरीर मिलि रहे महा छवि के ऐन
खुली अलकैं, मुदी पलकैं, बदन ललकैं चैंन
'दास नागर' निकट चरननि, कहै कहांनी मैंन ॥२६६॥

८. तिताल

आज सखी देखि री देखि नैननि भरि
कैसी लगत है जगमगाय रही रात
हीरन खचित कनक कुरसी पर, लसी हैं कुँवरि राधे,
जरतारी फैंटा बाँधे, सिर कॅलगी, छवि सरसात
रहि नीरी ललिता, बीरी दै बात करत, प्यारी मुसकात
'नागर' स्याम सखी निर्तत आगैं, गांन घुमडि रह्यौ,
कउतक कुंज सुहात ॥२६७॥

---

(२६६) महा = मह्या हस्त) ।
२६४. खगाए = धँसाए । पगाए = प्रेम मे परिपूर्ण कर दिया, पाग दिया, सराबोर कर दिया ।
२६५ ऐन = अयन, घर । २६६. कहानी मैंन = मदन-कथा ।

९. ताल चपक

जुन्हैया आय रही है दुहुन पर, अब दुति निरखि अमंद
इत ऐहै परछाहि द्रुमनि की फिरि उत जैहै ढरि चंद
मंद मंद कल गान करत सुनि, छके मदन आनंद
'नागरि नागर' बसे कुज निसि, लसे सेज मै, कसे जुगल भुज फंद ।।२६८।।

१० तिताल

प्यारी राधे जू अहा कहा छबि पावत, गावत चंद के सौहैं किए मुख
सिर जूरा, ढिग फब्यो है तॅंबूरा, कर मुॅंदरी चूरा चमकत,
चमकत चौका, पांन रग मुख
प्रीतम भॅंवर निवारत नियरै, पियरे पट छबि छोर गहे कर,
दृग चकोर अरुझे हैं ससि मुख
'नागर' ह्वै रहे रूपमई मुख ।।२६९।।

११. राग नायकी का ख्याल, तिताल

आज मोहन मिले री मग महियॉं
ए री तरु निकर सघन परछहियॉं
सुघर सलौनैं पिय नंद दुलारे, हसि लीनी गहि बहियॉं
परिगई पर बस, बस न चल्यो कछु, भली बुरी सब सहियॉं
'नागरिया' कीनी मनमानी, हौं करत रही नहियॉं नहियॉं ।२७०।।

१२. तिताल

अरी हूॅं लई लगाय लालन उर, देखि देखि ललचाय
दिन अरु रैन चैन नहिं अब मोहि, बिन मिलैं रह्यौ न जाय
जिहिं तिहि भॉंति मिलाय मोहन कौं, तिहारी लैहॅुं बलाय
'नागरिया' दुख देत सुपन मैं, बैरी उर लपटाय ।।२७१।।

(१३)

जैसै हौ मोहन तुम चातुर, ऐसी न मिली कोऊ तुम्हैं नारि
यह महरेटी, लाज लपेटी, कोऊ छछंदनि गोप-कुॅंवारि
नैन-बैंन तुम आढ़त, परतन काहु के फंद
जदपि चकोरी ए सब गोरी, आप प्रकासी चंद

(२६९) निवारत नियरैं = तनि घरैं (हस्त)।
२६९. चुरा = हाथ में पहना जानेवाला एक आभूषण। चौका = आगे के चार दॉंत।

रीझि भीजि करि दया छबीले, तरफत हैं वृज बाल
'राजसिंघ' कौ स्वामी नगधर, कहियत है प्रतिपाल ।।२७२।।

१४. तिताल

ए अँखियाँ प्यारे जुलम करैं
यह महरेटी, लाज लपेटी, झुकि झुकि घूमैं, भूमि परैं
नगधर प्यारे, होहु न न्यारे, हा हा तोसौं कोटि रैं
'राजसिंघ' कौ स्वामी श्री नगधर, तो बिन देखैं दिन कठिन भरैं ।।२७३।।

(१५)

आधी रात उजियारी, गावत रँगीली चढी अपनी अटारी
सुनतहि तान, गयौ चैंन सुख; भींनीं रैंन, सोवत ही चौकि परे चतुर बिहारी
तुटि फूल माल गयौ, गिरि उपरैना आली,
लीनौ बैर बाँसुरी कौ, त्रिबस किये हैं प्यारी
'नागरीदास' वृज मोहनी सी पूरि रही,
सुनि जिहिं तिहिं तन सुधि लै बिसारी ।।२७४।।

१६. तिताल

पनघट ठाढ़ौ कोऊ साँवरो सलोना ढोटा,
दीनौं री उठाय घट बिनही कहे तें बैंन
हौं तो देखि बदन बिमोहित ठगी सी रही,
गागरि कैं नीचैं ह्वै रह्यौ री मिलाप नैंन
और बात कहा कहौं, कहत सकुच आवै,
दई हसि होठनि सौं निलज नई सी सैन
ताही छिनहू तैं भई और दसा मेरी आली,
'नागरीदास' ग्रह नींद न परत रैंन ।।२७५।।

---

(२७३) तो बिन=ता बिन (हस्त) । (२७५) नैंन=रैंन (हस्त) ।

२७२. महरेटी=महर की बेटी । कहियत है प्रतिपाल=कहता हूँ कि प्रतिपालन करिए ।

२७३ रैं=रटती है, निवेदन करती है । दिन कठिन भरैं=दिन कठिनाई से बीतते है ।

२७५. बैंन=बचन, बात । सैंन=इशारा । दई हसि॰=अधरों से चूम लेने का उस निर्लज्ज ने इशारा किया ।

१७. ताल चपक

हेली हूँ तौ रीझि रही री, देखि कौतिग कुंज नयो हैं
मोहन सरूप रच्यौ कुँवरि किसोरी,
उर बनमाल सोहै, सीस मुकट दयो हैं
बनिता समूह बीच बाँसुरी अधर धरैं,
गवर तृभंगी अंग छबिहि सौं छयो हैं
'नागर' बने हैं प्यारी, पहरि सुरंग सारी
ठाढ़े बांम अंग नीरैं, री रंग भयो हैं ॥२७६॥

१८. चौताल

आज प्यारी ह्वै रही है पिय, पिय भए हैं प्रांन प्यारी
मनु कीट भृंग, त्यौं ही पलटे हैं बेस अंग, लागत परम मनुहारी
नेम सौं न रह्यौ काज, प्रेम कौ भयौ है राज
रचि केलि कुंज ताकी उपमां बिचारी
मांनहु कालिंदी धार ऊपर उदित चंद, ऐसैं नागर नागरि प्यारी ॥२७७॥

१९ तिताल

सौंधैं सगबगी रगमगी सेज सुख
कैसी फबी हैं फैलि आंनन पैं अलकैं
नीके मुख चंद मैं अमी के मनु श्रम-कन
फीके भए अधर, रँगी हैं पांन पलकैं
अँखियाँ झुकौहीं ह्वै लजौहीं तिरछौहीं दीठ,
चितवत स्याम-तन अति छबि छलकैं
हियरे आनंद भीने, नियरे 'नागर' तहाँ,
पवन डुरावैं पिय पियरे अँचल कैं ॥२७८॥

---

२७६. कौतिग = कौतुक। गवर = गौर। नीरैं = निकट ही।

२७७ मनुहारी = तृप्ति, मनस्तोष। कीट भृंग = बिलनी नामक कीड़ा, जो अन्य कीडों को भी बिलनी बना लेता है।

२७८ सगबगी = सिक्त, सराबोर। रगमगी = रंग (प्रेम) में मग्न।

३०. लालची लोचन

या अनुक्रम की अलापचारी में दैनें ए दोहा

नख सिख रूप भरे खरे, तउ माँगत मुसक्यानि
तजत न लोचन लालची, ए ललचौंहीं आंनि ॥१॥

पहुँचति दटि रन सुभट लौं, रोकि सकैं सब नाहिं
लाखनिहू की भीर मैं, आँखि उहीं चलि जाहिं ॥२॥

लाज लगाम न मानहीं, नैनां मो बस नाहिं
ए मुहजोर तुरग लौं, ऐंचतहू चलि जाहिं ॥३॥

जस अपजस देखत नहीं, देखत साँवल गात
कहा करूँ लालच भरे, चपल नैन चलि जात ॥४॥

लगे रूप के लोभ सौं, रोके नैंक रुकैं न
कहा कहूँ इनकी दसा, महा लालची नैंन ॥५॥

रूप रासि धन पावहीं, छिनक न तऊ अघानि
'नागरिया' दृग लालची, तजत न लालच आनि ॥६॥

१. पद राग नाइकी, ताल चपक।

मेरे लोचन लालची भए
सारँग-रिपु के रहत न रोके, हरि सरूप गिधए
काजल कुलफ दियै हूँ राखौं, पलक कपाट दए
बरजि रही, बरज्यौ नहिं मांन्यौ; बहुरि स्याम पै गए
छके रहत हैं रूप रस माते, नँद नंदन रिझए
'सूरदास' प्रभु तिहारे दरस ये, बिन गथ मोल लए ॥२७६॥

२. चौताल

ए नैन कैसैं बरज्यौ मानै, जे उरझे नदलाल सौं
लोक लाज कुल कानि तजी है, पचि हारी ब्रजबाल सौं

(दोहा १-६) मुद्रित प्रति में केवल दोहा ५, ६ है। दोहा १, २, ३, ४ बिहारी के हैं। देखिए बिहारी रत्नाकर १४८, १७७, ६१०, १५७। इसीसे छोड़ दिए गए हैं।

२७६. सारँग-रिपु = गिधए = बहुत बुरी तरह से ललच गए है। कुलफ = कुफ्ल, ताला। गथ = पूंजी।

दरस परस रूप लालच लपटांने, अरुझि रहे स्यांम तरुन तमाल सौं
'कृष्ण जीवनि लछीराम' प्रभु, रीझि भीजि रहे रसिक रसाल सौं ।।२८०।।

३. तालचपक

अहो नैन मेरे रूप मदिरा पियैं
इक टक ओक रहत है लायैं, परत नाहिं छिन चैन लियैं
नँद-नंदन-रस छके रैंनि दिन, और तनक छबि नाहिं छियैं
'नागरीदास' महा मतवारे, होय कहा तिन्है अटक कियैं ।।२८१।।

४ ताल चपक

जौ तू अग दुराय चले सँग मेरैं
मुख मौंनि ब्रत लै, अधर ओट करि, दसन दामिनी प्रगटत तेरैं
तजि नूपुर-धुनि छुद्र-घटिका-नाद, सुनत खग मृग घेरैं
'चतुरभुज दास' स्वामिनी सिगर चलि, अब गिरधरन निपट नेरैं ।।२८२।।

५. तिताल

नवल निकुंज कान्ह रचित है सज्या इत,
उत कौं रहे री लगि सुरति श्रवन नैन
नूपुर की झांई सुनि बन के चकोर मोर,
कुहकि कुहकि सब लागे है बधाई दैन
स्यांम चले सौहैं, स्यामा लई है भुजनि भरि,
टरत न नैंन नैंन, अधर अधर लैंन
आनँद अपार केलि कोक की कलानि बढ़ी,
'नागरीदास' मोपैं कही न परत बैंन ।।२८३।।

६. ताल चौताल

बार सिवार मे माझ चंद मुख, हारन बीच बद है छूटे
लटपटाय दोउ रहे लपटि कैं, अस्त बिस्त पट भूषन खूटे
पौढ़े स्यामा स्यांम अमित सुख, बलय खड बिखरे कहुँ फूटे
'नागरिया' एकांत बिपुन मै, निस बटपार मदन लरि लूटे ।।२८४।।

---

२८०. ओक = अंजुरी । छियैं = छूते हैं । अटक = रोक ।
२८२. सिगर = शीघ्र ।
२८४. खूटे = खुले ।

३१. दुलही

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा
देह दुलहिया की बढ़ै, ज्यौं ज्यौ जोबन-जोति
त्यौ त्यौं लखि सौतैं सबै, बदन मलिन दुति होति ॥१॥
वाहि लखै लोइनि लगै, कौन जुवति की जोति
जाके तन की छाँह ढिग, जोन्ह छांह सी होति ॥२॥
अंग अग नग जगमगति, दीप सिखा सी देह
दिया बढ़ायै हूँ रहै, बड़ो उजेरो गेह ॥३॥
नैंन-भॅवर भय-भार तैं, वैठि न सकत निसक
नवत दीठि कै लगत ही, लौंग लता सी लंक ॥४॥
दुरै दुरायैं क्यौ कुँवरि, भौन अँध्यारै साँझ
दिपै अग फानूस ज्यौं, संग सखिन के माझ ॥५॥
हौ रीझी, लखि रीझिहौ, छबिहि छबीले लाल
सौनजुही सी होत दुति, मिलत मालती माल ॥६॥
नख सिख लौ अति सोहनी, नाहिंन कछु सम तूल
रूप-लता लागे, मनौ मुसकनि-चितवनि-फूल ॥७॥
'नागरिया' लखि थकित दृग, मति वरनत भइ पंग
छबि उलहनि जात न कही, नव दुलहिन कै अंग ॥८॥

१. पद, राग नइकी, ताल चपक

प्यारी हूँ तौ रीझि आई आज, देखी मै एक दुलही
कनक सी वेलि, कर कवल लियैं ठाढ़ी, ऑखियॉ चपल भईं, छतियाँ उलही
लाख कहूँ तऊ कहत न बनि आवै, सॉची कहूँ, कोऊ नहीं तुलही
'कृष्ण जीवन लछीराम' के प्रभु प्यारे, वह छबि मै जिय मै जु लही ॥२८५॥

(दोहा १, २, ३, ६)— ये दोहे बिहारी के होने से मुद्रित प्रति में नहीं स्वीकृत है। देखिए बिहारी रत्नाकर ४०, १०६, ९ ८।
(४) निसंक = निसांक। लंक = लांक।
(८) दुलहनि = दुलहिन (हस्त)
दोहा— २. लोइनि = आँखों में। ३ बढना = दीप बुझाना।
४. नवत = झुक जाती है। ५ उलहना = उमड़ना।
२८५ तुलही = समानता मे नहीं ठहरता। लही = पाई।

२. चौताल

मो मन कुँवरि देखिबे की लागि रही अति ढोरी
बहु छंद बंद करि ल्यावरी किसो री, अँखियाँ रहत नहिं बौरी
ल्याई बहौ दांइनि लिवाइ अली गली गली
धरकत तिय उर, लोक लाज भोरी
'नागरीदास' राधा मोहन चकित दोऊ, परी है रूप ठगौरी ।।२८६।।

३. ताल चपक

अरी यह गली तू मोहिं कित ल्याई
जोई जिय डरपति, सोई भई मेरी आली,
आगैं मोहन ठाढ़ौ, अब कित जैबो मेरी माइ
रसनां दसन दाबि, कर सौं कर मींड़ति
दूती सौं खिजत, आनँद उर न समाई
'गोविंद' प्रभु की तिहारी हिली मिली बातें हूँ नीकैं जानत,
भली कीनी भले नग सौं भेंट कराई ।।२८७।।

४ ताल चपक

प्यारे हसि भेटी दुलही
किहिं विधि छूटै मधुप-पीय सौं, तिय-लता फूल-उलही
बदन दुरावत घूँघट पट मै, झलकत छबि अँखियाँ जु लही
'नागरिया' मोहन मुख खोलत, सुन्दरता तुलही ।।२८८।।

५. इकताल

आजु रंग है निहोरनां पैं, छहरि छहरि उठैं लहरि नेह
प्रथम मिलन प्यारी-मुख-घूँघट पिय खोलत, निज कँपै देह
झीनें चीर, झुकौं ही अँखियाँ, सकुच भरी, सुख स्यांम गेह
ताहि निरखि इक टक मनमोहन, 'नागरीदास' बलैया लेह ।।२८९।।

---

(२८६) बौरी = बोरी (हस्त, मु) । तिय उर = उर ।
(२८८) छबि अँखियाँ = अँखियाँ छबि ।
२८६. ढोरी = रट, धुन । दांइनि = उपायों से ।
२८७. रसनां = जिह्वा । मींड़त – मलती है । हूँ = मैं ।
२८८. फूल = (१) पुष्प, (२) प्रसन्नता ।
२८९. निहोरना = निहुरना, झुकना । छहरना = बिखरना । लेह = लेते हैं ।

६. इकताल

आजु सुख रैंन बिहाई
घूंघट खोलनि, काम कलोलनि, रसि गई निसा तिहाई
सुरत-रंग-रस-बस अलसौं हीं, मुदति खुलति अँखियाँ रिझहाई
स्यांमा स्यांम मिलाय सुवाय सेज, 'नागरि' सखी सिहाई । २९०॥

७. राग अड़ानौ

अपनी अटारी पर प्यारी छूटे बार ठाढ़ी,
बास बस भूले भौंर भ्रमत है कोर कोर
मोहन चकोर रहे देखि मुख चंद ओर,
चंदमुखी राधा झुकी देखत चकोर ओर
उत पीत पट गिरि, ढुरि गई बनमाल,
इत नील पट उर उड़त न जानें छोर
'नागरिया नागर' निहारें रस रूप माते,
सैननि तें हा हा करि, डारें तृन तोर तोर ॥२९१॥

(८)

सीतल सुगंध पौंन मन कौं हरन लाग्यौ,
चंद्रमा ढरन लाग्यौ, सूचत बिहान कौं
रही रैनि थोरी, रंग-बोरी कौं न नींद परी,
उठी अकुलाय कैं, रिझावन सुजान कौं
चातुर परम प्रीत आतुर चित नागरी,
सु जाके कंठ दीजै कहा कोकिला समांन कौं
आय गै अटारी पर, छाय गै सुगंध तब,
गाय गई ताननि, रिझाइ गई प्रान कौं ॥२९२॥

---

(२९१) चंद मुखी राधा झुकी = चंद मुखी राधा (हस्त) ढुरि गई = गई । निहारें = बिहारें (हस्त)।

(२९२ आय गै - आयगी (हस्त । छाय गै छायगी (हस्त) । तब गाय गई = बगराय गई ।

२९०. बिहाई = बीती ; रसि गई = समाप्त हो गई । सिहाई = प्रशंसा करती है ।

२९१. बास-बस = सुगंध के कारण; सौरभ के वशीभूत होकर । कोर कोर = कोटि कोटि; करोड़ों । ढुरि गई = ढुलक गई । छोर = किनारा । सैननि = इशारे से ।

२९२. बिहान = प्रभात । रंग बोरी = प्रेम में डूबी हुई ।

९. चौताल

आजु राधे जू मोहन संग रंग भरी गावैं
सुनि ताननि की झाइं कहा कांननि कौ आवैं
आधी रात चनक मूंदि, बिमल चंद्र चंद्रिका मैं,
ह्वै रही थकित कुज कोकिला लजावैं
तैसियैं मृदंग की टकोर ह्वै सुधग रंग,
देवी जू के हाथ की, सो श्रवन सुहावैं
'नागरिया नागर' के जील की तरंगनि सौं,
रंग भरे बृंदावन मोर कुहकावैं ॥२६३॥

१० इकताल

नवल निकुंज अटारी पर, बृंदावन की सोभा दोऊ गावत
निस उँजियारी, कहा दूर तैं राग अड़ाने की धुनि आवत
सुनत गांन विथकित द्रुम-बेली, पवन पात डुलावत
पिय 'नागर' हू तैं प्यारी की तान, रंग सरसावत ॥२६४॥

११ इकताल

नद नंदन चंद्रमा, बल्लव कुल कुमुद वृंद
जलद सघन कुंज चारी, श्रवत सुधा वेणु गान,
त्रिपुन विपुन प्रति प्रकास, अनुपम छबि दुति अमंद
अद्भुत स्वयं रूप दिव्य, बिमल जोन्ह मध्य प्रवृत,
रास केलि कला कोबिद आनद कंद
'नागर' व्रजपति कुमार, पश्यत मुख संबरारि
विस्मय जुत नम्र ग्रीव चरन कमल बंद बंद ॥२६५॥

---

(२६३) सुधंग = सुगंधग (हस्त)।
(२६४) तांन रंग = तांन तरंग (हस्त)।
(२६५) कुंज चारी = कुंज चारु। नम्र ग्रीव = म ग्रीव (हस्त)। यह पद उत्सवमाला ८८ पर पहले आ चुका है।

२६३. झाँई=प्रतिध्वनि, भनक, झनक। चनक=आँखों के तारे। जील=संगीत की तरंग।
२६४. अड़ाना = एक राग।
२६५. संबरारि = कामदेव।

(१२)

अरो यह कौन है ठगवार ठाढ़ौ आगैं, तापैं तू मोहि लै आई
कहा कहौ मेरी या मति कौ, तेरे कहैं बौराई
उलटि जाहुँगी घर अपनैं वीर, हौं इन बातन धाई
'नागरिया' यह चौथि चंद की भली कला दरसाई ॥२९६॥

१३. राग अडाना का ख्याल, तिताल

अँखियाँ मेरी भईं साँवरे रूप की चेरी
इक टक दरस टहल मैं हटकी, तनक न होत अनेरी
पावत रीझ अधिक मनमानी, मृदु मुसकनि-धन ढेरी
'नागरी' लगी आप लोभ बस, मनहू की गति फेरी ॥२९७॥

१४. तिताल

मेरौ मन आप बस करि लीनौं स्यांम सलौना
देखि बदन मन गयौ हाथ वाकैं, हसि चितवनि मैंटौंना
सुन्दर पिय मन मौहन सौहन, अँग अँग रूप रिझौंना
'नागरिया' कछु और न भावत, भावत नंद ढटौंना ॥२९८॥

१५. तिताल

रे कान्ह जब तब छबि निरखत ही, हूं तो बावरी भई
तनक लखैं जाकी जाय लाज छुटि, यह गति कठिन ठई
बनत न भवन काज मोपैं छिन, सुधि बुधि बिसरि गई
'नागरीदास' भई ये अँखियाँ, मोहन-रूप मई ॥२९९॥

१६. तिताल

हो लाल झूठी झूठी बातनि चित चेरौ
मन और, मुख और, कहत और की और,
डारत क्यौ मोपै तुम कपट नेह उरझेरौ

(२९६) इस पद के आगे मुद्रित प्रति और हस्तलिखित प्रति से साम्य नहीं रह जाता। यह साम्य अनुक्रम ५० में पद ४५३ से पुनः प्रारंभ हो जाता है। पर उसी अनुक्रम के साथ समाप्त भी हो जाता है। घाई = धाई (हस्त)।

२९६. घाई = अघा गई, तृप्त हो गई।

२९७ हटकी = रुकी। अनेरी = (अवनेरी;) दूर।

२९९. ठई = स्थित हुई; बनी; हो गई।

सीखे कहौ कहाँ ठग टौंना वैननि माझ घनेरौ
'नागरिया' सब जांनत हौं, तऊ रहत नाहिं मन मेरौ ॥३००॥

१७. चौताल

जल कौं गई सुघट नेह भरि लाई, परी है चटपटी दरस की
इत मोहन गांस, उत गु घर न त्रास,
चित्र पूतरी ज्यौं ठाढ़ी, नांव धरत सखी ये परस की
छुटयौ उर चीर. नैननि चलत नीर,
पनघट भई भीर, सुधि न करस की
'नंददास' प्रभु सौं ऐसी प्रीति गाढ़ी बाढ़ी
फैलि परी चरचा चाहनि सरस की ॥३०१॥

१८. इकताल

मेरी ईंडुरिया लै राखी औरहू कीनी लॅगरायौ स्यांम
गई हुती तैसौ फल पायौ, बहुरि न लैहुँ पनघट कौ नांम
डारि दई है धरनि मटुकिया, अरु तोरे मुक्ताहल दांम
'नागरीदास' हौन लागी बृज मैं ये अति गति, कित जैहैं बांम ॥३०२॥

१९. ताल चपक

तू मोहि कित ल्याई री या मग, जहाँ बसत ऐसे ठग
जा देखत तन मन बस ह्वै जात, भरि न सकत एकौ डग

---

(२९९) सुधि बुधि = सुधि विधि (हस्त)।

(३०१) सुघट = सुधि बिसराई (ब्रज रत्न ८०)। चटपटी = चटकपटी (हस्त)। इत = उत (हस्त)। उत = इत (हस्त)। पूतरी ज्यौं = लिखी (ब्रज रत्न, उमा०, पृष्ठ ४१५)। ए परस की = अरस की (ब्रज०)। छुटे उर चीर = टूटे हार, फाटेचीर (ब्रज, उमा०)। चलत = बहत (ब्रज, उमा)। भई भीर = भीर भई (हस्त)। करस = कलस (ब्रज, उमा)। ऐसी प्रीति गाढ़ी बाढ़ी = प्रीत बाढ़ (हस्त)। फैलि परी चरचा = फैलि परी (उमा, हस्त)। चाहनि = चायन (ब्रज, उमा)।

३००. चेरौ = दास बना लेते है। उरझेरौ = उलझन; जाल। ठगहौना = ठगहाई, ठगी, ठग-विद्या।

३०१. चटपटी = आतुरता, व्यग्रता, गांस = व्यंग वचन। नांव धरत = निंदा करती हैं; उपहास करती हैं। बदनाम करती हैं। पारस को = निकट का, अंतरंग। करस = कलश, घट, गगरी। चाहनि सरस की = रस पूर्ण दृष्टि की।

३०२. मुक्ताहल = मुक्ताफल, मोती। दांम = माला। अति गति = अत्याचार और दुर्गति।

बिन उद्यम जिन यह गति कीनी, जो कबहू कछु पढ़ि डारै नग
तौ तेरी मनभाई ह्वैहै, मोकौं कठिन जीवन जग ॥३०३॥

२० तिताल

तोसौं न बोलूँगी हौं नंद दुलारे
काहे कौं इतनी बात बनावत, काहे कौं करत हा हा रे
तोहि पियारी और, भावते हो औरनि के प्यारे
'नागर' मोहन सौंह तिहारी, जानत सब कला रे ॥३०४॥

२१. इकताल

मोहन मोहि लई बृज बाला
गई हुती जल भरन अकेली, सुंदर नैन बिसाला
'नागर' चली सीस लै गगरि, उत आए नंदलाला
थकित रही लखि बदन-माधुरी, भूलि गई गज चाला ॥३०५॥

२२. इकताल

कांन्ह अटा चढ़ि चंग उड़ावत, मैं इत आँगन तैं उत हेर्‍यौ
नैन भए बिब च्यार सु चॉयन, काम कटाछि भयौ भट भेरौ
ता छिन तैं हठि हार थकी, हौं फेरि रही न फिरै चित फेरो
'कृष्ण जीवन लछीराम' कौ प्रभु, उत खैंचत डोर किधौं मन मेरौ ॥३०६॥

३२. रूप बावरे

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा—
श्रवन लगायौ बैंन रव, दृगनि रूप सताप
बैर बढ़ायौ घरनि मैं, निठुर इते पै आप ॥१॥

लोक बावरे कहत सब, भई बावरी बाल
तियनि करी क्यौं बावरी, रूप बावरे लाल ॥२॥

---

(३०४) भावते हो = भावते (हस्त)।
(३०६) यह सवैया है।
३०३, नग = मंत्र, जादू।
३०६. चंग = पतंग। हेर्‍यौ = देखा। बिब = दो।
(दोहा) १. बैर = बदनामी।

या मुख की पटतर दैबे कूं, तिय त्रिभुवन मे को है
'नंददास' स्वामिनि चलि री तूं, मनमोहन मग जोहै ॥३१०॥

५. इकताल

चली है कुँवरि राधिका निकुंज-भवन रवन पास,
सजि सुवास मत्त भँवर सग संग संग
आय रसिकराय निकट लई है भुजन झेलि मेलि,
करत केलि, परसत सुख अंग अग अंग
जुरत नैंन तुटत हार, अंचर उर छुटत वार,
चलि कटाछि भृकुटि भंग रंग रंग रंग
ता घरिया देखि दुहुनि 'नागरिया' लतनि ओट,
तन मन गति श्रवन नैन पग पंग पंग ॥३११॥

(६)

मरगजी सुवास वस आस पास भॅवर भीर
भ्रमत अधीर भई, धीरहू न ताहि कैं
चांदनी मैं सोये मिलि, सुरति श्रमित अंग
आनॅद-तरंग लीला-सिंधु अवगाहि कैं
झीनौ पट फारि फैली बाहर बदन क्रांति,
जनु जौंन्ह जीतिबे कौं चली है उमाहि कैं
'नागरिया' अरुझांन ग्रीवनि मृनाल-भुज,
खुलि जात आँखैं जब, रहि जात चाहि कैं ॥ ३१२ ॥

३३. निशि-गान

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा—
पिय प्यारी की मधुर धुनि, आवत सुनि बन ओर
ज्यौं ज्यौं गावैं उच्च स्वर, त्यौं त्यौं बोलैं मोर ॥१॥

---

(३१०) रित=रितु (ब्रजरत्नदास, ७१)
(३११) देखिए यही ग्रंथ, संख्या १३२।

३१०. को है=कौन है।
३१२. अवगाहि कै=भली भाँति मथ कर। क्रांति=कांति, आभा। उमाहि कैं=उमंग मे आकर, उमड़कर। चाहिकैं=देखकर।

भांमिन दांमिनि, स्याम घन, गावत समैं सुहात
बरस रहे हैं रंग ए, भीज रही है रात ।२।।

गहरैं रूखन बीच वह, स्वेत अटा छबि देत
कढ़त तहाँ तैं गान धुनि, प्रान हरैं ही लेत ।।३।।
यह जमुना वृंदा बिपुन, यह उजियारी रैन
यह दंपति कल गांन धुनि, बरनत बनैं न बैंन ।।४।।

गांन कला नागर दोऊ, दूर रहे हैं गाय
सुर-धारा नट-वरत ज्यौं, चढ़ि मन पहुँच्यौ धाय ।।५।।

१. चौतालौ

आज राधे जू मोहन संग रंग भरी गावैं
सुनि तांनन की झाईं कहा कानन मैं आवै
आधी रात चनक मूदि विमल चंद चंद्रिका मैं,
ह्वै रही थकित कुंज कोकिला लजावैं
तैंसिय मृदंग की टकोर ह्वै सुधंग रंग,
देवी जू के हाथ की सो श्रवन सुहावैं
'नागरिया' नागर की जील की तरंगनि सौं
रंग-भरे वृंदाबन मोर कुहकावैं ।।३१३ ।।

२. इकताल

नवल निकुंज अटारी पर, वृंदाबन की सोभा दोउ गावत
निसि उजियारी कहा दूर तैं, राग अड़ानै की धुनि आवत
सुनत गांन बिथकत द्रुम-बेली, पवन पात डुलावत
पिय 'नागर' हू तैं प्यारी की तान, तरंग सरसावत ।।३१४।।

३. चौताल

उज्जल महल उच्च सुच्छ चंद्रिका प्रकास,
मंद गति सीतल बयार सुखकारी जू
कसत जू डोरी सेज चौसरि चँबेली वेली,
फैल रही फूलन की बास मनहारी जू

(३१३-१४) देखिए यही ग्रंथ, पद संख्या ३०३, ३०४

दोहा ५ नट वरत = नट वृत्त, नट कुंडली ।
३१३ चनक = आँखों की पुतली । जील = तान ।

चौकी चारु अतर गुलाल सीस चमकत,
ससि की मयूषैं, मिली कौतुक उजारी जू
पूरन सरद रैंनी, बिलसत सुख सैंनी,
कोक-कला-'नागरि' विहारनि विहारी जू ।।३१५।।

४ चौताल

कैसी लागत समैं सुहाई
दोऊ जहाँ कुसुम कुज छबि छाई
महक गुलाब रही भिजए उर, तैसिय अमल जुन्हाई
भँवर भीर गुंजति चहुँ ओरनि, फिरि रही मदन दुहाई
'नागरिया' तन गउर स्यांम की उरझनि, हिय उरझाई ।।३१६।।

३४. रास-रस-लता

या अनुक्रम रास की अलापचारी मै दैंनै ए दोहा
कबहूँ प्रिय मंडल कढ़त, अति गति बढ़त सुधंग
हरि के मन लोचन फिरत, उरझे पाँवन सग ।।१।।

लाल लई उर लाइ लखि, रीझे गति सरसानि
मंडल मैं सुरझैं नहीं, अंकमाल उरझानि ।।२।।
उत अरुझी कुंडल अलक, इत वेसरि बनमाल
गउर स्यांम अरुझे दोऊ, मंडल रास रसाल ।। ।।

गर बहिया गति लेत मिल, श्रम बस सिथलत पाय
डारे मन लै सबनि के, डगमग डगनि डुलाय ।।४।।
लेत बलैया रीझि दोउ, दोउ पौंछत श्रम-बारि
नचत बनी अति रंग सौं, बनी मदन मनुहारि ।।५।।

उतैं झुकौहौं नव मुकट, इतैं चंद्रिका चार
भए रास रस मगन तन, सरके सकल सिंगार ।।६।।

(दोहे १–८)—ए 'रास रस लता' के १८, २०-२६ संख्यक दोहे हैं। ए 'निकुंज रासोत्सव' के भी आदि में हैं।

३१५. चौसरि=चार लडी की माला। मयूष=किरण।

३१६. महक=सुगंध।

दोहा १. सुधंग=सुढंग।

६ चार=चारु।

तूटि खूटि अंचर गए, छूटि छूटि गए बार
अमित रास रस रंग मैं, टूटि टूटि गए हार ।७।।

'नागरिया' कह लगि कहै, कवि मति मंद प्रकास
तिनके भौंह विलास मैं, कोरि कोरि ह्वै रास ।।८।।

१ पद, राग अड़ानौ, तिताल

बंसी वट के निकट हरि रास रच्यौ, मोर मुकट अरु ओढ़ैं पीत पट
श्री वृंदावन कुंज सघन बन, सुभग पुलिन अरु जमुनां कैं तट
आरस भरे उनींदे दोउ जन, श्री राधा प्यारी नागर नट
'व्यास' रसिक पिय रीझि रीझि कैं, लेन वलैया कर अँगुरिन चट ॥३१७॥

२ तिताल

रास मंडल मधि छवि छके स्यांमां स्यांम,
लैं लैं गति लपटि लपटि जात भरे रंग
गांन धुनि, नूपुर रह्यौ है रंग पूरि तैसैं,
मधुर मधुर वीनां वाजत मृदंग
चंद्रिका सिथल इत, मुकट झुकौहौं उत,
ह्वै गए बिवस रस, सुधि न रही है अंग
'नागरीदास' गति नैंननि की भई पंग,
मुरछि गिरयौ है रति-सहित अनंग ।।३१८।।

३. चौताल

उरझी कुंडल लट, बेसरि सौं पीतपट,
बनमाला बीच आइ अरुझे हैं दोऊ जन
नैंननि सौं नैंन, बैंन बैंननि उरझि रहे,
चटकीली छवि देखैं लपटात श्यांम घन

---

(३१७) पाठांतर 'भक्त कवि व्यास' (पृष्ठ ३६६) के आधार पर।
हरि रास = रास (हस्त)। पुलिन = पुलिन बिन (हस्त)। राधा प्यारी = राधा (हस्त)।
कर अँगुरिन = अँगुरिन (हस्त)।
(३१८) देखिए उत्सवमाला, पद ७६। लपटि लपटि = लपटि पलटि (हस्त)।
दोहा ७. खूटि = खुल। ८ कोरि-कोरि = कोटि-कोटि
३१७. कर अँगुरिन चट = उँगलियों को चटका कर।

होड़ा होड़ी निर्त करैं, रीझि रीझि अंक भरैं,
तत्तथेई थेई कहत मगन मन
'सूरदास मदन मोहन' रास मंडल मैं,
प्यारी कौं अंचल लैं पौंछत हैं श्रम-कन ॥३१९॥

४. चौताल

दीनैं गरबाहीं गति लेत डोलैं मंडल मैं,
बोलत तथेई थेई मुख रूप ललकैं
ह्वै गए बिबस मन, श्रमित भए री तन,
खिसैं फूल सीस तें, सिथल भईं अलकैं
इत किंकिनी छूटै, उत बनमाल टूटी,
लोल हार, कुंडल कपोल झाईं झलकैं
'नागरीदास' राधामोहन नचत देखि
भूली सखी गांन तांन, लागत न पलकैं ॥३२०॥

५. चौताल

देखि स्यांमां जू श्रमित भईं रास मैं
बहौ निर्त भेट खेद सरके सिंगार हार, सिथल कुसम केस-पास मैं
रसिक रवन निज कर तें पवन करैं, हरैं हरैं लाए निवास मै
'नागरिया' सोए कुंज कँवलन की सैंनी पर, बैंनी-बिथुरैंनी है बिलास मैं ॥३२१॥

३५. भ्रू-भंग (मान)

या अनुक्रम की अलापचारी मै देनै ए दोहा—
सौहैं हूॅ चाहति न तू, केती द्यावति सौह
ए हौ क्यौ बैठी किए, ऐंठी ग्वैंठी भौह ॥१॥
करि भौहैं बाँकी कहौ, तनगौहै क्यौ बैन
इत राजी अब कीजियै, इतराजी के नैन ॥ ॥

(३२०–२१) देखिए उत्सवमाला पद ७७, ७८।

दोहा १. सौहैंहूँ सामने की। द्याई सौह = शपथ दिलाई। ऐंठी ग्वैंठी = वक्र, टेढ़ी।
२. बाँकी = वक्र। तनगौहैं = क्रुद्ध। राजी = सहमत, प्रसन्न। इतराजी = विरोध, आपत्ति।

चित चिंता चाहत धरनि, चितवत नीची नारि
कहौ सखी किहि कारनैं, पहरे पलटि सिंगार ।।३।।
मान करत बरजत न हौं, उलटि दिवावत सौंह
करी रिसौंही जाय क्यौ, सहज हसौंहीं भौंह ।।४।।
तुम ही सर्बस कन्ह कैं मान करौ बे-काज
राधा-बल्लभ नाम की, प्यारी निबहौ लाज ।।५।।
छाड़ि इतौ अनखाव री, अहे बावरी बांम
'नागरिया' भुव भंग मैं, भये त्रिभंगी स्याम ।६।।

१. राग अड़ानौ; ताल चौताल

तेरी भौंह की मरोर मैं, ललित त्रिभंगी भए;
अंजन दै चितए, भए हैं स्यांम, बाम
तेरी मुसकनि हियैं दामिनी सी कौंधि जात,
दीन ह्वै ह्वै जात, राधे आधौ लीनै नांम
ज्यौं ही ज्यौं नचावै बाल, त्यौंही त्यौंही नाचै लाल
अब तौ मया करि चलिए निकुंज धांम
'नंददास' प्रभु तुम बोलौ तो बुलाइ लेहुँ,
उनकैं कलप बीतैं, तेरैं घरी छिन जांम ।।३२२।

२. चौताल

तेरे री मनायबे तैं नीकौ री लागत मांन,
जौलौं रहि प्यारी तौलौं लालहि लै आऊं
और कौं हसौंहों मुख, तेरी तौ रुखाई आली,
सोलह कला कौ पूरौ चंद बलि जाऊँ

(दोहा ३) चिंता = चिता (हस्त) । पलटि = पलक (हस्त) ।
(दोहा १, ४)—ये विहारी के हैं। देखिए बिहारी रत्नाकर ५०६, २७३ ।
(३२२) व्रजरत्नदास (पद ७२) पादांत मे सर्वत्र 'री' बढा दिया गया है।
स्याम बाम = स्याम (हस्त) । हियैं = देखि (उमा० पृ० ४१५) ।
दीन = लीन (हस्त) । दीन० = दीन ह्वै याचत प्यारी (उमा०) ।
राधे = राधा (हस्त) छिन जाम = जाम (व्रज), थाम (उमा०) ।
दोहा ३. चाहत = देखती है। नारि = ग्रीवा ।
६. अनखाव = रुष्टता ।
३२२. मया = प्रेम

चल न सकत उत, पग न परत इत,
ऐसी सोभा छाड़ि फिरि पाऊँ धौं न पाऊँ
'नंददास' प्रभु दोऊ विधि ही कठिन परी,
देखिबौ करौं, किधौं लालहि दिखाऊँ ।।३२३।।

३. चौताल

आजु छवि देखौ आय, माननी की सोभा धाय,
चांदनी मैं पौढ़ी, तातैं रह्यौ है चंद लजाय
मंजुल पुहुप माल नील अभरन नभ,
नासिका के मोती देखैं उडगन सकुचाय
आए हैं निकट स्यांम, रीझि रहे ललचाय,
तेती बार तेती बार, मुख की लेत बलाय
'नंददास' प्रभु अधरनि बीरी लाई जब
रसिक बिहारी प्यारी, चौंकि परी मुसकाय ।।३२४।।

४. इकताल

कुंज सदन बढ़ी बिमल चढ़ी चाहै चाँदनी, मिली चंद सौं चंद्रिका री
कोमल सेत सु-पेसल सज्या, बिहरत मृग रथ पर पिय प्यारी
दर्पन भूमि-अकास बिमल बिच बिथुरित उर मुक्ता-तारा री
'नागरीदास' सुरत रस दोऊ श्रम-जल-कन मुख श्रवत सुधा री ॥३२५॥

५. ताल चपक

हरि मिल स्यांमा सेज सोए सुखदाई
सुरत श्रमित तन छिरके गुलाब नीर, सुमन सुगंध पौन चलैं सियराई
जमुना निकट तरंग जगमगत, तैसिय कुंज बिच बिमल जुन्हाई
यह पौढ़नि-सुख-समै-मनोहर 'नागरीदास' बसौ हिय माई ।।३२६।।

---

(३२३) पूरौ = पून्यौ (उमा० पृष्ठ ४१६)
(३२४) तातैं = तातैं (ब्रज० पद १३७) ।
(३२५) चढी चाहै चाँदनी = चाँदनी (मुद्रित प्रति शेषांश ११४) ।

३२३. धौं = अथवा ।
३२४. तातैं = तातैं, इससे, इस कारण । अभरन = आभरण, गहना ।
३२५ चाहै = देखती हैं । पेसल = पेशल, कोमल, सुन्दर । मृग रथ = मृग जिसका रथ खींचता हो, चन्द्रमा । जुन्हाई = ज्योत्स्ना, चाँदनी । माई = सखी ।

३६. कृष्ण-रूपासव

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैंनैं ए दोहा
उही गली ठाढ़ौ अली छली छबीलौ छैल
तिय अँखियाँ कौतिग झुकी, रुकी खिरक की गैल ।।१।।

खरौ खरिक-सुख साँवरौ, चरन लकुट लपटाय
मो मन लीनौं फेर कैं, कँवल फिराय फिराय ।।२।।

ठाढ़ौ ब्रज की पौरि हरि, कीनैं चंदन खौरि
उही ठौर हिय, लखि परी, अरी मदन की रौरि ।।३।।

बीच बाट परि नाग ज्यौं, कोउक कारे गात
उही बाट जौ जात तिय, खाट धरी घर जात ।।४।।

छबि सौं ठाढ़ौ साँवरौ, हौं निकसी वहां जाय
परी रूप-बेरी दृगनि, गिरी अँधेरी आय ।।५।।

ब्रज-मोहन 'नागर' निरखि, मग बिच बिसरी देह
बहुरि दई का गति भई, को मोहि ल्याई गेह ।।७।।

१. पद, राग अड़ानौ, ताल चपक

ब्रज की पौरि ठाढ़ौ साँवरौ ढटौंना, तिन हौं मोही
जब तैं मैं देखे स्यांम सुंदर री आली,
हौ चलि न सकत डगौ री, दीनी काम नृप दोही
को लै आई, काके चरन चलाई, कौनैं मेरी बहियाँ गही, सो धौं को ही
'सूरदास मदनमोहन' देखैं, मेरी गति आगैं कहा भई, पूछौं तोही ॥२·७॥

२. ताल चपक

अरी तोहि तनकहु सुधि न रही
डगमगात तन देखी विह्वल, तब मै दौरि गही

(दोहा ४) जात = आत (हस्त)।

दोहा ३. खौरि = टीका, तिलक। रौरि = उपद्रव, उत्पात।

४. आत = आती है।

३२७. तिन हौं मोही = उन्होने मुझे मोहित कर लिया। ब्रज = गोष्ठ; खरिक, गायें बाँधने का बाड़ा। पौरि = द्वार। डगौ री = एक डग भी। दोही = दुहाई, घोषणा। को [illegible] थी। गति = दशा।

जो गति भई निरखि मोहन मुख, सो नहिं परत कही
'नागरिया' मोही तासौं, चलि तोही मिलाऊँ सही ॥३२८॥

३. चौताल

अछुन पग धरत अँधेरी रात
ललिता कैं कर पर कर धरैं, कहत हरैं हरैं बात
झाँकी कर उँचाय हसि प्यारी, लता कुंज द्रुम पात
'नागरिया' पाछैं ह्वै प्रीतम, आंनि गही करि घात ॥३२९॥

४. चौताल

सखी री अँखियनि सौं अँखियाँ मिलीं, बतियनि सौं बतियां मिलीं,
अति रस-बस रसिक लाल बाल
सब तन तन मिले, मन सौं मन मिले री, भुजनि सौं भुज मृनाल
फूलनि की सैंनी सौं मिली है बैंनी बिथुरैंनी,
नूपुर निनाद सौं मिली हैं किंकिंनी जाल
'नागरीदास' सुख सुरति मिलन मांझ
लै लै उर बीच तैं बिहारी प्यारी न्यारी करी मुक्तमाल ॥३३०॥

५. तिताल

स्यांम तलप रची है, सुख सुरति मची है,
तामैं कोक की कलान केलि मोहन मची है
हाव भाव अंग संग, अमल अनंग माते
अधखुले नैंन सैंन, भृकुटी नची है
अधरनि हरैं हरैं बचन-विलास होत,
दसनन-जोति देखि दामिनी लची है
'नागरीदास' जुग बाहु बिच घनस्यांम
मानौं नीलमनि कल कुंदन खची है ॥३३१।

---

(३३१) कुंदन = कुचन (हस्त)।
३२८ सही = निश्चय ही, निर्भ्रान्त रूप से।
३२९. अछुन = धीरे धीरे, ठहर ठहरकर। हरैं हरैं = धीरे धीरे। घात = छल, दाँव पेंच।
३३०. सैंनी = शैया।
३३१. तलप = तल्प, शैया, सेज। सची है पूर्ण की है। कोक = कामशास्त्र। लची है = नतोमुख हो गई है। खची = जटित।

६. ताल चपक

हरि मिल स्यामां सेज सोए सुखदाई
सुरत श्रमित तन छिरके गुलाब नीर, सुमन सुगन्ध पौन चले सियराई
जमुनां निकट तरंग जगमगत, तैसिय कुञ्ज बिच बिमल जुन्हाई
यह पौढ़नि सुख समैं मनोहर, 'नागरीदास' बसौ हिय माई ।।३३२।।

३७. नैंन

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दे नें ए दोहा—

कंजन हू तें डहडहे, बिन अंजन छबि ऐंन
खंजन गति गंजन महा, पिय-मन-रंजन नैंन ।।१।।

लोंनें तिरछौनें चलें, कौंइन कौं नैं साछि
लगत लजौंनै दृगन की, टौंनैं भरी कटाछि ।।२।।

बिंना सँवारे ही सहज, बान प्रहारैं मैंन
नांहि उबारैं दृष्टि मैं, मारैं डारै नैन ।३।।

रैंन जात है चैंन की, चलि नागरि सुकुंवारि
नैंनमई पिय ह्वै रहे, तेरे नैंन निहारि ।।४।।

१. पद राग अड़ानौ, चौताल

हौ काजर बिन कारे री तेरे नैंन मतवारे
भारे, ढरारे, हाव भाव चातुरिनि मदन सँवारे
सुन्दरता छाए, छके जोबन मद अरसाए,
रसनिधि स्याम रिझाए, लागे नैंननि नैंन पियारे
खंजन, अरु मीन, मृग, अमल कमल कल,
इनहूँ तैं आली अति सरस सुढारे

---

(३३२) देखिए यही ग्रंथ पद ३२६ ।

दोहा १. डहडहे = हरे भरे; प्रसन्न होना। ऐंन = अयन, घर। गंजन = नष्ट करने वाले।
२. लोंने = लावण्यमय। कौंइन = आँखों के कोए। साछि = सच।
४. जात है = समाप्त होती जाती है।

'नागरीदास' पिय सहि न सकत स्यांम,
पलकनि ओट भए न्यारे ॥३३३॥

२. चौतल

चुभेई रहत पिय हिय मैं, अरी तेरे नैंन ऐसे अति अनियारे
नव जोबन खरसांन चढ़ायें, बिन काजर कजरारे
दिन अरु रैंन चैंन नहिं दैहीं, महा मैंन-विषहारे
'नागरीदास' मदन मौंहन कौं, इन घायल करि डारे ॥३३४॥

३. चौताल

तेरे नैंन बांन, उर मोहन कैं लागे आनि,
तब तैं न वाकैं वीर धीर ठहराय है
पलकनि मूँदि मूँदि, गहरैं उसास लेत,
होत न सचेत, मुख रटै हाय हाय है
जमुनां कौ कूल कुंज, सीतल कुसुम पुंज,
लागैं तन ताते, तेज विषम बलाय है
ऐ री चलि 'नागरी' तू सींचि सुधा चाहनि सौं,
आँखिन के घायन कौं आँखैं ही उपाय हैं ॥३३५॥

४. ताल चर्चरी

चली सिंगार सजि सहज अभिरांमिनी
हार अरु बार कैं भार लचकत लंक,
डगनि डिगुलात आनंद भरि भांमिनी

---

(३३३) हस्त लेख मे चतुर्थ चरण के मध्य में तृतीय चरण का कुछ अंश प्रमाद-वश आ गया है और पंक्ति का रूप यह हो गया है:—
'नागरीदास' पिय सहि न सकत स्याम (रिझाए लगे नैननि नैन पियारे) पलकनि ओट भये न्य रे ।

(३३४) चैंन नहिं = नहिं (हस्त)

३३३ भारे = भारी, विशाल । ढरारे = ढुलकने वाले । सुढारे = सुन्दर साँचे में ढले हुए, सुडौल ।

३३४. अनियारे = नोकीले । विषहारे = विषैले, जहरीले । खरसान = हथिआर तेज करने की एक प्रकार की सान (शाण) ।

३३५. चाहनि = अवलोकन ।

सुनत झंकार निज दाबि रसनां दसन,
सकुचि फिर धरत पग मंद गज-गांमिनी
उरसि अंचल उड़त, सरस परसत पवन,
रवन पैं गवन, बिच खिलिय मधु जामिनी
कुंज घन द्रुमनि की पांति तर जात छिपि,
छांह छाँड़त नहीं चतुर मनि स्वांमिनी
'नागरीदास' सुख रासि माधव मिली,
अंग प्रति अंग छबि मनहुँ घन दामिनी ॥३३६॥

५. इकताल

मदन मोहन सँग बिलसत गोरी
नवल किसोरी वृषभांन-नंदनी, मधुर हसति अति रस मैं बोरी
नव नव प्रीति परसपर अरुझी, मनौं घन दामिनी राजत जोरी
'मुरारी' प्रांणपति दृढ़ परिरंभन, प्रेम मगन बनमाला तोरी ॥३३७॥

६. तिताल

सोए स्यांमा स्यांम सेज सुख, अंग अंग अति सुरत रंग ललकैं हो
तैसोई सनमुख अमल चंद्रमा, बदननि दुति झलकैं हो
टूटि गई गजमोतिन की लर, फैल फबी आंननि अलकैं हो
'नागरिया' मन रँगि डार्‌यौ, इन पीक रँगी पलकैं हो ॥३३८॥

७. इकताल

रासमंडल बनायौ कल जमुनां पुलिन,
बनी कुसमित, नन आवै सौंधे की झकोरैं
जुगल जुवती बीच बीच गिरधारी लाल,
प्यारी ब्रज नारिन करनि कर जोरैं
वाजत मृदग ताल, उघटैं संगीत जाल,
नाचत त्रिभंगीलाल, बाल चित चोरैं
तैसिय कुँवरि वृषभांन की किसोरी,
दामिनी सी दमक-चमक चहूँ ओरैं
मोहे नग खग मृग, मग न धरत डग,
रहे यक टक चाहि, चात्रिक चकोरैं

---

(३३६) देखिए उत्सवमाला, पद ६४।
(३३८) पलकैं=अलकैं (हस्त)।

'रघुनंदन' प्रभु अंबर मैं दीठ झर
रीझि प्रान वारैं, सुर-वधू तृन तोरैं ॥३३९॥

८. राग केदार का ख्याल, तिताल

किन बिरमायौ मनमोंहनां सुंदर सुघर तिया ए री
परी बिरह की रौर पिया बिन, ठौर नहीं मति मेरी
हा हा कहि मो सौं री हेली, लैउँ वलैया तेरी
को 'नागरी' ऐसी रूप की आगरी, जिंहि बस स्यांम करे री ॥३४०॥

९. इकताल

बोलि बोलि पपीहरा री मोहि मारै
निस दिना न चैंन वाहि बिरहनी, चैंन न देत, पीव पीव पुकारैं
धूमजौन गरजतौ गरैं काल्यौ, रटत नैंकु न हारै
'सुघर राय' के प्रभु बिनां, यह मदन जरयौ जारैं ॥३४१॥

१०. तिताल

प्यारे ऐसी प्रीति की बात न कहियै
अपनी न कहिए, सुनिए सबकी, सुंनि सुंनि चुप ह्वै रहियै
को जानैं अब या तन मन की, बाँधी मूठी लाख जु लहियै
'लतीफ' पिया तोहि औरन की कहा परी, अपनी ओर निबहियै ॥३४२॥

११. तिताल

मेरी मति सुंदर स्यांम हरी है
चितै चतुर मुसकाय भाय सौं, दृग डोरनि जोरनि जकरी है
अब छिनहू छूटत नहिं हेली, निपट दुहेली गति पकरी है
'नागरिया' हरि ललित रूप की, ए री अति दृढ़ बेरी परी है ॥३४३॥

१२. तिताल

प्यारी जू कीजै तौ एक समै सिर, अब हठ न करियै
सुघर सलौनैं पिय स्यांम सुंदर सौं, रस ही रस ढरियै

---

३३९ बनी=बाटिका। झकोरैं=लहरें। चाहि=देख। दीठ झर=(कुसुमों) की झड़ी दिखाई पड़ी।

३४०. रौर=उपद्रव। ठौर=ठौर ठिकाने; स्थिर।

३४१. धूमजौन=धूम्र-योनि, बादल।

३४३. हरी है=हर ली है। जोरनि=दृढ़तापूर्वक। जकरी है=जकड़ दिया है। दुहेली=दुखद।

यह निकुंज, यह विमल चाँदनी, औसर अनुसरियै
'नागर' पिय कै अंस इहि समैं, हसि बहियाँ धरियै ।।३४४।।

३८. रैनि-रूपारस

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैंनें ए दोहा--
सरसाई वृंदा बिपुन, अमल जुन्हाई रैन
लगत सुहाई दृगनि कौ, कुंजन छबि सुख-दैंन ।।१।।

स्वेत फूल फूले लतनि, बिलुलित हीरा हार
जोन्ह ओढ़ि पट रुपहरी, कुंजनि करे सिंगार ।।२।।

छई छिपा, छबि देत छित, पत्र विपुन इहिं भाय
ससि कारीगर रुपहरी अफसा कियौ बनाय ।।३।।

चितै बदन ब्रजचंद कौ, रीझि चंद भयौ चूर
छिपा किधौं वह जोन्हि है, कुंजनि बिखर्यौ बूर ।।४।।

फैली चमकत चंद्रिका, बिच निकुंज बन बाग
कतर स्वेत मुक्केस मनौं, रति पति खेल्यौ फाग ।।५।।

कुंज सर्व व्यापक भई, अमल जुन्हाई होति
आई देखन सगुन मनु, निगुन ब्रह्म की जोति ।।६।।

नव निकुंज राका रुचिर, अति सित अमल उजास
लसत फटक फानूंस नभ, बिच ससि दीप प्रकास ।।७।।

---

३४४ एक समैं सिर = किसी उचित अवसर पर। औसर अनुसरियै = सुयोग का अनुसरण कीजिये; अवसर न चूकिये। अंस = कंधा।

दोहा १. सरसाई = सरस बना दिया, सुहावना बना दिया।

२. बिलुलित = बिखरे।

३. छिपा = रात्रि। छित = पृथ्वी पर। अफसां = उज्ज्वल रजत चूर्ण, जिसे स्त्रियाँ अपनी माँग मे लगाती हैं, यह सिंदूर के बदले प्रयुक्त होता है।

४. बूर = बुरा, चूर्ण।

५. मुक्केस = बादला; जरी का बना हुआ एक प्रकार का कपड़ा।

६. होति = अस्तित्व; संपन्नता।

७. सित = श्वेत, उज्ज्वल। फटक = स्फटिक। फानूंस = झाड़; छत में टाँगने के लिये डण्डे के चारो ओर लगे हुए शीशे के गिलास आदि जिसमें मोमबत्तियाँ जलाई जाती है।

मैंन रंग रस रसमगे, जगे उजारी रैंन
खगे नैंन पिय के तहाँ, लखि अलसौंहैं नैंन ।८॥

चंद चंद्रिका मंद की, दंपति अंग उजास
लता कुंज रंध्रनि कढ़्यौ, किरननि निकर प्रकास ॥९॥

'नागरिया' मुख-छबि लखैं, अमल उजारी मांहि
बहुरि चंद की डीठ डरि, करत मुकट की छांह ॥१०॥'

१. पद राग केदारो, ताल चपक

एक कोऊ ढोटा स्यांम सलौंनैं गात है
आई हौं देखि खरिक मुख ठाढ़ौ, न कछु कहन की बात है
कबल फिरावत, नैंन ढुरावत, मुरि मुरि मृदु मुसक्यात है
छबि कैं बल जग जीति गरब भरयौ, मैंन मनौं इतरात है
अंग अंग प्रति अमित माधुरी, कहत कही नहीं जात है
'नंददास' चातिग चौंच पुट मे, सब घन कैसें समात है ॥३४५॥

२. ताल चपक

डोलनि इन नैंननि की लई
कहा री कहौं इन लोभनि लीनैं, पर आधीन भई
स्यांम तमाल मूल मंजुल अति, लोकन बेल बई
सींचि सींचि अनुराग प्रेम जल, अनुदिन करति नई
अब कैसें निरवारी जाति हैं, अँग अँग बौढ़ि गई
'विद्यापति' गुपाल रस फूली, लगी है प्रमोद जई ॥३४६॥

(दोहा १-१० ए दोहे 'रैनिरूपारस' के प्रारंभिक १० दोहे हैं।

(३४५) एक कोउ = इहि काहू को (ब्रजरत्नदास, ४५)। मुख = ढिग (ब्रज)। ढुरावत = नचावत (ब्रज)। मुरि मुरि = मो तन मुरि (ब्रज)। भरयौ = भरि (ब्रज)। अंग अंग० = नख सिख रूप अनूप रूप छबि, कवि पैं बरनि न जात है (ब्रज)।

दोहा ८. खगे = धँसे, चुभे। ९. रंध्रनि = छेदों से। १०. डीठ = कुदृष्टि; नजर।

३४६. इन लोभनि लीनैं = इन लोभियों के लिए। बेल = बेलि, लता। बई = बोई लगाई। बौढ़ि = बेलि। जई = जौ का छोटा अंकुर जो मंगलमय माना जाता है। (२) वह फूल जिसमें कली के रूप में फूल का मूल रूप भी हो।

३. ताल चपक

प्यारी पग हरैं हरै धरि, जैसैं पग नूपुर न बाजैं
जागत ब्रज कौ लोग, नाहिन सुनैबे जोग,
हा हा हठीली नेकु मेरो कह्यो करि
जौ लौं बन बीथिन माहिं, सघन कुंजन छांहि,
तौ लौं मुख ढांपि चलि सुंदरि कुँवरि
'नंददास' प्रभु प्यारी, आगैं तैं न होहु न्यारी,
सरद उज्यारी मग जोहैं कहूँ हरि ॥३४७॥

(४)

देखौ री खरे दोऊ कुंज की परछाही
एक भुजा गहे डार कदम की, दूजी भुजा गरबांही
छबि सौं छबीली रही लपटि लटकि मानौं
तरु तमाल कनक बेलि उरझांही
'हरि नाराइन स्यामदास' के प्रभु प्यारी रँगे हैं प्रेम रँग मांही ॥३४८॥

५. चौताल

हूँ तो दोऊ देखत देखि रही
स्याम तमाल, प्रिया छबि बेली लगि लपटाय रही
फूल परे हलि मुकट, लता ऊपर झुकि झूमि रही
'नागरीदास' कुंज बिच तैंसी जगमग जोन्हि रही ॥३४९॥

६. ताल चपक

निकसि कुज तैं ठाढ़े, सरद उजियारी कैसी लागैं
बरन बरन फूलन के भूषन अरु सौंधे भीनैं बागैं
आलस भरे उनींदे लोयन, गावत केदारो रागैं
'अलि भगवान' आजु तून तूटत कछु, रजनी दोऊ जागैं ॥३५०॥

---

(३४७) सांहि = जाहिं (हस्त)। सुंदरि कुँवरि = कुँवर रसिकवर (उमा० पृष्ठ ४२१)। आगैं ते = छिनहु (वही)। मग० = जामेंजेहोंकहुंरर (वही)। मग = मधि (हस्त)।

३५०. बागा = प्राचीन काल का अंगे की तरह का एक पहिनावा, जामा। केदारा = एक राग विशेष।

७. तिताल

अटके राधा रूप कन्हाई
हाथ चिबुक धरि वदन बिलोकत, सिगरी रैनि बिहाई
नैंन नैंन मिलि रहे रस-माते, फिर रही मैन दुहाई
'नागरिया' द्रुम तर दोउ ठाढे, जिहि ठा अमल जुन्हाई ॥३५१॥

८. तिताल

फूले फूले ललित द्रुमनि तर, करत स्याम सुख संग
आई अतर लतनि जुन्हाई, दरसाई दुति अंग
चितवत उजियारी वदननि की, औरै ओप उमंग
दृगनि अनग तरंग बढ़ी, भुव भंग, भंग मै रंग
कसे बाहु एकंत कुंज निसि, फँसे रूप, बहलै मन पग
'नागरीदास' किंकिनी धुनि सुनि, कूजि कूजि कल उठै बिहंग ॥३५२॥

३६. भ्रू-भंग (मान)

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनै ५ दोहा-
सौंहैं हूँ चाहति न तू, केती खाई सौह
ए हो क्यौं बैठी, किए ऐंठी ग्वैंठी भौंह ॥१॥

करि भौंहैं बाँकी कहौ, तिनगौंहैं क्यौं बैंन
इत राजी अब कीजिए, इतराजी के नैंन ॥२॥

चित चिंता, चाहत धरनि, चितवत नीची नारि
कहौ सखी किहि कारनैं, पहरे पलटि सिंगार ॥३॥

मांन करत बरजत न हौं, उलटि दिवावत सौंह
करी रिसौंहीं जाय क्यौं, सहज हसौंहीं भौंह ॥४॥

छाडि इतौ अनखाव री, अहे बावरी बाम
'नागरिया' भुव-भंग मै, भये त्रिभंगी स्यांम ॥५॥

(दोहा १,४) ये दोहे बिहारी के हैं। देखिए बिहारी रत्नाकर ५०१, २७३। अनुक्रम ३५ के ६ दोहों में से ५ वें को छोड़ शेष यहाँ दोहरा दिए गए हैं।
२५१. बिहाई = व्यतीत की। ठां = स्थान।
२ ३२ओप = आभा, कांति। भुव भंग = भ्रू-भंग।

१. पद, राग केदारौ, ताल चपक

सजनी री आज गिरधर लाल पगिया धरैं पेच बनाय
मांन छाँडि, सँभारि नारि, निहारि पिय मुख आय
निरखि सोभा, कोटि मनमथ रहे हैं सिर नाय
'दास कुंभन' लाल गिरधर लीजियै उर लाय ।।३५३।।

२. तिताल

हौं प्यारी हौं पीय की, तू कौंन की बसीठ
वे मोमैं, हूँ उनमैं, ऐसैं जैसैं नैंन कहिबे कौं दोय, पैं देखैं एकैं दीठ
मेरे उनके बीच कोऊ न परिहै, तू 'ब निडर बोलति है धीठ
'गिरधर' पिय कै बलि बलि जइयै, जानि बूझि सबहिन तन दीनी पीठ । ३५४।।

३. इकताल

अनोखी मांनिनी न मानै, काहू के प्रीति की न जानै
सहज कहूँ कोऊ बात रावरी, त्यौं त्यौं अति रिस ठानै
रुख रूखी, सौंहैं नहि चितवत, फिरि फिरि भौंहैं तांनै
'नागरी' कान्ह तिहारी प्यारी, को बहियाँ गहि आनै ।।३५५।।

४ तिताल

आपुन चलिए जू लालन, कीजिए न लाज
मो-सी जौं तुम कोटिक पठवौ, प्यारी न मानै आज
हूँ तौ तिहारी आज्ञाकारिनि, मोसों कहा कहौ महाराज
'नंददास' प्रभु बड्डे कह गए, आप काज महा काज ।।३५६।।

५. चौताल

आतुर लाल रसिक सुखदायक
सखी वचन सुनि चले चपल गति, पीडित मनमथ सायक

---

(३५५) काहू के = काहू का । बात = बत (हस्त) (३५६) तिहारी = तुम्हारी (हस्त) ।
बड्डे = बड्ड (व्रज,१३२), बड्डे (उमा० पृष्ठ ४१६) महा काज = महाराज (हस्त)
३५३ पगिया धरैं पेंच बनाय = मुरेर कर पाग बाँधे हुए हैं ।
३५४, बसीठ = दूत । सबहिन तन दीनी पीठ = सबको छोड दिया ।

कहूँ उरझि रहि गयौ पीत पट , कहुँ वनमाल मुरलिका भायक
'नागरिया' ढिग आय कहत पिय, परम प्रेम भीजे वायक ॥३५७॥

६. चौताल

प्यारी जू तुम मेरै मूरति आनंद की
तेरौई आनद रैन दिन, तौ विन छिन दुख दंद की
यौ कहि काम केलि विस्तारी, जहाँ चाँदनी चंद की
'नागरिया' दृढ़ कसे मनोहर, कसनि बाहु जुग फंद की ॥३५८॥

७. ताल चपक

पौढ़े दंपती सुख सैन
परम कोमल सुरत लीला श्रमित पायैं चैंन
परसपर भुज अंस दीनैं, सकल सुख के ऐंन
'वृंदावन' प्रभु प्रेम माते, कछुक मुकलित नैंन ॥३५९॥

४०. चंद्रिका

इन चंद्रिका के अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा—
धुकी रहत नित चंद्रिका, मौहन सीस सुढार
बड़ी बड़ी आँखियान की, वहौत दीठि कैं भार ॥१॥

मन लूटत अबलांनि कौ, अहे चंद्रिका मीत
सीस चढ़ाई स्यांम जू , यातैं करत अनीत ॥२॥

मनमोहन सिर चंद्रिका, मंद मंद फहरात
परसत लोइन बाल के, कंप भयौ मनु गात ॥३॥

चितवत इक टक ही रहैं, 'नागरिया' ए नैंन
कीनौ चेटक चंद्रिका, परन न दैं चित चैंन ॥४॥

(दोहा ३) परसत = फरसत (हस्त ।

३५७ सायक = शायक, वाण । भायक = सुंदर; अच्छा लगने वाला । वायक = वाचक, कहनेवाला, दूत । (वाइक = वाह = वापी = सरोवर) ।

३५९. अंस = कंधा । ऐंन = अयन, घर । मुकुलित = कली के समान बंद ।

दोहा १. धुकी = झुकी । चंद्रिका = मोर पंख मे बना हुआ नीला वृत्त ।

१. पद, राग केदारौ, ताल चर्चरी

जैति श्री चद्रिका चारु कलधूत के,
सूत कृत चित्र बहु रंग अंगे
कृष्ण चूड़ा रुचिर रूप बिस्तारनी,
बरहि तनया, मूल मुक्त संगे
सर्व अवतंस पर उच्च आरूढ़ पद,
घोष-जन-द्दग करषि करन पंगे
चढ़िय मनु सिखर सिंगार मंदिर धुजा,
उठत फरहरनि बिच छबि तरंगे
प्रिया पद जुगल जावक भरत, करत तब
इन्द्र धनु रंग अभिमांन भंगे
'नागरीदास' चित चढ़ी, नैंननि चढ़ी,
चढ़ी हरि सीस सुंदर उछंगे ॥३६०॥

२. ताल चर्चरी

नवल लाल के सीस पर है चंद्रिका, री बृज जन मोहैं
मधि तरौनां पीत रंग राजत, जगमगात अति सोहैं
देखत रूप ठगौरी सी लागत, रसिक सखिन के मन अवरोहैं
'हरिनाराइन स्यांम दास' के प्रभु, जो न ठगी सो धौं कोहैं ॥३६१।

३. ताल चपक

छई बन चंद्र चंद्रिका चार
पत्र पत्र प्रति चंद्रिका, चंद्रिका भौ बिस्तार

---

(३६०) बरहि = बिरह (हस्त)। देखिए यही ग्रन्थ, पद ७२५.

३६० कलधूत = कलधौत; सोना चाँदी। सूत = तार। कृत = किया हुआ; बनाया हुआ। चूड़ा = शिखा। बरहि = मोर, मयूर। अवतंस = शिरोभूषण। घोष = अहीरों की बस्ती। घोष-जन = आभीर। करषि = आकृष्ट कर। पंगे = पंगु, स्थिर, अचल। जावक = अलक्तक, अलता, महावर। उछंग = उत्संग, अंक, गोद।

३६१. मधि = मध्य में। तरौनां = ताटंक। अवरोहैं = अवरोहण करते हैं, चढ़े रहते हैं।

गोकुल चंद की गउर चंद्रिका चितै कियौ अभिसार
तन भूषन जगमगत सीस सुढार
मिलत लाल सौं बढ़्यौ कुंज मैं पुंज चंद्रिका अपार
'नागरिया' बातन मैं फैलत, दसन चंद्रिका जार ॥ ३६२ ॥

४. चौताल

चंद्रिका सँवारि राखी पीय कैं सीस पर,
पीय सीस फूल पर फूल धरयौ
गउर स्यांम अति सरूप, कहि न जात छबि अनूप,
दुहुनि कौ बदन परम रंग भरयौ
चितवन मै रंग रस बरसत, मुसकान मन हरयौ
अंग प्रेम कांम केलि बेलि बरयौ
'राम राय हित' गिरधारी, मिले कुंज सुखकारी,
'भगवान सखी' दरस अमल परयौ ॥ ३६३ ॥

५. ताल चपक

स्यांमां जू सँवारति हैं बेसरि बिहारी जू की,
बिहारी जू चंद्रिका सँवारैं मुख बार हार
पीत पट पोछै पिय मुख श्रम प्यारी जू को,
प्यारी नील अंचल चचल कै करैं बयार
एकैं कर छबि सौं बलैया लेत लाल रीझि,
रीझि बाल तृन तोरि तोरि गहि डारैं वार
'नागरिया' वारी वारयौ कहत परसपर
बिहरत, अंकमाल लेत, हसि बार बार ॥ ३६४ ॥

६. ताल चपक

पौढ़े दपती सुख सैंन
परम कोमल सुरत लीला अमित पाये चैंन

(३६४) बिहारी जू चंद्रिका = चंद्रिका (हस्त)। प्यारी जू को = प्यारी जू कैं (हस्त)। रीझि बाल = रीझि रीझि बाल। तोरि तोरि = तोरि। बिहरत = झसत (हस्त)।

३६२. चार = चारु, सुन्दर। जार = जाल, पुंज।

३६३. अमल = नशा।

३६४. चंद्रिका = बेंदी, माथे पर पहना जाने वाला स्त्रियों का एक आभूषण। बेसरि = नाक में पहना जाने वाला एक आभूषण।

परसपर भुज अंस दीनैं सकल सुख के ऐंन
'वृंदाबन' प्रभु प्रेम मांते, कछुक मुकलत नैंन ।। ३६५ ।।

४१. कुंज-रस-केलि

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा—
मुख तेरौई नाम रटि, तो छबि हिय सुकँवारि
तो तन आवै परसि सो, आँकौ भरत बयारि ।। १ ।।
पीत फूल तुव बरन की, माला पहिरि सुजान
तेरौ मग जोवत, करत तेरौई गुन गान ।। २ ।
धांमनि मैं बल्लभ उन्हैं, तुव संकेत सु धांम
अति बल्लभ निज नांम मैं, राधा-बल्लभ नांम ।। ३ ।।
मुरली की माला करी, नदलाल बसि हेत
राधे राधे जपत नित, गूढ़ मंत्र संकेत । ४ ।।
रचैं लाल पल पाँवड़े, तुव आवन कै हेत
'नागरिया' हिय सेज पर, बिहरौ मिलि संकेत ।। ५ ।।

१. पद, राग केदारौ, ताल चौताल

तू सुंनि कांन दै री, मुरली मैं तेरे गुन गावैं स्याम निकुंज-भवन
सनमुख ह्वै कै आँकौ भरत, तेरैं तन परसि आवै जो पवन
तेरौई ध्यांन धरत उर अंतर नैंन मूदि,
निकसनि डरत तेरौई आगम सुंनि श्रवन
'सूरदास मदनमौंहन' सौं तू चलि मिलि,
तोही तैं पायौ हैं नाम राधा-रवन ।। ३६६ ।।

२. ताल चपक

चली राधा निकुंज-भवन
ठटकि ठटकि द्रुम डार गहत फिरि, मद गजराज गवन
घूँघट पट उघरत अँधियारी, परसत मंद पवन
'नागरीदास' मदन गढ़ तोरन, जोरन प्रीति रवन ।। ३६७ ।।

---

(३६५) देखिए यही ग्रंथ पद ३५६ ।
दोहा ३. वल्लभ = प्रिय । ४. बसि हेत = तुझे वश में करने के लिए। संकेत = मिलने का गुप्त स्थल ।
३६७. रवन = रमण, प्रिय ।

३. चौताल

दोउ चंद्रमा री, दोउ चकोर, इक रस नेह, इक रस प्रकास
दुहुनि की जीवनि है दुहुनि कौ रूप सुधा,
दुहुनि के नैंननि पीवत पीवत प्यास
दोऊ छबि रास, दोऊ सुख के निवास,
सदा सहज प्रसन्न बदन, हियैं हुलास
दोऊ रंग रस की खान, दुहुनि के एक प्रांन
'नागरिया नागर' निति निकुंज-वास ॥ ३६८ ॥

४. ताल चपक

दोऊ रूप सागर, दोऊ मीन
दोउन मैं दोऊ ह्वै रहे हैं लीन
दोउन कौ सुखद सुभाव हाथ लियै दोऊ,
दुहुँन कैं निस द्यौस दोऊ अधीन
दोउन कै गर बाँह धरैं ही रहत दोऊ,
दोउन कैं चाह चित्त नित नवीन
'नागरिया नागर' ठगायबे कौ मन भोरे,
ठगिबे को दोउन दोऊ प्रवीन ॥३६९॥

५. चौताल

राजति है जोरी घन दामिन बरन की
केलि कला कुसल कान्ह, केलिनि की कुंज बीच,
बातैं करैं घातनि सौं मन के हरन की
सुखहि सकेलिबे कौं बैठे हैं अकेले दोऊ,
बनी बिधि आज गढ़-लाज बिखरन की
'नागरीदास' रति केलि के निकेन,
उभै उरनि मैं चाह कल केलि के करन की ॥३७०॥

६. तिताल

अरझि रहे हैं बिहारी प्यारी रंग मैं
पंग भईं अँखियन बिच अँखियाँ, अधखुली अमल अनंग मैं
तंद्रा रूप नैंन देखन कौं, नैंन भए सब अंग मैं

अति रस छकनि छकी छबि उछरत
अधर दबनि तैं 'नागरिया' भ्रुव भंग मैं ॥३७१॥

७ ताल चपक

कुंज रस केलि कॅवनीय दंपति करत
परसपर हित बिबस रूप मादिक छके,
दूरि कर बसन उर सुदृढ़ अंकनि भरत
पियत मधु अधर सुख-सिंधु मैं मगन मन,
निकट तिहिं समैं चख चारि खंजन लरत
कबहुँ भ्रुव-भंग-जुत 'सी' करत रंग सौं,
अंग प्रति अंग पिय परस दैं मन हरत
बिथुरे बिच कचनि मुख गउर निकसत अमित,
चंद तैं सघन मनु स्यांम बादर टरत
सुरत सुख स्वेद तैं महकि केसरि चली,
बास 'नागरीदास' धीर न धरत ॥३७२॥*

८ ताल चपक

कुंज महल आजु मंगल है री
किसलय दल कुसुमनि की सज्या रची, तापर बिछई पीत पिछौरी
भए मनोरथ मेरे जिय के, सुख समाज पौढ़े सॅग जोरी
हौं 'श्री भट्ट' ओट ह्वै निरखौं, क्रीड़ा करत किसोर किसोरी ॥३७३॥

४२. रास-रस-लता

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैने ए दोहा
निस सरदोत्फुल मल्लिका, ककुभ किरण राकेस
गही बैण हरि निरखि बन, रास-रमण-आवेस ॥१॥
पूरन ससि, निस सरद की, चलि बन मलय समीर
होत बैंण-रव रास हित, तरणि-तनैया तीर ।२।

---

(३७२) देखिए यही ग्रंथ ६५, उत्सव माला ८७। परस दैं = परस दैन (हस्त)।
३७१. अमल = नशा। भ्रुव = भ्रू, भौंह।
दोहा १. सर्दोत्फुल = शरद में फूली हुई। मल्लिका = चमेली। ककुभ = दिशा। बैंण = वेणु, मुरली। आवेस = प्रवल मनोवेग।
२. तरणि = सूर्य तनैया = तनूजा, पुत्री। तरणि तनैया = सूर्य की पुत्री, यमुना।

बंसी-धुनि दूती पठै, बोलि लई ब्रज-बाल
समर बिजै आरंभ रस रास करन नँदलाल ॥ ॥
परम प्रेम आरूढ़ रथ, विषम पथ, धुनि बैंन
रास केलि सग्राम हित, चली मदन-गढ लैंन ॥४॥
बिमल जुन्हैया जगमगी, गई बैंन धुनि छाइ
प्रेम-नदी तिय रगमगी, वृंदा कानन आइ ॥५॥
सुनत बैंन बन तिय चली, मुनि मन भए अधीर
'नागरि' लखि रस रास नभ, भई बिमाननि भीर ॥६॥

१. पद, राग केदारो, ताल जात्रा

जैति श्री मुरलिका-बपु-धरन-भारती,
लाल मृदु अधर सज्या बिहारी
कवल-मुख-मधुर-मकरंद सींचत तहाँ,
छिनक बिनु प्रांन तजि दैंनहारी
कृष्ण प्रिय परम संकेत हित दूतिका,
रास-रस-केलि-धन-कोष-तारी
अखिल ब्रह्मांड धुनि व्यापक भई
अमर नर नारि धृति मति बिसारी
विस्व-बिजई-बितन-गर्व-खंडन-करन,
घर हरनि घोष जन की जियारी
'नागरी' नवल ब्रज गोपकनि हित,
कुँवर धराधरन नित बैनवारी ॥३७४॥

२. ताल जात्रा

राधिका-रवन की मुरलिका श्रवन सुनि,
भवन कौ काज तजि, गवन कियौ भामिनी

---

(३७४) देखिए यही ग्रंथ पद ४५ और उत्सवमाला पद ८७।
(दोहा १-५) ये दोहे 'रास रस लता' के प्रथम पांच दोहे हैं।
(३७४) देखिए यही ग्रंथ, पद ७२६। परम = परस। धन कोप तारी = धरन कोस्तारी (हस्त।
दोहा ३. समर = स्मर, कामदेव।
३७४. मुरलिका बपु धरन = मुरली का रूप धारण करनेवाली। भारती = सरस्वती। धृति = धैर्य। मति = बुद्धि। बितन = अनंग, कामदेव। जियारी = जिलाने वाली। धराधरन = गिरधर।

नाद-बस बिबस भई, आंन गति छूटि गई,
बिपुन आतुर चली, रूप अभिरामिनी
निकट पिय कैं गई, रसिक कर गहि लई,
स्याम घन गिरधरन, जुबति सौदांमिनी
करहिं बासुर केलि, कंठ भुज मेलि,
सखी चतुर संग 'चतुरभुजदास' की स्वांमिनी ।।३७५।।

३. तिताल

सुनि धुनि बैंन, चली बृज जुबतिन की भीर
ज्यौं दुंदुभि सुनि सनमुख निकसत, समर सुभट रन धीर
प्रेम खेत बृंदावन मग, रह्यौ छाय घोष मंजीर
'नागरी नागर' मिलत ही मै, छुटे काम कटाछिन तीर ।।३७६।

४. चर्चरी ताल

चतुर यह दूतिका बासुरी स्यांम की
नवल ब्रज बधुनि के आय कांनन लगी,
दूरि करी लाज कुल कांनि सब बांम की
भवन प्रति भवन तैं लै चली बिपुन कौ,
भुरकि बई डारि कै मत्र पढ़ि कांम की
करिकैं तिय अतन-मई, मिलई 'नागरि' नई,
दई न सुधि रहनि अप-अपनै सुख-धांम की ।।३७७।।

५. ताल जात्रा

आज मोहन रची रास रस मंडली
उदित पूरन निसानाथ, निर्मल दिसा,
देखि दिनकर-सुता-सुभग-पुलिनस्थली
बीच हरि बीच हरिनाच्छि माला बनी,
तरुन तापिच्छ, मनौं कनक कदली रली
पवन बस चपल दल झुलनि सी देखियत
चारु चारु हस्तक भेद भाँति भारी भली
चरन विन्यास करपूर कुमकुम धूरि
पूरि रही दिसि बिदिसि कुंज बन की गली

(३७६--७७)—देखिए उत्सवमाला, पद ६५-६६ ।

कुंद मंदार अरविंद मकरंद मद,
कुंज पुंजनि मिली, मंजु गुंजत अली
गांन रस तांन के बांन वेध्यौ विस्व,
जांनि अभिमांन मुनि ध्यांन रति दलमली
अधर गिरधरन कैं लागि अनुराग वस,
जगत विजई भई मुरलिका काकली
रस भरे मधि मंडल विवि राजत खरे,
नंद नंदन कुँवर वृषभांन (की) लली
देखि अनिमेष लोचन गदाधर जुगल
लेखि जिय आपनी भाग महिमां फली ॥३७८॥

(६)

रास मैं रसिक मोहन बने भामिनी
सुभग पावन पुलिन, सरस सउरभ नलिन
मत्त मधुकर निकर, सरद की जामिनी
त्रिविध रोचक पवन, ताप दिनमनि दवन,
तहाँ ठाढ़े रवन, संग सत कांमिनी
ताल वीनां मृदंग, सरस नाचत सुधंग,
एक तैं एक संगीत की स्वांमिनी
राग रागनी जमी, विपुन बरसत अमी,
अधर-बिंबनि रमी मुरलि अभिरामिनी
लाग कट्टर उरप, सप्त सुर सौं सुलप,
लेत सुंदर सुघर राधिका नांमिनी
तत्तथेई थेई करत, गतिव नवतन धरत,
पलटि पग डगमगत, मत गज गांमिनी

(३७८) बनी (व्रजमाधुरी सार) = बरुनि (हस्त)। तापिच्छ = तापिंछ (व्रजमाधुरी सार), तापछि (हस्त)।

३७८. दिनकर-सुता = यमुना। पुलिन = नदी-तट। हरिनाच्छि माला = मृग नयनियों की पंक्ति। तापिच्छ = तमाल। रली = मिली। दल = पत्ता। हस्तक = नृत्य में हाथों की मुद्रा। चरन विन्यास = पैर रखना। बिदिस = दिशाओं के बीच के चारों कोण, आग्नेय, नैऋत्य, ईशान और वायव्य। काकली = मधुर ध्वनि।

धाइ नव रंग धरी, उरसि राजत खरी,
उभै कलहंस 'हरिवंश' घन दामिनी ॥३७६॥

(७)

करत हरि नृत्त नवरंग राधा संग,
लेत नव गति भेद चरचरी ताल के
परसपर दरस रस मत्त भए तत्तथेई थेई,
बचन रचत संगीत सु रसाल के
फरहरत बरहि बर, ढरहरत उर हार,
भरहरत भँवर भर, बिमल बनमाल के
खिसत सित कुसुम सिर, हसत कुंतल मनौं,
लसत कल झलमलत स्वेद कन-भाल के
अंग अंगनि लटक, मटक भंगर भौंह,
पटक पट ताल कोमल चरन चाल के
चमकि चल कुंडलनि, दमकि दसनावली,
विविधि बिंजत भाय लोचन बिसाल के
बजत अनुसार द्रिम द्रिम मृदंग निनाद,
झिमकि झिझकार किंकिनी जाल के
नील नव जलद मैं तड़ित तरफत मनौं,
यौं बिराजत प्रिया पास गोपाल के
ब्रज जुवति जूथ अगनित बदन-चंद्रमा
चंद भयौ मंद उदौत निहिं काल के
मुदित अनुराग बस राग रागिनी
तांन गांन गति गर्व रंभादि सुर-बाल के
गगन चढ़ि, मगन रस, सघन बरसत फूल
वारि डारत रतन जतन भरि थाल के
एक रसनां 'गदाधर' न बरनत बनैं
चरित अदभुत कुँवर गिरधरन लाल के ॥३८०॥

---

३७६. सुबंग = सुढंग। कट्टर = नृत्य का अंग विशेष। सुलप = सुंदर आलाप। गतिव = गति। नवतन = नूतन। नवरंग = श्री कृष्ण। उरसि = उर में।

३८०. बरहि = बर्हि, मयूर (पुच्छ)। सुर-बाल = अप्सरा।

८. ताल चर्चरी

रसिक रस रास नवरंग नृत्तत लला
संग गउरंग गर बाँह छवि देत प्रिय,
सजल घन मांझ मनु चमकि रही चंचला
वलय ककन क्कणित छीन कटि किंकिनी,
पगनि छिगुनीनि कैं छोर छनकत छला
'नागरीदास' दोउ निर्त श्रम डगमगे
रगमगे बार खुलि उरनि चलि अंचला ।।३८१।।

९. ताल चर्चरी

सरस सुघर नव किसोर गति सुघग नाचैं
नूपुरादि मिलि मृदंग बीन लीन अनुपम धुनि
सहचरि कल गान रंग चहचरि ह्वै मांचैं
कहि न परत भव विधांन, नव घन तन लहलहान,
विलुलित बनमाल भृंग लपटत सँग आवैं
अभिनय नव उरप तिरप, धरत चरन चपल चारु
मंजुल झुकि मुकट सीस, गति मति बिसरावैं
दांवन बिच पवन परसि, फैलि फैलि परत फिरत,
गति तरंग सागर बढ़ि, रंग मांझ बोरैं,
'नागरिया' निरखि बदन, श्रम-जल-कन झलमलात,
प्रेम बिबस बाल नील अंचर मुख ढोरैं ॥ ३८२ ॥

१० ताल जात्रा

आज सखी रसिकनी रसिक निर्तत भलैं
जुवति-जन मडलाकार वृंदा-विपुन,
बीच घनस्याम पिय दामिनी झलमलैं
बीन रसलीन बजि, रुणित कल किंकिनी,
मैंन के मंत्र की जंत्र धुनि धुनि रलैं
भ्रमत तन चपल मिलि परत नहिं दृष्टि जब,
दरस हित परस मन नैंन दोऊ कलमलैं

(३८१–८२) देखिए उत्सव माला पद ८१, ८० ।

मुकट सिर झलक, अरु रलक हारावली
झुलत बिब्र अलक लखि परत नांहिन पलैं
'नागरीदास' भुज अंस धरि दोउ चलत,
कोटि कदर्प जब चरन तर दलमलैं ॥ ३८३ ॥

११. ताल

मोहन मोहनी रस भरे
भौह मोरनि, नैंन फेरनि, तहाँ तैं न टरे
अंग निरखि अनंग लज्जित, सकत नहिं ठहराय
एक की कहा चली, सत सत कोटि रहे लजाय
हस्तकनि गति भेद निर्तत छीन कटि सुकवार
उड़त अंचल प्रगट कुच दोउ कनक घट रस सार
दरकि कंचुकि, तरकि माला रही धरनी जाय
'सूर'प्रभु अकुलाय उरझत, लई दौरि उठाय ॥ ३८४ ॥

१२. इकताल

रास रंग वर सुधंग निर्तत है प्यारी
तत्तरंग धुमकटि तकि थेई तथेई तथेई थेई
थेई थेई थेई उघटत जुवती समूह, बाजत सम तारी
बीन परन आवज मिलि गावत ललिता प्रवीन,
छीन सु कटि भंग सी ह्वै भंग भुव अन्यारी
'नागरि' छबि लखि रसाल, इक टग पिय दृग बिसाल,
वारत मनि-माल लाल, बोलत बलिहारी ॥ ३८५ ॥

१३. चौताल

आज अति अमित बिहारनि जानि
तांडव नृत्य रास मंडल तै उर धरि प्यारी आनि
श्रम-जल पौछत कर-पंकज सौं, बीजत अंचल पांनि
बीरी देत बनाय बदन-बिधु, प्रेम चतुर अभिमांन
पौढ़त किसलय तलपहि स्यांमा, निज उर ऊपर आंनि
'हरि वल्लभ' बीजत, पद सेवत, आली स-हित सयानि ॥३८६॥

---

(३८३) देखिए उत्सव माला पद ७२।
(३८४) मोरनि = मरोरी (हस्त)।
(३८५) देखिए उत्सवमाला, पद ८२।
३८६. बीजत = बिजना करते हैं; हवा करते हैं।

१४. राग बिहागरा का ख्याल, इकताल

कठिन लगनि दा हाल नी मैंनू आँखां
जेहि कुछ दिल अंदर बीतै, सो दिल ही दिल विच राखां
मोहन दी गल्लां विन कहियाँ घूट घुटण दी चाखां
'नागरिया' कोई महरम नाहीं, वे महरम है लाखां ।।३८७।।

१५. तिताल

बन बन बाजे बसी हरि की
आवत ही धुनि श्रवननि मांही, भूलि गई सुधि घर की
हियौ जरत पुनि, गरो जरथौ री, नीर धार दृग ढरकी
'मुरलीधर' पिय रूप माधुरी, हिये आय अब अरकी ।।३८८।।

१६. तिताल

स्याम बलैया मोरी बोले
मुख की हम सौं, हिय की औरनि सौं, जिय की गुठी नहिं खोलैं
घाट बाट अरु बगर बगर मैं, उभकत भाँकत डोलैं
'जुगलदास' मोहन प्यारे क्यौं प्रांन परेखनि छोलैं ।।३८९।।

१७ तिताल

कन्हैया नैननि कौं पैंड़ो न्यारो
ज्यौं ज्यौं हटकत, त्यौं त्यौं अटकत, चलत न चारौ हमारौ
दीसत ही कछु और न दीसैं, दीसत रूप तिहारौ*
'नागरिया' हमकौं तुम प्यारे, तुमकौं कपट पियारौ । ३९०।।

१८. इकताल

रँगीली सब प्रेम भरी बृज नारि
अति आतुर चित नद-नंदन पर रिझई फिरत रिझवारि

---

* यह चरण हस्तलेख में नहीं है और मुद्रित प्रति के शेषांश के आधार पर प्रस्तुत किया गया है ।

३८७. दा=का । नी मैंनूं आंखां=री मैंने आँक (समझ) लिया है । दी=की । गल्लां=(?) घूंट० = घुटन की घूट चख रही हूँ । महरम = अंतरंग मित्र, परम आत्मीय ।

३८८. अरकी = अड़ गई ।

३८९. गुठी = गांठ, भेद । परेखनि = परीक्षा, जाँच । छोलैं = छीलें ।

३९०. चारौ = दाँव, उपाय, बस ।

बिसरि बिसरि घूँघट नैंननि सौं, भरत रूप अँकवारि
अटक परी हिय 'नागर' नट की, सकैं कौन निरवारि ॥३९१॥

१९. इकताल

लग्यौ रहै अँखियन मैं पररंभन, पल अंतर न परैं
अधखुली चितवनि, अधर उचैं हसि, नैंनन सैंन करैं
मुख निपरैं सुख, मुख फूँकनि सौं, सात्विक स्वेद हरैं
'नागरिया नागर' रूप अमल बस, मन तंद्रा न टरैं ॥३९२॥

२०. ताल चपक

ए री मेरौ संग न छाँड़त छैला
औघट घाट फिरत बन बीथिन, रोकत टोकत गैला
हौं दुरि रहौ भवन मैं तोऊ, अरयौ ही रहत अरैला
'रसनिधि' प्रभु पी रूप सुधा रस, परयोई रहत परैला ॥३९३॥

२१. तिताल

सरद निसि रास रस सिंधु बढ़यौ, अनुपम उपजत तान तरंग
सुघट सँगीत सुधंग सुलफ गति, होत दुहुनि मैं हाव-भाव भ्रुव-भंग
मधि मंडल श्री राधा मोहन, लखि मूर्छित रति अवनि अनंग
'नागरीदास' अकास चंद्र रथ, चलत चक्र गति पंग ॥३९४॥

२२. इकताल

अरी रास मैं रंग भरी नचत सरस स्यांमा प्यारी
चितवत चकृत रहि गई चपला, मींड़त हाथ बिचारी
गांन सुनत खग मृग मन मोहे, लज्जित भई कोकिला नारी
'नागरीदास' चकोर साँवरो, देखत यकटक बदन चंद उजियारी ॥३९५॥

---

(३९१) निरवारि = निवारि (हस्त, सु)
(३९२) सात्विक = स्वातिक (हस्त)। बस, मन = बसन (हस्त)।
(३९३) तोऊ = तौ उर (हस्त)
(३९४-९५) — देखिये उत्सवमाला पद ९३, ९२।

३९२. पररंभन = परिरंभन, आलिंगन।
३९३. गैला = पथ, राह। अरैला = अड़ जानेवाला, जिद्दी, हठी। परैला = पड़ रहनेवाला; न टलने वाला।

४३. भ्रू-भंग (मान)

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनें ए दोहा—
सौंहैं हू चाहत न तू, केती खाई सौंह
ए हो क्यौं वैठी किये, ऐंठी ग्वैंठी भौंह ॥१॥
करि भौंहै बाँकी कहौ, तिनगौंहैं क्यौं बैन
इत राजी अब कीजिए, इतराजी के नैंन ॥२॥
चित चिंता, चाहत धरनि, चितवति नीची.नारि
कहौ सखी किहि कारनैं, पहरे पलटि सिंगार ॥३॥
मांन करत बरजत न हौं, उलटि दिवावत सौंह
करी रिसौंही जायगी, सहज हसौंही भौंह ॥४॥
तुम ही सरबस कांन्ह कैं, मांन करौ बे-काज
राधावल्लभ नाम की, प्यारी निबहौ लाज ॥५॥
छाँड़ि इतौ अनखाव री, अहे बावरी बाम
'नागरिया' भ्रुव भंग मैं, भये त्रिभंगी स्यांम ॥६॥

१. पद, राग बिहागरौ, ताल चपक

मुसकौंहैं नैंन बैंन, भौंहैं सतरौंही
मोहि आवत देखि भई हैं रुखौंही
रुठौंही मनाई कछु प्रकृति न जानी परै,
मारि डारति चितवनि तिरछौंहीं
अनखौंही ऐसी बातैं, लजौंही सी दृष्टि गात,
आवत ही जात फिरि, पछितानी हौं ही
'सूरदास मदन मोहन' पाय धारौ तुम,
मो तन सूधैं चितवत नहिं सौंही ॥३६६॥

२. इकताल

लाडिली न मांनैं लाल आप पाय धारौ
जैसै हठ तजै प्यारी, सोई जतन बिचारौ
बातै तो बनाय कही. जेती मति मेरी
नैकहु न मानै लाल ऐसी प्रिया तेरी

(दोहा १-६)—अनुक्रम ३५, ३६ के प्रारंभ में भी यही दोहे हैं। दोहा१,४ बिहारी के हैं।
(३६६) प्रकृति = प्रति।
३६६ सतरौंही = रुष्ट, क्रुद्ध। रुखौंही = रुक्ष।

आपनी चौंप कैं चायन सखी बेस कीनौं
भूषन बसन सजि बीनां कर लीनौं
उततैं आवत देखि चकित निहारी
"कौन गांव बसति हौ रूप की उज्यारी"
"गाँव तो है नंदगाँव, जहाँ की दुलारी
नाँव तौ है साँवल सखी, तेरी प्रांन प्यारी"
कर स्यौं कर जोरि स्यामां निकट बैठाई
सप्त सुरनि मिलि सुलफ बजाई
रीझि मोती हार चारु उरप हिरावै
"हमारौ साँवरौ भटू, ऐसो ही बजावै
जोई कछु चाहौ बलि सोई मांगि लीजै"
"यही दांन, साँवरे सौं मान न कीजै"
छदम उघरि आयौ, हसि पीठ दीनी
'विद्यापति' राधिका भुजनि भरि लीनी ।।३९७।।

३. इकताल

प्यारी जू प्रवीन बीना मधुर बजावैं
तांन की तरंगनि चित स्यांम कौं घुमांवैं
राग रस मादिक सौं चढ़ि गईं भौंहैं
रीझि रीझि नावैं सीस लाल प्रिया सौंहैं
कुंज के बिहंगम सब जकि थकि सुनैं
'नागरिया' मौनि गहे, सखी सीस धुनैं ।।३९८।।

४ इकताल

मदन-मोहन सग मोहनी कुंज-सदन मधि बिलसति नव रंगे
प्रांन प्यारी प्रांन प्यारौ लटपटाय पगि रहे,
आधे आधे बचन कहत माते अनंगे
परसत कर चिबुक बिंदु, चाहि रहत बदन-इंदु,
हसि हसि हसि जात कबहु लेत उछंगे

(३९७) उघरि = उबरि (हस्त) ।

३९७. चौंप - प्रगाढ़ लगन । स्यांमां = राधा । सुलफ = सुलप, सुंदर आलाप ।
३९८ मादिक = मदिरा ।

'गोविंद' बलि विचित्र जोरी, नव किसोर किसोरी,
गावत केदारो राग, सुघर तांन तरगे ॥३९९॥

५. इकताल

साँवरे की सुंदर सुख-रास-भुजा दियैं सीस,
पौढ़ी स्यांमा कुसुम-सेज सुखद-कुंज-महल मैं
पिय कैं हिय प्रेम ललक, बदन देखि भूली पलक,
कँवल-नैन रीझि रहे रूप चहल पहल मैं
अंग अंग अभूत कांति, अरुझि रहे अनूप भाँति,
प्रीतम रस रंग प्रिये, प्रथम संग दहल मैं
'रामराय' पिय प्यारी, भए परसपर हितकारी,
'भगवान सखी' सुखारी, दुहुनि की रस टहल मैं ॥४००॥

४४. कृष्ण-रूपासव

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनें ए दोहा
उहीं गली ठाढ़ौ अली, छली छबीलौ छैल
तिय अँखियाँ कौतिक झुकी, रुकी खरीक की गैल ॥१॥
खरौ खरिक, सुख साँवरौ चरन लकुट लपटाय
मो मन लीनें फेरि कैं, कँवल फिराय फिराय ॥२॥
ठाढ़ौ ब्रज की पौरि हरि, कीनें चंदन खौरि
उहीं ठौर, हिय लखि परी, अरी मदन की रौरि ॥३॥
बीच बाट परि नाग ज्यौं, कोइक कारैं गात
उही बाट जौ जात तिय, खाट धरी घर जात ॥४॥
छबि सौं ठाढ़ौ साँवरो, हौं निकसी तहाँ जाय
परी रूप बेरी दृगनि, गिरी अँधेरी आय ॥५॥
ब्रज मोहन 'नागर' निरखि, मग बिच बिसरी देह
बहुरि दई का गति भई, को मो ल्याई गेह ॥६॥

---

(४००) अरुझि रहे = अरुझि रहे रूप चहल पहल में (हस्त)।
(दोहा १-)६—ए दोहे अनुक्रम ३६ के प्रारंभ में भी हैं।
(दोहा ४.) बीच बाट परि = बिच बटपारे (हस्त)। जात = आत (यही ग्रंथ, अनुक्रम ३६)।
३९९. चाहना = देखना। उछंग = गोद।

५. ताल चपक

मीत मिलन मैं रंग रह्यौ री
नैंननि नैन, बैंन बैंननि सौं, कर सौं कर हसि गाढ़ैं गह्यौ री
कोक कलानि कुँवर कोविद अति, लीला-सिंधु-प्रवाह बह्यौ री
'नागरीदास' रहसि रस दंपति-सुख मो पैं नहिं जाय कह्यौ री ।।४०५।

६. ताल चपक

वे देखौ बरत झरोखनि दीपक, हरि पौढ़े ऊँची चित्रसारी
सुंदर वदन निहारन कारन, राखे हैं बहौत जतन करि प्यारी
कंठ लगाय, भुज दै सिरहानै, अधरामृत पिय प्यारी
तन मन मिली प्रांन प्यारे सौं, नौतन रस बाढ़्यौ अति भारी
'कुंभनदास' दंपति सुभग सींवां, जोरी भली बनी इकसारी
नव नागरी मनोहर राधे, नवल लाल गोवर्द्धन धारी ।।४०६।।

४५. मृगमद-आड़

था अनुक्रम की अलापचारी मै दैंनैं ए दोहा
गहगहाट बर बदन पर, स्यांम मिलन की चाड़
बात कहत हसि रत चित, परत कपोलनि गाड़ ।।' ।।

कीनी मृगमद आड़ रचि, गोरै वदन-मयंक
मनु पिय मोहन मंत्र की, राजत अवली अंक ।।२।।

मृगमद आड़ लिलाट तिय, कीनी सरस सुवारि
मनु मधुपावलि कवल पर, बैठी सभा सँवारि ।।३।।
मृगमद आडन नीलमनि, मनु सँवारि कै साज ।
बदन-रूप-सर पर रची, पैरी मनमथ राज ।।४।।
मृगमद आड़ लिलाट तिय, कीनी है छबि-ऐंन
वदन-रूप-सर-बीचि मै, मनूं सतेसा मैन ।५।।

---

४०६. चित्रसारी = विलास गृह, जो बहुविध चित्रों से सुसज्जित रहा करता था। सुभग सींवां = सौंदर्य की सीमा। इकसारी = एक सी; अभिन्न।

दोहा १. गहगहाट = हर्षोत्फुल्लता। चाड = चाट, चोप, ललक। गाड = गड्ढा।

२. मृगमद = कस्तूरी। आड = तिरछा तिलक।

४. पैरी = (१) पैडी, सीढ़ी, (२) पीढ़ी, छोटा पीढ़ा, आसन।

५. सर = सरोवर। बीचि = लहर। सतेसा = ?

कीनी मृगमद आड़ रचि, 'नागरिया' नव बाल
मानूं रस सिंगार की लहरैं, उपजत भाल। ६।।

१. पद राग बिहागरौ, इकताल

आज सोहत है मृगमद की आड़
भिदै बात मुसक्यात हसति, तब रुचिर कपोलनि परत गाड
नैंन बिसाल, रसाल सु अंजन, बाँकी चितवनि भरी है अलाड़
'गोवर्द्धनेस' पल पल नहिं लागत, कठिन हिलग, मिलिबे की चाड़ ।।४०७।।

२. ताल चपक

वे देखि द्रुम गहबर बन के नीरैं,
चलि मिलि, कहा जोपैं, रजनी जुन्हाई
बिपुन अँध्यारौ भारौ, परम पियारौ तहाँ,
कहौं कहौं कुंज कुटी सुखदाई
सुंनत बचन जिय मैं रुचि बाढ़ी,
हिय मैं पिय मूरति मँड़राई
'नागरीदास' बिहारनि बनि ठनि,
गवन कियौ जित रवन कन्हाई ।।४०८।।

(३)

सरद उज्यारी रैंन कौं देखत पिय प्यारी
वृन्दावन गिरराज तलहटी मैं, आनंदित चढ़ि ऊँचि अटारी
ठौर-ठौर सर भरे बिमल जल, देत कमोदनि मोद महा री
गाय रहे, लपटाय रहे तहाँ, रस बस 'नागर नागरिया' री ।।४०९।।

४. ताल चपक

स्यामा प्यारी आगैं चलि, आगैं चलि,
गहबर बन भीतर जहाँ बोलै कोइलरी

(४०९) महा = सहा (हस्त)।
४०७ भिदै बात = जब बात उसके हृदय में भिद जाती है, प्रविष्ट हो जाती है
अलाड = अल्हडता, भोलापन। पल = पलक। पल = क्षण। हिलग = लगन,
प्रेम। चाड = चोट, प्रबल इच्छा।
४०८. कहौं कहौं = कहीं-कहीं। बनि ठनि = सजकर, सँवरकर। रवन = रमण, प्रिय।
४०९. कमोदनि = कुमुदिनी। मोद = सुगंध।

अति ही विचित्र पत्र फूलन की सज्या रची,
रुचिर सँवारी तहाँ तूं 'व सोइल री
घरी घरी पल पल तेरियै कहानी, तुव मग जोइल री
'हरिदास' के स्वांमी स्यांमा कुंज बिहारी, कांम रस भोइल री ॥४१०॥

५. इकताल

प्यारी निधि पाई है पियारे
बिहरत दोऊ एक रस ह्वै कें, गह्वर बन अँधियारें
मदन बिबस छके, बन निहारत, गउर देह उजियारैं
'नागरीदास' किंकिनी धुनि सुनि, बिंधि गए खग-मृग मैंन तीर अनियारें ॥४११॥

६. ताल चपक

अलछ लखे दोउ कुंज कुटी मैं
भँवरनि भीर छाय रही ऊपर, नूपुर धुनि मैंन सैंन जुटी मैं
बिन अंबर तन जोति बिमल के सोत रहे छिपा छुटी मैं
'नागरीदास' सुरत बांनी की भनक परत ही, धरनि लुटी मैं ॥४१२॥

७. ताल चपक

चलौ किंन देखैं कुंज कुटी
सुंदर स्यांम मदन मोहन जहाँ, मनमथ फौज लुटी
सुरत सेज मैं लरत अंगनां, मुक्तामाल तुटी
उरज ते जु कंचुकी चुरकट भई, कटि तट ग्रंथि खुटी
नंद-नंदन व्रषभान-नंदनी नैंकु न चाहत छुटी
चतुर सिरोमनि 'सूर' नंद-सुत लीनी अधर घुटी ॥४१३॥

---

(४१३) ते जु = तेज (हस्त)। घुटी = धुटी (हस्त)।
४१०. कोइलरी = कोयल ' तू' व सोइलरी = तू अव सो। जोइल री = प्रतीक्षा कर रहे है। भोइज = भीगे हुए; सिक्त।
४११. अनियारें = नोकीले।
४१२. अलछ = प्रच्छन्न; छिपे हुए। सैंन = सेना। जुटी = एकत्र, भिड़ी। अंबर = वस्त्र। छिपा = रात। भनक = मंद ध्वनि; गुंजार।
४१३. चुरकट भई = दरक गई, फट गई। खुटी = खुल गई। छुटी = (१) छुट्टी, अवकाश। (२) छूटना, विलग होना। घुटी = घूँट।

८. तिताल

सिगरी निसा चितई कुंज कुटी कैं द्वार
करत सैंन, खुलि जात नैंन, तब इक टक रहत निहार
उरझे बाहु मृनाल परसपर, उर हारनि सौं हार
'नागरीदास' सोये रस भोये, हरि वृषभान-कुँवारि ॥४१४॥

४६. 'रूपधार घनश्याम की'

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा—
रूप धार घनस्याम की, छवि तरंग की झोक
प्रेम प्यास कैसैं मिटैं, नैंननि नान्हीं ओक ॥१॥

पति कुटुम्ब देखत सबै, घूँघट पट दियैं डारि
देह गेह बिसरे तिन्हैं, मोहन रूप निहारि ॥२॥

दृग पोंछत अन्तर अधिक, सह्यो न जात निमेष
पल-पल जल भरि आवहीं, रूप माधुरी देख ॥३॥

बड़ौ मन्द अरविन्द-सुत, तिहिं न प्रेम पहिचानि
पिय मुख देखत दृगनि को, पलक रची बिच आनि ॥४॥

मनमोहन मुख निरखि कैं, अँखियाँ नहीं अघात
'नागरि' दृगनि चकोर कैं, सब ससि कहाँ समात ॥५॥

१ पुनः पद, राग बिहागरौ, तिताल

दुहुनि की चितवनि ग्रथि घुरी
रूप छकौहीं, भई रस अरसौहीं, दीठ मै थकी दैन मुरी
चिबुक उठाय पिय सुधिहिं भुलाय रहै, चित्र के लिखे से रीझु री
'नागरिया' गोरी स्यामा जोरी रंग बोरी, अब ओट ह्वै निहारैं ए दुरी ॥४१५॥

२. इकताल

नाहीं सुरझै उरझनि प्रेम की, गई रोम रोम मै भोय
श्री राधे जू मोहन ह्वै रहे, रहे राधे मोहन होय

(दोहा १-५ २८वें अनुक्रम के प्रारंभ मे भी यही दोहे है। (४१४) ग्रंथि = ग्रंथ (हस्त।
४१४ सैंन = शयन।
४१५ ग्रंथि = गाँठ। घुरी = घुल- कस गई। मुरी = मोड, घुमाव। दुरी = छिपी हुई।

ललित लतनि तर रगमगे हो, दोऊ नैंन नैंन सनमांन
नैंननि मैं नैना खगे, अरु पगे प्रानन मैं प्रान
चिबुक तियैं पिय कर दियैं हो, सोहत हैं इहि भाय
नील कँवल पर अरुन कँवल, ज्यौं खिले परम छवि पाय
'नागरिया' रजनी घटैं ज्यौं ज्यौं, चद मलिन ह्वै जोत
त्यौं त्यौं आगर रूप दुहुनि कौ, इतै चौगुनो होत ॥४१६॥

३. ताल चपक

मौंहन मुखारबिंद पर कोटिक मनमथ वारौं री माई
जिहिं जिहिं अंगनि दृष्टि परत है, तहीं तहीं रहत लुभाई
अलक तिलक कुंडल कपोल छवि, इक रसना मोपैं बरनि न जाई
'गौविंद' प्रभु की बानिक पर बलि बलि, रसिक चूड़ामणि राई ॥४१७॥

४. ताल चपक

खंजन नैंन रूप रस माते
अतिसय चारु विमल चंचल ये, पल-पिंजरा न समाते
चलि चलि जात निकट कांनन कैं, उलटि फिरत ताटंक फँदा ते
'सूरदास' अंजन गुन अटके, नां तौ तबहि उडि जाते ॥४१८॥

५. ताल चपक

कजरा घुरि रह्यौ और बेंदी रोरी की
पिय सुहाग की झलकनि मुख पर, ललकनि नेह दसा गोरी की
सहज सिंगार सलौंनी भांमिनि, कहा कहूँ बातनि भोरी की
नायक नँद नंदन की जीवनि, 'नागरिया' बलि रस-बोरी की ॥४१९॥

६. ताल चपक

निकुंज-महल मे हैं ललना-रस-भरे बैठे संग पिया री
राजित रुचिर रवनीय बदन पर, मृगमद तिलक सँवारी

---

४१६ भोय = मिल। खगे = धँसे। पगे = मिलकर एक हो गए।
४१७. बानिक = वेश; सज धज।
४१८. पल = पलक। ताटंक फँदा ते = बरौना के जाल से। गुन = (१) गुण। (२) रस्सी।

घन चय चिकुर कुसुम नाना रँग, ग्रंथित चंपक बकुल गुलाब निवारी
'गोविन्द' प्रभु रस बस कीनैं वृषभानु-दुलारी मदनमोहन गिरधारी ॥४२०॥

७ ताल चपक

पहिरैं कल झूमक सारी, झूमि रह्यौ लोभी पिय कौ मन
झूमत कचन चलदल घूँघट, नैंननि पल लागन लीनौ मन
स्यांम दसनि बिच चौका सित दुति, फैलि रही सोभा संपति घन
'नागरीदास' तोरि तृन प्यारौ, बारत ज्यौं जोबन सर्बसु धन ॥४२१॥

८. ताल चपक

रंग भर्‍यौ लाल, रँगीली प्यारी राधा
एक तन, एक मन, एक ही समांन दोऊ,
नैंकहू न न्यारे ह्वै सकत पल आधा
छबि सौं छबीली-भाँति, नैननि मैं मुसकाति,
मुसकनि मैं रँग बढ्यौ है अगाधा
जैसिय 'नवल सखी', जैसेई कुंज बिहारी,
तैसी मेरी प्रांन-प्यारी पूजी मन-साधा ॥४२२॥

९. ताल चपक

छबीले दृग घुरि घुरि हसि मुरि जाहि
नेह रूप चितवनि त्यौं नारैं पिय देखत न अघाहिं
इक कर लेत बलैया बिथकित, इक कर चिबुक उठाहिं
बलिहारी कहत बिहारी 'नागर', जब प्यारी मुसकांहि ॥४२३॥

१०. तिताल

सोहत हैं अलसौंहैं नैंनां
लटकि लटकि पिय पर अरसावति,
सिथल कहत मुख आधे आधे बैना

---

(४२०) भरे = भर (हस्त)।

४२०. रवनीय = रमणीय। चय = समूह। चिकुर = बाल।

४२१ झूमक = घुंघरु। झूमक सारी = साड़ी जिसके घूँघट में घुंघुरू टँके हुए हों। चलदल = पीपल। स्याम दसन = काली मीसी लगाए हुए दांत। चौका = आगे के चार दाँत। सित = श्वेत। ज्यौं = जी, प्राण।

४२२. साधा = प्रबल इच्छा, साध (श्रद्धा)।

४२३. त्यौं नारैं = नारी की ओर।

बहुत गई निसि, प्रिया, जँभावत, चुटकी देत लाल सुखदैनां
'नागरीदास' सखी छबि चितवत, बिसरि बिसरि जात उर उपरैंनां ॥४२४॥

११. ताल चपक

यह जोबन, यह रूप मनोहर, यह समांन जोरी रँग-बोरी
यह वृंदावन, नव निकुंज यह कुसुमित, पवन बहत थोरी थोरी
यह अनुराग राग पूरित धुनि, सखी सुघर बिथकित चहुँ ओरी
यह लड़कीली बिधि 'नागरि' कैं, ग्रीव धरि रहनि बहियाँ गोरी ॥४२५॥

१२. ताल चपक

तिय नैंननि मैं नींद घुरानी
झुकि झुकि परत ललन अंसनि पर, ललितादिक कहै केलि कहानी
नैंन बैंन मन आलस जांन्यौ, सखियनि सैंन आरती ठानी
अंग अंग दुति कौंधि चौंधि मै, दृग कोरनि कटाछि ठहरानी
मदन बिबस चले सेज सदन कौं, अदन पान पै सखियनि आनी
'कवल नैंन हित' कुंज ओट ह्वै अवलोकत, निस जात, न जानी ॥४२६॥

१३. इकताल

आजु की रँगीली रैंन लागत सुहाई
नव निकुंज मंजु जौन्ह जगमगात आई
रंग भरे स्यामा स्यांम लसत सुमन सैंनी
मंद हसनि, दुहूँ ओर चलैं कटाछ पैंनी
परसत पिय चिबुक पानि, भरि अनंग रंगे
प्यारी दई हसि अंस बाहु, रस उमंग अंगे
भीजत निस त्यौं त्यौं ए रस भीजत हैं दोऊ
'नागरि' सखी निकट तहाँ और नहीं कोऊ ॥४२७॥

१४. ताल चपक

कहु मो पैं कह्यौ जात न हेली, जम रह्यो राग सुहात
पिय प्यारी तानन रस बरसत, नव निकुंज मै भीजि रही अधिरात

४२४ उपरैंना = ओढ़नी।
४२५ लटकीली - प्यार भरी। ग्रीव = गरदन।
४२६. अंसनि = कंधों। सैंन = शयन। अदन = ? पांन = पाणि, हाथ।
४२७ सुमन सैंनी = पुष्प-शैया। पैंनी = तीव्र। पांनि = पाणि, हाथ।

चनक मूँद मे बीन झनक धुनि, मंद मधुर सुर गात
'नागर नागरि' गांन करत ही, रीझि रीझि लपटात ॥४२८॥

१५. ताल चपक

आज लै हमारी बंसी तुमही बजावो प्यारी,
तैसौ ही एकान्त यह, जैसी उजियारी
प्यारे की कहनि सुनि, बढ़ी है आनन्द ललक,
लाड़ली मुरली तन, मुसकि निहारी
जब लाल दोऊ कर धरि, बैन आंगै करि,
पुनि कीनी मनुहारी
स्यांमा जू अधर धरि, उलही है रूप गोभा,
ता समै की सोभा मोपैं जात न उचारी
सुनि धुनि गांन कुंज द्रुमनि थकित खग,
मोहन सुजान पर मोहनी सी डारी
मूर्च्छित होत स्यांम, 'नागरिया' भुज भरि,
बहुरि बजायबे की विहसे उचारी ॥४२९॥

१६. ताल चपक

प्यारी जू बजावैं बीन, गावत हैं प्रिय प्रवीन,
प्रीतम बजावैं जब गावैं संग प्यारी
प्यारी जू सराहैं, तब प्रीतम नवावैं सीस,
प्रीतम सराहैं, तब मुसक्यात प्यारी
प्यारी जू रिझाए पिय, रंग भरी तांनन सौं,
प्रीतम रिझाई रूप गुन भरी प्यारी
प्यारी जू दई है रीझ चितवनि मन मांनी,
पिय लई लाय उर 'नागरिया' प्यारी ॥४३०॥

१७. इकताल

गोवर्द्धन गिरराज पैं बनी अति ऊँची अटारी
निकट तहाँ तैं लगत चन्द्रमा, खिली रैंनि उजियारी

---

(४२९) गोभा = गोभीं (हस्त)। विहसि = बहसि (हस्त)।
(४३०) सराहैं = सराहत हैं (हस्त)।
४२८. चनक = आँख की पुतली। सुर = स्वर। गात = गाते है।
४२९. तन = ओर। मनुहारी = बिनती। गोभा = अंकुर। उचारी = कही, उच्चारित की।

अधर पांन परिरंभन तिह ठा, है रस बस पिय प्यारी
'नागर नागरि' कवि साचे किए, घन दामिनि उनिहारी ॥४३१॥

४७. गोपी-बैंन-विलास

या अनुक्रम की अलापचारी मैं देनैं ए दोहा
आली काली तें अधिक, बंसी विष उतपात
वह काटे तै चढ़त है, यह फूँकैं चढ़ि जात । १॥

हरि चित लयौ चुराइ कै, रह्यौ परत नहिं भौन
तापर बंसी बाज मति, देत कटे पर लौंन ॥१॥

मति मारै सर तांनि कैं, नांतौ इतौ बिचारि
तीन लोक सँग गाइयै, बंसी अरु ब्रज-नारि॥३॥

अहे बाँस की बँसुरिया, तैं तप कीनौ कौंन
अधर-सुधा पिय कौ पियै, हम तरफत बिच भौंन ।४॥

ज्यौं ज्यौं धुनि कांननि परै, त्यौं त्यौं छूटत धीर
'नागरिया' सुनि बाँसुरी, बाजै जमुनां तीर ॥५॥

१. पद राग बिहागरौ, तिंताल

बंसी बाजै कालिंदी तीर
भई मैंन-मई, परी धुनत हौं सीस दई, कछु न बसाय, बिन धीर
रजनी बिहानी, न बिहानी धुनि, प्रांन हरि लियैं जाय री बीर
'नागरिया' रंगी मिले, मेटिहौं त्रिभंगी जाय, कैसैं रहूँ, हाय उर पीर ॥४३२॥

२. इकताल

सुनि मुरली की टेर चपल चली
निरजन वन तहाँ और न कोऊ, श्री वृषभांन लली
मिली जाय घनस्यांम लाल सौं, दामिन रंग रली
लता ओट रंध्रनि अवलोकत, 'नागरीदास' अली ॥४३३॥

(दोहा १-५)—दोहा २, ३, ४ गोपी बैंन विलास के क्रमशः २०, २३, १३ संख्यक दोहे हैं। दोहा १, ५ नए हैं।

४३१. उनिहारी = सादृश्य ।

दोहा १. काली = काली नाग। ३. लौंन = नमक। ५. कांननि = कानों में।

४३२. सीस धुनना = सिर पटकना।

३. तिताल

अब कै बजाय हौ बजाय अपनी मुरली की तांन
वहीं भाँति होउ पिय ठाढ़े, सुंदर परम सुजांन
कवलनैंन मुसक्याय, अधर धरि, कियौ है मधुर सुर गांन
तिहि छिन सिमटि भए इकठौरे, नैन श्रवन मन प्रांन
रमकि झमकि उर लाइ लाई है, प्रेम भरी लपटानि
कहि 'भगवान हित रामराय' प्रभु, कियौ है अधर-रस पांन ॥४३४॥

४. इकताल

लाल तेरी मुरली नैंक बजाऊँ
जोई जोई तान सुनौं तिहारे मुख, सोई सोई गाय सुनाऊँ
तिहारे आभूषन मैं पहिरौ पिय, हमारे तुम्हैं पहिराऊँ
तुम्हारे सीस गुहूँ रचि बैनी, हौं सिर मुकट धराऊँ
तुम मानिनि ह्वै मान करौ पिय, हौ गहि चरन मनाऊँ
'सूरदास' प्रभु होहु राधिका, हौं नँदलाल कहाऊँ ॥४३५॥

५. ताल चपक

मन जु पर्यौ बातनि कै रस मैं, बतियनि रसि गई राति
कहत कहत अरु सुनत सुनत ही, हसत हसत जानी नहिं जात
मृदु रोचक कर छुवत स्यांम तन, करतल लपटि लटकि किलकात
'वैष्णवदास हित' सुरतापगा मैं परत हूँ, पीवत न अघात ॥४३६॥

६ ताल चपक

झुकि झुकि रही द्रुंम डार चहूँ दिस, ता तर बिछाई सुन्दर सैंनी
ललिता जू लतनि ओट दुरि देखत, पौढ़े हैं कँवलनैंन मृगनैंनी
तन सौं तन, मन सौं मन उरझे, मिलि रही अँखियनि अँखिया पैंनी
'नागरिया' सुख देत दृगनि कौं साँवर गउर जोरि, मन लैंनी ॥४३७॥

---

४३३. रंग = समान, सदृश। रली = मिली।

४३४. अब कैं = इस बार।

४३६. रसि गई रात = रात समाप्त हो गई। सुरतापगा = सुरत + आपगा ; रति की नदी।

४३७. सैंनी = शैया, सेज। जोरि = जोड़ी।

४८. रति-श्रांता

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैंनैं ए दोहा—
छुटी अलक, माला तुटी, मैंन लुटी सी अंग
ए सखि फीके अधर क्यौं, लग्यौ कपोलनि रंग ॥१॥
मन हीं मन जु सिहात सी, मन ही मन मुसिक्यात
तू मनमोहन सो मिली, पाई मन की बात ॥२॥
छबि झलकैं, अलकैं सिथल, सब तन सिथल सिंगार
सूचत तेरी सिथलता, निसि दृढ़ लगन बिहार ॥३॥
'नागरि' उरझी स्यांम सौं, आरस उरझे बैंन ॥४॥
तेरी उरझी अलक मैं, मेरे उरझे नैंन

१. पद, राग बिहागरौ, ताल चपक

आजु बदन अति ओप, अलक छुटी, भूली सी आई
जांनति हूँ जु रैंनि सुख बितई कुंज सदन मैं, देखियत नैंननि निकाई
चिकुर चंद्रिका छूटी, मोतियन लर तूटी, तैं जु कपोल पीक कहाँ धौं लाई
'चत्रभुज' प्रभु गिरधर री तू भेंटी, पाई मैं तेरी बात पाई ॥४३८॥

२. इकताल

अरि मोहि ठगि गयौ छैल कन्हाई
तोसौं कहा दुराऊँ सखी री, दुरत न कछू दुराई
हौं अबला, बस कहा री मेरो, वहि कीनी मनभाई
'नागरिया' अब वा पिय बिन छिन नांहिन परत रहाई ॥४३९॥

३. ताल चपक

सखी सुखदाई स्यांम मिलाए फेरि कैं
सघन कुंज छबि पुंज की छहियाँ, लीनैं रँग भीनै हेरि हेरि कैं
मिलतहि बाल लाल सौं बाँके बैन कहत तिहि बेर कैं
'नागरिया' तब तैं अब पाये, कौनैं बिरमाए घर घेर कै ॥४४०॥

४. ताल चपक

तन मोपै, जिय और पैं हो प्यारे, सीखे कहाँ की है रीति
ऐतौ कपट कौंन पै पढयौ है, मोहि धौं बताओ यह कहाँ की है रीति

दुख जिन सहौ प्यारे, तैहीं पैं सिधारिये, जहाँ दै आए प्रतीति
'गिरधर' पिय यह बिनती करति हौं, ऐसी न बूझियै अनीति ॥४४१॥

५. इकताल

उरांहनौं दैं हसि चितै रही
मनमौहन सौंहन प्यारे तब, सुन्दर बाँह गही
करत केलि कल अमल अटा चढ़ि, सुख-सलिता जु बही
'नागरिया' दंपति हित की गति, नैंकु न जात कही ॥४४२॥

६. ताल चपक

मोर बोलहीं बिमल चंद उजियारी
पुनि प्रतिशब्द होत बृन्दावन, गरजत गिर कंदरा सारी
अति आनंद भन्यौ कोलाहल, रही पाछली पहर निसा री
'नागरीदास' स्यांम स्यांमा रति समैं अनूपम ऊँची अटारी ॥४४३॥

४६. फूल-बिलास

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा—
फूले फूलनि स्वेत बिच, अलि बैठे मधु लैंन
हरि हित वृंदा बिपुन मनौं, धारे अगनित नैंन ॥१॥

फूल-मई सब बन भयौ, चंद-जोति-मई रैंन
तीय भई मौंहन-मई, चली मिलन सुख-सैंन ॥२॥

रँग रँग भूषन फूल के, रहे फूल तन भूल
अंतर की बाहिर मनौ, प्रगटी अँग अँग फूल ॥३॥

बन फूल्यौ, फूल्यौ जु मन, फूल बेस अभिरांम
सबै करी फूलनि सफल, मिलि कैं गोरी स्यांम ॥४॥

१. पद, राग बिहागरौ, ताल चपक

फूल्यौ बहु फूलनि सौं बृंदाबन सोभा देत,
तामैं फूली राका निसि अति छबि छाई है

---

(४४१) पढ्यौ = बढ्यौ (हस्त)।
(दोहा १, ३, ४)—ये फूल विलास के १, ३, २ संख्यक दोहे हैं। दोहा २ नया है।
४४१. तैहीं पै = उन्हीं के पास। बूझियै = कीजिए। (बूझना = न्याय करना)
४४२. सलिता = सरिता, नदी।

कुंज कुंज फूल पुंज गुंजत मधुप माते,
फूलनि सौ मिली मंद पौन सियराई है
चली स्यांमा स्यांम पै सिंगार सजि फूलन के,
फूल भई हिय लखि फूली बनराई है
'नागरिया' मिले दोऊ, फूलनि सुफल भई,
भुज धरि अंस फूले फिरैं सुखदाई हैं ॥४४४॥

२. इकताल

फूले फूले फिरत स्यामा स्यांम फूली-कुंजनि मांहीं
फूले सिगार हार हमेल, फूली फूली करत केलि,
हसत घन दामिनि ज्यौं लसत, दोऊ दियैं गरबांहीं
फूली जोन्हि जगमगात, तामैं फूली बदन कांति,
कुमुद कली फूली अली, तन मन हुलसाहीं
कहि 'भगवान हित राम राय' प्रभु, देखि फूल्यौ श्री वृंदावन,
पहौप वृष्टि होत जहाँ, तहाँ तहाँ चलि जाहीं ॥४४५॥

३. ताल चपक

फूलनि सौं बेनी गुही, फूलनि की अँगिया,
फूलनि की सारी, मानौं फूली फुलवारी
फूलनि की दुलरी, हमेल हार फूलनि के,
फूलनि की चौकी चारु, फूलनि के बाजूबंद और गजरा री
फूलन के तरौनां, कुंडल लसैं फूलन के,
फूलन की किंकिनी सरल सँवारी
फूल महल मधि फूली है राधिका प्यारी,
तैसे फूले 'नंददास' लेत बलिहारी ॥४४६॥

---

(४४४) देखिए उत्सवमाला, पद २११। यह कवित्त है।

(४४६) फूलन की चौकी० = फूलन की चंपमाल, फूलन गजरा री (ब्रजरत्नदास, १७२); फूलन की चोली चारु और गजरा री (उमाशंकर पृष्ठ ३७८)। कुंडल लसैं फूलन के = उमाशंकर वाली प्रति में यह अंश नहीं है। लसै = और (हस्त)। फूल महल = फूले- महल (हस्त)। तैसे फूले० = फूलन फबौं नंददास जाय बलिहारी (ब्रज०)।

४४६. चौकी = गले मे पहना जाने वाला एक गहना।

४. इकताल

फूलन की बेली सी कुँवरि अलबेली है
फूलनि के भूषन बसन भाँति फूलनि के,
फूल भरी छबि भरी हरी ए नवेली है
अधर मधुर मकरंद लैंन फूलनि कौं,
फूल सौं अलिंद स्याम भुजनि सकेली है
फूली है जुन्हाई तामैं फूल पचबाननि के,
निरखै अकेली केली 'नागर' सहेली है ॥४४७॥

५. ताल चपक

फूल महल फूली जौ न्हि जगमगी
तामैं फूलि करैं केलि, स्यांमा स्याम सुख झेलि,
फूलनि मरगजी चारु रगमगी
फूलनि की सैनी पर राजत बिथुरि बैंनी,
फूली हैं बदन जोति मदन अगमगी
फूल-सर अरसानैं फूल रंग भोए सोए
'नागरिया' मोहे मन रीझनि डगमगी ॥४४८॥

५०. रास-रस-लता

या पद के अनुक्रम की अलापचारी मैं दैंनैं ए दोहा
निस सरदोत्फुल मल्लिका, ककुभ किरण राकेस
गही बैंन हरि निरखि बन, रास रवण आवेस ॥१॥

पूरन ससि निस सरद की, चलि बन मलय समीर
होत बैंन रव रास हित, तरनि-तनैया-तीर ॥२॥

बंसी धुनि दूती पठै बोलि लई ब्रज-बाल
समर बिजै आरंभ रस-रास करन नँदलाल ॥३॥

---

(४४८) देखिए उत्सवमाला, पद २१३।

(दोहा १–६)— अनुक्रम ४२ के प्रारम्भ मे भी ए दोहे आ चुके हैं। प्रथम पाँच दोहे 'रास रस लता' के प्रारम्भिक ५ दोहे है। ए 'उत्सवमाला' के 'सरद रासोत्सव' के भी प्रारम्भ मे हैं।

४४७ सकेली है = अपनी ओर खींच लिया, समेट लिया। केली = केलि।

४४८. फूल-सर = कामदेव।

परम प्रेम आरूढ़ रथ, विषम पंथ, धुनि बैंन
रास केलि संग्राम हित, चली मदन-गढ़ लैन ॥४॥

बिमल जुन्हैया जगमगी, गई बैंन धुनि छाइ
प्रेम-नदी तिय रगमगी, वृंदा कानन श्राइ ॥५॥

सुनत बैंन बन तिय चली, मुनि मन भए अधीर
'नागर' लखि रस-रास नभ, भई विमाननि भीर ॥६॥

१. पद, राग बिहागरौ, तिताल

बैंन सुनौ हौ बैंन, वा मनमोहना की बैंन
श्रवन सुनत मेरी सुधि बिसरी, बिरह बिथा भई ऐंन
घर अँगना न सुहाय ए री सजनी, चित न धरही चैंन
जब जाय देखौं स्यांम सुंदर कौं, तब सुख पावै नैंन
थकित भई जमुना गति धुनि सुनि, चदहि भूली रैंन
सुर-पति सती-पति भवन बिसारे, या मुरली की सैंन
तन मंजन समयौ तजि सुन्दरि, चली है मदन गढ़ लैंन
सलिता सिन्धु मिली जाय हरि सौं, बिसरि गईं गृह चैंन
रास रच्यौ बंसी-वट छइयाँ, जुवती जन सुख दैंन
प्रेम बिबस 'हरिवंस' मिलत दोउ, अधर-सुधा-रस लैंन ॥४४९॥

२. इकताल

जुरे करनि कर-कँवल तियन के
मंडल होत नृत्य चल अंचल, चंचल कुंडल हार हियन के
बाय बँध्यौ कल गान बाँसुरी, बिबस सुर-वधू अंक पियन के
अंग अनंगनि परिरंभन बहौ, हाव भाव भौंहैं अँखियन के
प्रिया संग लैं दुरि गए हरि बन, हेरत सघन वृंद सखियन के
'नागरि' छबि-सागर बिन, मनौ तरफत जूथ मैंन मछियन के ॥४५०॥

३. इकताल

हा हा कहि धौं री बन बेली, तैं कहुँ देखे हैं नँदनंदन
सुनि मालती, कहाँ तैं तेरे लाग्यौ है उर चंदन

४४९. ऐन = (अरबी) बिलकुल। सती-पति = शिव। सैन = इशारे पर। मंजन = स्नान।

कहि धौं कुंद कदंब बकुल-बट, चंपक ताल तमाला
कहि चलदल, कहि अंब निंब, कहुँ देखे हैं नँदलाला
कहि धौंरी कुमुदिनि कदली कछु, कोविदार करबीर
कहि धौं तुलसी तू जानति है, कित घन-स्यांम-सरीर
कहि धौं मृगी मया करि मो पर, कहि धौं मधुप मराल
'सूरदास' प्रभु कहूँ निहारे, सुंदर नैंन बिसाल ।।४५१।।

(४)

माई डार-डार पात-पात बूझत बनराजी
हरि कौ पंथ नहीं बतावैं, सबनि मौंन साजी
बसुधा जड़ रूप धरयौ, मुखहू नहिं बोलै
चरन कँवल परस पायौ, संग लगी डोलै
'परमानद' श्री गोपाल, निठुर भए माई
हमारे गुन दोष की, जांनि चतुराई ।।४५२ ।।

५. इकताल

हरि सँग हुती सो अकेली वह ढाड़ी
दामिन-सी देह कौं प्रकास आस पास देखि,
रही द्रुम बेलिन मैं चित्र की सी काढ़ी
'क्वासि क्वासि' 'पिय पिय' कहि टेरत, महा बिरह की बेदनि बाढ़ी
'नागरीदास' रास रस बरसाय, हाय हाय कित दुरे घनस्यांम, दुखित हैं गाढ़ी ।।४५३।।

६. इकताल

तुम पर सबै हम वारियाँ
उचित नहीं हमैं छाड़ि जात पिय, जानत पीर हमारियाँ
नन्दकिसोर स्याम घन सुन्दर, चातिग गोप कुँवारियाँ
ढूँढ़त बन, बूझत द्रुम बेली, नाथ हो नाथ पुकारियाँ
तुम बिन दुसह दुःख अति बाढ़यो, लागौ मीत गुहारियाँ

---

(४५१) कुमुदिनि = कुमुद (हस्त) । करबीर = कहिबीर (हस्त) ।
(४५२) देखिए उत्सवमाला, पद ६८ । इस पद से मुद्रित एवं हस्तलिखित प्रतियों का साम्य पुनः प्रारंभ होता है । पर यह साम्य इसी अनुक्रम से समाप्त भी हो जाता है ।
४५२. सबनि मौन साजी = सबने चुप्पी धारण कर रखी है ।

दरसन देहु ऐसैं जिन मारौ, हमहू तौ तुम प्यारियाँ
नटवर वपु, अरु धीर महा, गुन अंग सुधंग सुधारियाँ
सुन्दर मुख हम तन हसि हेरनि, बनी अलकैं घुघरारियाँ
उर बिसाल बनमाल बिराजत, चन्द्रिका सीस सँवारियाँ
रूप सुधा-लगि नैंननि बेची, दासी भईं तुम्हारियाँ
प्रगटे आय प्रीति मंडल पिय, जीय उठी ब्रज-नारियाँ
मुक्तामाल पीताम्बर धारे, नम्र अँखियाँ अंज्न पारियाँ
मदन मौंहन गौहन सौंहैं ब्रज, सुंदर रूप उजारियाँ
जमुनां पुलिन कुंज कुसुमित, पिय सुख बरसा बिस्तारियाँ
नंदलाल रस-मूरति लखि, मुनि सुरबधू देह बिसारियाँ
'राम राय' प्रभु गिरधर पर, 'भगवान सखी' बलिहारियाँ ।।४५४।।

७. ताल

बैठे जाय पुलिन मैं रसिक बिहारी
बीच आप ब्रजचंद मनोहर, उड-मंडल ब्रज-नारी
नव निचोल अप-अपने सब मिलि आय बिछाय दए
तन थिर दामिनि से निकसे, पट-बदरा उतरि गए
बंक भौंह, नैंना रस-माते, छुटि अलकें अलबेली
प्रेम-बिवस बूझत पिय कौं तिय, हसि हसि प्रेम पहेली
इक भजते कौं भजत, एक बिन भजते भजई
कहौ कुँवर ते कौन जे 'ब, इनि दुहुनि कौं तजई
समझि अर्थ मुसकाय नैंन भरि, कहत जोरि कर प्यारौ
'नागरिया' हित सौं नहिं ऊरन, हौं नित रिनी तिहारौ ।।४५५।।

८. ताल चरचरी

अद्भुत नट भेप धरैं, जमुनां तट स्याम सुंदर,
गुन-निधान गिरवरधर रास रंग नाचै
जुवति जूथ संग लियैं, गावत केदारौ राग,
अधर धरैं सप्त सुरनि मधुर मधुर साचैं

---

(४५४) अंजन=अंन (हस्त)।
(४५५) देखिए उत्सवमाला, पद ६६।
४५४. बूझत=पूछत। गुहारियाँ=गुहार; रक्षा के लिए पुकार। सुधंग=सुढंग।
हम तन=हमारी ओर। गौहन=साथ। सौंहै=सुशोभित हो रही हैं।

उरप तिरप लाग दाट तत्त तत्त थेई थेई
उघट शब्दावलि गति भेद कोऊ न बाँचै
'चत्रभुज' प्रभु बन बिलास, मोहे सुर गन अकास,
निरखि थके चंदा, रथ पच्छिम नहि खांचै ॥४५६॥

९. इकताल

खेलत रास रसिक रस नागर
मंडित नव नागरी निकर वर परम रूप कौ आगर
बिकसत वन वनिता राजत मानौं सरद अमल
राका सुभग सरोवर मैं जैसें फूले हैं कँवल
नव किसोर सुंदर साँवल तन, बलित ललित व्रज बाला
मानो कंचन खचित नीलमनि, वृंदाबन पहिरी माला
या छवि की उपमां कहिबे कौं, ऐसौ कवि कौन पढ्यौ है
'नंददास' प्रभु कौ कौतिक लखि, काम कैं कांम बढ्यौ है ॥४५७॥

१०. इकताल

साँवरे प्रीतम संग राजत रंग भीनी भांमिनी
नृतति चंचल गति, द्रुति न कही परति,
लहलहनि सीखी जहाँ दांमिनी
जुवति मंडल मधि, रूप गुन की अवधि,
यातैं पावै सब सिधि, संगीत की स्वांमिनी
राग रागिनी की रानी, तत्तथेई कल बांनी
कछुक सीखी कोकिला की, कांमिनी
उरप तिरप मान, अति ही अद्भुत गांन,
मोहे नग खग मृग, उड चंदा जांमिनी

---

(४२७) रस नागर = नागर (हस्त)। परम रूप = रूप (हस्त)। विकसत वन = विकच बदन (हस्त)। व्रजरत्नदास में (पद १२०) तृतीय एवं चतुर्थ चरण इस प्रकार हैं—विकच बदन वनिता वृंद अतिसै अमल सरद सी राजत।
राकसुभग सरोवर मैं जस फूले कमल विराजत॥
तन = अंग (व्रज, उमा पृष्ठ ३७२)। मानो कंचन० = मनु कंचन मणिमय मंजुल (हस्त), मानो कंचन मणि मरकत मणि (उमा पृष्ठ ३७२)।

४५६. सांचे = देह। ४५७. निकर = समूह।

'नंददास' रीझै जहाँ, अपनपौ वारयौ तहाँ,
रवनि मनि रमां अभिरांमिनी ॥४५८॥

११. तिताल

रास रच्यौ नँदलाला
लीनैं सकल सग व्रज-बाला
अदभुत मंडल कीनौं
अति कल गांन सरस सुर लीनौं
लीनौ सरस सुर राग रंजित बीच मिलि मुरली कढ़ी
हौंन लाग्यौ नृत्य वहु बिधि, नू पुरन धुनि नभ चढ़ी
डुलत कुंडल,खुलत बैंनी, झुलत मोतिन माला
धरत पग डगमग बिवस रस, रास रच्यौ नँदलाला
चित हाव भावनि लूटैं
अभिनय द्दग भौंहनि सर छूटैं
ललित ग्रीव भुज मेलत
कबहुँक अंकमाल भरि झेलत
झेलत भुज भरि भरि अंक निसंकित, मगन प्रेमानंद मैं
चारु चुंबन अरु उगारहि धरत तिय-मुख-चंद मै
उड़त अंचर, प्रगट कुच वर, ग्रंथि पट कसि छूटैं
वढ़यौ रंग सुअंग अंग, चित हाव भावनि लूटैं
पगनि गति कउतिग मचैं
कटि मुरि मुरि मध्य लचैं
सिथल किंकिनी सोहैं
मुकट लटक मन मोहैं
मोहैं जु मन नट मुकट लटकनि, मटकि गति पग धरन की
भँवर भरहर चहूँ दिसि, छबि पीत पट फरहरन की
गिरयौ लखि मनमथ मुरछि, लै भजी रति मुख मधु अँचैं
नचत मनमौंहन त्रिभंगी, पगनि गति कउतिग मचैं

(४५८) नृतति = निरतत (ब्रजरत्न १२१)। द्रुति = द्रुति (वही) । सिधि = सिद्धि (वही)। राग रागिनी की रानी = राग रागिनी (वही)। उड = उच्च (वही) । रवनि मनि रमा = रवनि मनिर माँ (वही) ।

४५८. लहलहनि = बड़ी तेजी के साथ हिलना । द्रुति = त्वरा, शीघ्रता ।

वृंदाबन सोभा वढ़्यौ
तापर व्यौम विमांननि सौं मढ़्यौ
दुंदुभि देव बजावैं
फूलनि अंजुलि बहो बरसावैं
वरसैं जु फूलनि अजुली बहौ, अमर गन कउतिग पगे
विबस अंकनि निज बधू हिय निरखि, मनमथ-सर लगे
ह्वै गए चर थिर, सुथिर चर, सरद पूरन ससि चढ़्यौ
दास नागर' रास औसर, वृंदावन सोभा वढ़्यौ ॥४५९॥

१२. इकताल

रह्यौ रंग-खेलत रास रसाला
तूटि गए हार, छूटि गए अंचर, श्रम डगमगनि मराला
जुवति-जूथ-जुत धँसे जमुना विच, मदनमोहन तिहिं काला
क्रीड़त जनु करनी सँग लीने, मत्त द्विरद नँदलाला
गोरे अंग महा छबि पावत, भीजे वार बिसाला
मनौं सी-तल चंदन पुतरिन सौं, लगी लपट अहिमाला
छबि सौं छींटनि खेल मचावत, प्रेम बिबस ब्रजवाला
जनु उच्छव कालिंदी ग्रह, उछरत मुक्तनि के जाला
बाहु-सुंड अवगाहि नीर, बलबीर चले गज चाला
'नागरीदास' ब्रम्ह रात्री रमि, आए गेह गुपाला ॥४६०॥

५१. सार (चौपड़)

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैने ए दोहा—
चौपरि मिस संकेत रचि, करत झगरई तोत
हित पक्के नांहीं उठैं, फिर-फिर कच्चे होत ॥१॥
समझि दाव पिय चूकि कैं, चलत सारि सुख सारि
पकरि पिछौंहौं देत करि, नव लड़कीली नारि ॥२॥

---

(४५९) देखिए पद प्रबोध माला ३६, उत्सवमाला, पद ७० । विवस रस = विच सरस (हस्त) । भुज भरि भरि = भुजन भरि । मढ्यौ = वढ्यौ ।

(४६०) देखिए पद प्रबोधमाला ३७, उत्सवमाला ७१ । डगमगनि = डगमनि (हस्त) । चंदन = चंद (हस्त) । चले = वले (हस्त) ।

दोहा १ तोत = ढेर, राशि ।

२ सारि = चौपर की गोट्टी; सुख सारि = जो सुख की सार है, तत्व है ।

फटक सारि गहि लटक सौं, देत छबीली बाल
परत झगरई खेल बिच, होत स्वेत तैं लाल ॥३॥
पीत सारि घनस्यांम कैं, स्यांम सारि सुकवारि
खेल सारि ललितादि लखि, मन धन डारत वारि ॥४॥
पिय जीतैं तिय सलज ह्वै, 'नागरि' किय अँगरानि
बाजी बाजी लखि उठी, बाजी ठहरी जांनि ॥५॥

१. राग ताल चपक

कुंज-सदन की कनक-भूमि बिच, सहचरि चौपरि चारु रची
हसि हसि खेलत, हाथ गहि ठेलत, दाँवनि चावनि चोहल मची
स्यांमा स्याम इहीं रस अटके, फिरि फिरि होत है नरद कची
'नागरिया' चतुरन के खेल लखि, हौं जकि रही, जैसे चित्र खची ॥४६१॥

२. ताल चपक

मुरली जीती श्री राधा रानी
दाव परयौ वृषभांन सुता कौं, मोहन रुगट्यौं ठांनी
लयो छिनाय पितांबर मोहन कौ, खेलत हसत सयांनी
'बीठल बिपुल' बिनोद बिहारनि, क्यौं कहि सकै कहानी ॥४६२॥

३. इकताल

प्रिया पितांबर मुरली जीती
हा हा करत, न देत लाड़िली, बिनती करत निसि बीती
राखी दुराय छबीली नागरि, ललिता रहा सचींती
'बीठल बिपुल' विनोद बिहारी-प्रगट-करत रस रीती ॥४६३॥

४. तिताल

चौपरि खेलत रह्यौ रंग
दोउ हारे, दोउ तन मन जीते, बाजी रस, `नस बितई सग

(दोहा १–५) ए 'सीतसार' के प्रारम्भिक दोहे है। यह अनुक्रम मुद्रित प्रति में नहीं है। इसके स्थान पर मुद्रित प्रति से ६६ वाँ अनुक्रम है।

३. फटक = स्फटिक ।

४६१. चोहल = हँसी, दिल्लगी । कची = कच्ची । नरद = गोटी, सारि । जकि रही = भौंचक्की हो गई ।

४६२. रुगटयौं = रोवनसिया, खेल में बेईमानी ।

४६३. सचींती = सचिंत; सावधान ।

सेज बिसात सलौट रसमसी भई, ठई कल केलि अनंग
सोइ सारे 'नागरिया' सोए, जुग मिलि गउर सांवरे अंग ॥४६४॥

५२. पाणि-ग्रहण

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा—
नित दुलहनि नव नागरी, हरि दूलह नित हेत
नित बिवाह वृंदा विपुन, नित चौरी सकेत ॥१॥
दूलह-दुलहनि कवल-मुख, रहत निहारि निहारि
अलि दृग चितवन-भाँवरैं, भरत दोऊ रिझवार ॥२॥
दुलहनि झीनै चीर दृग-झांई-छवि झलकात
लाल जाल-घूँघट रुके, खंजरीट अकुलात ॥३॥
रस बिवाह ख निरखि कैं, लोचन समझि सिहात
मनां मनीं ही राखिए, बना बनी की बात ॥४॥
फूलन के सिर सेह , झलकत प्रगट सुहाग
वसन सहानै तन फवे, मनु पहिर्यौ अनुराग ॥५॥
मंगल रैंनि सुहाग कैं, गावत सखी प्रवीन
व्याह बिलास अनंग रस, वाढ्यौ रग नवीन ॥६॥
मंगल कुंज बिवाह नित, दंपति वितन बिलास
ह्वै अलि नित प्रति लहत सुख, नवल 'नागरी दास' ॥७॥

१. पद, राग बिहागरौ, इकताल

दूलह सुंदर स्यांम मनोहर, दुलहिन कुँवरि किसोरी जू
मंगल रूप लोक लोचन कौं, रची बिधाता जोरी जू
रास बिलास व्याह बिधि निति प्रति, थिर चर मन आनंदा जू
सरद निसा, दिसा सब निरमल, डहडह्यौ पूरन चंदा जू
जमुनां पुलिन, नलिन रस रंजित, सुभग सँवारी चौरी जू
गावत मधुर वेद बानी सी, मिले भौंर अरु भौंरी जू
गोपीजन जनु कंजनि कदलनि कौ आवरन बनायौ जू
झलकत बिमल नछत्र मुकता से, गगन बितान बनायौ जू

---

४६४ सलौट=सिकुड़न।
दोहा १. चौरी=चबूतरा; वेदी। संकेत=सहेट; मिलने का गुप्त स्थान। ४. सिहात=सराहते हैं। बनां बनीं=दूलह दुलहिन। ५. सेहरे=मुकुट, मौर। सहानैं=शाहाना; शाही, राजसी; बहुत उत्तम कोटि के। ७. वितन=अनंग।

मधुर कंठ कोकिला सवासनि, गीत सरस सुर गावै जू
बाजदार से सकल देव मुनि, बहो बाजित्र बजावैं जू
आसपास लहलही बनबेली, जुरी जन कौतिक हारी जू
कुसुम-नैंन अलि-अंजन दीनैं, नव पल्लव तन सारी जू
सारस हंस कपोत कीर दुज, साखा गोत उचारैं जू
नचत मोर नौछावरी करि करि, निज द्रुम फूलनि डारैं जू
फूले द्रुम कुसमनि की सोभा, असित स्वेत पित राते जू
चोवा चंदन वदन केसरि, चरचे जानि बराती जू
या विधि रास विलास रसिक रस, अगनित कल्प बिताए जू
सोइ सुख सुक शिव सारद नारद, सेस सहस मुख गाए जू
और कहा कहि सकै 'गदाधर', मोहन मधुर विलासा जू
रसना सहस सुख करिबे कौं, गावैं हरि के दासा जू ।।४६५।।

२. ताल चपक

आजु ब्याह सखि कुंज महल मैं, दुलहनि राधा, नंद-कुँवर वर
गावति हैं नारि नए सोहले सुहाए,
तैसौ वृंदावन फूलि रह्यौ उड़ि कैं पराग वर
बनां बनीं गाँठि जोरि, दिवायौ हथलेवो जव,
हाथै देखि छकि रहे लालन सुघर
महदी के बूँद कैसै राचैं इंदमुखी कर
मानूं इंद्रवधू पाँति बैठी अरविंद पर
सोहैं पट घूँघट मैं दूनी छवि आनन की,
मांनूं झीनैं—लाल-घन झलकत सुधाधर
'वृंदावन' प्रभु दूलह-चकोर-दृग, ललकत देखि सोभा कौ निकर ।।४६६।।

---

४६५. डहडहयौ = हरा भरा; प्रसन्न। आवरन = आभरण, भूषण। सबासनि = सुवासिनी, सधवा स्त्री। बाजदार = बजनिया; बाजावाला। बाजित्र = वाद्य यंत्र; बाजा। लहलही = हरी भरी; प्रसन्न। जुरी = जुटी; एकत्र हुई। जन कौतिकहारी = तमाशबीन, तमाशा देखने वाले। साखा गोत उचारैं जू = शाखोच्चार करते है। दुज = (१) पक्षी (२) ब्राह्मण। असित = अश्वेत; श्याम। स्वेत = उज्ज्वल। पित = पीत, पीला। राते = रक्त, लाल। वंदन = रोरी। चरचे = शोभा के लिए लगा दिया। रसना सहस = शेषनाग।

४६६. सोहले = सोहर; मंगल। विवाह के गीत। इंदमुखी = इंदुमुखी; चंद्रमुखी। इंद्र वधू = वीर बहूटी। निकर = समूह, पुंज, राशि, ढेर। हथलेवो = पाणि-ग्रहण।

३ इकताल

नहिं छूटैं मोहन-डोरनां
अहो बलि बाँध्यौ लड़ैती जू कै पांन
प्रथम ब्याह विधि ह्वै रही, कर कंकन चारु बिचार
हसि हसि कसि कसि ग्रंथि बनावत, नवल निपुन ब्रज-नारि
बड़े होहु तब छोरियो हो, सुनि घोष के राय
कर जोरि कैं बिनती करौ,छुवो लड़ैती जू कैं पाय
यह न होय गिर कौ धरवौ हो, सुनौं कुँवर गोपीनाथ
बहुत कहावत हे आपुन, काहे काँपन लागे हाथ
स्वेद सिथल कर पल्लव हो, लीनैं छोरि सँवारि
किलकि कहत सखी स्याम की, तुम खोलो सुकुंवारि
तुम कित करत सहाय सखी री, छाडौ अधिक सयांन
खोलन देहु कुँवरि कौ कंकन, कै बोले वृषभांन
कमल कमल कर बरनिए हो, प्रांनपिया जू के लाल
अब कविकुल साँचे भए, जब भेटे हैं कटीले नाल
ज्यौं ज्यौं छूटैं डोरना हो, त्यौं त्यौं बाढ़त प्रेम की डोरि
देखि दुहुनि की रीत सखी री, हसत मुदित मुख मोरि
लीला ललित मुकुंद चंद की, करौ रसिक रस पांन
यह जोरी अविचल वृंदाबन, बलि बलि 'दास कल्यांन' ।।४६७।।

४. इकताल

श्री वृंदावन सुखदाई
ता मधि नवल निकुंज सुहाई
झुकि रहे द्रुम बहौ फूलनि फूले
डोलत मधुप बास बस भूले
भूले मधुप बस बास डोलत, त्रिविध बहत समीर है
घुमड़ि रहि धूंघरि कुसम रज मनहुँ मंडप चीर हैं
कोकिला कल कीर गावैं, नित्य विहार निकाई
नृत्तकारी मोर तहाँ, श्री वृंदावन सुखदाई

---

४६७. लड़ैती=दुलारी, लाड़िली। डोरनां=डोरा; मंगल-सूत्र। पांन=पाणि, हाथ। घोस=आभीर-निवास; अहीरों की बस्ती। पाय=पाँव, पैर। बहुत कहावत हे आपुन=आप तो अपने को बहुत वीर बखानते थे। सयांन=सयानप, चतुराई। नाल=मृणाल; कमल-दंड।

ललितादि निरखि लुभांनी
अति छबि पुंज कुंज दरसानी
आनँद उर न समावैं
मिलि मिलि गीत मनोहर गावैं
गावैं मनोहर गीत मिलि, जहँ बनी चौरी चार है
परम मंगल रैन राका, रच्यौ व्याह बिहार है
मौर मौरी सीस सजिकै, जोरी सुंदर आनी
बसन सूहे तन लसन, ललितादि निरखि लुभांनी
सबकी पलक लागत नांह
आए तिय मंडल के मांह
पिय मुख फैंटा छोरि दियै
प्यारी घूँघट झुकनि लियैं
लियैं घूँघट झुकनि लखि, मति थकी करनि प्रसंस की
नंद-सुत वृपभांन-तनया, चलत गति कलहंस की
लेत भाँवर गउर साँवर, कलपद्रुम की छाँह
दुलहि दूलह देखि, सबकी पलक लागत नाँह
दोउ व्याह निस के रसमसे
सखिनि के नैनन मांझ बसे
राजत जुगल नेह के भर सौं
जोरनि अंचर अरु कर कर सौं
कर सौं जु कर जोरै प्ररसपर पहुप बरसावैं सखी
कुंज कौतक रूप गहमह, भई अँखियाँ मधु मखी
रची-फूलनि-तलप-दिस चलि, चितै चितवनि मैं हसे
रहौ 'नागरि' हिय बसे दोउ, व्याह निस के रसमसे ॥४६८॥

५. इकताल

चितवनि ही यह और, परम अनुराग की
उमड़ी है मैंन-सैंन सैननि मैं, बनी बनां के भाग की

---

(४६८) इस पद के छंद २ में हस्त लेख में बहुत छूट गया है। छबि पुंज कुंज = छबि कुंज पुंज (हस्त)। निस के = निकसे (हस्त)।

४६८. बास = सुगंध। बस = वश, अधीन। जोरी = वर वधू की जोड़ी। सूहे = लाल रंग का। लसन = शोभा। नाह = नांहि = नहीं। नेह के भर सौं = स्नेह की परिपूर्णता से। रसबसे = रस में डूबे हुए। तलप = तल्प, सेज।

अब चलि ओट निरखियैं नीकैं, लीला लोचन लाग की
'नागरीदास' धन्य वृन्दावन, धनि यह राति सुहाग की ॥४६६॥

६. तिताल

गिरधर दूलह परम सलौंना
वाकी हँसि चितवनि मैं टौना
दूलह-दुलहिनरूप लुभाए
प्यारी जी कछुक चितैं मुसकाए
प्रीतम अंकमाल करि लीनी
बाढ़ी है मनमथ केलि नवीनी
टूटे हार उर डोरी
दुलहनि सुरति-सिंधु झकझोरी
दोऊ श्रमित सेज मिलि सोए
अधखुले नैंन, मैंन रँग भोए
प्यारी जू निद्रा बस ह्वै जावैं
तब उठि पिय, पायनि सहरावैं
इहि विधि सुख ही सुख निस बितई
'नागरीदास' केलि दुरि चितई ॥४७०॥

७. ताल चपक

प्यारी जू के चरन पलोटत मोहन
नील कँवल के दलनि लपेटी, अरुन कँवल दल सोहन
कबहुँ लगाय लेत आँखिन सो, कबहु कटीली भौंहन
कहि 'श्री भट्ट' छबीली राधे, होत जगे तै छौंहन ॥४७१॥

८. ताल चपक

तैसिय बिहारनि गउर, बिहारीलाल साँवरे
ता छिन की बलि जाउँ सखी री, जा छिन परी निस भाँवरे
मर्कत-मनि कंचन जहाँ उपजी, बरसानैं नंदगाँव रे
बिधना रुचि तन होय जू, श्रीभट्ट', राधा मोहन नाँव रे ॥४७२॥

---

(४६६) सैंन सैंननि मैं = सैलनि मैं (हस्त)। लाग की = लाल की (हस्त)।
(४७०) चितैं = चित मैं (हस्त)।
४६६. मैंन-सैंन = मदन की सेना। सैंननि में = आँखों के इशारों में। लाग = (१) प्रतिद्वंदिता (२) लगन, प्रेम। ४७०. भोए = भीगे हुए। दुरि = छिपकर। चितई = देखी। ४७१. पलोटना = पैर दबाना। सोहन = शोभन, सुन्दर। छोहन = लोभ; क्षुब्ध।

५३. पाणिग्रहण

या अनुक्रम की अलापचारी में दैनैं ए दोहा—

नित दुलहिन नव नागरी, हरि दूलह नित हेत
नित बिवाह वृन्दा बिपुन, नित चौंरी संकेत ॥ १ ॥
दूलह-दुलहिन कँवल-मुख, रहत निहारि निहारि
अलि-दृग चितवनि-भाँवरैं, भरत दोऊ रिझवार ॥ २ ॥
दुलहनि झीनैं चीर दृग-झाईं छवि झलकात
लाल जाल-घूँघट रुके, खंजरीट अकुलात ॥ ३ ॥
रस बिवाह सुख निरखि कैं, लोयन समझि सिहात
मनां मनी ही राखियै, बनां बनी की बात ॥ ४ ॥
फूलन के सिर सेहरे, झलकत प्रगट सुहाग
बसन संहांने तन फबे, मनु पहिरयौ अनुराग ॥ ५ ॥
मंगल रैंन सुहाग कौ, गावत सखी प्रवीन
ब्याह बिलास अनंग रस, वाढ़यौ रंग नवीन ॥ ६ ॥
मंगल-कुंज-विवाह नित, दंपति बितन बिलास
ह्वै अलि नित प्रति लहत सुख, नवल 'नागरीदास' ॥ ७ ॥

१. पद, राग—ताल चपक

व्रत धरि देवी पूजी
जाके मन अभिलाष न दूजी
देवी, नंद-पुत्र पति मेरै
जोपैं होय अनुग्रह तेरैं

करि अनुग्रह वर दियौ, जब वरस भरि लौं तप कियौ
तिहुँ लोक भूषन, पुरुष सुन्दर, सील गुन नाहिन बियौ
उबटि, खौरि सिंगारि सखियनि, कुंज चौरी आंनी
जाहि हित तुम तप कियौ, सोइ घरो बिधना आंनी

मुकट रचि मौर बनाए
सो माथै धरि, हरि वर आए
तन साँवर, पीत दुकूलैं
घन देखि दांमिनी भूलैं

(दोहा १-७)—यही सातों दोहे अनुक्रम ५२ के भी प्रारंभ मे हैं।

दामिनी घन कोटि वारौं, जब निहारौं ये छवी
कुंडल बिराजत गंड मंडल, नहिंन सोभा ससि रवी
और नाहिन बिबि त्रिभुवन, सकल गुन जा माही
मोर नृत्तत संग डोलैं, मुकट की परछाही

गोपी सब न्यौते आई
सो बसी धुनि पठै बुलाई
गोपिनि मिलि मगल गाए
ये बहो फूलनि मंडप छाए

छाए जु फूलनि सरस मंडप, पुलिन मैं वेदी रची
वैठे जु स्यांमां स्यांम वर, तिहुँ लोक की सोभा सची
तहँ कोकिला गन करैं कतूहल, इत सकल व्रज नारी
आय सखी दुहुँ दिसनि तैं, हसि देत आनँद गारी

तहाँ रास मडल भुज जोरे
पिया साँवल, स्यांमा जू गोरे
पानिग्रहन की बिधि कीनी
भुज भरि भाँवरि मंडल लीनी

लीनी जु भाँवरि रास मंडल, प्रीत गाठि हिरदै परी
सरद पून्यौ बिमल ससि तहाँ, निकट वृन्दा, सुभ घरी
गाए जु गीत पुनीत बहो विधि, वेद रचि सुन्दर धुनी
नन्द-सुत वृषभान-तनया, रास मैं जोरी बनी

मनमथ सैनिक भए बराती
द्रुम फूले अनुपथ भाँती

(४७३ गंडसंडल = गंडमंडित (हस्त)। गन = घन (हस्त)। प्रीत = मीत (हस्त)। गाए = गावैं (हस्त)। रचि = रुचि (सूरसागर १६६०)। अनुपम = अनअन (हस्त)। 'मन्मथ सैनिक भए बराती' और 'मघवा बाजन अनँद बध ए' ये दो चरण हस्तलेख में छूट गए हैं। इनकी पूर्ति 'सूरसागर' से की गई है।

४७३—देवी, नंद पुत्र-पति मेरैं = हे देवी, नंद-पुत्र, श्रीकृष्णचन्द्र मेरे पति हों। बियो = दूसरा। विधना बांनी = विधि ने बना दी, (बांनी=वनी)। गंड=कपोल। रवी = रवि, सूर्य। बिबि=दूसरा। सची=सजी, सुशोभित हुई। धुनी=ध्वनि।

मागध बन्दी जस गाए
मघवा बाजन अनँद बजाए
बाजे जु सकल सुर नभ, पहुप अंजुरी बरसहीं
बहौ विधि बिमांननि देव दुंदुभि, जै जै शब्द करैं हरषहीं
सुनि सूरदासहि' भयौ आनँद, पूजी मन की साधा
मेरो 'मदन मोहन' लाल दूलह, दुलहनि श्री राधा ॥४७३॥

२. ताल चपक

ललिता जू के आज बधावौ
श्री वृन्दावन ब्याह रचावौ
आली सब न्यौति बुलाई
ते मंगल विधि न्यौतौ लाई
मंगल जु न्यौतौ ल्याइ सब सखि, मडली अदभुत रची
बाँधि बन्दनवार चहुँ दिस, मध्य श्रुत वेदी रची
संकेत वेदी पूजि ललिता, फिरत अति आनँद भरी
मेरी नवल राधे दुलहनी को, मिलो वर दूलह हरी
देवी बहौ भांति पुजाई
सु बिधिनां बिधि आंनि मिलाई
इहि राधे हरि आराधे
सोई लगन परम सिध साधे
लगन परम अनूप साधे, सखी मङ्गल गाइयाँ
महा मङ्गल रूप की निधि, रहसि मण्डप छाइयाँ
उबटि अँग अन्हवाइ राधे, स्यांम कै उबटन कियौ
स्नान करि, सिर गूँथि मौरी, मुकट मोहन कौं दियौ
कर सौं कर जोरि फिराए
दै भाँवरि हसि ढिग बैठाए
ललिता हसि देत बधाई
बहु फूली अङ्ग न माई
फूली जु अंग न माइ ललिता रंग भरि केलि रही
ब्याह की रस रीति अदभुत, जात नहिं मोपैं कही
धन्य दिन, धनि राति, पल छिन, धन्य, धनि यह सुभ घरी
धन्य नन्द किसोर दूलह, दुलहनी राधे वरी ॥

किंकिनि ये फल बजत निसांन, नूपुर धुनि मन भाइयाँ
सुनि सुनि ये ललितादिक ओट लेत हैं अलछ बलाइयाँ
इहि वन ए नित राधा कन्त लीला करत सुहाइयाँ
'नागरिया' कहि बात न जात, पैं उर मैं उरराइयाँ ॥४७५॥

४. राग खम्भावची-ताल चर्चरी

सखि देखि नव कुञ्ज छबि पुञ्ज कुसुमित महा
करत अलि गुञ्ज मनु हंस बाजे
जोन्ह जगमग, सुमन बास रगमग तहाँ,
मदन डर डगमगत लाज भाजै
कमल सैंनीय पर कमल - नैनी कमल-
नैन चैंनी रँगे रंग रैंनी
लाल की अलक पर बाल फूलहिं धर्‍यौ,
फूल सौं लाल रची बाल बैंनी
हार मैं हार पिय करत मनुहार,
कर हार टूटैं बिथुर बार छूटैं
सुरत सुख सुभट दोउ लिपटहीं निपट दृढ़,
कंचुकी पट कपट ग्रन्थि छूटैं
गउर साँवर अङ्ग सङ्ग, अति रंग भुव भंग
दृग दृगनि मैं कीनैं
मन्द बतरानि मै दामिनी रदन दुति,
छबि-सदन-बदन, रस-मदन भीनैं
मधुर मधु अधर रस रसनां रसत,
हसत मुख हसत तांबूल देहीं
बँधे भुज पास सुभ बास पुलकित अङ्ग
'नागरीदास' सुख-रास लैहीं ॥४७६॥

---

(४७५) लगन पत्र मिलाइयाँ=लगन छिन्री मताइया (हस्त), लगन छत्र मिलाइया (मु)
(४७६) देखिए उत्सवमाला २१५। लाज=लाभ (हस्त)। गंथ छूटैं=ग्रन्थ खूटैं।
पंग=कंप (हस्त)।

४७५—कोहक=कुहुक, कूक। निभृत=एकांत। अलच्छ=अलक्षित रूप से; छिप कर। उरराइयाँ=उमड़ी पड़ रही हैं।

५. राग खंभावची, ताल चर्चरी

दौरि सखि वेगि छबि देखि चढ़ि यह अटा,
ब्याहन आयो अरी नव कुँवर नंद कौ
निरखि यह, दृगनि की पल न लगि सकत छिन,
होत मृग-मीन-वधुन प्रेम के फंद कौ
....
.... छार भए बदनपैं *
गहर धुनि नेह नीसान बाजन लगे,
रूप की धाक अति परम भई मदन पैं
डीठ की धूँम, भौं कसन, चितवन चलन,
चखन की फिरन, मुरि हसन ऊपर मची
छकित, चकित, जकित, थकित ह्वै गई, तकित,
चित्र की पाँति ज्यौं पाँति त्रिय गन खची
नील पंकज बरन झलक तन परन तैं,
केसरी बसन पैं ओप औरै चढी
पीत रँग मेह बरसांन मानौं यहै,
कांम दुति अमर गुर स्यांम घन मैं मढ़ी
यहै मुसक्यांन अरु कैफ जोवन यहै,
यहै सरसांन आनंद हित मैं सनी
इत कुँवरि राधिका, उतहिं बनराज सुत,
'व्रीर' प्रभु दुहुनि कै भागि जोरी बनी ||४७७||

६. राग खंभावची, ताल चपक

आज बरसाने अति ओप बाढ़ी नई,
देखि सखी व्याह की रात मंगल मई
मिलनि समधीन की, भीर गहमह हुई,
गांन-नीसांन-धुनि भेदि सुर-पुर गई
परम सुंदर सुघर स्यांम दूलह बन्यो,
दुलहनी रूप-निधि कुँवरि कीरति-जई
सेहरा सीस नग जटित जगमगि रहे,
छोर मुख दियें, दुहुँ ओर अति छबि छई

---

* हस्तलेख में यह चरण अपूर्ण है। मीन = मन (हस्त)।

४७७—पल = पलक। कैफ = नशा।

भरत भाँवर, भले लगत साँवर गउर,
चले कलहंस गति, सबनि मन की भई
दए महराज व्रषभांन बहु दाँन तहाँ,
'नागरीदास' कौं महल की टहल दई ॥४७८॥

७. राग खभावची, तिताल

नवल रंग भीनी राति, देखि-देखि मंगल कुंज सिहात
राधा मौहन व्याह चाह जुत, सुख सोभा उफनात
देखि थकी निस समैं मनोहर, भयो न चाहै प्रात
'नागरीदास' कुसुम द्रुम फूले, मनहु जोन्ह मुसक्यात ॥४७९॥

५४. पाणिग्रहण

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैंनैं ए दोहा

दुलहिनि गोरी राधिका, दूलह स्यांम सुजांन
व्याह समै संकेत मे, ललिता रचत वितांन ॥१॥
चहल पहल आनंद महल, रंग रली सुख हेत
नेह ग्रंथि जोरे बसन, दोऊ भाँवरैं लेत ॥२॥
पवन परस घूंघट हलत, रुचिर रूप दरसात
दुलहनि कौ मुख निरखि कैं, पिय इकटक ह्वै जात ॥३॥
दूलह-दुलहनि कवल-मुख, रहत निहारि निहारि
अलि द्रग चितवन भाँवरै, भरत दोऊ रिझवार ॥४॥
कर सौं कर जोरैं दोऊ, करत हंस-गति गौंन
गावत मंगल गीत मिलि, चले भावते भौंन ॥५॥
कुसुम सेज विहरत दोऊ, तहाँ न कोऊ पास
ह्वै भँवरी निरखत जुगल, नवल 'नागरीदास' ॥६॥

(दोहा १–६) मुद्रित प्रति मे ये छहो दोहे पद४७९के चारो ओर वृत्ताकार छपे हैं।

४७८—कीरति जई=कीर्ति की कोख से उत्पन्न। सेहरा=मुकुट, मौर। छोर=(धोती अथवा साड़ी का) किनारा।

कुंज पधारौ रंग भरी रैंन

रग भरी दुल्हनि, रंग भरे पिय स्यांम सुंदर सुखदैंन

रङ्ग भरी सैंनीय रची, जहाँ रङ्ग भर्यौ उलहत मैंन

'रसिक बिहारी' प्यारी मिलि दोऊ, करौ रङ्ग-भरी सैंन ।।४८०।।

५५. पाणिग्रहण

या पद के अनुक्रम की अलापचारी मैं देनैं ए दोहा—

गहगड साज समाज जुत, अति सोभा उफनात

चलि बिलसौ मिलि सेज सुख, मंगल गलती रात ।। १ ।।

रही मालती महकि तहाँ, सेव्रत कोटि अनंग

करौ मदन मनुहार मिलि, सब-सजनी रसरंग ।। २ ।।

चले दोऊ मिलि रसमसे; मैंन रसमसे नैंन

प्रेम रसमसी ललित गति, रंग रसमसी रैंन ।। ३ ।।

'रसिक बिहारी' सुख सदन, आए रस सरसात ।

प्रेम बहुत थोरी निसा, ह्वै आयौ परभात ।। ४ ।।

१. राग परज, तिताल

सखी आजु निरखि सुख पुंज रीतहाँ मैंन गांन अलि गुंज री

दंपति हिय फूलनि लियैं हो, बहु फूलनि सौं फूली नव कुंजरी

फूलनि की सैंनी पर दीनैं गरबाहीं , तन फूलनि के सोहत सिंगार री

फूलनि की फूही हलि बरसैं लता हैं हो, तैसी फूलनि की बहत बयार री

---

(४८०) देखिए उत्सवमाला, पद २२१ ।

दोहा (१-४)—ये सभी दोहे रसिकविहारी (बनी ठनी) के हैं। मुद्रित प्रति में इनके पहले 'आन कवि कृत' छपा हुआ है।

४८०—सैंनीय = शय्या-सेज । सैन = शयन ।

दोहा १—गलती = शीतल होती हुई ।

फूली है जुन्हाई, फिरी मदन दुहाई, रहे अरुझि गउर स्याम गात री
फूलनि सफल करी 'नागरिया', आज भई परम सलौनी यह रात री ॥४८१॥

२ राग खंभावची तिताल

सुरंग सेजां रगमगि रह्या सुख सैंण
हारां उलझ्या हार हियारा, नैंणा उलझ्या नैंण
मनमथ अमल अगाधा बोलै, आधा आधा बैंण
'रसिक बिहारी' प्यारी मिलि आणद मैं सोहत, बितई छै रैंण ॥४८२॥

५६. महावर

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा—
राखे नैन बिछाइ कै, लाल पहुप दल गोद
पाय महावर दैंन कौं, बढ़्यौ महा उर मोद ॥ १ ॥
रमा पलोटत चरन नित, जाके सहज सुभाय
सो वृषभांन कुँवारि कैं, देत महाउर पाय ॥ २ ॥
कँवल चरन पिय चतुर लखि, इक टक रहे लुभाय
लियैं महावर हाथ मैं, रंग भर्‌यौ नहिं जाय ॥ ३ ॥
रंग भरत पग, दुहुँनि अति, बाढ़्यौ रंग अनंग
'नागरिया' के दृगन वह लग्यौ, सु छुटत न रंग ॥ ४ ॥

१ पद, राग बिहागरो, ताल चपक

बीन बीन फूल लाल जावक बनाय राख्यौ,
ऐहैं प्यारी राधा रंग पायनि लगैहौ
मद-पौन पात कुंज आहट तैं चौंकि परैं,
जानैं कब देखि नैंन नैंननि खगैहौं
आय मिली बाल अंकमाल भरि बैठे लाल,
पोंछत चरन आछैं पीतांबर छोर सौं

(४८१-४८२) देखिए उत्सवमाला २१४, २२२ ।
(४८३) ऐहैं प्यारी = प्यारी (हस्त)। पायनि = पायनि मैं । नैंननि = नैंननि मैं ।
दोहा १. पहुप दल गोद = फूलों की पंखड़ियों की गोद (मे स्थित राधा पर) ।
पद ४८३. खगैहौं = धँसा लूँगा, बैठा लूँगा, लीन कर लूँगा । आछैं = अच्छे । आँगुरी दसन धरि = दांतों (एवं अधरों) पर अँगुली रखे हुए । यह मना करने की मुद्रा है।

आधे मुख घूँघट मैं, आँगुरी दसन धरि,
'नागरि' निहारि रही नैंननि की कोर सौं ॥४८३॥

२. ताल चपक

अरी प्यारी कैं लाल लागे दैंन महाउर पाय
जब भरि सींकहि चहत स्यांम घन दीनैं, चित्र बिचित्र बनाय
रहत लुभाय चरन लखि इक टक, बिबस होत, रँग भर्यौ न जाय
'नंददास' खिजि कहत लाड़िली, रहौ जु रहौ, रही पगनि दुराय ॥४८४ ॥

३. इकताल

लाल रँगे रंग, रंग जावक सौं चरन निहारैं
लीनैं कर-कवल मैं, भीनैं रंग पाय प्यारो
ताहि देखि रीझि रीझि मन धन वारैं
तब पिय सीस नाय, नैननि छुवायौ चहैं,
दोऊ कर मुख झेलि पगन निकारैं
नाहिंन सम्हारैं अंग, 'नागर' निहारैं रंग,
आधी रात कुंज ओट, चंद उजियारैं ॥४८५॥

४. ताल चपक

तुम रँग भीनैं सुनत नहीं, गई मेरे पाय की नही
सुनिहौ कुँवर और काहि लगाऊँ, आधी रैंनि गई, इहाँ हम तुम ही
सुनि कै ब्रज लोग उपहास चलैगौ, गुरजन डर धरकत उर नित ही
'नददास' प्रभु ऐसी सही न परैगी जिय, जो सहियेगी तौ पर-बस ही ॥४८६॥

---

(४८४) रहौ जू रहौ = रहौ (ब्रजरत्नदास ६२)। रही = रही तब (वही)।
(४८५) रंग रंग = रंग। दोऊ कर = दोऊ।
(४८६) सुनत नहीं = सुनतही (ब्रजरत्नदास ८६)। सहियैगी = सहैगी (वही)।
४८४—सींक = इषीका (संस्कृत); बहुत बारीक डंठल, जैसे नीम की पत्तियों का। रंग में सींक के छोर डुबोकर पैर मे महावर दिया जाता है।
४८५—रँगे रंग = प्रेम मे रँग गए। झेलि = ठेलकर; हाथो से दूर हटा कर।
४८६—पाय की नहीं = पद-नख। गई मेरे पाय की नहीं = मेरे पैर के नख धरती कुरेदते-कुरेदते घिस गए।

५. तिताल

दोऊ मिलि पगे प्रेम रस घातनि
हसि हसि करत भावती बातनि
दोउ चित चतुर लगावत चोरी
देहिं पग भूषन चौंरा गोरी
दुहुनि मैं प्रीत झगर यौं परहीं
पिय जिय प्रेम उमगि भुज भरहीं
दुहुनि मैं रस ढुरि घुरि घुरि आवत
मुरि मुरि अधरनि सैंन बतावत
दुहुनि के उरझे तन मन नैंना
कहा कहूँ नैंननि कैं नहिं बैंना
दुहुनि कौं अंग-सम्हार भुलानी
रंग मैं सब निस जात न जानी
दोऊ जहाँ, आई अमल जुन्हाई
सोए लखि 'नागरि' कुँवर कन्हाई ॥४८७॥

६. राग परज का ख्याल, इकताल

ए अँखियाँ नहिं दुरैं दुराई
क्यौं रहैं दबी प्रीति अंतर की, होय कहा कीनैं चतुराई
हटकी रहति नांहिं लाखनि मैं, प्रेम छकी उरझैं री माई
और ही दसा भई तेरी सौ, सुन्दर साँवरैं रूप लुभाई
प्रगट हौंन कै हेत सखी मैं, ए अँखियाँ बहौ विधि समझाई
'नागरीदास' अंत मो मन की, तैं पाई सो पाई ही पाई ॥४८८॥

७. इकताल

दोष कहा कान्ह दीजिए मै कीनो मीत अहीर री
श्रवन सुन्यौ कोमल चतुर, निकस्यौ बे पीर री
मोहि देखि जग मैं हसैं, कहैं, साँवरिया सौं नीर री
'साँवरी सखी' बिना मिले कैसैं रहै मन धीर री ॥४८९॥

---

(४८७) चौंरा = चोरी (हस्त)।
(४८८) तैं पाई = नौ तैं पाई (हस्त)।

४८७. घातनि = दाँव पेंच। भावती=मनचाही। सैंन = इशारा। रंग = क्रीडा, विलास।
४८८. हटकी = हरकी, रोकी। अंत = आंतर रहस्य; भेद।
४८९. नीर = निअर, निकट।

८. तिताल

ए री मन सुन्दर रूप लुभायो
गयौ हुतौ, ताही छिनहू तैं बहुरि न सोपैं आयौ
घर घर घैरु सह्यौ या काजैं, सब ग्रह काज छुटायौ
'नागरिया' मन जनम सँगाती ह्वै गयो मीत परायौ ॥४९०॥

९. तिताल

चतुर हसि चितवनि मैं मोही
गिरत सँभारि लई हूँ भुजन भरि, सो सुधि नांहिन को ही
ता छिन तैं चित चढ़ी चटपटी, निपट अटपटी गाँस
'नागरीदास' चुभी क्यौं निकसै, बंक बिलोकनि फाँस ॥४९१॥

१०. इकताल

भुराई हौ रे ठगौरे नैंनां
देखत ही रहि जाऊँ भूलि कैं, उड़त उर जु उपरैना
करत बिबस मोहि री हगनि मैं, मदन मौंहनी सैंना
'नागरीदास' रूप की अति गति, कही न परत कछु बैंना ॥४९२॥

११. इकताल

कहत न बनैं निपट अटपटी बात हेली
चित तैं छिन इत उत जु टरत नहिं, मोहन छबि अलबेली
चढ़ी नेह चितवनि की लहरैं, धीर धरत नहिं पीर नवेली
'नागरीदास' न बरनि सकौ कछु, मन की प्रेम पहेली ॥४९३॥

---

(४९०) मन = मदन (हस्त)। (४९१, चढ़ी = बढ़ी। (४९२) मोहि री = मोहि, भरी।
(४९३) कहत = कहितैं (हस्त)। ४९२ नंद = न नंद (हस्त)।

४९०—घैरु = बदनामी। ४९१—सो सुधि नाहिन को ही = उसे यह भी सुधि न रह गई कि वह कौन थी; उसे पूर्ण आत्म-विस्मरण हो गया। चटपटी = व्यग्रता, उतावली। गाँस = तीर या बरछी का फल।

४९२—मदन मौंहनी सैंना = मदन को भी मोहित कर लेने वाले आँखों के इशारे। गति = रैना = ओढ़नी। बैंना = वाणी।

४९३—नवेली =

१२. तिताल

हो मेरो मन मोह लियो स्यांम सुजांन
नैंननि नैंन मिलाय भाय सौं, चितवनि करि सनमांन
तब तैं कल न परत व्याकुल नित, भावत खान न पान
'नागरीदास' प्रीति की वेदनि जानैं न लोग अजांन ॥४६४॥

१३. तिताल

बंसीवाले नैं की सिखलाया नी
जिंद असाढ़ी घायल कीती, नैनूँ दे बान चलाया नीं
बाँकी भौंहैं कटीली सोहैं, नन्द केनैं मोहन नांम धराया नी
'साँवरी सखी' वड़ भाग जिनो दे, जिन ऐहा वर पाया नी ॥४६५॥

१४. इकताल

कन्हैया नां जानौं कहा कीनौं
तेरौ मुख देखत ही, तेरैं ह्वै गयो मन आधीनौं
भौंहनि मैं, की नैंननि मैं, टौना सौं पढ़ि दीनौं
'नागरीदास' मोहनां प्यारे, मो मन तैं हरि लीनौं ॥४६६॥

१५. इकताल

ए ही तैड़ी बांनि बुरी, मै डेरहू नां
नैंनां तडे बरछी दी नोकैं, चितवनि बंक छुरी ॥४६७॥

---

(४६६) नैननि मैं = नैंन वैननि मैं ।

४६४—वेदनि = वेदना, व्यथा । अजान = अज्ञान ।

४६५—की = किसने । नी = री । जिंद = जिंदगी जीवन । असाढ़ी=हमारी । कीती= किया । नैंनूं दे=नयनो के । केनैं = किसने । जिनो दे = जिनके, उनके ।

४६६—की = अथवा ।

४६७—मै डेरहू नां = मैं डरती हूं री । तड़े = तेरे । तैड़ी = तेरी । दी = की ।

१६. तिताल

रतनाली हो थारी आंखड़ियाँ
प्रेम छकी रसबस अलसांनी, जांणि कवल री पांखड़ियाँ
सुंदर रूप लुभाई गति मति, होइ गई ज्यौं मधु मांखड़ियाँ
'रसिक बिहारी' बारो प्यारी, कौंण बसी निस कांखड़ियाँ ॥४९८॥

(१७)

मोहन जी म्हारै थे माई हठि लाग्या छो जी
जाबा द्यौ घर, छोड़ो छेहड़ौ थे, रस वातां पाग्या छो जी
आंख्यां थाकी छै रतनाली, सारी निस रा जाग्या छो जी
'रसिक विहारी' प्यारा म्हांनै थे, औरां सूं अनुराग्या छो जी ॥४९९॥

१८. तिताल

रँगि रह्या जुगल, रूप रँग माहीं
कुंज महल मैं दर्पण साम्हैं, दियां रहै गल बांहीं
कदेक सभ्रम ह्वै स्यांमा रै नैड़े स्यांम छतांहीं
कदेक रीझि रहैं 'रसिक बिहारी', देखि देखि पड़छांही ।५००।

१९. तिताल

हो सखी मेरी नींद नसांनी
पिय कौ पंथ निहारतैं, सब रैंन बिहानीं
सखियनि मिलि कै सीख दई, मन एक न मांनी
बिना देखे कल ना परै, जिय ऐसी ठांनी
अंग छीन, व्याकुल भई, मुख पिय पिय बांनी
अन्तर वेदनि विरह की, वह पीर न जांनी
ज्यौं चातिग घन कौ रटै, मछरी बिन पानी
'मीरां' व्याकुल बिरहनी, सुधि-बुधि बिसरांनी ।५०१।

४९८—थारी = तुम्हारी । जांणि = जनु, मानो । री = की। मांखड़ियां = मक्खी। कौंण बसी निस कांखड़ियां=कौन रातभर बगल मे बसी रही, किसके साथ रात विताई ।

४९९—म्हारै थै = मेरे संग । हठि लाग्या छो जो = हठपूर्वक साथ लगे हुए हो । जावा द्यौ घर=घर जाने दो । छोड़ो छेहड़ो = छेड़-छाड़ छोड़ो ।

५००—साम्हैं = सामने । कदेक = कभी । स्यांमां रे नैड़े = राधा के निकट रहते हैं । छतांहीं = रहते है । पड़छांही = प्रतिबिंब, छाया ।

२०. तिताल

चिरता लीतैं नन्द कुँवर मन मोह्यौ हे कामणगारी
बस करिबा रा मन्त्र तो जिसा सीखी कुण ब्रजनारी
दिन अरु रैंण सैण रे कारण अँग अँग रहे छै सँवारी
भलौ कियौ आधीन आपणौं, प्रीतम 'रसिक बिहारी' ॥५०२॥

२१. तिताल

ए बाँसुरिया-वारे ऐसैं जिन बतराय रे
यौं न बोलिए अरे घरबसे, लाजनि दहि गई हाय रे
हौं धाई या गैंल ही सौ रे, नैंक चल्यौ धौं जाय रे
'रसिकबिहारी' नाव पाय कैं, क्यौं इतनौं इतराय रे ॥५०३॥

२२. राग सौहनी—इकताल

अमांनी अँखियाँ दरस दिवानी
रूप-आग विच वेसकहूँ ई गिरदी हैं उररांनी
इस्क अमल सौं झुकी रहेंदी, छिन छिन बरसत पांनी
'नागर' नवल इते पर दिलवर हूवा रहत गुमांनी ॥५०४॥

२३. तिताल

मन मेरौ री बरज्यौ नहि मांनै
प्रगट करत है अतर की सब, रहन देत नहिं छांनैं
नेह बाय बौराने की गति, जा जानैं सो जानै
खैंच्यौ रहत न जाय लगत है 'नागर' रूप निसानैं ॥५०५॥

---

(५०२) मंत्र = म यंत्र (हस्त)।

५०२ चिरता= ?। लीतैं = लिए हुए, कामणगारी = वशीकरण करनेवाली। बस करिबा रा = वश में करने का। तो जिसा = तुमसी। कुण = कौन। सैंण रे = इशारे के। रहेछै = रहती है। आपणौं = अपने।

५०३—बतराय = बातें करे। घरबसे = उपपति। गैल = पथ।

५०४—अमांनी = न माननेवाली। ई = यह। गिरदी है = गिरती हैं। उररानी = उमड़कर। अमल = नशा। रहेंदी = रहती है। गुमानी = अभिमानी; बेपरवाह।

५०५—छांनै = प्रच्छन्न। बाय = बलाय, विपत्ति, रोग। बौराने = बावले। गति = दशा।

२४. चौताल

अरी इन अँखियनि सौं पचि हारी
ए मेरैं बस नाहिं भई, हौं अपने बस करि डारी
इत उत उझकत रहत चकित ह्वै, देखैं बिनां दुखारी
जब ही दृष्टि परत मोहन मुख, जात न तनक सम्हारी
कब लगि लै निबहौं इहि भाँतनि, गृह कुल कानि बिसारी
'नागरीदास' भई ये वैरनि, दैंहुँ कहा कहि गारी ॥५०६॥

२५. तिताल

प्यारी जी रा सालूड़ा मैं आवै छै सुगंधी रूड़ी बास
अंग मरगजी गंध लुभाया, भँवर भवैं आस पास
लटपटे वेस आणि ऊभा रह्या, आँगण कुञ्ज निवास
'रसिक बिहारी' पवन ढुरावैं, खासा होय खवास ॥५०७॥

२६. तिताल

तो रँगीली वाजी लागि रही छैं नैणां मैं
जांणी काम कटांछांही का देखि दाव दैणां मैं
कापै अंग, अनंग रंग, सुर-भंग हुवौ वैणां मैं
'रसिक बिहारी' मन फूल बढ़ी, हुई हार जीत सैणा मैं ॥५०८॥

२७. तिताल

देखौ सखी री देखौ दोऊ बैठे नांव मैं
गावत आवत, चपल चलावत सहचर चंपा चाव मैं
स्यांमां स्यांम दिए गर बहियाँ, नवका बिच रस भाव मैं
'नागर' नवल सखिनि की अँखियाँ, लगि लपटीं लपटाव मैं ॥५०९॥

---

(५०८)—देखिए उत्सवमाला १११।
५०६—हौं = मुझको।
५०७—प्यारी जी रा = प्यारीजी के। सालूड़ा = सालू, एक लाल कपड़ा। आवै छैं= आती हैं। रूडी = सुंदर। वास = सुगंध। मरगजी = दली मली। भवैं= घूमते हैं, भ्रमण करते हैं। लटपटे वेस = शिथिल वेश मे। आणि = आकर। ऊभा = खड़ा। खासा = भला, अच्छा। खवास = टहलू सेवक।
५०९—चंपा = डाँड़। नवका = नौका, डोंगी।

२८. तिताल

आज की रात आछी लागै छै उज्यारी
विहरैं स्यामा स्यांम चाव सौं, सुंदर नाव सिँगारी
जमुना विच झिलमिल की सोभा, कवल फूल सुखकारी
नाव डगमगै, डर लपटावैं, 'रसिक बिहारी' जू सौं प्यारी ॥५१०॥

५७. भ्रू-भंग (मान)

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा—
सौहैं हूँ चाहत न तू, केती खाई सौंह
ए हो क्यौं बैठी किये, ऐंठी ग्वैंठी भौंह ॥ १ ॥
करि भौंहैं बाँकी कहौ, तनगौहैं क्यौ बैन।
इत राजी अब कीजिए, इतराजी के नैंन ॥ २ ॥
चित चिंता चाहत धरनि, चितवत नीची नारि
कहो सखी किह कारनैं, पहरे पलटि सिँगार ॥ ३ ॥
मान करत बरजत न हौं, उलटि दिवावत सौंह
करी रिसौंही जाय क्यौं, सहज हसौंही भौंह ॥ ४ ॥
तुमही सर्वस कांन्ह कैं, मांन करौ बे-काज
राधा-वल्लभ नाम की, प्यारी निबहौ लाज ॥ ५ ॥
छाड़ि इतौ अनखाव री, अहे बावरी बांम।
'नागरिया' भ्रुव-भंग मैं, होत त्रिभंगी स्यांम ॥ ६ ॥

१. पद, राग परज, इकताल

रसिक रसाल लाल, बाल! तेरैं ही रंग भीनौ
रस बस तौ पहिलैं करि लीनौ, अब चाहत कहा कीनौ
मोहि बतावो जू बात कहा है, जापर इतौ मांन हठ लीनौं
'कृष्ण जीवन' सुन्दर घन तुमकौं तन मन सर्वस दीनौं ॥५११॥

(दोहा १-६) ए दोहे अनुक्रम ३५,३६,४३ के प्रारम्भ मे पहले आ चुके हैं। मुद्रित प्रति मे दोहा १ ४ नहीं है, क्योंकि ए बिहारी के हैं। देखिए बिहारी रत्नाकर ५०६,२७३।

५१०. आछी = अच्छी। लागैं छै = लगती है। झिलमिल = हिलता हुआ प्रकाश।

२. इकताल

हौं पठई तोहि लैंन कौं मृगनैंनी
चितवनि मनमौंहन जू कौ चित बित हरि लैंनो
कुंज-भवन रसिक रवन, रची है रुचिर सैंनी
ताहि सुफल करिए, पग धरिए गज गैंनी
सहचरी के बचन श्रवन सुनियत पिक बैंनी
पिय 'बिहारी' लाड़ली लाल, बिलखिए रस रैंनी ॥ ५१२ ॥

३. इकताल

मांन गयो है छूटि, सुंदर साँवरे सौं नेह
सखी वचन सुनि, गवन कीनौं मञ्जुल रवन अछेह
रूप की आगरी 'नागरिया' बलि पहुँची है आनँद गेह
मिली है गोकुल-चंद सौं चंद्रिका, कौतुक कुंज बिदेह ॥ ५१३ ॥

४. तिताल

कुंज तैं आवत हैं जमनां तट, नागर नागरि संग लियैं
चंद की चाँदनी छाइ रही है, तैंसेई स्वेत सिंगार कियैं
गावत राग जमावत सहचरि, आवत आसव प्रेम पियैं
देखि लगी नवका सलिता तट, 'नागरिया' आनन्द हियैं ॥ ५१४ ॥

५. तिताल

बिहरत नवका बैठि बिहारी
जमुनां जगमग जौन्ह जांमिनी, कवल कूल सुखकारी
मिलवत बीन प्रवीन सहचरी, गावत परज पियारी
कबहुँक नीर नीरज-कर लेत हैं, भांमिन स्याम सहारी
उर कर परसत, चौंकि, चाहि मुख नैंननि काम केलि बिसतारी
अदभुत सुख-सलिता में खेलत, 'नागरिया' बलिहारी ॥ ५१५ ॥

---

(५१५) जगमग जौन्ह = जौन्ह जगमग (हस्त)। नैंननि = नैंननि की (हस्त)।

५१२. हौं पठई = मुझे भेजा है। सैंनी=सेज। सुनियत = सुनिए। रैंनी=रजनी, रात।

५१३. अछेह=निरंतर। बिदेह=अनंग, अतन, वितन, काम। कुंज विदेह = काम-कुंज।

५१४. आसव = शराब। सलिता = सरिता।

५१५. परज=राग विशेष। स्याम सहारी=श्याम का सहारा लिए हुए। परसत=स्पर्श करते ही।

६. तिताल

वृंदावन की तलहटी, डोलैं जमुना तीर-तीर
जटित स्वेत नग नाव बैठि दोउ, साँवल गौर सरीर
चलवत चपल चारु चपावलि, सजि सहचर तन सखा चीर
गावत जात स्याम सुंदर मन, पूरि रही उर प्रेम पीर
निस उजियारी फूल्यौ बन द्रुम, लता रही झुकि परसि नीर
मुदित स्याम लाल बैन बजावत, सुनि कुहकि उठत मोरन की भीर
नवल विहार, नवल नवका चिन्ह, नवल प्रिया गिरधरन धीर
'नागरीदास' रैनि कछु बितई, बहुरि बसे मिलि धीर समीर ॥ ५१६ ॥

८. दोहा

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनै ए दोहा—
जब तें चितए नैंन भरि, तब तें छिन नहिं चैन
मन मोहन मोहन फिरत, जागत सुपनैं सैन ॥१॥
मोहन लखि मोहन भई, कहा लग्यौ यह टौन
सब सूझत मोहन-मई, दई भई गति कौन ॥ २ ॥
सुधि बुधि सब ही हरि लई, मनमोहन मुसकाय
ए दइया कैसी बनी, लागी बिरह बलाय ॥ ३ ॥
लगी लगनि हरि मुख निरखि, डारयौ सब सुख रूँद
जौ हूँ ऐसा जानती, रहती नैंननि मूँद ॥ ४ ॥
कौन घरी की लगनि यह, अरी भरी नहिं जात
मिटत नाहिं दिन राति जिय, स्याम रूप उतपात ॥ ५ ॥
घर बनहूँ नहिं लगत मन, रहत स्याम तन लीन
अरी ढठौना नंद कैं, कछु टोना पढि दीन ॥ ६ ॥
नैंननि दुख नैंननि लगैं, तन मन दुख, दुख गेह
ए दइया कौने दयौ, दुख कौ नाव सनेह ॥ ७ ॥

---

(५१६) चलवत = चलत (हस्त)। सहचर = सहचरि। बजावत = बजावैं (हस्त)।
नवल प्रिया = नवल पीया (हस्त)।

५१६—चंपावलि = नौका चलाने के डाँड़। चीर = वस्त्र। धीर समीर = वृंदावन मे यमुना किनारे स्थित एक घाट, जहाँ कृष्ण विलास किया करते थे।

हरि सौं लगन लगाय कैं, भरी रहत नित नीर
रिझवारन अँखियान सौं, हौं हारी री वीर ॥८॥
जाति भरी बिछुरत घरी, जल सफरी की रीति
छिन छिन होत खरी खरी, अरी जरी यह प्रीति ॥९॥
'नागर' सैंननि सैंन मिलि, बनी जु नैननि नैंन
बनत बनत ऐसी बनी, कहत बनत नहिं बैंन ॥ १० ॥

१. पद, राग परज, इकताल

जिन हौं मोही, स्याम ढटौंनां
सुधि बुधि सब बिसरि गई, पड़ि डारयौ कछु टौनां
वहै मूरति लगी रहत नित, फिरत गौहन गौहनां
सपनैं बरराय उठौं, कहत, मौहन मौहना
सापु ननद अरु पास परोसिन, बोलत बोल असौहना
'नंददास' पिय बिहारी, मोहि नितैं नित जौहना

२. इकताल

माई मौहन मेरे गोहन परयौ. कहा जानैं उन कहा धौं करयौ
बाट घाट गिर पुर बन बीथनि, जित देखौं तित रहत अरयौ
कहा कहौं, अँग अङ्ग माधुरी, मृदु मुसकनि मेरौ मन जु हरयौ
'वृन्दावन' प्रभु नन्द दुलारौ, नखसिख रूप भरयौ ॥११८॥

३. इकताल

देखि छैल कान्ह की छबि, बहुत मन है तेरौ
अटकी सब भाँति जासौं, सो है प्रीतम मेरौ

(दोहा १-१०) लगनाष्टक के ए दोहे पीछे अनुक्रम १६ के प्रारम्भ में आ चुके हैं। तीसरा दोहा लगनाष्टक मे नहीं है। नवाँ दोहा बिहारी का है। देखिए बिहारीरत्नाकर २७७।

(दोहा १)—फिरत = परयो। (दोहा २)—सोहन भई = मोहन मई (हस्त)।

(दोहा ६)—घर बनहूं = घन बरनहूं (हस्त)।

(पद-५१७) पास परोसनि-पार परोसिन (हस्त),। बोलत बोल=बोलत बाल(हस्त)

५१७—जिन हौं मोही = जिन्होने मुझको मोहित किया। गौहन गोहनों = साथ साथ। बरराना = बकना। **असौहना** = न अच्छे लगनेवाले। जौहना = देखना।

झुकिय सुरग पाग सीस छबीली भाँति बाँधे
फरहरात कञ्चन बरन, उपरैंना काँधे
ओप नीलमनि के वरन, अग सौंधें भीनौं
यई ऐं मदन मोंहन सोहन, जिन मेरौ मन लीनौं
चिकनी कारी कुटिल अलकैं पङ्कज दल नैंनां
याहीं कै देखैं बिनां, मेरो चित न धरत चैंना
हियै हार भूषित मणि तरल, भुज बिसाला
लटकी दोऊ पहुँचनि लौं, मुक्तन की माला
कुण्डल हलनि लटक चलनि, रूप कौ अति भारो
कैसो फैलि रह्यो है ब्रज मैं, मुख को उजियारो
'रामराय सखी भगवान' के जिय भावै
आछी भाँति नैननि सौं, हरि कै सैंन बतावै ॥५१९॥

४. तिताल

मैं जाने हो माधौ जू, जैसे लोयन रावरे
थकित झुकत झपकत झिझकत से किधौं मतवारे किधौं बावरे
किधौ कहूँ रस मधु पान कियो लाल, कैधौं कहूँ कीनै मन्त्र भाव रे
'कृष्ण जीवनि हरि लछीराम' पिय, रँगीले छबीले गरबीले,
मानूँ मदन नृपति के दाव रे ॥५२०॥

५. तिताल

घायल मार सुमार भई हिय, मदन मोंहन दृग बांन लगे
सुधि न रही घट घूँघट पट की, इक टक नैंननि नैंन खगे
मूर्छित होत, गिरत, गहि भुज भरि अधर सुधा रस पांन पगे
'नागरिया' आसक्त अमल मैं दोउ मिलि कैं सब रैंनि जगे ॥५२१॥

---

(५१९) लटकी = लटटी (हस्त)। लौं = सौं (हस्त)।

(५२१) घट घूँघट पट की = घट पट की कछु।

५१९ - बरन = वर्ण, रंग। ओप = चमक, कांति। सोहन = शोभन, सुहावने। तरल = (१) माला का सबसे बड़ा दाना, सुमेरु, (२) हीरा।

५२०—मधु = शराब। बावरे = भ्रमित। दाव = घात।

५२१—मार = कामदेव। घायल० = मार की सुंदर मार से मेरा हृदय घायल हो गया है। खगे = मिल गए, लीन हो गए। अमल = नशा।

५६. जुगल-रस-माधुरी

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनें ए दोहा—
नव निकुज मन कौं अगम, सेवत कोटि अनंग
जुगल केलि आनंद कौ, तहाँ अखंडित रंग ॥१॥

प्रेम रासि दोउ रसिक वर, बिलसत नित्त बिहार
ललितादिक नित लेत है, तिहिं सुख कौ रस सार ॥२॥

नैंननि नैंन सिरावहीं, बैंन सजीवनि मत्र
मुहाँचही जिय ज्यांवहीं, स्यामां स्यांम सुतंत्र ॥३॥

कहूँ उजारौ चंद कौ, कहुँ पातन की छाँह
रंग भरे राजत तहाँ, पिय प्यारी गर बाँह ॥४॥

नित्त केलि आनंद रस, बिच बृंदाबन बाग
'नागरिया' हिय मैं बसौ, स्यांमां स्यांम सुहाग ॥५॥

१. पद, राग परज, तिताल

राजत दोउ दीनैं गरबांहीं
रही छाय निस सरद जुन्हैया, नव निकुंज कैं मांही
अरुझि रहे तन मन आनंद मैं, आधी रात द्रुमनि की छांही
'नागरीदास' लता रंध्रनि लखि, रीझि रीझि बलि जांही ॥५२२॥

२. तिताल

सोहत हैं अलसौहैं नैंना
लटकि लटकि पिय पर अरसावत, सिथल कहत मुख आधे आधे बैंनां
बहौत गई निसि प्रिया जँभावत, चुटकी देत लाल सुख-दैंनां
'नागरीदास' सखी छबि देखत, बिसरि बिसरि जात उर उपरैंनां ॥५२३॥

(दोहा १-५)–अनुक्रम ११ के प्रारम्भ में १,२,३,५ दोहे पहले आ चुके हैं। वहाँ इनका क्रम क्रमशः ५, ३, ६, ७ है। १, ३, ५ संख्यक दोहे जुगल रस माधुरी के २, ३, ११ संख्यक दोहे हैं। चौथा दोहा नया है। मुद्रित प्रति में ए पाँचों दोहे हैं।

(५२३)—देखिये यही ग्रंथ ४२४।

३. तिताल

अँखियन भाव भर्यौ है रस कौ
घुरि घुरि सनमुख रहत रसीली, रूप बढ़्यौ आरस कौ
आधे आधे वचन कहत, कछु मंत्र पढ़त मानौं पिय बस कौ
'नागरिया' पिय रसिक न पौढ़त, नीद भरी देखन कौ चसकौ ॥५२४॥

४. राग परज, तिताल

लोचन नींद भरे
अधखुली पलकनि मैं मुसकात, झुकि पिय ओर परें
हरि टारत मुख तें परछांही, कर पर लता धरें
'नागरीदास' चंद उजियारैं, दृग तैं दृग न टरें ॥५२५॥

५. तिताल

आई अब दुहुनि पै जोन्हि जगमग री
गई परछाहीं पाछै, देत हैं दिखाई आछैं,
छाई रहो चंद, आगैं धरो जिन पग री
तन तन सौं, मन मन सौं अरुझे देखि,
अधखुले नैंन रहे नैंननि मैं खग री
रस बस पागे, नव 'नागरिया' स्यांम जागे,
आधी रैनि हुती, सोऊ बीत गई सिगरी ॥५२६॥

६०. रैंन रूपारस

या अनुक्रम की अलापचारी मै दैंने ए दोहा
चंद चंद्रिका मंद की, दंपति अंग उजास
लता कुंज रंध्रनि कढ़्यौ, किरननि निकर प्रकास ॥१॥
मैंन-रग-रस रगमगे, जगे उजारी रैंन
खगे नैंन पिय के तहाँ, लखि अलसौहैं नैंन ॥२॥

---

(५२४) नागरिया पिय रसिकन=नागरि नवल रसिक नहिं ।
(५२६) यह पद हस्तलेख में नहीं है, मुद्रित प्रति में है ।
५२४. आरस=आलस । पिय बस को=प्रिय को वश मे करने के लिए । चसकौ=शौक, आदत, लत ।
५२६. रहे खग=धँस गए, लीन हो गए । सिगरी=संपूर्ण ।
दोहा २. खगे=धंसे, लीन हो गए ।

अँखियनि आरस छबि लखैं, अमल उजारी मांह
बहुरि चद की डीठ डरि, करत मुकट की छांह ॥३॥

पलकै पानन पीक सौं, रँगी जु रंगनि बाल
रीझि रहे सोई निरखि, नींद भरे दृग लाल ॥४॥

सहज छके से रस छके, छके नींद अरसांन
छके छकावै पीय कौं, नैंन रूप-मद-पांन ॥५॥

जुरे जुरैं, फिरि हसि मुरैं, घुरैं ढुरैं रहि जाहि
लोयन लहरैं निरखि, पिय धीरज ठहरैं नांहि ॥६॥
श्रवननि छ्वै, छबि सौ फिरैं, लोयन वक बिसाल
खुलैं न आरस अधखुले, करत लाल पर हाल ॥७॥

अरसानैं घूमत झुकत, सरसानैं छबि ऐन
बिहसि ढुरानै पीय पैं, नींद घुरानै नैंन ॥८॥

रैंनि घटै, त्यौं त्यौं बढ़ैं, आरस रूप झकोर
नींद भरैं, पिय उर अरैं, नैंननि पैंनी कोर ॥९॥

जब पल आवै झुकत पिय, दरपन देत दिखाय
तब अपनी अँखियानि पर, अँखियाँ रहत लुभाय ॥१०॥

नींद झुकी पल निरखि पिय, देत हैं पांन बनाय
उत नैंननि के खुलत ही, इत बीरी छुटि जाय ॥११॥
भौर निवारत बदन लखि, मन धन वारत जात
फूँकि जगावत लाल तब, खुले नैंन मुसक्यात ॥१२॥

सखी लखैं दुरि द्रुमनि मैं, ह्वै गईं चित्र सरीर
निस उनदौंहैं दृगनि पैं, भई दृगन की भीर ॥१३॥
अरसांनी निरखत प्रिया, जात बिहांनी रैन
नैंननि लखि पिय कैं भए, रोम रोम मै नैंन ॥१४॥

(दोहा १-२०)—प्रथम १८ दोहे रैंन रूपारस के ८-२५ संख्यक दोहे हैं। अन्तिम दो दोहे नये हैं।

(१२) भौंर = भोर (हस्त)। (१३) भीर=पीर (हस्त)।

३. अमल = निर्मल। डीठ = कुदृष्टि। रंगनि = प्रेम से। ६. हाल = समाधिस्थ हो जाना। ९. कोर = हथियार की धार, बाढ़। १०. पल = पलक।

धरैं चिबुक तर हाथ, द्दग देखत नींद खुमार
लगे रूप के रहचटैं, नहिं पौढ़त रिझवार ।।१५।।
लखि उरझैं, सुरझैं नहीं, सब निसि गई बिहाय
आरस उरझे द्दगनि मैं, पीय रहे उरझाय ।।१६।।
क्यौं सुरझैं आरस भरे, नैंननि उरझे नैंन
'नागरिया' के हिय बसौ, यह रूपारस रैंन ।।१७।।
नागरि नैंननि रूप ह्व , दो हा पढ़ि नैंनानि
अछरन हूके नैंन भए, कहि न सकत बैंनानि ।।१८।।
या रूपारस रैंनि कौं, तब ही सकै निहारि
तन के नैंननि मूंदि दै, मन कै नैंन उघारि ।।१९।।
'नागरि' नैंननि जिहि लख्यौ, यह रूपारस रैंन
ताके नैंन सु नैंन हैं, और नैंन नहिं नैंन ।।२०।।

इति रैंन रूपारस

१. तिताल

हे माती नींद की अँखियाँ सोहैं लाल
कांम केलि के रंग रसमसी, छुटी अलक, तुटी माल
लपटांनें बनवारी प्यारी, अरुझे बाहु मृनाल
'नागरिया' ढिग भँवर निवारत, लीनैं हाथ रुमाल ।।५२७।।

२. इकताल

अँखियाँ अरुन रसमसी घुरहीं
लाज भरी छबि भार भरी, ये रूप छकी आलस-जुत ढुरहीं
श्रीमति बदन पिय चिबुक उठावत, कही न परत जब हसि हसि मुरहीं
रही घरी द्वै राति जुन्हैया, 'नागरिया' छैल तऊ न बिछुरहीं ।।५२८।।

३. राग सोरठ का ख्याल, इकताल

रे साँवलियौ साजन म्हांरौ
रूप ठगारौ कांमणगारौ, मोहै मन सगलाँ रौ
हिय मैं-बसियौ, रसियौ लोभीं, मदन मंत्र बैणाँ रौ
'नागरीदास' हुवौ मन चेड़ो, मतवाला नैंणां रौ ।।५२९।।

---

(५२८) ये रूप = रूप । श्रीमति = श्रमित ।
१५. रहँचटैं = चसका, आतुरतापूर्ण लालसा । १८. दोहा = हा हा, बिनती ।
५२९. म्हांरौ = हमारा । कांमणगारौ = वशीकरण करनेवाला । सगलां रौ = सबका । बैणां रौ = वचनों का, वचनों वाला । चेड़ो = चेरा, दास । नैणां रौ = नयनों का ।

८. तिताल

प्रीतम निपट बिसासी हाय
डारी सुलफ जुलफ की फाँसी, मद छबि प्याय छकाय
कीनैं वार सु मार इते पर, खंजन नैंन चलाय
'रसनिधि' साँवल ठगिया, मेरौं मन धन लियौ चुराय ।।५३४।।

९. इकताल

कल न परत दिन रतियाँ, अहो पिय नैंननि कीनी चौरी
सोवत, जागत, चलत फिरत, अग मोहि तलफत ही बीतत,
छिनैं छिन लगी इहिं मुख की ढौरी
इन नैंननि कैं हाथ बिकांनी, देखन कौं उठि दौरी
'नागरिया' घर बरजि तरजि रही, हौं न रही जिय लरजि,
डारी तुम सुंदर रूप-ठगौरी ।।५३५।।

१० तिताल

वहि मन बसियो रसियो री, मोहन लाल नगीनौ
बृज कौ भूषन, रतन अमोलक, अति सुंदर, रँग भीनौं
मै पायो, मेरे बड़ भागनि सिर बिधनां लिख दीनौं
'रसिक बिहारी' पिय सुखकारी, कंठ लाय मैं लीनौं ।।५३६।।

११ तिताल

बिच बृज नारया रे झुंड, राधा रूप है रूडौ
ग्रीव झुकायां झूमक नांचै, सीस के सारो जूडौ
केसरि रग रँगी साडी मैं, झलकि रह्यौ छै चूडौ
देखि छक्या पिय 'रसिक बिहारी', रह्या धीर धरि कूड़ौ ।।५३७।।

---

(५३५) इहिं सुख = यह सुख (हस्त)। नागरिया० — नागरिया घर बरजि तरजि रही सुन्द र रूप ठगौरी (हस्त)।

५३४ पनि ।। ' ' से, एकदम। बिसासी = विश्वासघाती। सुलफ = सुन्दर अलभ्य। जुलफ = जुल्फ, अलक। छकाय = नशे में चूरकर। वार = प्रहार, आघात। मार = कामदेव।

५३५ ढौरी = रट, धुन; पीछे लगे रहने की प्रवृत्ति। बरजना = रोकना। तरजना = डराना, धमकाना। लरजना = प्रकंपित होना।

५३७ नारयां रे = नारियों के। रुडौ = रुरा, सुन्दर। झुकायां = झुकाने पर। झूमक = साडी के शिरोभाग में लगे हुए घुँघुरू, मनोरा। जूडौ = जूरा, कबरी। चूडौ = चूडामणि, शिरोभूषण विशेष। कूड़ौ = खलिहान में पड़ा अनाज का ढेर, (यहाँ रूप-राशि)।

१२. सूर फाखता

दई कीजे कहा मेरी अँखियाँ बैरनि भई,
बरजी न रहैं, बुरी टेव इन लई
कांन्ह मुख चंद मधु पांन माती रहैं,
होत अति छिनहि छिन चाह चित नई
घूँघट दियैं हू न मानत हटक,
तजि दई लाज, हरि रूप ठग ठ
नागरीदास' उपचार लागत न कछु,
माधुरी निरखि भई कृष्ण-तन-मई ॥५३८॥

१३ तिताल

वहि घरी कौंन ही, लागे मेरे हो नैंन
जब लागे तब कछू न जांन्यौ, अब लागे दुख दैंन
चितवनि बिष की लहरि चढी रहैं, जागत सुपनैं सैंन
'नागर' नवल रूप की वेदनि, मिटत नहीं दिन रैंन ॥५३९॥

६१. 'रूप धार घनश्यामकी'

या अनुक्रम की अलापचारी मै दैंनैं ए दोहा—
रूप धार घनस्यांम की, छबि तरग की झोक
प्रेम प्यास कैसे मिटै, नैंननि नान्ही ओक ॥१॥

पति कुटुंब देखत सबै, घूँघट पट दिए डारि
देह गेह बिसरे तिन्हैं, मौंहन रूप निहारि ॥२॥

दृग पौंछत अंतर अधिक, सही न जात निमेष
पल पल जल भरि आवही, रूप माधुरी देखि ॥३॥

बड़ौ मंद अरविंद-दृुत, जिहि न प्रेम पहिचांन
प्रिय मुख देखन दृगनि कैं, पलक रची बिच आंनि ॥४॥

झलक कपोलनि कहा कहौं, मुख पानिप बहौ भाँति
अँखियाँ रपटत चितै तहाँ, दीठ नहीं ठहराति ॥५॥

---

(५३८) ठग ठई = ठगई ठई (हस्त)।

५३८. टेव = बानि, आदत। हटक = रोक। ठई = ठगी हुई। तन-मई = तन्मय।

५३९ कौन ही = कौंन थो। सैंन = शयन करते समय। वेदनि = वेदना, व्यथा।

मन मोंहन मुख निरखि कैं, अँखियाँ नहीं अघात
'नागरि' दृगनि चकोर के, सब ससि कहाँ समात ।।६।।

१. पद, राग सोरठ, ताल चपक

मोहन बदन की सोभा
जाही निरखत उठत मन आनंद की गोभा
भौंह सौंहन, कहा कहौं छबि, भाल कुंकुम बिंद
स्यांम बादर रेख पर, मनौ अबहि ऊग्यौ इंद
नैंन धीर, अधीर कछु कछु, असित सित राते
प्रिया आंनन चद्रिका मधु-पान-रस-माते
ललित लोल कपोल कुंडल, मधुर मकराकार
जुगल ससि सउदामिनी, मनौं नच्चत नट चटसार
बिमल सजल सुढार मुक्ता, नासिका दीनौं
ऊँच आसन पर असुर-गुर उदौ सो कीनौं
बंसिका कलहंसिका मुख-कवल-रस राची
पवन परसत अलक-अलि-कुल कलह सी मांची
लग्यौ मन ललचाय, तातैं टरत नहिं टारयौ
अमित अदभुत माधुरी पर 'गदाधर' वारयौ ।।५४०।।

२, तिताल

री मुख अंबुज अटक हमारी
लगी रहति तहाँ सौति मुरलिया, दैहि कहा कहि गारी
वह सुंनि, छकी अधर-आसव सौं आवत धुनि मतवारी
'नागरिया' सहनौ न परै जिय, दैहिं उरांहनौं भारी ।।५४१।।

(दोहा १, २, ३, ४, ६)—ये दोहे पहले २६ वें एवं ४६ वें अनुक्रम के प्रारम्भ में आ चुके हैं। पाँचवा दोहा नया है।

(५४१) मुरलिया = मुरलिका (हस्त)।

५४०. गोभा = अकुर। इंद=चंद्रमा। चटसार = चट्टशाला, पाठशाला। असुर गुरु= शुक्र। उदौ = उदय। बंसिका = वंशी, बाँसुरी। मांची = मच गई, प्रारम्भ हो गई। तातैं = (१) उस (स्थल) से। (२) इसलिए।

५४१. आसव = शराब। सुंनि = सुनो। छकी = तृप्त, अघाई हुई।

(३)

उठि री दौरि लखि वह छैल
यक छटा जिह छाह निरखत रहत मनमथ गैल
बड़ी भौंह बिलंद छबि सौं अरु धनुष ठहराय
पवन लगि जुग अलक लहकत, परत छांह कपोल
करत नागनि काच चढ़ि, प्रतिब्यंब देखि, कलोल
मंद मुख मुसक्यांन मोहन, करत मिलन अधीर
सो मुदित मन कंज बिरहनि, होत प्रात समीर
बनत बिन देखैं न, महिमां कही जात न बैंन
जाहि सिंधु-सनेह छकि, लखि एक चितवनि नैंन ।।५४२।।

४. तिताल

आई है सरद सुहाई
फूलनि बिपुन मल्लिका छाई
सीत सुगंध पवन बहै मंद
निसिमुख प्रगटित पूरन चंद
चंद निसि प्रगटित द्रुमनि मैं, अरुन किरनैं रगमगी
छई बृंदाबन छपा छबि, पुलिन जल तट जगमगी
निरखि सोभा, सबै वे बर-दैंन बातैं सुधि करी
मदन मोहन तन त्रिभंगी बेण बिंबाधर धरी
सुनि बंसी बन बोलै
जियरा तानन के सॅग डोलैं
कानन अमृत सो प्यावै
प्रांननि मुरछित मैंन जगावै
मैंन मुरछित कौं जगावै मधुर मादिक सुर लिया
भौंनैं छुटावत, भरी टोनैं, अरी मोहन मुरलिया

---

(५४२) इस पद में तीसरे चरण का जोड़ हस्तलेख में नहीं है। इसमें कवि छाप भी नहीं है। पद सम्भवतः अधूरा है।

५४२. बिलंद = बुलंद, उच्च, श्रेष्ठ। लहकना = हिलना। मन कंज बिरहनि = विरहिणी का मन रूपी कमल। मुदित = प्रसन्न।

५४३. निसि-मुख = संध्या। छपा = रात। नेम = नियम।

लोक वेद बिसारिकैं सब, उठी तजि सुधि नेम की
'दास नागर' कौन रोकैं, नदी उमड़त प्रेम को ।।५४३।।

५. राग सोरठ, तिताल

बंसी हमसौं बैर कियौ
पिय कौ अधर-सुधा रस बन मैं, निधरक जाय पियौ
या बेदनि कौ दुख जानैं जब, देखैं नेठि हियौ
'नागरिया' ब्रज जुवतिन कौ, तैं सरबस छीनि लियौ ।।५४४।।

६२. बैंन विलास

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा
अहे बाँस की बँसुरिया तैं तप कीनौं कौन
अधर सुधा पिय कौ पियै, हम तरसत चित्त भौंन ।।१।।

अरी छिमा करि मुरलिया, परत निहारे पाय
और सुखी सुनि होत सब, महा दुखी हम हाय ।।२।।

कियौ न, करिहैं कौन नहिं, पिय सुहाग कौ राज
अहे बावरी बँसुरिया, मुँह लागी मति गाज ।।३।।

तो कारन गृह सुख तजे, सह्यौ जगत कौ घैरु
हम सौं तोसौं मुरलिया, कौन जनम को बैरु ।।४।।

ए अभिमांनी मुरलिया, करी सुहागनि स्याम
अरी चलाए सबनि पैं, भले चांम के दांम ।।५।।

मुख मूँदे रहु मुरलिया, कहा करत उतपात
तेरैं हाँसी घर-बसी, औरन के घर जात ।।६।।

हरि चित लियौ चुराइ कैं, रह्यौ परत नहिं भौंन
तापर बंसी बाज मति, देत कटे पर लौन ।।७।।

तूहू ब्रज की मुरलिया, हमहू ब्रज की नारि
एक बास की कांनि करि, पढ़ि पढ़ि मंत्र न मारि ।।८।।

---

(५४२)—धनुष = धनु (हस्त)। कलोल = कपोल (हस्त)।

(५४३-४४)—मुद्रित प्रति में ए दोनों पद इस स्थल पर न होकर शेषांश में हैं। दोहा ६. घरबसी = रखेल, उप पत्नी, रक्षिता।

मति मारै सर तांनि कै, नांतौ इतौ बिचारि
तीन लोक सँग गाइए, बंसी अरु ब्रज नारि ॥९॥

सबकौ मन लै हाथ मैं, पकरि नचाई हाथ
एक हाथ की मुरलिया, लगि पिय अधरनि साथ ॥१०॥

पीय हमारे कौं लियौ, अधर-सुधा ते छीन
हम तलफत सुनि बाँसुरी, ज्यौं बिन जल की मीन ॥११॥

बोल चलावति मुरलिया, कहा सुहाग कौ तोत
तोसौं पिय टेढ़े रहत, हम सौं सूधे होत ॥१२॥

हमही की तूं दूतिका, मुरली सब जग साखि
हमही पर गाजत भली, जूठि हमारी चाखि ॥१३॥

बाजै मति मति बाँसुरी, मति तिय अधरनि लागि
अरी घरबसी देत क्यौं, रौंम रौंम मै आगि ॥१४॥

फूलन के चलि तीर, तन लगैं, परत नहिं चैन
अँग अँग आप बिधाय कैं, हमहूँ बेधत बैन ॥१५॥

हा हा अब रहि मौंन गहि, मुरली करत अधीर
मो सी ह्वै जौ तूं सुनै, तब कछु पावै पीर । १६॥

सबद सुनावत हमहि तू, देत नहीं छिन चैन
अनबोली रहु तनक तौ, ए बकबादी बैन ॥१७॥

अमल चलायौ आपनौ, मुरली गरजि गुमांन
हिय सूनै करि तियन के, प्रान बसाए कांन ॥१८॥

घूंमै भूमैं धुकि उठैं, तुव बंसी सुर लाग
कहर जहर लहरै चढ़ी, डसी भुवंगम राग ॥१९॥

जिहि मोही सब ब्रज-बधू, मौंहन मृदु मुसकाय
सो मोह्यौ तैं मुरलिया, बन घन मै लै जाय ॥२०॥

अहे मुरलिया मोहनी, तोसो कहा बसाय
अधर-सुधा-रस पाय कैं, प्रीतम लियौ छिनाय॥२१॥

---

१२. तोत = व्यंग ।

पीय लियौ, पिय मन लियौ, लियौ अधर रस झूम
इतौ लियो तैं, कहा दियो, बैरनि बंसी सूंम ॥२२॥
बंसी बंसी नाम यह, काहू धरयौ प्रवीन
तांन तान की डोर सौं, खैंचत है मन-मींन ॥२३॥

बढ़े कढ़े गुन बाँसुरी, बांवन सी लघु बेस
भली नचाई नाच हम, तोकौ है आदेस ॥२४॥

आप खुदी तू करत री, भई मुसद्दी मैंन
गुद्दी पर क्यौं चढ़त है, मुद्दी ह्वै करि बैंन ॥२५॥

कहा जांनैं तू बाँसुरी, भीजे मन की पीर
कोरी सूखे हीय की, अनबोली रहु बीर ॥२६॥
गाँठि गठीले बंस की, महा द्रोह की खांन
मति मारै री मुरलिया, ताननि बिष के बान ॥२७॥
हम हारी गारी जु दै, जड़ सौं कहा बसाय
मौंन गहत नहिं मुरलिया, हाय हाय फिरि हाय ॥२८॥
मुरली सुनि तनमैं भई, आँसू दृगनि बिसाल
मुख आवै सोई कहैं, प्रेम बिबस ब्रज-बाल ॥२९॥
'नागरि' हिय हरि हिलग की, दारू धरी दबाय
आग राग बंसी-लपट, पहुँच उठी भभकाय ॥३०॥

१. ताल चर्चरी

आतुर बैंन धुनि सुनि चली
करनि कुंज निवारती, द्रुम लता गहबर गली
दृगनि देख्यौ दूरि पिय बन, तिमर माझ प्रकास
श्रवन धुनि नूपुरनि छाई, नासिका सुभ बास •

(दोहा १-३०)—ए तीसो दोहे मुद्रित प्रति में नहीं हैं। इनके पहले आने वाले ५४३, ५४४ संख्यक पद भी नही हैं। सम्भवतः यहां पुनः एक या दो पन्ने खंडित हो गए है। ए दोहे 'गोपी बैन विलास' के क्रमशः १३, १५-२८, ३०, ३१, ३३, ३५-४६ संख्यक दोहे है।

२३ बंसी = मछली फँसाने की कटिया।

२५. खुदी करना = एक ही जगह खुर से रौंदना। मुसद्दी = प्रबंधकर्ता। गुद्दी = हथेली। मुद्दी = मुद्दई, शत्रु।

३०. हिलग = लगन। दारू = शराब, दवा

ब्रजचंद नियरैं भूमि आई, नव चकोरी बाल
'दास नागरि' रही इकटक लखि त्रिभंगी लाल ।।५४५।।

२. राग सोरठ तिताल

सखी सुनि बासुरी बन बोलैं
समर खेत संकेत मैं हेली, रही है निसांन बजाय अकेली,
हमारे पउरख प्रेमहि तोलैं
लोक-लीक सन श्रुति मरजादा रहन देत नहि आज
लाज कियैं अब लाज न रहिहैं, लाज तजैं रह लाज
'नागरिया' सुनि बैंन, चली यौं ब्रज जुवतिन की भीर
ज्यौं दुंदुभि सुनि सनमुख निकसैं, महा सुभट रन धीर ।।५४६।।

३. इकताल

बोलै ततथेई तथेई तथेई रच्यौ रस रास सरद रैंन
निरखत भयौ चद चकित, थकित रह्यो गैंन
गांन तांन मान परनि, मिलि मृदंग बीन
उरप तिरप अलग लाग, लचकत कटि छीन
नचत रवनी रवन, मदन मन मथत अंग अंग
चलि कटाछि भृकुटि भंग रंग रंग रंग
प्रेम मगन भरत अंक लंक लगि निसंक
छाड़त नहिं लालहिं तिहिं कालहि निधि रंक
उर बिहार टुटत हार, घुटत बार बास
बिबस रस बिलास, 'दास नागरि' सुख-रास ।।५४७।।

४. तिताल

दोउ मिलि मंडल नृत्तत डोल
इक दिसि कुंडल लोल, एक दिस लगे कपोल कपोलैं
गर बहियाँ तन अरुझे, अरुझे पियरे नील निचोलै
'नागरिया' गति मैं गति बदलै , बदलैं बदन तमोलैं ।।५४८।।

(५४७-४८)—देखिए उत्सवमाला ८३, ८४ ।
(५४७) रच्यौ रस रास=रस रास । अलग लाग=अलग ।
(५४८) अरुझे अरुझे=अरुझे । बदलैं, बदलैं=बदलैं (हस्त) ।
५४६. समर खेत=रण-क्षेत्र । संकेत=गुप्त मिलन-स्थल । निसांन=दुंदुभी, डंका ।
पउरख=पौरुष, शक्ति । तोलै=तोल रही है । लोक=पथ, मर्यादा ।
५४७ गैंन=गगन ।

(५)

मनमोहना त्रिभंगी नवरंगी नँदलाला
हसि लीनी है भुजनि भरि, नव दामिनी सी बाला
तन मन हिलनि मिलनि, बन बाढ़ी हैं रँग रलियाँ
तहाँ फूल पुज फूले, अलि गुंज कुंज गलियाँ
उर हार बंध डोरी, जिय लाज टूटि टूटैं
खुलि अंचर, सुवन सिर अरबैंनी, छुटि छूटैं
माची हैं रंग भीनी आनंद केलि हेली
सखी दुरि देखत 'नागरिया', मन देह सौं अकेली ॥५४९॥

६. इकताल

कीनौं सचु स्यांम स्यामा सैंन
ऐसे लसै अंगराग, कोविद बदत ईपद बैंन
बाल लाल बाहु कदुक हिए दियैं हेत
स्यांम घन तन दामिनी बनी भांमिनी छबि देत
गोविंद दयिता सुरति सज्जत 'श्रीभट्ट' घट्ट समीर
प्रिया फबी जनु कोर ससि की दबी घन गंभीर ॥५५०॥

७. इकताल

आव री देखि जोरी
पिय साँवरौ, राधा गोरी
सुरत श्रमित दोऊ मिलि सोए
अधखुले नैंन, मैंन रँग भोए
अरुझि रहि बहियाँ मैं बहियाँ
फूले तरवर की परछहियाँ
दहि बन ए बिलसो इन चैंननि
'नागरिया' के बसौ हिय नैंननि ॥५५१॥

(५४९) हिलनि मिलनि = हिलमिलनि (हस्त)। मन = मांन (हस्त)। अलि गुंज कुंज = अलि कुंज गुंज (हस्त) बंध = चंद । मांची है = मची है।

५५०. सचु = सुख। अंगराग = सुगन्धित उबटन केशर कस्तूरी, चन्दन, कपूर आदि के मिश्रण से यह प्रस्तुत किया जाता रहा है। ईपद = थोड़ा, कुछ। कोविद = विद्वान। दयिता = प्रिया। हेत = प्रेम। घट्ट समीर = वृंदावन यमुना तट पर स्थित धीर समीर नामक घाट।

६३. युगल-विहार

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा

नील पीत मनि क्रांत तन, नांहि दुरै इहिं रात
वदन उजेरैं रूप कैं, सघन कुंज मै जात ।।१।।

तन सुगंध डोरैं लगी, भँवर भीर चहुं ओर
देखि दुहुनि धोखैं परे, बोलत मोर चकोर ।।२।।

नील पीत पट छोर छबि, उरझे द्रुम की भीर
मुरि सुरझावनि दुहुँनि की, मेरैं उरझी बीर ।।३।।

चलिहु संग 'नागर' सखी, नूपुर झाईं पाय
मुख देखैं दुरि द्रुमनि मैं, अपनौ अंग दुराय ।।४।।

१. राग सोरठ, ताल

री हौं चाहि रही, दोऊ इत निकसे आय
पिय घनस्यांम अंग ढिग भांमिनि, दांमिनि दुति दरसाय
अति सुंदर मुख-चंद-किरन, बन डार्यौ तिमर मिटाय
'नागरिया' चलि कुंज ओट, दुरि देखैं रैंनि बिहाय ।।५५२।।

२. ताल चपक

प्यारी जू कौ वदन आनँद कंद
पिय किसोर चकोर हित नित प्रगटि पूरन चंद
गंभीर कारे चिकुर बर बदरांनि बीच अमद
पीवत इकटक ओक अमृत 'नव नागर' नँद नंद ।।५५३।।

३. ताल

अब सुनि कांन दै दै बतरांन
नूपुर किंकिनी कंकन रनकत, झनक होत वलयान

दोहा १. क्रांत = कांति । ४. झाई = झनकार की ध्वनि ।
५५२. चाहि रही = देख रही ।
५५३. कंद = बादल । गंभीर = गहरे । चिकुर = बाल, केश-गुच्छ । ओक = अँजुरी, अंजली ।

मैंन मंत्र से बैंनन सुनि सुनि, छुटत धीर ठहरान
'नागरिया' हिय मांझ रहो नित, यहै सुरत सनमांन ॥५५४॥

४. तिताल

खुलि गए सौंधे भीनैं बार
देखि सखी यह रीति अनोखी, बँधि गयौ मन रिझवार
झूलि रह्यौ वैंना ग्रीवा ढिग, टूटि रहे उर हार
'नागर' यह छवि हिय वसी, विच मनमथ रंग विहार ॥५५५॥

५. ताल

अहो पिय, प्यारी न सम्हारी परै, आजु याही कुंज रहो नै
सुरत सिथल गति मतवारी-सी, मोहन अहियाँ गहो नैं
विथुरि अलक आई आनन पर, यह छवि दृगनि चहो नैं
रही रैंन थोरी 'नागर' मिलि अब सुख सैंन लहो नैं ॥५५६॥

६. तिताल

रह्या देखि पिय चिबुक उठाय, वो नैंणा मैं अलसाण घणी छै
घुलि रही नींद लोयणां लाली, काजल रेख वणी छै
अलका सिथल, सिथल हुई पलकां, भौहां बंक तणी छै
'रसिक विहारी' प्यारी जी री चितवनि, मिलि रही अणी अणी छै। ५५७॥

७. इकताल

प्यारी निहारियै री रति मतवारी
यक दिसि सखी दिए कर कलियाँ, यक दिसि रसिक विहारी

---

(५५४) यहै = यह। (५५५) वैनां = बैंनो। 'नागर' यह छवि हिय बसी = 'नागर' छवि हिय मे बसी (हस्त)। (५५६) मोहन अहियाँ = बहियाँ (हस्त)।
(५५७) रह्या देखि = रह्या (हस्त)। तणी = वणी (हस्त)।
५५४. रनकत = रणन-रणन ध्वनि करते हैं। वलयांन = वलय, चूड़ी।
५५५. बैंना = वेणी।
५५६. चहो नैं = देखिए न।
५५७. छै = है। वणी = बनी, सुशोभित। तणी = तनी हुई। अणी = अनी, नोक।

तुमही सर्वस कान्ह कैं, मान करो बेकाज
राधावल्लभ नाम की, प्यारी निबहो लाज ॥५॥

छाड़ि इतो अनखाव री, अहे बावरी बाम
'नागरिया' भ्रुव भंग मैं, भए त्रिभंगी स्यांम ॥६॥

१. पद, राग रायसो, तिताल

एरी निठुर बाल, तो बिन लाल अनमने बैठे,
तैं इत मांन अनोखो ठान्यौ
चलि, हठ तजि, सजि अभरन अंबर,
कहा करत सौतिन मन मान्यौ
सरद चंद रस कंद मनोहर, नायक नँद-नंदन रस-सान्यौ
ऐसे समै 'वृंदावन' प्रभु सौं जुदो ह्वै बो,
याही मैं तेरो सयानप जान्यौ ॥५६१॥

२. ताल चपक

गिरधर लाल तेरैं कारनैं, रचि तलप सँवारी
बैठे अकेले कुंज मैं, ढिग चलि हा हा री
कालिंदी के कूल मै, फूलनि महल बनाया
जल परसैं द्रुम की लता, बहै पौंन सुहाया
अलि गुंजे, कुंजनि मैं बोलैं मोर चकोरा
नैंननि देख्यौ चाहियैं, छबि जुगल किसोरा
सकल तियन मैं तू बड़ी, गुन रूप की सीवां
नवल लाल मिलि खेलिए, भुज भरि धरि ग्रीवा
निरमल निस ससि सरद कौ, बरिषा कौ अंता
बहुरयौ रास मंडल रचैं, यौं जु कहत है कंता
सखी बचन सुनि राधिका हियरैं रुचि बाढ़ी
मांन तज्यौ, भूषन सचे, ततछन भई ठाढ़ी
निरवारत चली कुंज लता, मौंहन सुधि पाई
'लघु माधौ' प्रभु आगे ह्वै, हसि कंठ लगाई ॥५६२॥

(दोहा १-६) ए दोहे अनुक्रम ३५, १९, ४३, ५७ के प्रारम्भ में आ चुके हैं। दोहे १, ४ बिहारी के हैं और मुद्रित प्रति में नहीं हैं।

५६१. याही मैं = इसी में। सयानप = चतुराई।

५६२. तलप = तल्प, शैया, सेज।

सोहत है बनमाल, मोहति महकि मालती रही,
चहुँ दिसि भइ भँवरन की भीर
चलि री चलि, बलि, आजु नैननि रूप अमी रस पान करहिं
किन हरहिं विरह उर पीर
तूं गोरी वे स्याम, जोरी जगत विभूषन,
नवल 'नागरी' बसिए धीर समीर ।।५६७।

८. तिताल

गोरी लटकंदी चलै जोबना दे भार
करदे कहर कमर नाजक पर, सिर सटकारे बार
मतवाली अँखियाँ जु निमांणी, करैं नजरि बरछी दा वार
'नागरी' नवल अजब महरेटी, मोहन दी दिलचंगी यार ।।५६८।।

९. तिताल

बाँके नैंना, विंदु राती भाल
छूटी लट फँसी, लटकीली चाल
फूलन की बधिया, पतरौंही बाल
'नागरी' कटि की पटली पै फुँदिया की हाल ।।५६९।।

१०. तिताल

प्यारा मनमोहन मैं भांवदा
वड़ी अंखियाँ बाकी, मुडि वेखणु, माथे मोरदा मुकट सुहावदा

---

(५६७) ए री अली = मेरी आली (हस्त)। देखिये उत्सवमाला २४६।
५६८. लटकंदी चले = लटकती, (झुकी) हुई चलती है। जोबना दे भार = यौवन के भार से, उरोजों के भार से। करदे = करते हैं। कहर = वज्रपात। नाजक = नाजुक, कोमल। सटकारे = चिकने, मुलायम और लंबे। निमांणी = न माननेवाली, स्वेच्छाचारिणी, सुंदर। वरछीदा = बर्छी का। महरेटी = महर की टी। मोहन दी = मोहन की। चंगी = खूबसूरत, अच्छी। यार = मित्र।
५६९. विंदु राती भाल = भाल पर लाल बिंदी है। बधिया = (बद्धय-प्राकृत), कानों का एक गहना। पतरौंही = पतली, तन्वी। पटली = पटरी, सुनहले या रूपहले तारों से बना हुआ फीता जो कपड़ों पर टाँका जाता है। फुँदिया = झब्बा, ओरी या झालर के सिरे पर शोभा के लिए बना हुआ फूल के आकार का गुच्छा, फुलरा। हाल = हिलना।

कबहुँक रँग भींनीं बंसी विच, मोहनी तांन सुनांवदा
'संत सखी' सुंदर बलि साँवला, दिल दी तपन बुझांवदा ॥५७०॥

११. तिताल

सुनि नी अमांनी अँखियाँ निमांनी
मन मौहन दे रूप लुभांनी, साढ़ी गल नैंकहू न मानी
लोकां दे उर छुपि कैं छिपावाँ, भरि भरि आवत पांनी
'मीरां' प्रभु गिरधर गल साढ़ी, ढँकी छिपी सब जांनी ॥५७१॥

१२. इकताल

यार यारी दा बोल, जुदा हौंना नहीं बदा
जो भावै सो करिए, रहिए आँखौं आगैं सदा
यार जुदे होय जीजिए, सो कीजिए न कदा
'रामराय भगवांन' भावै कान्ह अदा ॥५७२॥

१३. तिताल

यारी दा कुपेच मैंड़े नैंनूं दी कमाइयाँ
देखि देखि मैं हुई दिवानी उसकी बेपरवाईयाँ
रैंनि दिना समझाय रही हौ, टुक दिल बिच नहिं आइयाँ
'नागरिया' मौंहन सौंहन पर, तौ भी घोल घुमाइयाँ ॥५७३॥

१४. तिताल

जासौं लाई प्रीति तासौं ओर निबाही चहियै
भली बुरी सिर धारि जगत की कही सुनी सब सहियै

---

५७०. मैं भावदा = मुझे अच्छा लगता है। वेखणु = देखना। मोर दा = मोर का। सुहाँवदा = सुहाता है। सुनांवदा = सुनाता है। दिल० = दिल की **तपन** बुझाता है।

५७१. अमांनी = न मानेने वाली। निमांनी = सुंदर। साढ़ी = मेरी। गल = बात।

५७२. यारी दा = मित्रता का। जुदा० = वियुक्त होना भाग्य मे नहीं लिखा है। कदा = कभी।

५७३. यारी दा = मित्रता का। कुपेच = कुदांव। मैंड़े = मेरे। नैंनूं दी = नयनों की। कमाइयाँ = कमाई, फल। घोल घुमाइयाँ = रस में घुली हुई घूमती हैं, चक्कर काटती हैं।

सब मैं बड़ौ नेह कौं नातौ, हाँतो करि कित रहिये
'नागरीदास' मीत कपटी भयैं, कहूँ ठौर ना लहिये ।।५७४।।

१५. तिताल

नैनां लागे बेपरवाही दे नाल
एक पलक भी कल नहिं पावां, रहदा हरदम हाल
दिन दिन जीदा ज्यान अग्राढ़ा उस नागर दा ख्याल
'नागरिया' बंसी वाले दा इस्क नहीं जंजाल ।।५७५।।

१६. तिताल

अँखियाँ लागि गईं मोहन प्यारे सौं
तब गरजी, बरजी न रही री, अब कहा होय पुकारे सौं
पीवन कौ पिय बदन माधुरी, लागी रहैं सांझ सबारे सौं
'नागरी' नव चकोर ज्यौं अटकी, प्रिय-व्रज-चंद उजारे सौं ।।५७६।।

१७ तिताल

लगनि कौं पैड़ो न्यारौ
चातिग स्वाति बूँद रुचि मांनैं, सर सलिता जल खारौ
नेह नगर की डगर न पावै, नेमी अंध बिचारौ
'नागरीदास' सीस बकसीसैं, तऊ नाहि निरवारौ ।।५७७।।

१८. तिताल

री कहिए कासौं बीर री पीर
बिन देखे तलफत ए अँखियाँ, नाहिं धरत चित धीर

---

(५७५) नागर दा = नागर दे ।
५७४ ओर = अंत तक । हांतो = दूर, अलग ।
५७५. दे नाल = के लिए । पावां = पाते हैं । रहदा = रहते हैं । हाल = समाधिस्थ । जीदा = जीता है । ज्यान = जान, प्राण । असाढ़ा = हमारा । दा = का । ख्याल = ध्यान । वाले दा = वाले का । जंजाल = झगड़ा, फसाद, आफत ।
५७६. गरजी = स्वार्थी, मतलबी । पुकारे सौं = रोने से, चिल्लाने से । सबारे = सबेरे । उजारे = उज्ज्वल ।
५७७. बकसीसैं = बख्श दें, प्रदान कर दें । निरवारो = निपटारा, समाप्ति, छुट्टी, मुक्ति ।

निकसन हू दूभर भयौ, आँगना घर गुरजन की भीर
'नागरीदास' प्रेम बस जाकैं, सो धौं निपट बे-पीर ।।५७८।

१९. तिताल

नव जोवन लाड़ गहेली, प्यारी तू रहत मदन मद छाकी
रूप रंग रस श्रवत माधुरी, बदन बिलोकनि बाँकी
अति आसक्त अमल मो, जे प्रेम पियाले पीये, रहत लाल मद छाकी
'नागरीदास' नवरंग बिहारी बिहारनि नेह निसाकी ।।५७९।।

२०. तिताल

अलमस्त भए अलबेले लाल, लाड़ली के रस माते
छकी छबि सौ पलकैं वर बरुनी नैननि मैं मुसकाते
मुख अंबुज पर स्याम-मधुप मकरंद पिवत न अघाते
'दास नागरी' रूप-रंग रस अंग पियाले राते ।।५८०।

२१. तिताल

बीबी साँवला मतवाला तेरा।
और अमल न भावता मुजकौं, तैं मन मोह्या मेरा
सोहबत मोहबत यहै बड़ा रस, औसर माफ अबेरा
सूरति खूब खुमारी प्यारी अचनूं कल नेह घनेरा
भर भर प्यावै, पीवैं अति ही, अचिरज अति अनेरा
प्रेम पहिंचांन महा मद छाके सू दरस परस नेरा
बिनां मिलैं पिय लाज का डर था डर निबेरा
'बिहारनिदास' सहायक सोफी कुंज महल मे डेरा ।।५८१।।

---

(५७८) कहिए कासौं = कासौं कहिए । धरत = धरात (हस्त) ।
(५७९) श्रवत = श्रमत (हस्त) ।
(५८०) पलकें = पल (हस्त) । पर = वर (हस्त) ।
(५८१) सोफी = सोयी ?

५७९. गहेली = गर्विता । मदछाकी = नशे में चूर । निसाकी = निः शंक ।
५८०. लाडली = प्रिया जू , राधा । राते = अनुरक्त, रत ।
५८१. बीबी = प्यारी ।

२२. तिताल

लीनौ हठ हेरी मेरौ कान्ह मही री
आवत देखि बैठि मारग मैं, अचांनक आंनि गही री
दीनौ नहीं मोल, कीनी बरजोरी, कहा करौं सबही सही री
'नागरीदास' भई सु भई, अब बात न जात कही री ॥५८२॥

२३. तिताल

अरी ये मंद मुसकाइ मुसकाइ
मन हरि लीनौं, टौंनां कछु कीनौं, लौंना नैंननि रह्यौ समाइ
मुकट की लटक, चटक पीत पट, वारौं कांम की कटक
दुति नैंननि जगमगाइ
ननद रिसाइ, सासु करत उपाइ धाइ,
बिप्रन बुलाइ बिधि बेदनि संकलपाइ
पूरन प्रकास लाग्यो भयौ हरि 'हरीदास'
ऐसी अवलोकनि मुख बिकाइ ॥५८३॥

२४. तिताल

साँवरे के नैंन सलौंनैं
जबही दृष्टि परत मेरैं मग, परि न सकन पग पैंड़ अगौंनैं
कांनन लौं अनियारे, चंचल, रंग भरे, अति रीझ रिझौंनैं
'नागरिया' जिनकी चितवनि बिच चेटक त्राटक टावक टौंनैं ॥५८४॥

२५. राग काफी, तिताल

हौं तौ रही देखि छबि मदन गुपाल की
कहा कहूँ सोभा अहा रसिक रसाल की
सीस पै सुमन, भीर अलिन के जाल की
एक ओर रही धुकि लाल पाग लाल की
हसत अधर दुति लसत प्रवाल की
मोहि लई हेरनि हौं नैननि बिसाल की

(५८२) देखिए उत्सवमाला ४७।
(५८३) धाइ = दाइ (?)। (५८४) त्राटक = नाटक।
५८२. मही = मट्ठा। मोल = मूल्य। ५८३. लोनां = सलोना, सुंदर।
५८४. अगौनैं = आगे। चेटक = जादू। त्राटक = ध्यान करने का बिंदु। टावक = टोना। टौंनैं = टोटका।

मेरो मन झूलनि झुलायो बनमाल की
चलत ललित गति गंजत मराल की
'नागरिया' मेरी मति मदन सचाल की
कहा करौं, कित जाऊँ, कासौं कहौ हाल की ।।५८५।।

२६. तिताल

नैननि मिलाय मिलाय मन लीनौ हेली,
सौंहनैं सलौंनै स्यांम मंद मुसक्याय कैं
भूली घर डगरिया, गगरिया गिरी,
मुख मोहन कौ देखि देखि, रही हौं लुभाय कै
पनघट भीर भई, लोक लाज भूलि गई,
अंचर बिसरि रही, तन थहराय कैं
तब तैं न चैंन परैं, लाग्यौ दुख दैंन मैन,
'नागरिया' उठौं अकुलाय अकुलाय कैं ।।५८६।।

२७. तिताल

अणी पेचदार जुलफैं वाला
मै तौ रही देखि हैरत मैं, अजब तरज का ग्वाला
चाबत पाँन छैल, कांन पर धरैं फूल गुललाला
'नागर' नवल साँवला सुंदर, करि गया दिल बेहाला ।।५८७।।

२८. तिताल

मन लाया क्यौं कान्ह अनोखे सौं
अब पाछैं पछितायै क्या होदा, णी भूलि प्रीति करी ओखे सौं

---

(५८५) गंजत = गंजन ।
(५८६) लुभाय कैं = भुलाय कैं ।
५८५. धुकि = झुकि । पाघ = पाग, पगड़ी । प्रवाल = मूँगा । हेरनि = अवलोकनि । सचाल = चलायमान । हाल = दशा ।
५८७. अणी = अरी । पेंचदार = घुँघराले । जुलफें = अलकें । हैरत = आश्चर्य । तरज = ढंग । अजब = अद्भुत । वेहाला = बेहाल, व्यथित । गुललाला = लाला का फूल ।

निस दिन छुटिदी तू घर अंदर, सास ननद दे हौखे सौं
गुरजन बुरे 'रसिक बिहारी' वेखण नूं देत न गोखे सौं ॥५८८॥

२९. तिताल

अणी वहि सौंहनां मोंहन यार फूल है गुलाब दा
रंग रँगीला अरु चटकीला, गुल होर न कोई जवाब दा
उस बिन भँवरे ज्यौं भँवदा है, यह दिल मुझ बेताब दा
कोइ मिलावै 'रसिक बिहारी' नूं, है यह कांम सवाब दा ॥५८९॥

३०. तिताल

री कोउ अपनी अटा पर गुड़ी उड़ावत, छैल साँवरे अग
गुड़िया उड़ावत देखि सखी, मन उड़्यौ फिरत है संग
जियरा री गोत खात मेरौ त्यौं त्यौं, देत है गोत पतंग
'नागरीदास' ऊँची नीची चितवनि दै झकझोर अनग ॥५९०॥

३१. तिताल

वारी स्यांमा इहीं कुंज मग आय जा
प्रीतम नैंन चकोर तृपत हैं, बदन चंद दरसाय जा
मुख तैं नैंक निवार नील पट, छबि सौं मुरि मुसिकाय जा
'नागर' नवल किसोर लाल पर, चितवनि रस बरसाय जा ॥५९१॥

३२ इकताल

मुरलीवारो मोहना वहि, कहि हेली, कहाँ पाऊँ री
घर बन मन लागै नहीं, हौं बावरी भइ, कित जाऊँ री
सिथल अग अग, पग थरहरैं, हौं उठि उठि कैं मुरझाऊँ री
'रसिक बिहारी' बनवारी बिन, कैसैं जीव जिवाऊँ री ॥५९२॥

---

(५८८) क्यर = क्यों (हस्त)। ओखे सौं = आँखैं सौं (हस्त)। (हौखे - धोखे।
(५८९) अणी वहि = वहि। अरु चटकीली = चटकीला (हस्त)
५८८ हौंदा = होता है। णी = री। आंखे - ओछे। छुटदी = घुटती है। दे = के।
हौखे = भय। वेखण = देखना। नूं = री। गोखे = गवाक्ष।
५८९ अणी = अरी। गुलाब दा = गुलाब का। होर = और। भँवदा है = चक्कर
काटता रहता है। नूं = री। सवाब = पुण्य।
५९०. गुडी = चंग, पतंग। गोत खाना = आकाश में पतंग का गोता लगाना, ऊपर
से कुछ नीचे आकर डुबकी लेना।
५९१. वारी = मैं बलैया लेती हूँ। निवार = हटा (विधि क्रिया)।

३३. तिताल

मोहनां मन-भांवनां मेरा वो
ऑखड़ियाँ उदमादियॉई रहैं, मुख बेखण दा चाव घनेरा वो
उठदी दिल विच दुख कलमलियॉ, जब गलियॉ टुक आवै अवेरा वो
'नागर' दिल दा दरद न बुझदा, कौंन करै यह न्याव नवेरा वो ॥५६३॥

३४. तिताल

राज वन रौ मैंवासी, म्हामैं काई जाणै
गाय चरांवणहार ग्वालियौ, सो क्यौं रतन पिछाणैं
दधि दानी चंचल लोभी जै रो, मन नहीं रहै छैं ठिकांणै
'नागरीदास' कहौं कपटी नैकु ण थासू रंग माणें ॥५६४॥

३५. तिताल

कौ कान्हा तैं कहाँ लाई एती बार
हाल असाढ़ा बुझदा नांहीं, दरद दिलौं दी सार
ढूँढ़ि फिरी सिगरो वृंदावन, जमुनां वार 'रु पार
दरस दिखावो सजीवन ह्वै कैं, 'रसनिधि' प्रांन अधार ॥५६५॥

३६. तिताल

तीखे नैंन कन्हाई तै डे, पल पल खूंन करंदे
भौंहैं तो कमांन तनीं, पलकैं तीर परंदे

(५६३ मन भांवना = मनभावन (हस्त)। नवेरा वो = नवेरा हो (हस्त) ।
(५६४) रहै छै = छै रहै छै (हस्त) ।
(५६५) कौं कान्हा = कहौं कान्हा (?)
५६३. उदमादियाँई रहैं = उन्मत्त बनी रहती है । बेखणदा = देखने का । घनेरा = अत्यधिक । उठदी = उठती है । कलमलियाँ = उद्विग्नता, बेचैनी । अवेरा = विलम्ब से । दिल दा = दिल का । बुझदा = समझता है । नवेरा = निर्णय, निपटारा ।
५६४. राजवन रौ = वृंदावन का ॥ मैंवासी = सरदार, गढ़पति । म्हामैं = मुझको । कांई = कैसे । पिछाणै = पहचाने । जै रो = प्राणों वाला । ठिकांणै = स्थिर । ण = नहीं । थांसू = मुझपे । रग माणें = प्रेम मानता है ।
५६५. कौ = क्यों । बार = विलंब । असाढ़ा = हमारा । बुझदा = समझता । दरद = दर्द, व्यथा । दिलों दी = दिल का । सार = साल (शल्य); सालने या कसकने

कित्ते घायल परे कराहैं, दिल नहीं धीर धरंदे
'रसिक बिहारी' निति वार करदे, टारे नहीं टरंदे ॥५६६॥

३७. तिताल

सबकी हैं चोट निसाने पैं
नैंन बान छूटे चहुँघा तैं, चन्द्रिका बहरक बानैं पै
लालन हू को भीर लगि रही, मन लोचन परसाने पैं
जा 'नागर' पर यह ब्रज अटक्यौ, सो अटक्यौ बरसाने पैं ॥५६७॥

३८. तिताल

हो प्यारी जू मोहि दीजे यह दीजै
हा हा वारी, गाय गाय कैं गति लीजै, अब तौ गति-लीजै
दयौ बिछाय पीय पीतांबर, सुलफ कीजै यापैं सुलफ कीजै
बढ़्यो निर्त 'नागर' रस भीजत, निस भीजै त्यौं त्यौं निस भीजै ॥५६८॥

३९. राग छायानट तिताल

बोलत थेई तथेई थेई रंगभरे निर्तत हैं पिय प्यारी
बजावत बीन प्रबीन लीन धुनि, गुन ललिता ललिता री
अरुभी अलक छबि सौं बेसरि मैं, अरुभी पीत पट सारी
'नागरि नागर' रीझि परस्पर कहत वारयौ हौं वारी ॥५६९॥

४०. राग अड़ानौ तिताल

आजु सखी प्यारी जू स्यामहिं सिखावहीं
लै लै गति भेदहिं बतावही
चतुर सिरोमनि जानि अजान भए, ललित सुलप सरसांवहीं
तालीम कौं देत स्यांमां, नाचत मैं रंग बढ़यो, सखी सुख निरखि सिहावहीं
'नागरि' कटाछिन की लगत चमोटी चोट, त्यौं त्यौं पिय गतिहि भुलावहीं ॥६००॥

---

(५९७) यह व्रज=यह (हस्त) ।
(५९७-६००)—देखिए उत्सव माला १९४, ८५, ७५, ७६ ।
(५९८) सुलफ=सुलप ।
५९६ तैंडे =तेरे । करंदे= करते है । कमान=धनुष । परंदे= परदार, पंखयुक्त । धरंदे =धरते है । करदे=करते हैं । टरंदे=टलते हैं ।
५९७. चंद्रिका बहरक बाने पै = मोर चद्रिका रूपी झंडे पर ।

४१ तिताल

हो स्यामां प्यारी वा, मैंड़ी जिंदलगी है तैंड़े नाल
जब हसि बेखै. तब तब जीवां रहिदा होय निहाल
तुही असाढ़े नैंन, प्रांन बस पया तुसाढ़े बाल
यौं कहिंदा कर जोरि कुँवरि सौं 'रसिक बिहारी' लाल ॥६०१॥

४२. तिताल

वो मोहना सोहन यार दे नैणां दी झोका
सीनें दे बिच लगी असाढ़े, वार पार हुई नोकां
रुकदी नहीं रोकि मैं हारी, लाज घूँघट दै रोका
'रसिक बिहारी' दा नाव ले ले, करैं सब बृज नोकां टोका ।६०२॥

४३ तिताल

नैना दा मारया पछी मर जादा, मांनस कौंन बिचारा
दोहा—पडित पूजा पाक दिल, ये दिमाग मत लाइ
लगैं जरब अँखियान की, सबै गरब उड़ि जाइ
चस्म जरब सौं क्या रहै, दीन गरब की ताब
छूटि गिरैं सब पास तैं तसबी, असा, किताब
तनक न रहै बिरक्तता, लगै दगनि की थाप
कहुँ बटुवा, माला कहूँ, कहुँ गीता, कहुँ आप †
लगि बरछी तिरछी निगह, होयब दिल बेहाल
रहै धरे ही जहँ अबस, चित लै बगतर ढाल
गर्व उड़ावैं सर्व के, अजब जर्ब के नैंन
लगै सोई कहि कहि उठै, 'हाय हाय' दिन रैंन

---

(६०१) तैंड़े = तैं दे (हस्त) ।
(६०२) घूँघट दै = घूँघट दा (हस्त) ।
(६०३) ए दो चरण मुद्रित प्रति मे नही है ।

६०१. मैंड़ी जिदलगी है तैंड़े नाल = मेरी जिंदगी तेरे लिए है । बेखे = देखती है । जीवां रहिदा होय निहाल = मेरा जीव (प्राण) प्रसन्न हो जाता है । असाढे = हमारे । पया = पड़या; पड़ गया है । तुसाढे = तुम्हारे । बाल = हे बाले । कहिंदा = कहता हे ।

६०२. नैणां दी = नयनों का । सीने दे = सीने के । असाढ़े = हमारे । रुकदी = रुकती । नोंका टोंका = नोंक झोंक, पूछ-ताछ ।

चस्म तेग 'नागर' चलै. इस्क तेज की धार
और कटैं नहिं वार सौं, कटैं कटे रिझवार ॥६०३॥

४४. तिताल

अरी प्यारी राधा गति लेत अलबेलीय सुजान
रग भरी भौंहैं मन मोहैं, चितवनि अलबेली, अलबेली मुसक्यान
बदन चद आनंद सु ललकैं, अलकैं अलबेली, अलबेली बतरांन
कमल नैंन 'नागर' पिय मोहे रास मैं, अलबेली अलबेली लै लै तांन ॥६०४॥

४५. तिताल

श्री राधे राधे नाम ठाढ़े स्यांम
अरी अकेली कालिंदी तट, छबीली भॉति द्रुम लता गहैं
मूदत दृगनि ध्यांन मन भेंटत, खोलत ही मग ओर चहैं
'नागर' पुलकि प्रेम-जल नैंननि फिरि फिरि डारि उसास रहैं ॥६०५॥

४६. तिताल

यह मेरौ रूप भयौ मेरे जिय कौ जंजाल, दुख भरयो नहीं जावै
दुतिया के ससि लौं देखन आवैं
मिलि मिलि मोहिं अँगुरीनि बतावैं
घूँघट मै नैक कहूँ नैंन दरसावैं
जब ऑखिन पै ऑखिन की भीर उररावैं
सॉवरे कौ नॉव लै लै श्रवन सुनावैं
दैया सु नि सुनि गोली ठोली, हियौ सकुचावै

---

(६०३) पास तैं=खास तैं।

(६०४) देखिए उत्सव माला ८६

६०३. मरजांदा=मर जाता है। मांनस=मनुष्य। दिमाग लाना=गर्व करना। पाक=पवित्र। जरब=चोट। चस्म=आँख। दीन=मजहब। ताब=हिम्मत, सामर्थ्य, ताकत। तसबी=तसबीह, माला, सुमिरनी। असा=? किताब=कुरान; धर्म ग्रंथ। बटुवा=थैली। थाप=चोट। होयब=हो जाता है। अवस=बेबस, लाचार। लैं=लेकर भी। बगतर=बख्तर; कवच। तेग=तलवार। वार=आघात।

६०५. चहैं=देखते हैं। उसास=उच्छ्वास।

'नागरिया' गोकुल कौ बसिबौ न भावै
अब भई हौ तमासौ, जिय लाजन लजावै ॥६०६॥

६५. भ्रू-भंग (मान)

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनै ए दोहा
सौंहे हूँ चाहत न तू, केती दयाई सौंह
ए हो क्यौं बैठी किये, ऐंठी ग्वैंठी भौंह ॥१॥

करि भौंहे बाँकी कहौ, तनगौहैं क्यौं बैंन
इत राजी अब कीजिए, इतराजी के नैंन ॥२॥

चित चिंता चाहत धरनि, चितवति नीची नारि
कहौ सखी किहि कारनैं, पहरे पलटि सिंगार ॥३॥

मान करत बरजत नहीं, उलटि दिवावत सौंह
करी रिसौंही जाय क्यौं, सहज हसौंही भौंह ॥४॥

तुम हीं सर्वस कांन्ह कैं, मान करौ बेकाज
राधा-वल्लभ नांम की, प्यारी निबहो लाज ॥५॥

छाड़ि इतो अनखाव री, अहे बावरी बांम
'नागरिया' भुव-भंग मैं, भए त्रिभंगी स्यांम ॥६॥

१. पद, राग काफी, इकताल

मनुहारि करौं बलि जाऊँ री, तूँ मानि अनौंखी माननी
हौं गहि चरन चॉपि करि हारी, तऊ तनगि भौंहैं तांननी
जौबन जात है सदा सुहायौ, ज्यौं जल पुरबनि पात री
उठि चलि री तूँ ललन लाल पै, हा हा जांमिनि जात री
कुंज सदन हरि सेज सँवारी, तो हित बलि बड़ भाग री
'कृष्ण जीवन लछीराम' प्रभु की प्यारी, तू सोनौ वे सुहाग री ॥६०७॥

(दोहा १–६)—ए दोहे अनुक्रम ३५, ३६, ४३, ५७, ६४ के प्रारम्भ मे आ चुके हैं। दोहा १, ४ विहारी के हैं ।

६०६. भरयो नहीं जावै=सहा नहीं जाता। बोली ठोली=उपहासात्मक वचन, व्यंग वाणी। उररावै=उमड पड़ती हैं।

६०७. तनगि=विगड़ कर, रुष्ट होकर। पुरवनि=पुटकिनी, कमल का पत्ता।

२. इकताल

मेरो कह्यौ मान माननी
तजि अयान, छाड़ि ये मान, जाति जामिनी
प्यारी लाल सँग बाल बहुत अति सुहासिनी
तो सम कोऊ नाहि और जी की भामिनी
प्यारी दीन जानि, बिनती मानि, मंद गामिनी
उठि चलि, हिलि मिलिए जाय 'पार्तराम' की स्वामिनी । ६०८॥

६६. मान मवास

मान मवास का दूहा

बहौ भाँतिन फूली लता, भौंरनि की अति गुंज
तहाँ बुलावत साँवरौ, चलि री नवल निकुंज ॥१॥

फुल्ल कवल के दलनि हरि, निज कर सेज बनाय
तुव आगम आवन अरी, राखे नैन बिछाय ॥२॥

तू ही जीवन लाल की, तो बिन रह्यौ न जाय
उत्तर हू नहिं देत बलि, इती निठुर क्यों हाय ॥३॥

भूल्यौ हसिबौ खेलिबौ, परत सखिन के पाँव
तुव मिलाप की आस मुख, राधा राधा नाँव ॥४॥

नीची चितवनि करि रही, मानत नाहि अयांनि
उतै साँवरौ बिबस ह्वै, यह कहा लीनी बानि ॥५॥

सुनि री कछु नूपुर भनक, मोहन मोहन लाल
कुंज द्वार हसि भेटिये, उठि गज-गामिनि बाल ॥६॥

ए आए नँदलाल इत, देखौ ग्रीव उठाय
कर जोरै बिनती करत, मुकट छुवावत पाय ॥७॥

चितई कछु मुसकाय कैं, लई अंक भरि भांम
'नागरिया' हिय-सेज पर, बिहरत स्यामा स्यांम ॥८॥

---

(६०८) जाति = जांन (हस्त) । मंद = पद (हस्त) । पार्तराम = मतिराम ।
दोहा २ फुल्ल = फूल (हस्त) । अरी = री (हस्त) ।
३ उत्तर हू = उतरत हों (हस्त) ।
५ कहा लीनी = कहिलीनी (हस्त) ।

१. इकताल

रची पिय मोंहन कल केलि नवेली
मची भुजनि बिच कलह मनोहर, टूटत हार हमेली
परिरंभन अरुझे नहि सुरझत, ज्यौं द्रुम कंचन बेली
'नागरीदास' दुराय अपनपौ, यह सुख लखत अकेली ॥६०९॥

२. तिताल

प्यारी अलबेली कैसें ठाढ़ी ह्वै रही री
ललित त्रिभंग अंग छीन कटि, छूटे बार, कर द्रुम डार गही री
हरी लतनि मैं कनक लता-सी, छबि हिय फूल उलही री
'नागर'पिय रहे रीझि, लेत फल नैंननि कौं अबही री ॥६१०॥

३. तिताल

अहे प्यारी मांननी बोलि बोलि
हौं पठई अब स्यांम सुंदर बर, निरखि बदन पट खोलि
हाथ के कंकन आरसी कैसी, हे लेहि कसौटी तोलि
'अग्र' स्याम कौं चलि आंकौं भरि, आनँद-विधु किलोलि ॥६११॥

४ इकताल

अब पौढ़न को समौ भयौ
इत आई द्रुम की परछांही, उत हरि चंद गयौ
इहीं भाँति निबहौ निसि बासर, नित प्रति रंग नयौ
सुनि सोये 'नागरिया नागर', अति सुख दृगनि दयौ ॥६१२॥

५. पद, राग मल्लार का ख्याल, इकताल

हो घन गाजैं, मुरली बाजै, ब्रज मैं बड़ी बूंदनि मेह बरसै
जित देखौ तित जलमई बन मैं, कैसी रित सुहावनी,
बीजु चमकै, साँवरे बिन जियरा तरसै
फूलि फूल फल पल्लव शोभा, अति सोभा सरसैं

पद ६१०—यह पद मुद्रित प्रति में इस स्थान पर नहीं है।
(६१२) समौ=समैं
६०९. कलह=झगड़ा।

इत मग पवन झकोर झुलावत,
उत बंसी सुनि मोहि बुलावत,
'दास जुगल' सचु पावत, पिय नैंन दरसैं ॥६१३॥

६. तिताल

बाजै बाजै सुबंसी बन बाजै री
रैंन अँधेरी, घटा रही झुकि, तैसी परी गरैं लाजैं री
मोर उठत करि सोर घोर, सुनि नव मलार सुर गाजै री
'नागरीदास' स्यांम सुंदर सौं कैसैं मिलौं चलि आजै री ॥६१४॥

७. इकताल

आजु घन गरज गरज बरखै, सरसै नेह, मिलि दंपति कल गावहीं
कुहकत मोर, मलार सुरनि सुनि, बदरा फिरि फिरि आवहीं
कांनन श्रवत सुधा तांननि मै मूर्छित मदन जिवावहीं
'नागरिया नागर' निकुंज रस रीझनि भीजि भिजावहीं ॥६१५॥

८. तिताल

कहा करूँ रे कहा करू, दइया लाग्यौ बरसनि मेह
जौं हूँ ऐसौ जानती तौ छाड़ती न गेह
बँसुरिया वारे तेरी कमरिया देह
भीजैगी चुनरिया मेरी चुहचुहैं रंग
छतनां बनाय लै कैं चलि मेरैं संग
आय नीरैं स्यांम भीजि गात लपटात
'नागरिया' बन गयैं बनि गई बात ॥६१६॥

९. तिताल

मेरैं आए भीजे हो गात
रिमझिम रिमझिम मेह बरसै आली, सॉवन सुहावनी रात
रंग महल रंग ही रंग मैं, एरी आली रैंन न जानी जात
कही कहाँ लौं जाय 'नागरी' एरी आली, स्यांम मिलन की बात ॥६१७॥

---

(६१३) बुलावत = बुलावत (हस्त)।
(६१४) घटा रही झुकि = घटा झुकि (हस्त)।
(६१५) सरसौ = बरसौ (हस्त)।
(६१६) तौ छाडती = छाड़ती (हस्त)।
६१६. छतनां = छाता, छत्र।

१०. इकताल, लूहरि

इहि रितु औसर आजु समैं सुखदाई है
प्यारी री, घुमड़ि घटा घहराइ कैं बृज पर आई है
रह्यौ दिवस अँधियार जनूं यह जांमिनी
प्यारी री, करि रही बदरनि मांझ झमाझम दांमिनी
हरित भूमि पर झूमि झूमि द्रु : हैं
प्यारी री, बो प रस भूले हैं
तैसोई मोरन सोर चहूँ ओर लायौ हैं
प्यारी री, सीतल मंद सुगंध समीर सुहायौ हैं
मंद मंद अब बरसत मेह की बूँदे री
प्यारी री, तो बिन पिय कौ आजु मदन मन रूँदै री
डारत लाल उसास धीर नाहीं धरैं
प्यारी री, दांमिनि की दुति देखि देखि दृग जल भरैं
हौं पठई अब लैन वेगि चलि भावती
प्यारी री, छिन छिन आवत है बरखा सरसावती
वह सुनि, मिली मल्हार बैन धुनि आवहीं
प्यारी री, कहि कहि राधे राधे तोहि बुलावहीं
सुनत अंग अँगराय कछू मुसक्याइ कै
प्यारी री, भीजत ही घन मांझ चली अकुलाइ कैं
सनमुख आए स्यांम भुजनि भरि झेलि हैं
प्यारी री, लपटी तरुन तमाल मनू छबि वेलि हैं
यौं दंपति निति करत हैं तहाँ बिलास कौं
प्यारी वृंदाबन दयौ बास सो 'नागरीदास' कौं ॥६१८॥

११. तिताल

आया बृज पर छाय जी जल बादल झरिया
हरिया तरवर चूवैं पांणी, बहौ सरवर भरिया

---

(६१७) आली = एरी बरसै ए री, एरी आली।

(६१८) दिवस = बिबस (हस्त)। करि रही = कहि रही (हस्त)। झमाझम = झमझम-झम (हस्त)। वास रस = वासर (हस्त)।

६१८. जनूँ = मानो, जैसे।

इण समये सुख लेण मनोरथ, दंपति हिय धरिया
मिलिया 'रसिक बिहारी' प्यारी, सहु कारज सरिया ॥६१६॥

६७. पावस-प्रमोद

या अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा—
जड़ अवनी रितुवंत ह्वै, रसमै नीरस ठौर
भीजी पावस रितु रची, रूखी रितु सब और ॥१॥

आवै बदरा कांम दल, मोर नकीब अवाज
फिरै दुहाई सब सदन, होत मदन कौ राज ॥२।

बरसा घन घहराय तन, धीर नहीं ठहराय
उठै जु हिय हहराय सुनि, तप तारी छुटि जाय ॥३॥

कीनौं मैं निरधार सुनि पावस घन घहरांन
सबके मन जीते मदन, बाजत सदन निसान ॥४॥

घुमडि मेह चुवत धरनि, अधकार बढि गैन
बिछुरि गए चकवा चमकि, समझि द्यौस कौं रैंन ॥५॥

कनक-माल-दामिनि हलै, श्रम-जल-कन-बरखान
काम मेघ रति-भूमि कौ देत मनौं रति-दान ॥६॥

घन धारा झरहर करत, अवनी फारि प्रवेस
चले बहौ सर समर मनु करन मूरछित सेस ॥७॥

उत झर लाग्यौ मेह को, इत सैननि झरि नेह
गउर स्यांम चढ़ि चढ़ि अटा, भीजत रीझि बिदेह ॥८॥

---

(६१६) छाय = छाया।

६१६. झरिया = झडी लगानेवाला। पांणी = पानी। इण = इन, इस। लेण = लेने के लिए। सहु = सब। सरिया = पूर्ण हुआ।

दोहा २. नकीब = चारण, भाट।
३. तारी = ध्यान।
४. निसांन = दुंदुभी।
५. गैंन = गगन मे।
७ सर = शर, बाण। समर = युद्ध।
८ बिदेह = (१) तन मन की सुधि भूलकर, (२) कामदेव।

घटा बतावैं भावती, छटा बतावैं स्यांम
रस भीजे सैंननि करैं, जल भीजे चढ़ि धांम ॥६॥

भुव-धनु, कच धुरवा छुटे, दसन दांमिनी वृंद
रूप घटा राधे अटा, गांन-गरज-धुनि मंद ॥१०॥
घन-तन, दांमिनि-पीत पट, बग-मुक्ता अभिरांम
मुरली गरजनि रंग-झर, बरसत है घनस्याम ॥११॥
हरि मलार पूरित अटा, घुमडी घटा अछेह
ज्यौं ज्यौं बाजै मुरलिया, त्यौं त्यौं बरसै मेह ॥१२॥

स्यांम घटा ब्रज स्याम घन, गउर घटा सुकंवारि
'नागरिया' हिय भूमि बिच, नित बरसौ रस बारि ॥१३॥

१ पद, राग मल्हार, चौताल

माई री स्यांम घन तन, दांमिनी दमकै पीतांबर वर फरहरैं
मुकत माल बग जाल, कहि न परत छबि बिसाल, मानिनि की अरि हरैं
मोर मुकट इंद्र धनुष सौ बिराजै, मानिनि दुति निरखि थरहरै
'कृष्ण जीवनि प्रभु पुरंदर' कौ सोभा निधान मुरलिका घोर घरहरैं ॥६२०॥

२. ताल

राधे चलि री हरि बोलत, कोकिला अलापति,
सुर देत पंछी, राग बन्यौ
जहाँ मोर काछ बाँधैं नृत्य करत,
मेघ पखावज बजावत, बँधॉन गन्यौ
प्रकृत की कोऊ नाहीं, जातैं तेरी सुरति करि,
उनमांन गहि हौं आई मै सुन्यौ
'हरिदास' के स्वामी कुंज बिहारी, अटपटी एकौ न जानी जात,
और कहत कछु औरैं भन्यौ ॥६२१॥

(दोहा १–१३)—ये पावस पचीसी के १–१२, २५ संख्यक दोहे हैं।
(दोहा ३) तन = तब (हस्त) वहराय = वहरात (हस्त)। हहराय = हरात हस्त)। सुंनि = सुनि। (७) फांरि = कार (हस्त)।
१० धुरवा = बादल।
६२०. अरि=अड, हठ। थरहराना = काँपना। घोर=गर्जन, ध्वनि। वरहराना= ध्वनि करना।
६२१. बँधान=राग का ठाट। उनमान = अनुमान।

३. ताल चपक

कैसैं आऊँ मोहि दामिनी डरावत
जब जब गवन करौं दिसि प्रीतम, चमकनि चक्र चलावत
वे चातुर आतुर अति सजनी, रजनी यौं विरमावत
गाजत गगन, पवन चलि चंचल, अंचल रहन न पावत
सुनि पिय वचन चतुर चलि आए, भामिनि सौं मन भावत
'रूप सिंध' प्रभु नगधर नागर, मिलि मलार सुर गावत ॥६२२॥

४. तिताल

कुंज महल कैं आंगन मधि पिय प्यारी,
बांह।जोरी डोलत रंग सौं रगमगे
अरुन वसन धारैं, मोतिन की माल गरैं
चिहुटे सरीर चीर नीर सौं सगबगे
छुटे बार भीजि लगे ललित कपोलनि सौं,
कुंडल विमल नग भूषन जगमगे
'नागरीदास' घन बरसत पानी, तामैं
रूप के जिहाज मानू डोलत डगमगे ॥६२३।

५. चौताल

प्रीतम प्यारी राजत रंग महल,
गरजि गरजि रिमझिम रिमझिम बूंदनि लाग्यौ बरसन
बोलत चातिग मोर, दामिनी दमकि आई,
झूमि झूमि बादर अवनी परसन
तैसोई हरियारौ सांवन मन भांवन,
आनँद उर उपजांवन इंदवधू दरसन
पीय 'बिहारी' प्रिया संग गावत राग मलार
लज्जित लता लागी सुनि सुनि सरसन ॥६२४॥

---

(६२२) मोहि दामिनि = दामिनि मोहि । गगन = गवन (हस्त) ।
(६२३) डोलत रंग सौं = बिहरत ।

६२३. चिंहुटना = चिपकना । सगबगना = भींगना ।
६२४. इंद बधू = बीर बहूटी ।

६. चौताल

नान्हीं नान्हीं बूंदनि हो बरसै सघन घटा घन घोरैं
तैसियै कनक चित्रसारी, पौढ़े पिय प्यारी, रस रंग बोरैं
तैसेई दादुर मोर, कोकिला करत सोर,
उठत मलै झकोर, दंपति जिय लसैं
'गोविंद' प्रभु दोउ गावत सुघर मिलि, अति तांन रसैं ।।६२५।।

पुनः, मलार को द्वितीय अनुक्रम

(७)

बरसत मेह अति, आई घटा कारी है
तामै चली प्यारी उत, आवत बिहारी इत,
दुहुँनि कैं मिलिबे की चाह चित भारी है
सूझत न पंथ, द्रुम लता रही झूंमि झूंमि
सब जलमई भूंमि, झुकी अँधियारी है
दांमिनी दमकि गई, तामैं भट भेर भई.
'नागरिया' दोऊ हसि भरी अँकवारी है ।।६२६।।

८. इकताल

ठाढ़े दोऊ सघन कुंज की छहियाँ
बड़ी बड़ी बूँदनि बरसत बादर, मेलि रहे गर बहियाँ
बहुल दिननि के बिछुरे, बातनि करत हुते, जे ही मन महियाँ
'बृंदावन' प्रभु चाहत हैं नित, ऐसी बनैं बिधि कहियाँ ।।६२७।।

९ इकताल

एक छतनां तरैं दोऊ रहे लपटि लपटाय
किए मनोरथ साँच बिपुन बसि, राधा मोहन राय
बरसत जलधर धार अखंडित, तरवर चले चुचाय
'नागरिया' तन मन उरझै, सो किहिं बिधि सुरझै जाय ।।६२८।।

---

६२५. मलै = मलयानिल ।
६२६. भटभेर = मुँडभेंड़, आमने सामने से आते हुए टकरा जाना ।
५२७. हुते = थे । जे ही=जो थीं । विधि=व्यवस्था, प्रबन्ध । कहियाँ=कब ।

१०. तिताल

ललित लतानि तरैं, नान्ही नान्ही बूँदैं परैं,
भिड़त रँगीले दोऊ प्रीतम प्यारी
हसि हसि बातै करैं, भुज ऐसैं मूल धरैं,
लाग्यौ पीत पट तन सुरँग कसुंभी सारी
बिबि बदननि पर रही कछु फूही फबि,
उपमा न जात कछु जिय मैं बिचारी
रसिक उभै उदार, गावत राग मलार,
'हित ध्रुव' सुनि तांन, देत प्रान वारी ॥६२६॥

११. इकताल

दोऊ जन भीजत, अटके बातनि
सघन कुंज कैं द्वारैं ठाढे, अंम्बर लपटे गातनि
ललिता लाल रूप-रस लोभी, बूँद बचावत पातनि
'हित हरिवंश' प्यारी प्रीतम दोऊ मिलवत रति-रस घातनि ॥६३०॥

१२. ताल

राजत बंसीबट कैं निकट दोऊ रंग भरे पिय प्यारी
सीतल सुगंध मंद पवन गवन तहाँ,
तैसी लूमि झूमि आई घटा कारी
बरसत घोरि घोरि, दामिनी कौ धति जोर,
'नागरिया' चहुँ ओर मोर मोर भारी
ऐसे समै लालन बिहारी संग प्यारी डरि,
लपटि लपटि जात सुरत सुघर सुकुवारी ॥६३१॥

१३. ताल चपक

जब जब कौंधति दामिनी, तब तब भामिनी डरात, प्रीतम उर लागत
उन्मद मेघ घटा धुंनि सुंनि, निसि पियहिं जगावत, आपुन जागत

---

(६२६) भिडत = भडत (हस्त)।
(६३०) लोभी = भीनी (श्री हित स्फुट वाणी २३)। प्यारी = परस्पर (वही)।
मिलवत रति = मिलि विचरत (हस्त)।
(६३१) झूमि आई = झूमि (हस्त)। नागरिया = है रह्यो। लालन = नागर।
६२६. भिड़त=भुजबद्ध होना। बिबि=दोनो। फूही = जल की बूँदें। उदार=सुन्दर।
६३१. घोरना=भारी शब्द करना। झूमना=लटकना।

दादुर मोर पपीहरा बोलत, मदमाती कोइल बन रागत
कुज कुटीर 'व्यास' के प्रभु पैं, श्री राधा रस पागत ।।६३२।।

पुनः मलार को तृतीय अनुक्रम

१४. ताल चपक

हमारै माई स्यामा जू कौ राज
जाके अधीन सदाई साँवरौ, या व्रज कौ सिरताज
यह जोरी अविचल वृंदावन, नाहिं और सौं काज
'बीठल विपुल' बिनोद बिहारन, ज्यौं जलधर सँग गाज ।।६३३।।

१५. इकताल

स्यामैं देखि नाचै मुदित बन मोर
ता ऊपर आनंद उमग भरि, बजत मुरली कल घोर
कुज कुंज कोकिल कल कूजत अरु दादुर की ठोर
'गोविंद' प्रभु सँग सखा लियैं बिहरत, बलि मौंहन की जोर ।।६३४।।

१६. ताल चपक

भीजत कब देखौं इन नैंना
स्यामां जू की सुरँग चूनरी, मौंहन को उपरैंना
ठाढ़े दोऊ ललित द्रु मनि तर, मिलवत बातनि बैंना
'श्री भट' घटा उठी चहुँ दिसि तैं, घिरि आई जल सैंना ।।६३५।।

१७. ताल चपक

सोभा माई अब देखिबे की बार
गोबरधन परबत के ऊपर, मोरन की मतवार
ठाढ़ौ लाल पितंबर-धारी, उठैं मेघन की फुंकार
'परमानंद' कबहुँ न अघांनी, अँखियाँ ह्वै ललि चार ।।६३६।।

---

(६३२) प्रीतम = ये प्रीतम (हस्त) । उन्मद = उनमेद (हस्त)
(६३६) पितंबरधारी = पितंबर (हस्त) ।
६१३. गाज=बिजली ।
६३४. ठोर = चोंच, मुँह । बलि = बलराम । जोर = जोड़ी ।
६३५. उपरैंना =
६३६. बार=बेला ।

१८. ताल चपक

देखि राधे अब छबि वृंदावन की
हरी भूमि, द्रुम हरे, भरे सर, बोलनि पिक मोरन की
ठौर ठौर स्वेत फूलनि बिच, साँवलता मधुपन की
मनहु बिपुन धरैं नैंन करोरनि, सोभा लखत स्यांम घन की
चलि भामिनि दामिनि तन दुति तू, गिरधर मेघ बरन की
'नागरिया' सुनि मिली लाल सौं, छहियाँ नव कुंजन की ॥६३७॥

१६. ताल चपक

नाचत मोरनि संग स्यांम, मुदित स्यांमाहि रिझावत
कोकिला अलापत, पपीहा देत सुन, तैसेई मेघ गरजि मृदंग बजावत
तैसिय निसि स्यांम, घटा कारी, तैसिय दामिनी कौंधि दीप दिखावत
श्री 'हरिदास' के स्वामी स्यांमा कुंज बिहारी, रीझि राधा हसि
कंठ लगावत ॥६३८॥

२०. ताल चपक

कहा कहूँ सुंदरता की सींव
रस बस नव नागर नागरिया धरैं दोऊ भुज ग्रीव
बरसत घन, वन बढ़त तिमर, निसि देत सुरत सुख नींव
फिरि देखे दामिनि कैं झमकैं, सो रसना सकत नहिं छीव ॥६३९॥

२१. चौताल

सोए दोऊ मिलि मूल कदंब कैं, कालिंदी कूल है भायौ
एक ओर घन घटा आई झुकि,
एक ओर खुली चंद-चाँदनी, वृंदावन छबि छायौ
बोलत मोर रही निसि थोरी, अद्भुत समै सुहायौ
'नागरीदास' राधा मोहन विपुन बसि, पावस रितु सुख पायौ ॥६४०॥

---

(६३७) दुति तू = दुति (हस्त)। (६३८) स्यांमाहि = स्यांम स्यांमाहि (हस्त)।
(६३९) घन, बन = सघन। (६४०) रही = नहीं (हस्त)।
६३८ सुन = स्वन, शब्द, स्वर, सुर।
६३९. सींव = सीमा। ग्रीव = गरदन। छीव = छू।

पुनः मलार को चतुर्थानुक्रम

(२२)

कछु न सुहाय मोहि मोर बचन सुनि, बन मैं हूँ लागे सोर करन
स्यांम घटा, बग पाँतिन की दुति, देखि देखि लागी नैंन भरन
तैसिय दांमिनि दमकत छिनु छिनु, निसि अँधियारी लाग्यौ जियरा डरन
नींद न परै, चौकि चौकि जागति, इकली सेझ, गोपाल घर न
चंदन चंद पवन कुसुमावलि भए विषम, लागी देह जरन
'कुंभनदास' प्रभु कब रे मिलैंगे, गिरवरधर दुख कांम हरन ।।६४१।।

(२३)

गरजि गरजि बादर चहुँ ओरनि,
बरषा री माई आगम जनायौ
बोलत चात्रिग मोर, दांमिनी दमकि आई
सुरपति ह्वै सहाय धनुष तनायौ
आंवन अवधि मन भांवन पहिलै ही आई,
इतनौं अंतर मोहि तब न जनायौ
'मदन मोहन' पिय आय मिले तिहिं छिन,
आप बस करि प्यारी प्यारौ अपनायौ ।।६४२।।

(२४)

नयौ नेह, नवरंग, नयौ रस, नवल स्यांम वृषभान किसोरी
नव पीताबर, नवल चूनरी, नई नई बूदनि भीजत गोरी
नव वृंदावन हरित मनोहर, नव चात्रिग बोलत मोर मोरी
नव मुरली, जु मलार नई गति, श्रवन सुनत आए घन घोरी
नव भूषन; नव मुकट बिराजत, नई नई उरप लेत थोरी थोरी
जै श्री 'हित हरिवंश' असीस देत यह, चिरजीवौ भूतल यह जोरी ।।६४३।।

(२५)

नान्ही नांन्ही बूंद बन सघन मैं मांनूं प्रेम बरसै पांनी
सींचि सींचि मन मोद बढ़ावत,
गावत प्रीतम प्रियहि रिझावत, कहि कहि कांम कहानी

---

(६४२) जनाय = जितायौ (हस्त) ।
६४३. मोर मोरी = मयूर मयूरी । उरप = नृत्य की गति ।

फुहिनि पात चुचात, गात सियरात, रीझि भीजि अंग संग रसिक रवांनी
श्री 'बिहारीदास' सुख सपति दपति बिलसि बिलसि रस पावत
रितु रति मांनी ॥६४४॥

(२६)

स्यांमा स्याम सोए सुख सैनी
बाजत बूँदै द्रुम पाननि परि, श्रवन लगत सुख दैंनी
सीत पवन तन परसत त्यों त्यों सुन दृढ़ ठौन गहैंनी
'नागरिया' पावस निस रावन, रँगे सुरत रँग रैंनी । ६४५॥

पुनः मलार को पंचमोनुक्रम

(२७)

घोर निस सावन झकोरन की बूंदनि मैं
वर स्याम सुनि नियरैं आयो मेह
भीजैगी मोरी सुरँग चूनरी, ओट पितंबर देह
दांमिन तैं डरपत हूँ मोहन, निकट आय न लेह
'चत्रभुज' प्रभु गिरधर सौं पावस रितु बाढ़यौ नेह ॥६४६॥

(२८)

चहुँ दिसि तैं घन घोर आई जू स्याम जलद घटा
अति दंपति रंग भरे, बाहां जोरी फिरैं, कुसुम बीनत कालिंदी तटा
नांन्ही नान्ही बूँदनि बरसनि लाग्यौ, तैसियै लहकत दामिनी छटा
'गोविंद' प्रभु पिय प्यारी वेग चलि ओढ़ि रातौ पट
दौरि लियौ जाय बंसी बटा ॥६४७॥

(२९)

बूँदै 'ब सुहावनी री लागत, मनि भीजै तेरी चूंनरी
मोहि देहु उतारि, धरि राखौ बगल मैं चूनरी

---

(६४४) रति ठांनी=खांनी (हस्त)
(६४५) स्यांमा=गउर । सीत=सीतल । रँगे सुरत=सुरत (हस्त) ।
६४५. सैनी=शैया । गहैंनी=पकड़ । रैंनी=अनुरक्ति ।

लगि लपटाय रहे छाती सौं छाती लगाय,
ज्यौं न लागे तोहि बौछार की फून री
'हरिदास' के स्वामी स्यांमा कुंज बिहारी,
कहत बिजुरी कौंधै, करि हां हूँ न री ॥६४८॥

(३०)

बलैया जांनैं बरसन लाग्यौ मेह
स्यांम हमारी सुरँग चूंनरी भीजन लागी लेह
जो हूँ तब तैं ऐसी जांनती, काहे कौं तजती गेह
श्री हरिदास के स्वांमी स्यांमा कुंज बिहारी, राज करौ यह नेह ।।६४६॥

(३१)

बिहरत बन बूदनि मै, गावत राग मलार, मिले मन
भीजे पीताम्बर सारी, कंचुकी करत न्यारी,
कहत हा हा री प्यारी, छोरत छबि फबि फूंदनि मे
सूके बसन बनाय प्यारी पिय पहराई,
सुख ही मैं सुख पाई, सीस फूल गूंदनि मे
श्री बिहारनिदास' स्वामिनी स्यांमा,
निज बिछाई सेज बाढ़ी रुचि रूंदनि मैं ॥६५०॥

(३२)

सोए सुरत सेज अरसाय
काम उदधि अवगाहि प्रिया प्रिय, नेह मेह बरसाय
खुली अलक अरु पलक अधखुली, रहे रूप सरसाय
'नागरी' सखी ओट करि ठाढ़ी, जित घन की खर साय ॥६५१॥

पुनः मलार को छठोनुक्रम

(३३)

घोर निस सांवन झकोरनि की बूंदनि मैं,
बरसत मेह दमकति दुरै दामिनी

---

(६४८) कुंज बिहारी = × (हस्त)।
(६५१) अधखुली = अधर खुली (हस्त)। खर साय = षरसाय (सु), परसाय (हस्त)।
६४६. लेहु = ले लो।
६५०. फूँदनि = नीबी, फुफुती। गूँदना = गूँथना। रूँदना = कुचलना।
६५१. खर साय = प्रखर वर्षा।

तामैं घटा घहरात, झंझा पौन झहरात,
हहरात बिटप, अँधेरी अधि जामिनी
भारी भेक भरकत, परे साप सरकत,
खर खरकत, गवनी है गज गामिनी
छाती मै तनक ना छनक, भनै 'नीलकंठ',
आतुर अनंग तै अकेली जात कामिनी ।।६५२।।

(३४)

बरसत मेह नेह सरसाई
बिछुरी दामिनि घन पै आई
धाय जाय तिय कंठ लगाई
प्रीतम मनहुँ रंक निधि पाई
हसि हसि रसिक निचोवत सारी
लई उढ़ाय कमरिया कारी
झुकी रैनि पावस अँधियारी
बिहरत 'नागर नागरिया' री ।।६५३।।

(३५)

बाढ्यौ बन घन मैं अति नेह
कामरि तानि बितान बनायौ, लाल लतनि तर गेह
सुरति रंग रस पागत फिरि फिरि, त्यौं त्यौं आवत मेह
दामिनि तिमर मिटावत निस, दृग 'नागरि' चैंन अछेह ।।६५४।।

(३६)

काम रस भीजे है दोऊ लाल
पानिप रूप चढी कछु औरै, घूमत नैंन बिसाल
छुटी अलक, टूटी हारावलि, श्रम-जल-कन बहै भाल
सुरत समर सर तैं नहिं निकसत, 'हित ध्रुव' उभै मराल ।।६५५।।

(३७)

सोए दोऊ मिलि मूल कदँब कैं, कालिंदि कूल है भायौ
एक ओर घन घटा आई झुकि,
एक ओर खुली चंद चांदनी, बृंदाबन छवि छायौ

---

(६५२) ना छनक=छनक ना (हस्त) ।
६५२. भेक=मेढक । छनक=भय से चौंकना । ६५४. अछेह=निरंतर ।

बोलत मोर, रही निस थोरी, अदभुत समै सुहायौ
'नागरीदास' राधा मौहन विपुन वसि, पावस रितु सुख पायौ ।।६५६।।

पुनः मलार को सातवों अनुक्रम

(३८)

प्यारी के चिहुर बिथुरे, मानौ धाराधर की स्यांम घटा उनई,
ता मधि पुहप छूटि परें, तैसैं बड़ी बड़ी बूंदें
लाल सारी पहिरैं हरी कोर मघायनि सी, घूंघट करि चली,
पीठ पाछै तें तरकैं कचुकी तनी की फूंदें
महंदी सौं आरक्त नख, बीर बहूटी ऐसी, पावस वनिता मिली,
'मीरा' लाल गिरधर कौं लै काम प्रीति कांम'हार गूंदै ।।६५७।।

(३९)

राधे रूप की घटा घोषत चात्रिग मदन गोपाल
दामिनी वारूं दसननि पर, छूटी अलकनि पर धुरवा वारूं,
बग पंकति मुकतमाल
इंद्र-धनुष पच-रँग सारी पर वारि डारूं अरु, जावक पर बूढनि लाल
पिय 'भगवान' मौहन वारत पिक बैननि, श्रवननि सुनि सुनि शब्द रसाल ।।६५८।।

(४०)

उमगि मिली इत उत दुहुँ दिस तैं, गउर घाट अरु स्याम
गरजनि मधुर किंकनी नूपुर, चात्रग बचन रचन मुख बाम
श्रम-जल बरसत फुही सुहो छवि, हसन दसन दांमिनि अभिरांम
उड़ि उड़ि चलत मनू बक पकति, बिलुलित मुक्ता दांम
कुसम सेज अवनी बिचलित भई, अति आनंद हिये नृप कांम
'नागरिया' इहि बिधि निति पावस वृंदावन सुख धांम ।।६५९।।

(४१)

आज रित पावस राजत कुंज
गउर साँवरी घटा रही मिलि, बरसि बरसि रस पंज

---

(६५६) देखिए यही ग्रंथ ६४३।

६५७. चिहुर=चिकुर, बाल। मघायनि=गौर मदाइन, इंद्रधनुष।

६५८. बूढ़नि=बीर बहूटी। जावक=महावर।

तूटि हार विथुरे औ लागे सँग मुक्ताफल गुंज
'नागरिया' तहाँ रूप-पंक दृग निकसि सकत नहिं लुंज ।।६६०।।

(४२)

सरस रस बरसि रहे पिय प्यारी
कछु कछु दृष्टि परत अब पौढे, सांवन निसि अँधियारी
दामिनि देखि दिखावत है उरझी बहियाँ अँखियाँ अनियारी
'नागरिया' हियमैं यौं रहौ नित, श्री विहारनि कुंज विहारी ।।६६१।।

४३. चौताल

गोवर्द्धन गिरवर कैं ऊपर, चढ़ि देखत वृज सोभा स्यांम
पीताबर फहरात पवन बस, मंद मंद लहकत बन दाम
तैसिय छूटि रही घनमाला, ठौर ठौर सर भरे सुठांम
'नागरीदास' विलोकत प्यारो, नव जोबन वृंदावन अभिरांम ।।६६२।।

४४. ताल चपक

दोऊ ठाढ़े एकही खोहिया मांहीं
बंसी बट तट जमुनां जल मै देखत चंचल छांहीं
कारी कांमरि अंतर दंपति स्यांमा स्याम लपटाहीं
'श्री भट' कनक कूट मैं कंचन जल बरसत झलकाहीं ।।६६३।।

४५. राग हिंडोरा का ख्याल

सुंदर नंद कुँवार झूलत ललित कदंब तरैं
जमुना तट नव घनस्याम सरीर
सोहत है बनमाल, मोहत महकि मालती रही,
चहुँ दिस जहाँ भँवरन की भीर
चलि री चलि बलि आजु नैननि रूप अमी रस पान करहि
किन हरहि मदन तन पीर

---

(६६०) रित = अति। लागे = लासे (हस्त)।
६६०. लुंज = पंगु के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।
६६२. लरकना = हिलना। दाम = माला।
६६३. खोही = पत्तों की छतरी; घोघी। कूट = पर्वत के ऊँची चोटी।

तूं गोरी वे स्यांम, जोरी जगत बिभूषन,
नवल 'नागरी' बसिए धीर समीर ।।६६४।।

४६. तिताल

झूलत रंग हिंडोरनैं नवल दोऊ मन मोहन मोहनी छबि पावहीं
द्रुम पर ह्वै ह्वै कढ़त बढ़त छबि, परसि परसि धुरवा मनौं आवहीं
खुलि बैंनी, उर हार टूटि, पट छूटि छूटि अंचल फहरावहीं
'नागरिया' बढ़ी रमक रँगीली, तामैं झुकि झकझोरनि मिसु लपटावहीं ।।६६५।।

४७. राग मलार इकताल

हो कहा रँग भीनी रित है सांवन की,
फिरि फिरि झमकि झमकि झूमि मेह आवै
चात्रग मोर करत सोर, तैसियै गहरी घन की घोर,
कारे कारे बदरनि बिच बिच बिजुरी चमचमावै
सीतल सुगंध पवन गवन परस परस देखि,
फूलनि सौं भरी हरी हरी डरियाँ लहलहावैं
तैसेई विलास पुंज 'नागरिया नागर' कुंज
नेह मेह भिजए। मिलि मल्हार गावैं ।।६६६।।

४८. तिताल

झूलत हैं दोऊ सखी झुलावैं
सौंधे की झकोरैं स्यांम तन गोरैं आवै
हिंडोरैं हिंडोरैं मांझ थोरैं थोरैं गावैं
'नागर' झकझोरैं हार डोरैं उरझावैं ।।६६७।।

६८. चौपड़

इन पदन की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा
प्यारी पिय सखियन सहित, चौपरि खेलत बैठ
मनौ मदन-पुर चौहटै, लगी रूप की पैंठ ।।१।।

छला छनक चुरिया झनक, पासे ठनकत संग
बजवत गुनी अनंग मनु, जल तरंग जुत रंग ।।२।।

(६६४-६७)—देखिए उत्सवमाला २४६, २५८, २५३, २५१
(दोहा २) झनक = झमक (हस्त)।

स्याम सारि गोरी चलत, चाँपि चहुँ टियन चार
मनहुँ कवल के अग्र ह्वै, आवत भृंग कुमार ॥३॥

जरद नरद घनस्यांम पिय, द्वै अँगुरिन गहि लेत
मनु कोयल की चंचु मै, पीत अंब छबि देत ॥४॥

'नागरि, पासे परनि की, इह उपमा दरसात
हाथ-रूप-सर तै मनौ लहरैं निकसत जात ॥५॥

इत्यादयः

१. राग परज, तिताल

चौपरि चतुरनि खेल की बाजी ले रही
कुंज महल रस कउतक सखियाँ, सब मिलि अँखियाँ दै रही
यौं सुखही सुख बीति गई निसि, सूचत समैं सबेरही
'नागरिया' पासनि उरझे पिय, क्यौं सुरझै इहि बेरही ॥६६८॥

(२)

चौपर खेलत, देखि, दुहुँनि की चितवनि बाजी लगी हैं आनि नैननि मैं
रस बस ह्वै अति रूप प्रकासे, पासे चलत रग सैननि मैं
कुंज कनक भूमि, बनी है बिसात सेज, रंग होत दुहुँ ओर दाँव दैननि मैं
'रसिक प्रीतम अरु स्यामिनि अभिरामिनि, रहसि बहसि बाढ़ी बैननि मैं ॥६६९॥

(३)

मैं जाने हौ सुघर जैसै चौपरि खेलत रावरे
सीखे हौ कहाँ तुम सारि पासा ए, देत अटपट दाँव रे
मानत सार एक जुग ह्वै बो, अपनी चौंप के चाव रे
'नागर, पिय बरजोरी जीत्यौ चहौ,
रँगीले, छबीले, अरबीले लाल, करि करि कपट उपाव रे ॥६७०॥

दोहा

रगमग रहि चौपर चहुल, प्रीतम रहे निहारि
दीपक ढिग जगमग रही, लडकीली सुकंवारि ॥१॥

---

(५) दरसात = दरसान । जात = जानि ।
दोहा ३. सारि = गोट्टी । चहुंटी = चुटकी ।
४ जरद = जर्द, पीला । नरद = गोट्टी ।

नथ लटकनि कुंडल डुलनि, हारनि भुलनि निहारि
नव भुकि पासे डारही, लड़कीली सुकुंवारि ॥२॥

रूप लोभ पक्के पिया, कच्चे होत हैं सारि
त्यौं त्यौं चितवत सतर ह्वै, लड़कीली सुकुंवारि ॥३॥

बचन निरादर खेल मै, लालहिं लगत सु प्यारि
चलि रुगटी हसि कहत यौं, लड़कीली सुकुवारि ॥४॥

समभि दॉव पिय चूकि कैं, सारहि चलत सम्हारि
पकरि पिछौंहौं देत करि, लड़कीली सुकुंवारि ॥५॥

बेसरि बंसी पीत पट, हार दए पिय हारि
मनहू लीनौं जीति कैं, लड़कीली सुकुंवारि ॥६॥

लाल चले जुग जोरि कै, नील पीत रँग सारि
समभि, सकुचि, हसि, भुकि रही, लडकीली सुकुंवारि ॥७॥

बाजी बाजी उठि चली, बाजी लगनि विचारि
हिय बाजी नागरि मिली, लड़कीली सुकुंवारि ॥८॥*

६९. पावस-प्रमोद

हिंडोरा के इत्यादिक पदन के अलापचारी मै दैनैं ए दोहा—
उतरि भमकि भूलै चढ़ैं रँग रँग पहिरि निचोल
लाल मुनीयन के मनौं भुण्डनि मची कलोल ॥१॥

नील बसन गोरे बदन, भूलत तिय रस कन्द
आवत जात बिमांन ज्यौं, घटा लपेटे चद ॥२॥

---

* टिप्पणी—मुद्रित प्रति के अनुसार मूल हस्त लेख में ये आठो दोहे ऊपर उद्धृत पद 'चौपरि चतुरनि खेल की बाजी रंग ले रही' के चारों ओर चौपड़ के आकार में लिखे गए थे। मेरे द्वारा प्रयुक्त हस्तलेख में ये दोहे जिस क्रम में यहाँ दिए जा रहे हैं, उसी क्रम से हैं और इनके पहले "या चौपरि की अनुक्रम की अलापचारी मैं दैनैं ए दोहा" यह भी उल्लेख है; पर इसके आगे दिए पद 'हिंडोरा' सम्बन्धी हैं। ऐसा लगता है इस हस्तलेख में क्रम कुछ बिगड गया है। मुद्रित प्रति में यह अनुक्रम ५१ के पश्चात है। —सम्पादक।

दोहा १. निचोल=वस्त्र, परिधान। लाल मुनिया=एक बहुत छोटा पक्षी विशेष, जो एक ही पिंजड़े में बहुत सा पाला जाता है।

रमकत प्रिया हिंडोरनैं, छवि दुरि देखत पीय
वे झूलत वे श्रमित, कटि लचकनि लचकत जीय ॥३॥

झूलत ठाढ़ी प्रियहिं लखि, रहे लाल सुधि भूल
फहरत अंचल चंद्रिका, बैंनी बरसत फूल ॥४॥

झूलत छबि उमची अधिक, मचकत द्रुमची बाम
उचटै चोटी पाठ मनौं, लगैं चमोटी कांम ॥५॥

दांवन लावनि दुहुनि के, बाजत आवत जोर
बैंली हार हिलोरहीं, बढ़ि झोटा झकझोर ॥६॥

झूलत झोटा चढ़ि गगन, बैन गरज सम तूल
गउर घटा अरु साँवरी, बरसत हारनि फूल ॥७॥

बरजैं दूनी हठि चढ़ै, ना सकुचै, न सकाय
टूटत कटि द्रुमची मचकि, लचकि लचकि बचि जाय ॥८॥

'नागरीदास' हिंडोरनैं, सोभा मन अवरेखि
प्रेम फूल फूल्यौ करै, दम्पति झूलनि देखि ॥९॥

१. राग मलार चौताल

हिंडोरना बन्यौ धीर समीर
फूल फलनि जुत लता द्रुमनि तर राजत तरनि तनूजा तीर
झूलत हरि राधा प्यारी निधि, चहुँ दिसि ब्रज जुवतिन की भीर
उमड़ि घुमड़ि घनघोर दसौं दिसि, छाय रह्यौ आनन्द नीर
बिबस होत पिअ लखि नागर द्दग, ताछिन तरल कटाछिन तीर
लागत उर त्यौं त्यौं अनुरागत, बिसरत गति पुलकित सधीर

(दोहा १–९)—प्रथम सात दोहे 'पावस पचीसी' के क्रमशः १४, १५, १७, १८, १९, २०, २१ संख्यक दोहे हैं। आठवाँ दोहा बिहारी का है (देखिए बिहारी रत्नाकर ६८६)। मुद्रित प्रति में यह नहीं है। हस्त लिखित प्रति में ए दोहे पद ६६३ के पश्चात हैं।

(३) दुरि = दुति (हस्त)।

(५) द्रुमचो = द्रुमकी (हस्त)।

(७) बैंन गरज = गरज गरज (हस्त)।

भूमत झुकत चकित चितवत अति, तन मन पूरित प्रेम पीर
छके रहत नित रूप रसासव, 'मुरलोधर' गिरधरन धीर ॥६७१॥

२. ताल

झूलत रसिक मोहन राय
संग भांमिनि, दामिनी घन बीच मनौं दरसाय
कटि लचकि मचकनि चलत अदभुत लेत चित कौं चोरि
वढ़ि गई झूलनि झनन झननन किंकिनी धुनि सोर
नील पीत दुकूल फहरत, तुटी नव बन माल
गयौ अचल छूटि उर, डर मिलत झुकि झुकि बाल
छई चहुं दिसि मेघ माला, छयौ राग मलार
'दास नागर' तिहिं समै सुख बढ़यौ विपुन विहार ॥६७२॥

३. राग इमन ताल चपक

रमकि रमकि झूलनि मैं झमकि मेह आयौ,
नहिं सुरझत बातनि तै
नव पल्लव संकुलित फूल फल,
बरन बरन द्रुम लता तरैं झुलवत, भयौ बचाव पातनि तैं
मंद मंद झुलवन लगी थंभनि सौं,
ओढ़ै अम्बर जल घातनि तैं
'कृष्णदास' गिरधारी तऊ भीज्यौ बागौ सारी,
भौंरन की भीर भारी टरत न टारी क्यौंहूँ,
उपजी छबीली घटा निज गातनि तैं ॥६७३॥

४. चौताल

भीजहीं भीजहीं रीझि भीजहीं,
झूलत लाल भीजहीं, नवल नेह रस अटके
झोटा लेत हरैं हरैं, भुज मूल ग्रीव धरैं
हसि हसि बातैं करैं, नियरैं निपट लूंबि लटके

(६७२) देखिए उत्सवमाला २३२। वृंद = वंदा (हस्त)।
पद ६७१. धीर समीर = वृंदावन में यमुना का एक घाट जो कृष्ण की क्रीड़ा भूमि था।
६७३. बागा = प्राचीन काल के पुरुषो का कुर्ते के सदृश एक परिधान।

भीजि पट लपटे, प्रगट अंग अग,
लखि रहे इक टक दृग नागर नट के
'नागरीदास' मेह बरसत निस भई, चपला चिराक ठई,
तऊ न परत चित हटके ॥६७४॥

५. राग अडानौ इकताल

झूलत हिंडोरैं लाल नवल वृंद बाल सग,
चहुं ओर ठनक मनक, जुवतिन तन बनिय बनक,
मनहुं मदन बाग बसन सोहत हैं रंग रंग
फूलन के बरन बरन नवला सी लीनै करनि,
प्रीतम मनहरनि तरुनि, दीपत दुति दामिनी अंग
बजवत बीना नवीन, गावत तिय गन प्रवीन
गहगड गति गांन तान मांन परनि मिलि मृदग
घहरत नभ घटा कारी, ठहरत नांहि चपला री,
फहरत पट नील पीत, निरखत मन लोचन पंग
रसबनि मैं रग रह्यौ, जात नाहि मापैं कह्यौ,
'नागरिया दास' रस प्रवाह बह्यौ अति उमंग ॥६७५॥

६. ताल चपक

तू राखि लैरी झोटा तरल भए
इत नव कुंज द्वार कदब लौ परसि जात, उत जमुना लौं गए
आवत जात लपटात लतनि सौं, अरुऊपर द्रुम आनि छए
'कल्यान' के प्रभु गिरधर सुख सागर, झूलत नए नए ॥६७६॥

७. तिताल

हौं तो सोभा देखि लुभाई
मेरी अँखियाँ जल भरि आईं
झूलत कदब तरैं जमुना तट सुंदर कुँवर कन्हाई
झनकन निकलत मुकट लतनि बिच, पीताबर फहरांनि सुहाई
'नागरिया' तब तैं मो जिय मैं फिर रही मदन दुहाई ॥६७७॥

(६७४-७७)—देखिए उत्सवमाला २३५, २३८।
६७४. चिराक=चिराग, दीप।
६७५. परनि=वाद्य विशेष।

८. राग बिहागरौ, ताल चपक

बिहारी जू वारी हूँ सारी सँवारौ, हा हा हरि नैंकु हरैं हरैं झूलौ
पटुली औ पगु ठहरात नहीं, थहरात पिंडी, फहरात दुकूलौ
तूट्यौ हरा, गजरा गिरि गयौ, छूटी है बैंनी खिस्यौ सीसफूलौ
'गोकुलनाथ' जु प्यारी तिहारी सम्हारत नाहि अहो अजहूँ लौ ॥६७८॥

९. ताल चपक

तू देखि री सोभा या बिरियाँ
बढ़ि जु गए झोटा द्रुम परसत, अरुझि रह्यौ पीताम्बर डरियाँ
तूटि गई बनमाल हिलोरत, छूटि किंकिनी कटि ढरहरियाँ
'नागरीदास' प्रिया अंचल चल, डरि लगि जात देह थरहरियाँ ॥६७९॥

१०. ताल चपक

उतरे झूलैं तैं सोभा सिंधु झकझोरे से
प्यारी छूटे बार बैंना बेसरि सरकि गए,
उत तूटी बनमाला सिथिल किंकिनी कटि,
खुले फेटा पेच, सुख सुरत झकोरे से
सँवारत भूषन बसन. आय सखी जन,
मन वारैं रीझि रूप निरखि ठगोरे से
'नागरीदास' दोऊ श्रमित ह्वै सोए सेज,
देखि छबि भुरए री मेरे नैंना भोरे से ॥६८०॥

११. राग सोरठ, इकताल

निति गरज गरज गरज कैं बरसनि घटा लगी
पावस रितु ब्रज मैं रस रंग रगमगी
हरित भूमि गहबर रहे नव कदंब अंब
कुसुम कलित भँवर भार झुकि झुकि रही झंब
निति० ....॥१॥

(६७९--८०) देखिए उत्सवमाला २४३, २४४।
(६८०) झकझोरे = झकोर (हस्त)। उत तूटी बनमाला सिथल किंकनी कटि = उत टूटी (हस्त)।

झूलैं जहाँ झुंडनि मिलि बल्लव कुल नारि
तिनकी मधिनायक बृषभान की कुमारि
गान करत चहूँ ओर जुवतिन की भीर
पहिरैं मनहरनि तरुनि बरन बरन चीर
निति० ... ॥२॥

रूप चहल पहल बिच हिंडोरना सलोल
मानू मुनियनि लाल कैं झुंडनि मची कलोल
केकी सुर कुहकि कुहकि गावैं नव बाल
सुनि सुनि मलार, मेघ घुमड़ि आवैं तिहि काल
निति० ... ... ॥३॥

द्रुमनि मांझ झूलत बर बैनी खुलि जात
ज्यौं उड़त मोर तरल पच्छ पुच्छा फहरात
छूटि गए अंचर उर, टूटि हार डोर
मचकनि मै लचकति कटि झोटा झकझोर
निति० .. .. ॥४॥

आई श्री राधा नव सोभा है बढ़ी
साँवरी सहेली झूलैं संग लै चढ़ी
कहि न परत ता समैं की, बरस परयौ रंग
'नागरिया' निरखि भई नैननि गति पंग
निति० ... . ॥५॥ ६८१

१२. राग बिहागरौ, इकताल

जमुनां कैं तीर बीर जुवतिन की भीर तहाँ,
परम रंग बोरना रच्यो हिंडोरनां
बाजत मृदंग बैंन बीन संग राग रंग,
पावस रितु होत सिंधु रस झकोरनां
झूलत प्रिय नव किसोर झोटा झकझोर जोर
झननननन किंकिनी सोर, छबि हिलोरना

(६८१) देखिए उत्सवमाला २४५। गरज गरज = गरज गरज। तिनकी = जिन। मधि = मध्य (हस्त)।
६८१. मधिनायक = नेता।

'नागरि' बढ़ि नेह मेह रमकनि मैं रंग रह्यौ
चलि कटाछि दूहूँ ओर दृग निहोरनां ॥६८२॥

१३. राग गौरी, तिताल

नई कौन यह झूलनहारि
स्यांमा कैं सँग छबि भरी, सोहत सखी नवेलि
अति सुन्दर तन साँवरी, अरी मनहुँ नील-मनि बेलि
स्वेद कंप रोमांच ह्वै, जानि परत कछु तोत
झुकि झुकि झोटा मैं मिलै, हसि कुँवरि लजौही होत
निरखौ फूलनि नेह की, सखी चतुर सिरमौर
हम जांनी जानी सबैं, अरी यह झूलन कछु और
सबै छकाए 'नागरी', दृगनि सुधा सौं प्याय
कपट रूप धरि मौंहनी, अरी प्रगटि भई ब्रज आय ॥६८३॥

१४. राग सोरठ, इकताल

हूँ तौ वारी हो वारी गई, देखि हिंडोलै हेली रंग रह्यौ सरसाय
झूलण मै झुकि झूमि रह्यौ पिय, प्यारी जी रै रूप लुभाय
भीजैं तन तरवर चुवै लागा, गलबाँही लपटाय
'रसिक विहारी' कौ यौं झूलिबो, म्हारा मन मैं झोटा खाय ॥६८४॥

१५ राग अडाँणो, तिताल

ए हो लाल झूलिए नैंक धीरैं धीरैं
काहे कौं इतनी रमक बढ़ावत, द्रुम उरझत चीरैं चीरैं
क्यौं तुम झुकि झुकि झोटा के मिस आवत हौ नीरैं नीरैं
ये बरजत, त्यौं त्यौं वे 'नागर' लेत भुजनि बिच भीरैं भीरैं ॥६८५॥

१६ राग सोरठ तिताल

दोऊ मिलि झूलत रंग हिंडोरैं
नील पीत अंचल चलि चंचल, बैंनी हार हिलोरैं
भँवर भीर लपटत सँग आवत, लगी सुगंध के झोरैं
'नागरिया नागर' रमकनि मैं, मिलि गावत थोरैं थोरै ॥६८६॥

(६८२-८४, ८६) देखिए उत्सवमाला २४२, २३४, २४८, २४६, ।
(६८५) भुजनि बिच = भुजनि (हस्त) ।
(६८६) झोरैं = डोरैं ।
६८३. तोत = बहाना । ६८४. प्यारी जी रै = प्यारी जी के । म्हारा = हमारे ।

१७ राग बड़हंस, ब्रह्मताल

बाल बिनोदी मेरैं हिय मैं, झूलत नित्त बसौ
रतन जटित कै ललित हिंडोरैं, या छबि सहित लसौ
रमकनि मैं लडुवा माखन कौ, बिच बिच लेत गसौ
'नागरिया' मुसकानि की कोऊ हसै, सु भलैं हसौ ॥६८७॥

७०. बैंन बिलास

बाँसुरी के पद गावने, तिनकी अलापचारी मैं देंनै ए दोहा—
बंस बंस मे प्रगट भई, सब जग करत प्रसंस
बंसी हरि मुख सौं लगी, धन्य बंस कौं बंस ॥१॥
जिहि मोही सब ब्रज बधू, बिसरि गई गृह चैन
तीन लोक मैं गाइए, मन मोहन की बैंन ॥२॥
नेह मुरलिया कौ गिनौ, रहत जु अधरनि पास
मरिबौ जीबौ आप कौ, हरि कैं सास उसास ॥३॥
मुरली की माला करी, नन्दलाल बसि हेत
राधे राधे जपत नित, गूढ मंत्र संकेत ॥४॥
अलक चँवर, चाँपत करनि, अधर उसीसा लाल
कौंन पुन्य किय बाँसुरी, यह सुख लहत रसाल ॥५॥†
'नागरिया' दोउ एक रस, रहत परसपर लीन
जल मुरली, ब्रज मीन है; ब्रज जल, मुरली मीन ॥६॥
ब्रज मुरली नातौ सुदृढ, होत न कबहू दूर
'नागर' मौ हन मुरलिया, ब्रज की जीवन मूर ॥७॥

१. पद, राग धनाश्री, तिताल

महा रस मुरली बाजै, तुम सुनियौ री धरि ध्यान

दोहा ५ 'गोपी बैंन बिलास' का १२वां छंद है।
दोहा २ जिहि = जिन। ६ ब्रज जल = ब्रज जन।
(६८७) देखिए उत्सवमाला २५४ या छवि० = बछिया महवलसौ (हस्त), बछिया सहित लसौ (मु)।
(दोहा ५)—गोपी बैंन विलास १२ देखिए।
दोहा १. बंस = बाँस। बंस = कुल।
५. उसीसा = तकिया।

सुधि बुधि बिसरि गई सबहिन को, मुरली मधुर सुनि तांन
मुनि गति पंग भई, गत, सुनि सुनि, गंध्रप मोहे गांन
महादेव की छूटि गई तारी, सिर धुनि भए अचेत
ध्यान टर्‌यौ, धुनि सौं मन लाग्यौ सम्भू भए सचेत
थकित भई जमुना, मीन भए बलहीन
बन पंछी सब थकित चकित भए, रहे इकटक लौलीन
मृग कुल तज्यौ चरन तृन, ठाढ़े बछरा न पीवैं छीर
सहज समाधि टरो चतुरानन, लोचन बरसै नीर
जरित जराव मुकुट सिर राजत, पीताम्बर बहो भाय
वृंदाबन मै रस की लीला, 'नारायन' बलि जाय ॥६८८॥

(२)

मुरली अधर धरैं बलवीर
नाद सुनत बनिता विमोही, बिसरी उर तन चीर
खग नैंन मूंदि समाधि रहियो, है रैनि ज्यौ तप धीर
डुलत नाहिं द्रुमावलियौ, थकित मंद समीर
मृग चपि तृण तजि रहे अरु गोबछ मुख निज छीर
'सूर' मोहन नाद सुनि थकि रह्यौ जमुना नीर ।।६८६॥

३. राग धनाश्री तथा भीम पलासी, तिताल

तूं सुनि मोहन बैन बजावत
मन मोहन बैन वजावहीं
उर अंतर मैन जगावहीं,
सुनि धुनि छिनु रह्यौ न जावहीं
कहा कीजै आली बनमाली सैंन सुनावत
सैन सुनावत बनमाली,
सुंदर कर-पल्लव चल चाली,
सुनि को गहै धीर तरुनि बाली,
कैसैं सचु पावैं, फूँकनि मंत्र चलावत

(६८८) गत = मति (हस्त)। भई जमुनां = भया जमुनां (हस्त)।
(६८६) नीर - नीर हस्त)। (६६०) है = हौं (हस्त)।
६८८ गति = चाल। गति = गत [illegible] के बँधे हुए बोल। गंध्रप = गंधर्व।
तारी = तटी [illegible] ध्यान मगन।

फूँकनि मत्र चलत वन तैं
गिरवर तरु प्रेम द्रवत तन तैं
तरु ठाढ़े स्यांम त्रिभंगनि तैं
जल गवन थक्यौ री, पवन न पात डुलावत
पवन न पात डुलावत री
'नागरिया' धुनि सुनि गावत री
कहूँ खग मृग धैंन न धावत री
फिरि ठाढ़े इक टक, मुख तैं न दृष्टि दुरावत ।।६६०।।

४. तिताल

है मोहनी तेरी बाँसुरी
मधुर मधुर सुर, मधुरी सी तांननि, वेधत तिय मन पांसुरी
अगनित गुन रस सौं बजैं रसिक कुँवर, ढरैं आँसु री
'कवल नैंन हित' चित की हरनहारी, करत लाज भय नासु री ।।६६१।।

५. इकताल

रँगीली वंसी वाजत रंगभरी
अब पिय गिरधर अधर धरी
वहि धुनि सुनि राजत, वाही बन गाजत. मधुर खरी
गुर समाज गृह काज लाज की, सुधि बुधि सब बिसरी
'हित अनूप' प्रांन ताननि मिलि, ह्वै गयौ जल सफरी ।।६६२।।

६. पद बाँसुरी के राग जैजैवंती, इकताल

बाँसुरी सुनि साँवरे की बावरी सी भई हूँ हेली
बिन बाजैं ही वंसी, डर तै बैठौं जाय अकेली
आय परैं धुनि श्रवननि मैं जब, लागि उठै तलबेली
बिसरत सुधि, नैंननि जल बरसत, भीजत हार हमेली
'नागरिया सुधि' न बरनि सकौं कछु, मनकी दसा दुहेली ।। ६६३ ।।

---

६६०. सैंन-संकेत, इशारा। सचु-सुख।

६६१. पाँसुरी—पसली, छाती की हड्डी।

६६२. सफरी-मछली।

६६३. तलावेली—अत्यधिक उत्कंठा; तडपन, छटपटी। हमेली—हुमेल; छाती पर लटकने वाला गले का एक आभूषण। दुहेली—दुखपूर्ण।

(७)

आली कौनै बन मुरली बजाई
मोहन मादिक सौं भरि, कांनन धुनि मँड़राई
कांनन धुनि मँडराई, कंप पग, डग भरि चल्यो न जाई
थिर ह्वै रह्यौ नीर जमुना कौ, थकित भई बनराई
थकित भई बनराई, रैंनि मैं चंद रह्यौ ठहराई
'नागरीदास' चकित खग मृग कुल, मैंन बिथा सरसाई
मैंन बिथा सरसाई सखी सुनि, नांहिन परत रहाई ॥ ६९४ ॥

८. तिताल

ए री माई देखि री तू देखि स्यामैं, मन कौं हरतु है
मुरली अधर धरैं, सोहैं बनमाल गरैं,
ठाढ़ो ह्वै त्रिभंगी, लखि रह्यो न परतु है
चहूँ ओर खग मृग, ठाढ़ी गऊ तृन तजि,
इकटक लायें, दृग अँसुवा ढरतु हैं
'नागरीदास' गोपी धुनि सुनि मत्त भई,
ध्यांन रूप माधुरी कौं अंकनि भरतु हैं ॥ ६९५ ॥

९. तिताल

अणीं सिर धुंनि धुंनि रहां, कैनूं कहाँ, सहां पीर,
जमुना दे तीर है सुनेंदी बंसी बाजदी
साँवला सौंहना ग्वाला, लैंदा मन मुरलीवाला,
सुनि बीते हाला, सो गल कैनूं आखां लाजदी
अधरौं दा अमृत रस लैंदी, छिणु भी बैंन न मौंन गहैंदी,
सुणि सुणि हमन सहैंदी, वह सौति सीस पर गाजदी
'नागरिया' जिंद दुहेली, सीने दे बीच तालाबेली,
चैन नु पावा रैंनि अकेली, दूभर घरी आज दी ॥ ६९६ ॥

---

(६९३) नैंननि = नैंनि मैंनि (हस्त)। (६९४) बिथा = व्यथा।
(६९६) लैंदा मन = लैदाद (हस्त)।
६९४ कांनन = कानों में। मादिक = मदिरा। बनराई = बन-राजि।
६९५. माई = सखी।
६९६ अणीं = अरी। रहाँ = रहती हूँ। कैनूँ कहाँ = किससे कहूँ। सहाँ पीर = पीड़ा सहती हूँ। दे = के। सुनेदी = सुनाई देती है। बाजदी = बाजती हुई। लैंदा = लेता है। हाला = दशा। गल = गल्प, कथा, पुकार। कैनूँ = किसको

१०. राग काफी की बाँसुरी, तिताल

ननदी मुरली मधुर बजाई नंद किसोर नैं
चित चित लियौ चुराय री चित चोर नै
जब तैं धुनि सुनी कांनन, तब तै नहिं चैंन री
कल न परत पल जाम, मथत मन मैंन री
इत घर घेरौ होइ, उतै बजै बाँसुरी
सुधि न रही कछु मोहि, रुक्यो तन साँसु री
माय बबा नहिं बोलैं, ददा दुख दैहि री
जीजी भई जम-रूप, जियरा लैहि री
पापिनि प्रबल परोसिनि, सौति सतावही
सास की त्रास उदास, उसास न आवही
प्रेम पुलकि दृग-कँवल रहे जल छाइकै
पंच बान कुच बीच लगे है आइ कैं
छिंन छिंन बाढ़त तपति, बिरह जिय जारहीं
जोबन जोर किसोर मरोर रे मारहीं
नैंननि तैं जलधार उरज पर आवहीं
मनहुँ मीन मकरंद शिवहिं अन्हवावहीं
मेरौ मन मदनगोपाल पिया सौं यौं लग्यो
ललित त्रिभंगी नवरंगी प्राननि मै पग्यौ
कंपित रोम क प्रात, गात सियरात री
अब मोहन बिन मिलैं, रह्यौ नहिं जात री
गुरजन लाज बिसारि, चली गज-गामिनी
मिली जाय 'घन स्याम' मनौं सउदामिनी ॥ ६९७ ॥

११. तिताल

मोहन बसी धुनि उचरी
शिव समाधि छुटि गई श्रवन सुनि, बिबस जटा बिखरी

आखां = सब । लाजदी = लज्जित करती है । लैंदी=लेती है । गहेंदी=गहती है । सहेंदी = सहती है । गाजदी = गरजती है । जिंद = जिंदगी । दुहेली = दुःख पूर्ण । तालाबेली = छटपटी, तडपन । दूभर = कठिन । आज दी = आज की ।

६९७. पल = क्षण । जाम = याम, क्षण । घेरौ = निंदा ।

जकि थकि चकि रहि गयौ मदन, कर धनुहीं छूटि परी
नभ बिमान भई भीर, सुर-बधू उर अंचर बिसरी
'नागरिया' सुनि तान कांन, जाकी धीरज लाज टरी
ब्रज गोपिन कैं हेत मुरलिया, सब जग बिजै करी ॥ ६९८ ॥

१२. तिताल

बाँसुरी बन बाजैं, दई कीजै कौन उपाइ
मैन तीर बेधी गई हौ, धीर बिनां अकुलाइ
सिथल देह, पग कापही, मोपै डग भरि चल्यौ न जाइ
थक्यौ पवन, रवि रथ थक्यौ, सब खग मृग रहे लुभाइ
श्रवत प्रेम जल जड़नि कैं, रह्यौ जमुनां जल ठहराइ
बंक नैंन भुव तरुन त्रिभंगी, पीत बसन फहराइ
'नागरिया' घर बकत बिबस, मोहि अधर-सुधा-रस प्याइ ॥६९९॥

१३. इकताल

बाजैं बाजैं मधुर धुनि बसी री बाजैं
जो सुनि हाल हिये मै बीतै, सो कहत जु आवैं लाजैं
लगी पीय मुख सौति मुरलिया, निस दिन सिर पर गाजैं
'नागरीदास' कहाँ लगि निबहै, इन बातनि गृह काजैं ॥७००॥

१४. इकताल

ए री बंसी अधर-सुधा-रस राची
लाए रहत सुंदर मुख सौ मुख, तू ही सुहागनि साची
पिय कै सास उसास तिहारौ, तेरै प्रीति नहीं काची
'नागरिया' हरि-अधर-अमृत-हित, बहौत नांच हम नांची ॥७०१॥

१५. तिताल

बैरनि बाँसुरी अरी ए री, तोहि बाजत न आवैं लाज
निलज बसी लगी पिय मुख गाजै
लाज भरनि की लाज छुडावत, तऊ आवत नहिं लाजै

---

(६९९) बकत = बदत
६९९. भुव = भ्रू, भौ। बकत =
७०१ राची = अनुरक्त है, रँगी कच्चा।

करन हुतौ सु तौ पहिलैं कीनौं, करन मतैं कहा आजै
'नागर' कुँवर कै प्रेम गहेली, तू मति वाजै री मति वाजै ॥७०२।

१६. इकताल

बाँस की बँसुरिया, कान्ह बस करि लियौ
देखौ याके भाग जागे, अधर रस पियौ
निस दिन याकौं कर मैं राखत, याही कौ चित दियौ
'कँवल नैंन' गोपाल जू कौं, बन मैं कछू कियो ॥७०३॥

१७. तिताल

दइया आवै री धुनि वार
बीच बहै नदिया गहरी री, कैसैं उतरौं पार
यह मुरली मन लियैं जात है, नाहीं अंग सम्हार
'नागरिया' कछु वस न चलत अब, कीजै कौंन बिचार ॥ ७०४॥

१८. तिताल

हेली मुरली धुनि संकेत मैं, वाही व्रर की छाँह
श्रवन सुनत ही मोहि लई री, धीर नहीं मन माँह
नवल कन्हाई साँवरौ, बिन देखैं कल नांह
गुरजन डर, जनि जाहु सबै री, कोऊ गहौ जिन बांह
मोहि बुलावत, कान दै री, लै लै राधा नाम
चपला ज्यौं चलि 'नागरी', मिली जाय घनस्याम ॥७०५॥

१६. तिताल

कान्ह बाँसुरी बजावै निस दिन नींद न आवै
सुनि सुनि रह्यौ न परत सदन मैं, मदन सतावै
हियरै अचूकनि के, पढ़ि पढ़ि फूँकनि के, मत्र चलावै
'नागरिया' कहा करूँ, मुरली की सैंननि मैं मोहिं बुलावै ॥७०६॥

२० इकताल

मुरलिया स्यांम की वाजे
इनहिं बरजो री कोउ आजै

---

(७०२) प्रथम चरण मुद्रित प्रति में नहीं है।
७०२. मतैं = तू क्या (करना) चाहती है, तेरे मत में क्या (करना) है।
७०४. वार = उस पार।

'नागरीदास' चल्यौ नहिं जावै
उठि उठि फिर मुरछावै ।।७१०।।

२४ इकताल

सीतल कदंब तरैं बंसी बाजै धीरैं धीर
सुनियत है जमुना के तीरैं तीरैं
मनहु त्रिभंगी सनमुख ठाढ़ौ नीरैं नीरैं
'नागरिया' भुज बीच न आवैं, आवै न री भुज भीरैं भीरैं ।।७११।।

२५. तिताल

बनमालिया रे बंसी बजाई सुनियत दूरि जमुना पार
मुरली अधर धरी, परी जिय खरभरी,
सुन्दर त्रिभगी रे रंगी कीनौं कौंन उचार
अगम बिषम बन बीच जल धारा अनपार,
लँघइयौ रे स्वामी मारै सर मार
चल्यौई चहत मग, पग न चलत दई,
'नागरो' रिझाई रो हूँ स्यामै, नाहीं अंग सम्हार ।।७१२।।

२६. तिताल

गहरैं गहरैं सुर मुरली सुनि दूर बाजै
मैन भरी धुनि सैन सुनावै, रहिवौ न आजै
तरनि तनइया तीर वाही बन छइयाँ
'नागरी' नवल त्रिभंगी बनमाली बिच अमरइयाँ ।।७१३।।

२७ तिताल

सुनि बंसी बाजै, वंसी बाजै, सरद जुन्हैया रैंन
तनक भनक धुंनि सुंनि, बिमल चंदा थकि रह्यौ गैंन

(७११ आवै न री = न भरी।
(७१२) अनपार = घनपार (हस्त)।
७११. नीरैं नीरैं = निकट। भीरैं भीरैं = भिडंत, आलिंगन।
७१२ मार = काम।
७१३ तरनि = सूर्य। तनइया = तनूजा, पुत्री। तरनि तनइया = सूर्य-पुत्री; यमुना।
अमरइयाँ = अमराई; आम्र वाटिका।

आज लौं रही री लाज राखी, परि परि पइयाँ
'नागरी' न बस, कहा कीजै गुसइयाँ ।।७१४।।

२८. तिताल

बंसी मनमोहनी बाजै
बंसी बाजै, सुन री आजै, टूटत लाज को पाजै
ठाढ़ौ रगी त्रिभंगी सखी, मुख अंबुज बैंन बिराजैं
'नागरीदास' नंदलाल बनमाली सौं, आली मिलौं कैसे आजैं ।।७१५।।

२९. तिताल

बैन बाजै जमुनां के तीर
उमगि चली सांवन सरिता ज्यौं जुवतिन की भीर
हाय दई निदई मोहिं रोकी, कित जाऊँ बीर
'नागरीदास' प्रेम पथ आगैं, पहुँची छाँड़ि सरीर ।।७१६ ।।

३०. राग परज की बाँसुरी

हेली हे मोहन मुरली धुनि सुनी, मोहि तब तैं कछु न सुहाइ
वह रव विष ज्यौं रमि रह्यौ, हौं लहरनि लई दबाइ
घाइल ज्यौ घूमत फिरौ, धर परत डगमगे पाइ
कुँवर सजीवनि साँवरो, वाही पै मन्त्र पढ़ाइ
वह मुख मोहन माधुरी, निस दिन उर बिच उरराइ
भरि भरि लोचन आवहीं, जिय बिन देखै अकुलाइ
पीर पूरन नख सिख रही, छबि गटी त्रिभंगी आइ
'नागरिया' पिय प्रांन जानमनि, जिहि तिहि भाँति मिलाइ ।।७१७।।

३१. इकताल

मुरलिया कौनैं ख्याल परी
काज करत सुनि थकी द्वार, इत उत पग डग न धरी
मात पिता पितु-बंधु सबन मैं, प्रीतहि प्रगट करी
'नागरिया' व्रज जुवती जन सब, प्रेम जाल जकरी ।।७१८।।

---

७१४ भनक = दूर से आती हुई मन्द ध्वनि । गैंन = गगन । पइयाँ = पैर । गुसइयाँ = स्वामी, प्रभु ।
७१५. पाजैं = पंजर, हड्डी पसली का ढाँचा ।
७१७. रव = ध्वनि । धर = धरती । उरराना = उमड़ना ।

३२. तिताल

इन सौति सुहागनि ता दिन तैं, मुख सौं मुख छ्वाइ लियो रस री
निस बासुर ही अधरान धरी, सु गयो दरि कांननि तैं जसु री
तन आप बिधाइ कैं बेध करै, अजुही दृग देखि ढरै अँसु री
अब तौ न 'किसोर' कछू बसु री, घसु री ब्रज बैरनि तू बँसुरी ॥७१९॥

३३. तिताल

बंसी धुनि मन लियै जाय
बिरह बिथा की पीर बढ़ी सुनि, धीर नहीं ठहराय
नैंन जलमई, श्रवन बैन मई, हियैं ठई हरि मूरति आय
'नागरिया' मुरली मोहन की, गौंहन लागी हाइ ॥७२०॥

३४. इकताल

बन बाजैं मुरलिया स्याम की
सुनत ही हौं जकि रही सखौंही, सुधि भूली धाम कांम की
घरी एक बीतत नांही, दिन रैन चैंन बिश्राम की
श्रवन मूँदिहू रह्यौ जात नहि, 'नागरि' मो मति बाम की¹॥७२१॥

३५. राग केदारा की बाँसुरी, इकताल

अरी बाँसुरी परी है कौन टेव तिहारी
पैठत आनि आनि काननि मग, प्रांननि गहत कहा री
लोक लाज यह काज छुड़ावत, सुधि बुधि हरत हमारी
काहे कौं घैर करत, हैं कै तू 'नागर' पिय की प्यारी ॥७२२॥

७१. चर्चरियाँ

इन पदन की अलापचारी मैं दैंनै ए दोहा—
मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोइ
जा तन की झाईं परैं, स्यांम हरित दुति होइ ॥१॥

---

(७१६) यह सवैया है।
(दोहा १) यह बिहारी का दोहा है और मुद्रित प्रति मे नहीं है।
७१९. बासुर = वासर, दिन।
७२२. टेव = बानि, आदत, स्वभाव।

नीलांबर सिर चंद्रिका, गउर अंग अभिरांम
सो मेरे हिय मैं बसौ, मौहन मौहन-भांम ॥२॥

साधौ कोरिक जतन लउ, सरैं न एकौ काम
राधा आधौ नांम हूँ, लियैं होत बस स्यांम ॥३॥

राधा रज पद पद्म तब, आराधै सुख रास
जब वृंदाबन प्रेम रस, लहत 'नागरीदास' ॥४॥

१. ताल चर्चरी

जैति श्री राधिका, कृष्ण सुख साधिका,
तरुनि-मनि, नित्य नव तन किसोरी
स्यांम नवनील घन रूप रस चात्रिगी,
कृष्ण मुख हिमकिरन की चकोरी
कृष्ण हृद-भृंग विश्राम की पद्मिनी,
कृष्ण दृग-मृगज बंधन की डोरी
कृष्ण अनुराग मकरंद की मधुकरी,
कृष्ण गुंन गांन रस रसनि बोरी
एक अद्भुत अलौकिक गति मैं लखी,
मन जु सॉवल रंग, अंग गोरी
और अद्भुत कहूँ नांहि देखी सुनी,
चतुर चौंसठि कला, तदपि भोरी
बिमुख पर चित्त ते चित्त जाकौ सदा,
जदपि करत निज नाह की चित्त चोरी
प्रकृति याकी न 'गदाधर' बरनत बनै,
महिमा अद्भुत इतैं, बुद्धि थोरी ॥७२३॥

२. चर्चरी

जैति श्री कृष्ण, नवनील आनन्द घन,
रूप सिंगार रस बन बिलासी
मदन मद मथन, व्रज गोप कुल रतन,
तन परम सुन्दर, प्रिया उर निवासी

---

(७२३) नित्य = नृत्य (हस्त)। पर चित्त = पर विष (हस्त)।
७२३. चात्रिगी = चातकी। हिमकिरन = चंद्रमा।

वेणु मुख धरन, चित बधू ब्रीड़ा हरन,
चद्रिका धरन, निस रास वासी
'दास नागर' प्रणत नंद सुत रस कंद,
राधिका चंद-मुख दृग-उपासी ॥७२४॥

३. चर्चरी

जैति श्री चद्रिका चारु कलधूत के,
सूत कृत चित्र बहुरंग अंगे
कृष्ण चूड़ा रुचिर रूप बिस्तारनी,
बरहि तनया मूल मुक्ति संगे
सर्व अवतंस पर उच्च आरूढ पद,
घोष-जन-दृग करषि करन पंगे
चढ़िय मनु सिखर सिंगार मंदिर धुजा,
उठत फरहरनि बिच छबि तरंगे
प्रिया पट जुगल जावक भरत, करत तब
इंद्रधनु रग अभिमान भंगे
'नागरीदास' चित चढ़िय, नैननि चढ़ी,
चढ़ी हरि सीस सुंदर उछंगे ॥७२५॥

४. चर्चरी

जैति श्री मुरलिका बपु धरन भारती,
लाल मृदु अधर सज्या बिहारी
कँवल मुख मधुर मकरंद सींचत सदा,
छिनक बिन, प्रान तजि दैं नहारी
कृष्ण पिय परम संकेत हित दूतिका
रास-रस-केलि-धन-कोष-तारी
अखिल ब्रह्मंड धुनि भेद व्यापक भई
अमर नर नारि धृति मति बिसारी

---

(७२५) देखिए यही ग्रंथ पद ३६० ।

७२४. ब्रीड़ा = लज्जा । चद्रिका = मोर पंख की चंद्रिका । प्रणत = नत ।

७२५ कलधूत = कलधौत, सोना-चाँदी । बरहि = बर्हि, मोर । अवतंस = शिरो-भूषण । करषि = आकृष्ट कर, खींचकर । उछंगे = उत्संग (गोद) वाली ।

बिस्व बिजई बितन गर्व खंडन करन,
घर हरनि, घोष जन की जियारी
नागरी नवल व्रज गोपिकनि हित कुँवर
धराधर-धरन नित बैंन धारी ॥७२६॥

५. ताल चर्चरी

जैति बनमाल नव लसत हुलसन प्रभा,
बसत बिहरत सदा उर बिसाला
फूल फल मंजरनि दलनि भय देह,
आनंद आमोद भरि भ्रमर जाला
बिपुन तनया तरनि निति छबि लहलहनि,
खिलिय सुख भेलि झुकि झुलिय माला
'दास नागरि' आली. याके हित लोचन बिसाली,
नाव बनमाली भए नद लाला ॥७२७॥

६. चर्चरी

जैति ललितादि देवीय व्रज श्रुति रिचा,
कृष्ण प्रिय केलि आधार अंगी
जुगल रस मत्त मंद आनंद मय रूपनिधि,
समर सुख सभै जिहिं छाह संगी
गउर मुख हिमकरनि की जु किरनावली,
श्रवत मधु गान हिय हरि तरगी
'नागरी' सकल सकेत अधिकारनी
गनत गुननि मति होत पंगी ॥७२८॥

७. चर्चरी

जैति वृंदा बिपुन, बिस्व बदन मही,
महिमा अद्भुत निगम गाज गाजैं

(७२६) देखिए यही ग्रंथ पद ३७४।
(७२८) हरि तरंगी=हरित रंगी (सु)।
७२६. भारती=सरस्वती। धृति=धैर्य। वितन=अनंग, कामदेव। जियारी=जीवन-दान करनेवाली।
७२७. आमोद=सुगंध।
७२८. रिचा=ऋचा, वेद मन्त्र। समर=स्मर, कामदेव।

बननि बनराज ब्रजराज सुत प्रिय तहाँ,
साज सुख नित्त रितुराज राजैं
कथत श्री मुख कथा, कृष्ण बल प्रति यथा,
फूल फल भूमि छबि छाज छाजैं
कोस दस टोय अनुराग रैनी रची,
परसि मन बिरगता भाजि भाजैं
जुगल कल केलि बिच कुंज रचना रुचिर,
नूपुरनि शब्द प्रति बाज बाजैं
'दास नागर' रंग बाग राधा सदा,
निरखि दृग काम-रति लाज लाजैं ॥७२६॥

८ चर्चरी

जैति श्री जमुना जग जगत जगमगत जस,
करन ब्रह्म बपु बरन शृंगार रंगे
तरनि तनया, हरन ताप त्रय, त्रिगुन की,
तेज तप सार सीतल तरंगे
श्रुति रिचा, मुनिब्रता, देव कल्यान कौ,
स-फल-फूल दैंन दृढ़ ब्रत अनंगे
गोलोक झलमलत हृदय बृंदा बिपुन,
नव निकुंजनि दरस रस उमंगे
जल प्रसादी जुगल परसि साँवर गउर,
करत मज्जन कहत पवित्र अंगे
रास हुलास मैं मूर्ति रति 'सुख सखी''
रचे षोडस रहत सदा संगे ॥७३०॥

(६)

जैति श्री गाँव गोकुल, रमण नंद सुत,
अवनि उच्छव रूप अति अभिरांम

(७२६) देखिए बन जन प्रशंसा १। बननि = बाननि। बल = बलि।
(७३०) करन ब्रह्म = किरन ब्रह्म (हस्त)। रिचा = रचा (हस्त)
७२९. बल = बलराम।

नीर आनंद, बढ़ि धैन सागर रह्यौ,
खिरक तित होत गुन गान स्याम
रहत धुनि छाइ तहाँ मेघ मथनानि की,
फिरत हरि हरत दधि धाम धाम
सर्व नर नारि गोपाल लीला मगन,
दिवस निस जात जानत न जाम
खरिक सुख संपदा निरखि चित चकित,
सुरलोक तजि चहत भुव वास बाम
'नागरीदास' धन धन्य सो कुल जहाँ,
गावहीं रसना गोकुल गुनाम ॥७६१॥

(१०)

जैति गिरराज कृत छत्र ब्रजराज सुत,
सहज सुरराज गति गर्व हारी
वर्य हरिदास जन, भोग सुख रास हित,
सर्वदा हरित तृनजाल कारी
सकल रस वर्द्धनं, देव गोवर्द्धनं,
प्रगट इंद्रादि सुरलोक नारी
निपुन मणिनायक, शृंग छबि भागनं,
पायकं नील मणि पीत भारी
परम प्रिय हेत संकेत थल मंदरा,
तहाँ नित विपिन विहरत विहारी
'नागरीदास' लघु बुद्धि बरनै कहा,
उतहि नग प्रगट जग महिमा भारी ॥७६२॥

७२. भागवत-भक्ति

या अनुक्रम की अलापचारी मैं देंनें ए दोहा
जप तप संजम नेम व्रत, जोग जग्य करि पूर
भक्ति भागवत सग बिनु, भक्ति न उपजै मूर ॥१॥

सुनें भागवत, भक्ति ह्वै, भक्ति भए, ह्वै चैंन
जगत मांझ आसक्त क्यौ, दुख बितवै दिन रैंन ॥२॥

संमृत बेद पुरान है, सबही हरि के अंग
रंग न लागै भक्ति कौ, बिना भागवत संग ॥३॥

जगत भक्त बहौ भॉति कहि, नानां मति के माहिं
सुक मुख के बिन फल द्रवैं, व्रज रज पावै नाहिं ॥४॥

'नागरीदास' बिचारि जिय, अफल जाय नहिं देह
चखि भागवत अमृत फल, जनम सफल करि लेह ॥५॥

श्रीमत भागवत की कथा के समैं ए पद गावने। राग प्रभात के समै तथा सारंग मै गावनैं।

१. ताल

श्री भागौत निगम रस सार
श्रवन द्वार कोऊ किन पीवौ, ताहि उतारत पार
जनम जनम की जात अविद्या, सुनत एक ही बार
दीरघ रोग मिटत है, दोऊ जामन मरन विकार
अनिन भगति उपजत अनपाइन, आनँद दैंन अपार
'नरहरदास' मिलावत मोहन, इह निहचै निरधार ॥७३३॥

२. तिताल

आरती श्री भागौत की कीजै
श्रवन सुनत जीवन फल लीजै
गो-घृत रचित कपूर की बाती
निरखत जोति, जोति भई छाती

(दोहा १) भक्त = भक्ति।
दोहा ३. संमृत = स्मृति, शास्त्र।
७३३. जांमन = जन्म। अनिन = अनन्य। अनपाइन = अलभ्य।

जनम जनम के बंधन जारे
भव सागर मै बहत उबारे
तीन ताप करि डारे मंदे
'नागरीदास' फिरत आनंदे ॥७३४॥

(३)

जै जै श्री सुक मुनि मतवारे
कृष्ण रूप गुन भक्त वारुनी, उनमीलत दृग भारे
सीतल सुखद प्रसन्न बदन विधु, लखि हिय मिटत अँधारे
जगमगात नव क्रान्ति माधुरी, प्रेम पुंज उजियारे
बिचरत करत पुनीत तीरथनि, अगनित जीव उधारे
अब करि कृपा 'दास नागरि' कहै, मेटो ताप हमारे ॥७३५॥

४. तिताल

कह्यो सुक श्री भागौत बिचार
हरि की भक्ति जुगै जुग बिरधै, आंन धरम दिन च्यार
चिंता तजौ परीछत राजा, सुनौ सिख साख हमार
कवलनैंन की लीला गावत, टरि गये अनेक विचार
सतजुग सत, त्रेता तप सजम, द्वापर पूजाच्चार
'सूर' भजन कलि केवल कीजै, लज्या कांनि निवारि ॥७३६॥

५. इकताल

अहो मुनि वाही कौ सुजस सुनाय
ब्रह्म अगनि तै जरत उबार्यौ, मेरी करी सहाय
उनकी जनम करम गुन लीला, आदि अंत लौं गाय
वे जगदीस ईस गुरु मेरे, नाहिंन आन उपाय
उनकौ श्रवननि प्याय सुधा रस, ज्यौं चित अनत न जाय
ऐसो को अभिमानी पसु, ताहि हरि चरचा न सुहाय
भव भेदन कौं बैद बेद-बिधि, औषद दई बताय
ब्रह्मादिक सनकादिक नारद, मुक्त करे हरिराय
'गोविन्द' प्रभु की अमृत कथा है, सुनत न श्रवन अघाय ॥७३७॥

---

(७३४) बहत = बहुत ।
७३६. बिरधना = बढ़ना, वृद्धंगत होना ।

६. चौतालौ

जाकौ वेद रटत, ब्रह्मा रटत, सिंभु रटत, सेस रटत,
नारद सुक व्यास रटत, पावत नहिं पार री
सुर मुनि पहलाद रटत, कुंती के कुँवर रटत,
द्रुपद सुता रटत नाथ, अनाथनि प्रतिपाल री
गनिका गज गीध रटत, गौतम की नारि रटत,
राज रवनी रटत, अपनैं सुतन दै प्यार री
'नंददास' श्री गोपाल, गिरवर धर रूप जाल,
जसुदा कौ लाल, प्यारी राधिका उर हार री ॥७३८॥

७. इकताल

मुनि सब लोक पावन करे
प्रगट श्री भागौत कीनौं करुना सागर ढरे
ल्याये भगीरथ सुरसरी पाप पूर बह रे
तुम ज़ु सब उर भवन भवन मैं भक्ति दीपक धरे
कृष्ण चरित्र विचित्र रस मद प्रेम गह्वर भरे
सहज श्री सुक चरन नवका 'दास नागर' तरे ॥७३९॥

७२. फुटकर

राग कनड़ी आदि का फुटकर ख्याल

१. तिताल

इन सोचनि लोचन होत सवारौ
को मिलवै, कब कौन भाँति, मिलै न मौहन प्रांन पियारौ
असन बसन तन धन जीवन सब, वा बिन लागत आक सौ खारौ
'वृंदावन' प्रभु लीजै कौन विधि, पैंढ़ै परयौ बिरहा बजमारौ ॥७४०॥

---

(७३८) सिंभु = संभु (उमाशंकर पृष्ठ ४०८)। पहलाद = प्रहलाद (हस्त)। द्रुपद = द्रौपदि (हस्त)। राज रवनी = राजन की रमणी (उमा)। अपने सुतन दै = सुतन दै दै (उमा)। जाल = रसाल (उमा)। लाल = कुँवर लाल (उमा)। प्यारी राधिका = राधा (उमा)।

७४०. सवारो = सवेरा, प्रातः। आक = अर्क, मंदार।

२. तिताल

कहिए जो कहिबे की होय
जा तन लगी सोई तन जानै, जा घर बीर, कहा परी तोय
कोटि सयांने पचि पचि हारे, बिरह बिथा जानै नहिं कोय
'चंद सखी' यह तपति बुझावै, जो कहूँ वैद साँवरौ होय ॥७४१॥

३. तिताल

मिलि सुख दै, दुख दयौ बिसासी
सुख तौ तनक, भयौ सुपनौ सौं, बिछुरैं, अब दुख भयौ सहवासी
साँस न लै सकिए गुर-जन डर, डारि गयौ गर प्रेम की फाँसी
'वृंदाबन' प्रभु कठिन बनी अति, ह्वै गई अब हाँसी तैं खासी ॥७४२॥

४. तिताल

लाज सनेह पर्यौ झगरौ री
बासुर गयौ, रैंनिहू बीती, निरबरी नांहि, भयौ पगरौ री
लाज कहै कहा काज है नेह सौं, नेह कहत हौं ही अगरौ री
'चंद सखी' कहा लाज बिचारी, नेह निदान बड़ौ दगरौ री ॥७४३॥

५. तिताल

बनी कठिन दुहुँ बिधि कहा कीजै
उत गुरजन डर धरकै छाती, इत मौंहन बिन छिनक न जीजै
लोक लाज घूँघट कियौ चहियै, दृग जानै रूप निसंक ह्वै पीजै
'वृंदाबन' प्रभु देखे, मनोरथ होत यहै, हिय लाय कै लीजै ॥७४४॥

६. तिताल

लगनि की कासों कहिए कथा
जो तिहिं बीतत सोई जांनत, अटपटी बिरह प्रेम बिथा
इत उत चलि न सकत मन मेरो, नाथ्यौ प्रीति नथा
'चंद सखी' हित बाल कृष्ण प्रिय, सुन्दर रूप अथा ॥७४५॥

---

७४३ निरबरना = निर्णय होना । पगरौ = पागल । निदान = अंततः । दगरा = दगादार, ठगाबाज ।

७४५ नथा = नत्थ; नत्थनेवाली डोरी । अथा = अथाह ।

७. तिताल

ए री लागै सोई जानैं, कठिन लगनि की पीर
डसि गयौ स्यांम भुवंगम कारौ, लहरैं उठत सरीर
यह मन अचल कह्यौ नहिं मानत, परि गई प्रेम जँजीर
'चंद्र सखी' बिन देखे हरि छबि, जियरा धरत न धीर ॥७४६॥

८ तिताल

अजू तुम काहे कौ प्रीति करी
एती लगनि पर यह निठुराई, सुन्दर स्यांम हरी
हमारैं तो एक टेक नँदनंदन, औरैं सुधि न परी
'चंद सखी' हित बालकृष्ण छबि, धरनि धरी सु धरी ॥७४७॥

७४. रेखता

रेखता जुबांन के इन धुरपदौं खियालौं की अलापचारी मै दैने ए दोहा

उस ही की सुनि सिफ्त कौं, किसी जुबा मैनोय
कादर नादर हुस्न का, कृष्ण कहाया सोय ॥१॥

उजले मैले खलक मैं, फैले मज्ब अनेक
इस्कबाज सिरताज कौ, इस्क पियारा एक ॥२॥

इस्कबाज वैसा न कोउ, वैसा सूरत खूब
'नागर' मोहन साँवला, कदरदांन महबूब ॥३॥

मजा मज्ब जो खलक मैं, सो दिल कछु न सुहाय
अज्ब उसी के इस्क का, परै गज्ब जब आय ॥४॥

१. राग इकताल

अज्म सखस, जिंद बक्स, बेनजीर, दस्तगीर,
हित निबाह, बा-हसब खूबियौं का भारा सा

(दोहा १) उसही की = उसकी (हस्त)।
१ सिफ्त = सिफत, गुण। जुबां = भाषा। कादर = कादिर; शक्तिमान। नादर = नादिर, अलौकिक, आश्चर्य जनक। हुस्न = सौंदर्य।
२. खलक = खल्क, संसार,। मज्ब = मजहब। इस्कबाज = इश्कबाज, प्रेमी। इस्क = इश्क, प्रेम। सूरत खूब = खूबसूरत।
३. कदरदान = कद्र करने वाला। महबूब = प्रियतम।
४. मजा = मज गया है। अज्ब = अजब, अद्भुत। गज्ब = गजब, आफत।

इस्कबाज, दरदवंद, कदरदांन, जांनमन,
जांन प्रांन प्यारा चस्मौं का तारा सा
नंद का फरज्यंद खूब 'नागर' सलौनां स्यांम,
फैल रहा ब्रज मैं उस हुस्न का उजारा सा
कादर अजब रूप नादर गुसांईं ऐसा,
देखा न सुना है कहूँ, साहिब हमारा सा ।।७४८।।

२. राग, इकताल

जिसनैं नहीं पिया है, उस इस्क का पियाला
तिसनैं आय खल्क मैं, अबस कै पाय डाला
दीन दुनियाँ के दिल दिमाक सौं वह न्यारा
इस्क सौं न्यारा नहीं, आसिक-निवाज प्यारा
जुल्फ की जंजीर सख्त, दिल कौं दस्तगीर किया
उस्कौं खुदावंद हरेक फंद सौं छुटाय लिया
अब्रू-ए-दु कज तेग चस्म खंजर मदहोस
इन सौं कतल होनैं बिन जीनां अफसोस
गुल गुलाब सर्द संदल ल्याता क्या अंग
सनम की हुस्न रोसनी पर होके जल पतंग
'नागर' हौ उस गली का पाय खाक खूब
सर्व खुस अदाह सौं जहाँ चलता महबूब ।।७४६।।

---

(७४६) जीनां = जांनां (हस्त) ।

७४८. सखस = शख्स, व्यक्ति । जिंद बक्स = जिंदगी बख्शने वाला, जीवन दाता । बेनजीर = अनुपम । दस्तगीर = सहायक, हाथ पकड़ने वाला । हित निबाह = प्रेम का निर्वाह करने वाला; भलाई करने वाला । बा-हसब = समादृत । खूबियों = अच्छाइयों । भारा सा = भरा हुआ सा । इस्कबाज = प्रेमी । दरद वंद = संवेदन-शील, सहृदय । जानमन = प्राण-प्रिय । चस्म = आँख । तारा = पुतली । फरज्यंद = फरजंद, पुत्र । खूब = अच्छा । साहिब = स्वामी ।

७४६. अबस = व्यर्थ । आसिक निवाज = प्रेमियों को तुष्ट करने वाला । सख्त = दृढ़ता से । दस्तगीर करना = पकड लेना । फंद = फंदा, जाल । अब्रू = भौं । कज = टेढी, बाँकी । तेग = तलवार । मदहोश = नशे मे चूर । गुल = गुलाब का फूल । गुलाब = गुलाब-जल । सर्द = शीतल । संदल = चंदन । सनम = प्रियतम । पाय खाक = चरण-रज । सर्व = सरो, नामक वृक्ष विशेष; इससे प्रिय के छरहरे शरीर की उपमा दी जाती है । खुस अदाह = खुश अदा; अच्छा ढब ।

३. राग, ताल

सुन्दर सलौनै वदन कँवल पर, ए अँखियाँ ह्वै भँवर गिरी क्यौं
फेरि रही मै नसियत कर कर, गजब की मारी फिर न फिरी क्यौं
हाय अबस मै जाय परी, दिल हुस्न लाय की लपट लगी है
इस्क की आफत लिखी हमन सिर, सो अब हर दम रहै जगी है
छुटै न जिय सौं वजै ललन की, चिमन मै खुस दिल हो निकलन की
कलगी माला जुल्फ हलन की, अदाह उसके लटक चलन की
कहौ सँदेस जहाँ वह पीया, तुज फिराक सौं जलता हीया
जहर जुदाई प्याला दीया, जाय नहीं बिन देखैं जीया
अरे पियारे मुझै जिला रे, गली हमारी तौ टुक आ रे
तजी सहेली रहूँ अकेली, जिंद दुहेली दरस दिखा रे
करी दिवांनी दरद दुख्यारी, जाहर हुई सबनि पर यारी
ए मन मौंहन 'नागर' वारी, लाज तजैं की लाज हमारी ॥७५०॥

४. राग, इकताल

की हैं हँसि यार निगाह अज्ज इमरोज रस मौं
जिया दै इस्क की आमद सराब मस्त चस्मौं
दिया भरि रुख पियालै, हिया सरसार बस मौं
किया दिल 'नागर' बे अखत्यार, उस दिलदार की कस्मौं ॥७५१॥

५. राग हमीर तिताल

अजीम दर्द जिगर इस्क, क्या हकीम मरज पावै
चस्म की दारू न, अबस नज्ज दस्त ल्यावै

---

(७५०) जगी है = तगी है।
(७५१) पियालै = पियालौं।

७५०. नसियत = नसीहत, उपदेश। अबस = व्यर्थ। लाय = लौ, लपट, अग्नि। वजै = वजअ्, ढंग। चिमन = चमन, वाटिका, उद्यान। फिराक = वियोग। हीया = हृदय। जिंद = जिंदगी। दुहेली = दुखी। जाहर = जाहिर, प्रकट। यारी = मित्रता।

७५१. इमरोज = आज। रस मौं = रस में डूबी हुई। जिया = ज़िया, रोशनी, प्रकाश। आमद = आगमन। रुख = रूप, बदन, मुख। सरसार – मदमस्त। बे अखत्यार = विवश। दिलदार = प्रियतम। कस्मौं = शपथ।

मन गर्क दर फिराक, कुछ जिकर खुस न आवै
दिल कौं रफा होय, तब 'नागर' दरस दिखावै ॥७५२॥

६ राग, इकताल

फिराक दिल सौं दरद हर तरीक जुदा न हो सायंत
लिखी है इस्क की आतस नसीब मन्न कबायत
नहीं है टुक भी दिल दर्द रफायत
साँवला 'नागर' बे परवाह निहायत ॥७५३॥

७. राग बँगला, तिताल

हिया मन्न महबूब निसस्तगाह किया
इक कदम भी बाहिर के आए, क्योंकि जाय जिया
'नागर' दिल खुस, नाखुस अँखियाँ, दुख जियैं करि लिया
आँसू पलक, रुमाल इसारत, बोलैं बिया बिया ॥७५४॥

८. राग सोरठ, तिताल

उस हुस्न के तकाबल, करना बयान क्या है
फिरि चस्म बिन, बिचारी सायर जबांन क्या है
महताब मुख कैं देखैं, बेताब होता दिल है
उस आगू किसके मन का, रहता सयांन क्या है
हर रोज वा सजन की, मुज मारती अदा है
इस तर्ज बेतकल्लुफ, जी का जियांन क्या है

---

(७५२) रफा = रफी (हस्त)।
(७५३) आतस = आफत।
(७५४) जियैं = जिमैं (हस्त)

७५२. अजीम = बड़ा। जिगर = कलेजा। मरज = रोग। हकीम = वैद्य। दारू = दवा। नब्ब = नब्ज, नाडी। दस्त = हाथ। गर्क = ग़र्क, डूबा हुआ; मग्न। फिराक़ = वियोग। दर = में। जिकर = जिक्र, चर्चा। रफा होना = हट जाना, मुक्त हो जाना।

७५३. तरीक = ढंग। सायत = घडी, मुहूर्त। आतस = आतिश, अग्नि। नसीब = भाग्य। मन्न = मन, मेरे। कबायत = कबाहत, कठिनाई। रफायत = छुटकारा

७५४ मन्न = मन, मेरा। निसस्तगाह = बैठक; आसन। इसारत = इशारा। बिया बिया = बेया (फारसी); आओ आओ।

'नागर' अगर गिरफतैं दरदस्त तेंग;खूनी
अब इस्क खेत, उसकूं लैंनां मियांन क्या है ।।७५५।।

९. इकताल

निगाह के मिलतैं ही, चस्मौ पैगाम किया
रिसवत मुसक्याय दिया, दिल कौं लुभाय लिया
पुकारती थी यार की मिजगां कि बिया
सुरझै नहीं इस्क नजर, उरझी मुझ बीच हिया
साँवला साहिब जमाल, छैल, छलनिवाल तिया
'नागर' कहाँ ऊ पिया, उस बिन नहीं जाय जिया ।।७५६।।

१०. इकताल

अखियाँ सौं मैं कहा था करौ मत हुस्न परस्ती
जब तौ नहीं रही ए, बिच सोख असर मस्ती
अब बिरह की अवाइ, दिल पर परी है ताजी
मुजकौं सलाह क्या है, मुसकल है इस्कबाजी
दोहा—नैनन बे-हुकमीन कौं, बहुत रही-समुझाइ
हाय इस्क आफत अबस, सिर पर डारी लाइ
अपने बान नसिहत किए, बहौत बहौत दिन रैंन
मैं अपनी सी करि थकी, अपने-हुए न नैंन
मन किस्ती है सिकस्ती, दरिया लगन मै गहरैं
तुज रूह रख रुखौंही उठती हैं कहर लहरैं
अफसोस के भंवर मैं रक्खूं सदा बिया जी
मुजकौं सलाह क्या है, मुसकल है इस्कबाजी

---

(७५६) जाय जिया = जिया जिया (हस्त), जाय जाय (सु)।

७५५. तकाबल = मुकाबला, समानता। सायर = कवि। जुबान = जिह्वा। महताब = चंद्र। बेताब = बेकरार, विकल। आगू = आगे। सयान = सज्ञानता, होश। मुज = मुझको। बे तकल्लुफ = अकृत्रिम; स्वाभाविक। तर्ज = ढंग। जियान = ज्यान, हानि। गिरफतैं = पकड़ते। दरदस्त = हाथ में। तेग = तलवार।

७५६. पैगाम = संदेश। रिसवत = घूस, उत्कोच। मिजगां = बरौनी। बिया = ‍या, आओ। नजर = चितवन। जमाल = सौंदर्य। साहिब जमाल = सुंदर।

दोहा—परी इस्क-दरियाव दिल-नावैं न पावत ओर
बे-परवाई रावरी, पुरवाई झकझोर
परि गइ नाव कुदाँव चित, किससैं करूँ पुकार
प्रीत भँवर के पेच तैं, कौंन उतारै पार
मेरी दसा दुहेली, यह किस कौं कहि सुनाऊँ
परी प्रीत के समद मैं, कहूँ पार भी न पाऊँ
'नागर' नवल पियारे, तुम तौ हो खुस मिजाजी
मुझकौ सलाह क्या है मुसकल है इस्क बाजी
दोहा—अकथ कहानी प्रीत की, कही न माने कोय
कोइ इक जानैं खलक मै, जिस सिर बीती होय
रहे हाल हरदम लगा, छुटता है जिय धीर
पीर न पावैं इतै पर, यार निपट बे-पीर ॥७५७॥

११. राग सारग, इकताल

अबरू महराब खानै, मिजगा अजबौं का फरंग फव्वारा किया
पुतली मसनद मुलांम का जिनहार किसी नैं न फर्स छिया
तुझ इस्क ही का रोसन समै जहाँ, जिन जुलमात निकास दिया
पुकारैं निगाह सबो रोज 'नागर' बिया रे बिया, ए पियारे पिया ॥७५८॥

१२. इकताल

लबे आब किया खस खानाए खा, बँधी बाज गस्ती फहिरै फहिरै
परदे दरफर्सए संदल के, सब रंग रँगे गहिरै गहिरै

---

(७५७) समद = मदन (हस्त)। पीर न पावैं = प्यार न पावै (हस्त)।
(७५८) फर्स = फस। जुलमात = जुलनात।

७५७. हुस्न परस्ती = सौंदर्य-पूजा। सोख = शोख, धृष्ट। असर = प्रभाव। मस्ती = मादकता। ताजी = टटकी। बे-हुकमीन = आज्ञा न मानने वाले। अबस = व्यर्थ। किस्ती = नौका। सिकस्ती = शिकस्त, जीर्ण शीर्ण। दरिया = नदी। लगन = प्रेम। तुज रूह = तेरे सामने। रुख-रुखौही = रुष्ट। कहर = वज्र। सदा = ध्वनि। बिया जी = आओ जी। समद = समुद्र। खुश मिजाजी = प्रसन्न चित्त। हाल = तल्लीनता।

७५८. अबरू = भ्रू। महराब = घेरा। मिजगां = बरौनी। अजबौं = अजब। फरंग = जादू। मुलाम = मुलायम, कोमल। जिनहार = ज़िनहार, कदापि। समैं = शमा, प्रदीप। जुलमात = जुलमात, अंधकार। सबोरोज = रात दिन। बिया रे बिया = आ रे आ।

जल चादर होन जहाँ अबसारें, फवारैं चलैं नहिरैं नहिरैं
इहाँ 'नागरि नागर' साहिब ऐस, उठैं सुख की लहिरैं लहिरैं ॥७५६॥

१३. राग ललित, तिताल

सुन री सखी सयांनी
मुज इस्क की कहांनी
देखा मैं स्यांम सलौंना
उसके हुस्न मैं टौनां
भौं हैं बुलंद, मुख बीरा
सिर जाफरांनी चीरा
जोबन मैं मस्त आँखैं
गोया कँवल की पांखैं
नीमां महीन तंग
जिसमैं झलकता अंग
कसै तन बदन जवाहर
नव जवाँ उमर खुस जाहिर
उसकी अजब अदायैं
दिल डालती झुलायैं
अब वहि सजन जहाँ ही
मुज ले चलो तहाँ ही
तलफौं लगी तालाबेली
'नागर' बिन जिंद दुहेली ॥७६०॥

१४. राग भैरूँ, तिताल

आसिक दिल अँखियौं की जग मैं, सबसैं अकह कहानी हैं
फिर न फिरैं, महबूब करैं जब हसि चितवनि महमानी हैं
बेसक बदपरहेज निहायत, इनहिं न लालच है जी का
हुस्न जहर का गिजा मुकर्रर, ऐसी अजब अयानी हैं

---

७५६. लब = किनारा। आब = पानी। लबे आब = नदी के किनारे; जल-तट पर। अबसारैं = आबसार, झरना। खस खाना = उशीर गृह। संदल = चंदन। ऐस = आराम।

७६०. बुलंद = उच्च। जाफरानी = केशरिया। चीरा = चीर, वस्त्र। नीमां = नीमास्तीन, आधी बाँह का सलूका। तग = चुस्त। खुश जाहिर = देखने में प्रसन्न। तालाबेली = बिकलता। जिंद = ज़िंदगी। दुहेली = दुखी।

उन बिन सनम और नहीं बूझै, हर दम एक उसीकूँ बूझै,
इस मतलब मैं निपट सयांनी, और न कहूँ लुभानी हैं
मस्त हाल सब सुधि बिसरानी, प्यासी मरैं परी बिच पांनी,
ए गरीब उस रूप दिवांनी, उहि 'नागर' अभिमांनी है ॥७६१॥

१५. राग सोरठ, तिताल

जिस बकत ये सुरीजन, तू बे हिजाब होगा,
हर जर्रह तुज झलक सूं, जूँ आफताब होगा
मति जा चमन मैं दिलबर, बुलबुल पैं मत सितम कर,
गरमी सों तुज निगह की, गुल गल गुलाब होगा
मत आइनें को दिखला, अपना जमाले रोसन,
तुझ मुख की ताब देखें, आईना आब होगा
निकला है वो सितमगर, तेगे अदा कूँ लेकर,
सीने पैं मुज आसक के, अब फतेयाब होगा
रखता है क्यौं जफा को, मुज पर रवा ऐ जालम,
महसर मैं मेरा तुजसौं, आखर हिसाब होगा
मुजकौं हुवा है मालम, ए मस्ते जामे खूबी,
तेरी निगाह देखें सब कामयाब होगा
हातिफ नैं यौं दिया है, मुजकौं 'वली' बसारत,
उसकी गली मैं जा तूं, मतलब सिताब होगा ॥७६२॥

---

(७६१) हरदम = दर दम (हस्त)।

(७६२) पाठांतर 'दीवाने वली' के आधार पर दिया जा रहा है। जूं = चूं (हस्त)। दिलबर = लालन (दीवान), लाल दिलबर (हस्त)। गरमी सों = गरमी जु (हस्त)। मत आइनें को दिखला = मति दिखाव आइनें कूं (हस्त)। है वो सितमगर = सनम सितमगर (हस्त)। सीने पैं मुज आसक के = सीने का आशिकां के (दीवान)। तेरी निगाह० = तेरी अखां के देखे आलम खराब होगा (दीवान)। मतलब = मकसद (दीवान)।

७६१. बद परहेत = असंयमी। गिजा = खुराक; भोजन। अयानी = मूर्खा।

७६२. बकत = बख्त, समय। सुरीजन = प्रियतम। बे हिजाब = बे पर्दा, अनावृत।

(१६)

देखा मन मोहनां सोहनां प्यारा, फेंटा सिर वा सज कजदार
तिसमैं धरे बनाय गुल गुलाब नौ बहार
हर दुजुल्फ बदरौं मैं, रोसन मुख, चंद
ज्यान उसैं काली कालिया सी, मतवालियाँ भौंह बुलंद
महर भरे चस्मौं की, सहर सी निगाह
स्यांम रंग अंग अंग, अजब खुस अदाह
बदस्त नीलोफर फिरावता, आवता बिच उमंग
उसी फिरन मैं फिरता, दिल है हुनर फिरंग
चाल मौं चित चाल डाल, डोला जंजाल
हुवा निहार 'नागर' छबि, इस्क मस्त हाल ॥७६३॥

१७ इकताल

दिल छोडि यार क्यौं कि जावै
जखमी है सिकार क्यौं कि जावै
ता दर न रसद सराबे दिदार
अँखियाँ का खुमार क्यौं कि जावै
है हुस्न तेरा हमेसा इक सा
जन्नत सूं बहार क्योंकि जावै

जर्रह = कण। जूं = ज्यों। आफताब = सूर्य। दिलबर = प्रियतम। सितम = जुल्म। गुल = गुलाब का फूल। गुलाब = गुलाब जल। जमाले रोशन = छवि-प्रभा। ताब = चमक। आब = पानी। सितमगर = जालिम। फतेयाब = विजयी। जफा = जुल्म। रवा = जायज, उचित। महसर = कयामत का दिन। आखर = आखिर। मालम = मालूम। जाम = प्याला। कामयाब = सफल। निगाह = चितवन। हातिफ = स्वर्गीय संदेश देने वाला। बसारत = संदेश। सिताब = शीघ्र, जल्द।

(७६३) हर दुजुल्फ = हरैं हरैं दुजुल्फ।

७६२. वा = उस। कजदार = टेढा। बदरौं = बादलो। ज्यान = जानो। कालिया = सर्प। महर = मेहर, प्रेम। सहर = सेहर, जादू। नीलोफर = नील कमल। बदस्त = हाथ में। हुनर-फिरंग = जादू। मस्तहाल = तल्लीन।

मुमकिन नहीं अब 'वली' का जाना
है आसिके जार क्योंकि जावै ॥७६४॥

१८. तिताल

की करां मैं, रैंन विहानी, नींद न आवै
वही रूप आँखड़ियाँ आगैं, आंनि आंनि मँड़रावै
मैंड़ा हाल न बुझदा मौ हन, सौं हन बे-परवाह कहावै
'नागरिया' साईं न किसी कौ -इस्क-फंद विच लावै ॥७६५॥

१९. इकताल

हुवा है इस्क दांवनगीर
स्यायत भी न रफायत देता, दिल कौं दुगनी पीर
सुबै साम सोतैं जगतैं, सँग रहैं बिरह बहीर
'नागर' कुल्फ करी अँखियाँ अब, जकरी जुल्फ जँजीर ॥७६६॥

२०. इकताल

मोहिं क्यों पिलाया नीं, इस्क का पियाला
ल्याव ल्याव साकी महबूबां, हाय हाय मतवाला

---

(७६४) वली की इस गजल में ५ शेर है। निम्नांकित शेर चौथा है, जो हस्तलेख में नहीं है—

अछवाँ की गर मदद न होवे
मुझ दिल का गुबार क्योंकि जावे ?

छोड़ि = छोड़ के (दीवान)। ता दर न रसद = जब लग न मिले (दीवान)। अब 'वली' का जाना = वली का जीना (हस्त)।

(७६६) कुल्फ करी = कुल्फ बरी (हस्त)।

७६४. क्योंकि = किस प्रकार। ता दर न रसद = जब तक न प्राप्त हो। सराबे दीदार = दर्शन की मदिरा। खुमार = नशे का उतार। जन्नत = स्वर्ग। बहार = वसंत। आशिके जार = घायल प्रेमी, संकटापन्न प्रेमी।

७६५. की = क्या। करा = करूँ। मैड़ा = मेरा। बुझदा = समझता है। साईं = ईश्वर।

७६६. दांवनगीर = दामन पकड़ने वाला। स्यायत = सायत, घड़ी। रफायत = छुटकारा। बहीर = भीड़। कुल्फ = कुफ्ल, ताला।

अब धीरज के पाय न ठहरैं, जाय न अमल सँभाला
'नागरिया' वह रूप मोहन दा, गल विच पया जँजाला ॥७६७॥

इस्क चिमन के दोहा*

इस्क उसी की झलक है, ज्यौं सूरज की धूप
जहाँ इस्क तहाँ आप है, कादर नादर रूप ॥१॥

कहूँ किया नहिं इस्क का, इस्तैंमाल सँवार
सो साहिब सौं इस्क वह, करि क्या सकै गँवार ॥२॥

सरमिंदा हो इस्क सौं, सो देवै सब खोय
निंदा सहदानें बजैं, सोई चुनिंदा होय ॥३॥

दुनियाँदार फकीर क्या, है सब जितनी जात
बिगर इस्क मस्ती अरे, सब की खस्ती बात ॥४॥

सादे जे, प्यादे सबै, जद्यपि धन अनपार
इस्क अमल मस्ती लियैं, सो हस्ती असवार ॥५॥

सब मजहब सब इल्म अरु, सबैं ऐस के स्वाद
अरे इस्क के असर बिन, ए सब ही बरबाद ॥६॥

आया इस्क लपेट मैं, लागी चस्म चपेट
सोई आया खलक मै, और भरइया पेट ॥७॥

जर बाजी बिन खलक के, कांम न सँवरै कोइ
एक इस्क बाजी अरे, ज्यों बाजी सैं होइ ॥८॥

---

७६७ नीं = रे। साकी = शराब पिलाने वाला। महबूबां = प्रियतम। अमल = नशा। दा = का। पया = पड़ा। जँजाला = जंजाल।

* मुद्रित प्रति मे अनुक्रम ७४ के प्रारम्भ का पहला दोहा यहाँ भी प्रारम्भ में है।

(४) खस्ती = किस्ती (सु, हस्त)।

(८) सैं = सौं (सु), सो (स)।

दोहा ३. सहदानैं = निशान, दुंदुभी।

४. बिगर = बगैर, बिना। खस्ती = जीर्ण-शीर्ण।

५. सादे = कोरे, (प्रेम)-रहित। प्यादे = पैदल। हस्ती = हाथी।

८ जर बाजी = धन दौलत का खेल। ज्यां बाजी = प्राण देना।

सीस काटि करि भू धरै, ऊपर रक्खै पाव
इस्क चिमन के बीच मैं, ऐसा है तो आव ॥६॥

जिन पावौं सौं खल्क मैं चलै, सु धरि मति पाव
सिर के पांवो सो चला, इस्क चिमन मै आव ॥१०॥

कोइ न पहुँचा उहाँ तक, आशिक नाम अनेक
इस्क चिमन के बीच मै, आया मजनूँ एक ॥११॥

इस्क चिमन महबूब का, जहाँ न जावै कोइ
जावै सो जीवै नहीं, जिवै सु बौरा होइ ॥१२॥

अरे इस्क के चिमन मैं, सम्हलि कै पग धरि आव
बीच राह के बूड़ना, ऊबट मांहि बचाव ॥१३॥

मारे फिर फिर मारिए, चस्म तीर सौं खूब
किए अदालत जुलम की, जहाँ बैठा महबूब ॥१४॥

आसिक पीर हमेस दिल, लगैं चस्म के तीर
किया खुदा महबूब कौं, सदा सख्त बेपीर ॥१५॥

आसिक सिर अपनां अरे, धरि दै पैरूं लाय
बेनिसाफ महबूब कैं, करै दूरि अनखाय ॥१६॥

खून करैं लड बावरे, महबूबौं के नैंन
आसिक सिर की गैंद सौं, खेलैं तबही चैंन ॥१७॥

सुरख चस्म महबूब नैं, खंजर किए सँवार
निकलै लोहू सौं रँगे, आसिक पंजर पार ॥१८॥

---

(१०) चला = चलै (हस्त)। (१२) सु = तो (स)।
(१४) बैठा = बैठे (हस्त)। (१६) अनखाय = अनआय (हस्त)।
६. इस्क चिमन = प्रेम वाटिका। १२. बौरा = बावला, दीवाना, पागल।
१३. ऊबट = कठिन या विकट मार्ग; नीति विरुद्ध मार्ग।
१६ बेनिसाफ = बेइंसाफ, अन्यायी। अनखाना = रूठना।
१७. लड़बावरे = दुलारे।
१८ सुरख = सुर्ख, लाल। पंजर = शरीर की हड्डी पसली का ढाँचा।

इस्क खेत सौं नहिं टलै, आवै बे उसवास
चस्म चोट सौं सिर उड़ै, धड़ बोलै स्याबास ॥१६॥

खलक किया खालिक अरे, हसनैं ही कौं खूब
सहनैं कौं आसिक किया, मारन कौं महबूब ॥२०॥

चस्मौं सौं जख्मी करैं, रस गस मौं बिच खेत ।
लट तस्मौं सौं बाँधि कै, दिल बस मौं करि लेत ॥२१॥

पंडित पूजा पाक दिल, ए दिमाक मति ल्याय
लगै जरब अँखियान की, सबै गरब उड़ि जाय ॥२२॥

पाव सकै नहिं ठहरि कै, बुरी चस्म की पीर
जो जानैं जिसकै लगै, कहर जहर के तीर ॥२३॥

तीर निगाहौं के लगैं, दरद मुकररा हाय
जररा भी जरराह सौं, मिलैं न उर के घाय ॥२४॥

ए तबीब उठि जाहु घर, अबस छुवै क्या हाथ
चढ़ी इस्क की कैफ यह, उतरै सिर के साथ ॥२५॥

कस्मौ तुम्हैं करीम की, सुनियौ सबै जिहांन
चस्मौ की लागी गिरह, छूटैं छूटै ज्यान ॥२६॥

क्या राजा, क्या पातसा, क्या, गरीब कगाल
लागै तैं छूटैं नहीं, नैंननि बडो जँजाल ॥२७॥

---

१६. बे उसवास = बे वसवसा (फारसी), बे-खौफ । स्याबास = शाबास; धन्य धन्य; साधु साधु ।

२०. खलक = सृष्टि । खालिक = स्रष्टा ।

२१ गस = गश, मूर्च्छा । तस्मा = कोई चीज बाँधने के लिए चमड़े या कपड़े का फीता ।

२२. दिमाक = दिमाग, गर्व, अहं । जरब = आघात, चोट । २३ पाव = पैर ।

२४. दरद = दर्द, पीडा । मुकररा = मुकर्रर; बार बार । जररा = जरा, थोडा भी । जरराह = जर्राह, शल्य-चिकित्सक ।

२५ तबीब = हकीम । अबस = व्यर्थ । कैफ = हलका नशा, शुरूर, कैफियत ।

२६. कसम = शपथ । करीम = खुदा, कृपानिधान परमात्मा । जिहान = जहान, संसार । गिरह = गाँठ । ज्यांन = जान, प्राण ।

२७. पातसा = बादशाह ।

लगा तीर जमधर छिपै, छिपै छिपाई सैफ
नहिं उतरै, नाहीं छिपै, हैफ इस्क की कैफ ॥२८॥
अरे पियारे क्या करौं, जाहिर ही है लागि
क्यौं करि दिल बारूद मैं, छिपै इस्क की आगि ॥२९॥
आतस लपटैं राग की, पहुँचैं दिल बिच जाय
दबी इस्क बारूद की, भभकनि लागी लाय ॥३०॥
उठै आगि उर इस्क की, जलै ऐस आराम
चलैं न कैफी, चस्म बिच, घुटैं धुयैं कैं धांम ॥३१॥
गिरे रहैं, भीजे रहैं, मुतलक भी सम्हलैं न
हुस्न पियाला पीय कैं, हुए हैं मदवे नैन ।३२॥
गिरे तहाँ ही गिरि रहे, पल भी पल उघरैं न
पूरे मदवे हुस्न के, मजनूँ ही के नैंन ॥३३॥
चली कहानी खलक मै, इस्क कमाया खूब
मजनूँ से आसिक नहीं, लैली सी महबूब ॥३४॥
मजनूँ कौं कहैं सब असल, और नकल के भाय
कछु हो दिल मैं असल, तब सकैं नकल भी लाय ॥३५॥
नकल साँच सौं सरस करि, करि लीनैं दिल दस्त
हरीदास के हाल मैं, दर दिवाल भी मस्त ॥३६॥
इस्क स्वांग साँचा किया, दिल कौं दिया छकाय
हरीदास सबकौं गया, चेटक रूप दिखाय ॥३७॥

(दोहा २८-३०) हस्तलिखित पद मुक्तावली में २८, २९, ३० दोहों का क्रम ३०, २८, २९ है ।

२८. जमधर=कटारी की तरह का एक हथियार । सैफ=(अरबी) तलवार । हैफ=(अरबी, अव्यय) यह मन की अत्यंत कष्टदायक अवस्था सूचित करता है, 'परम दुःख की बात है' का द्योतक अव्यय ।

३०. आतस=आतिश, अग्नि । लाय=अग्नि ।

३१. कैफी=जिस पर कैफियत तारी हो; जिसको हलका नशा हो ।

३२ मुतलक=रंच, मात्र । मदवे=मद्यप, शराबी ।

३६. दस्त=हाथ । हाल=शुरूर, कैफियत । दर=दरवाजा, द्वार । हरीदास=नागरीदास के समकालीन वृंदावन के एक विरक्त महात्मा, जिन्होंने उन्हें राज्य अपने युवराज सरदार सिंह को देकर वृंदावन में आ रहने के लिए प्रेरित किया ।

३७ स्वांग=नकल । छकाना=पूर्ण रूप से तृप्त करना । चेटक=जादू ।

इस्क हुस्न की बात क्यों, सकै सुखन मैं आय
दिल चस्मौं के जुबां होय, तब कछु कहैं सुनाय ॥३८॥

कही जाय कहा इस्क की, कहैं न मानै कोय
जानैं सो जानैं अरे, जिस सिर बीती होय ॥ ३६॥

खलक न मानैं एक भी, अबस किए बकवाद
खूब कमावै इस्क कौं, तब कछु पावैं स्वाद ॥४० ।

मजा अजायब हुस्न का, चक्खैं चस्म जुबांन
इस्क चिमन रक्खै सोई, आबादांन सुजांन ।।४१
चस्मौं के चस्मा झरैं, झरना आब फिराक
इस्क चिमन तब सब्ज रहैं, दिल जमीन होय पाक । ४२॥
इस्क चिमन आबाद करि, इस्क चिमन कौं गाव
'नागर' घर महबूब के, इस्क चिमन मैं आव ॥४३ ।

जिगर जख्म जारी जहाँ, नित लोहू की कीच
'नागर' आसिक लुटि रहे, इस्क चिमन के बीच ॥४४॥

चले तेग 'नागर' हरफ, इस्क तेज की धार
और कटैं नहिं वार सौं, कटैं कटे रिझवार ॥४५॥

३१. राग सोरठ, इकताल

इस्क बाजी मुसकल है हो
जो कोई इस्क कमाया लोड़ै
सिर धरि सूली अंग न मोड़ै ॥७६८॥
इन पदन के अलापचारी मैं इस्क चिमन के दोहा गावना ।
इति श्री पुस्तक श्री महराज कुँवार श्री सावत सिंघ जी, दुतीय हरि समंध नाम
श्री नागरीदास जी कृत पदमुक्तावली सपूर्ण ।

---

(४१) हुस्न=इस्क । (७६८) यह पद मुद्रित प्रति में इस स्थान पर नहीं है ।
३८. सुखन =कलाम, कथन, सूक्ति । जुबा = जिह्वा, वाणी ।
४१. आबादांन = संपन्न, आबाद ।
४२. आब = पानी । फिराक = वियोग । पाक = पवित्र ।
४५. हरफ = तलवार की धार । ७६८ लोड़ना = चुनना ।

पदमुक्तावली का शेषांश

राग काफी

मधु रितु, मलय समीर मंद गति बहति परसि द्रुम फूलं
चंद्रोदय नभ, अमल चंद्रिका व्यापक जमुना कूलं
राधा माधव केलि, समर रस मत्त, ग्रीव भुजमूलं
परिरंभन, अधरासव, तंद्रा, गत सुधि, गलित दुकूलं
निभृत-कुंज-स्थित कामातुर जुगलरूप सम तूलं
'नागर' रमण सु आश्रय पश्यति कदली खंभ-स्थूलं ॥ १ ॥

राग काफी, तिताल

श्री वंसीवर जै बलवीरे
हरे हरे बिहारी धीर समीरे
सजल जलद सम स्यांम सरीरे
बिज्जु लता चल चीरे
सस्मित बिंबाधर वेणा रव हो, नंद-सुव-स्थित जमुनां तीरे
गानानंद बिमोहित बिस्मय द्रवति जूथ आभीरे
वेपथ अंग अतन आकुल कृत हो. 'नागरि' प्रेम पुलक दृग नीरे ॥२॥

राग इमन, तिताल

श्रीकृष्ण चंद्र, चारु-बदन, मदन मद-त्रिभंग
दामिनि दुति वसन, सजल मेघ स्याम अंग
कुणित बेणु अधर बिंब, कुँवर बृज महीस
कुंडल मनि किरन, अलक सिखि सिखंड सीस
सव्य अरु असव्य कुसुम दाम भव्य अंस
भृंगा रव करत निकट काम जय प्रसंस

---

(२) स्थित = सस्मित (हस्त)।

१ व्यापक = चारों ओर फैला हुआ। समर = स्मर, अनंग। गलित = गिरा हुआ, शिथिल। निभृत = एकांत।

२. सुव = सुवन, पुत्र। आभीर = अहीर, गोप। वेपथ = वेपथु, कँपकँपी। अतन = अनंग, कामदेव।

भूषन-ब्रज-तरुनि-नैंन, रसिक बर कदंब
'नागरिया' उरसि अवसि बसहु बिन बिलंब ॥३॥

जय वृषभान सुता चंदानन, वृंदा कानन अवनि विहारी
नव तन तड़ित लता सम सभ्रम, सजल जलद नीलांबरधारी
प्रिय अहलाद, कलपद्रुम गोभा, रासोत्सव निधि रस बिस्तारी
प्रणत नागरीदासेश्वरी श्री राधा कृष्णानंदकारी ॥४॥

राग

लटपटात किरननि कैं लाग
उठि न सकत लोचन चक चौंधत, ऐंचि ऐंचि ओढत बसन, दोउ जागैं
हिय सौं हिय, (मुख सौं) मुख मिलवत, हसि लपटात सुरत रस पागैं
'नागरीदास' निरखि अँखियनि सुख, मति कोउ बोलहु, जाहु जिनि आगैं ॥५॥

प्रात समैं दोउ उठे परजंक पर, सौरभ सरस स्वाद लपटात
लोचन ललित अरुण निसि जागे, सुरत अंत पुनि पुनि ललचात
अति रस मत्त सुरत सुख सागर, वचन रचन कहि मृदु मुसकात
'नागरीदास' दंपति रति बिलसि बिलसि सुख, ए न अघात ॥६॥

राग

प्यारी जोरि जोरि करज तनु मोरति
बंक बिसाल छबीले लोचन, भुव बिलास चित चोरति
कनक-लता-सी आगैं ठाढ़ी, मन अरु दृष्टि अगोरति
उघरी बर कुच तटी पटी तैं, छबि मरजादहि फोरति
अति रस बिबस पियहिं उर लावति, केलि कलोल झकोरति
'नागरीदास' ललितादि निरखि सुख, लैं लैं बलाइ तृन तोरति ॥७॥

---

(६) रति = संपति (मु)।
३. कुणित = बजता हुआ। सव्य = बाएँ। असव्य = दाएँ। दाम = माला। अंस = कंधा। सिखि = मयूर। सिखंड = मोर,-पंख। भृंगा = भ्रमर। कदंब = समूह। उरसि = उर मे।
४. संभ्रम = चक्र की भाँति घूमने वाला।
७. करज = उँगली। अगोरना = रोकना, छेकना। उघरना = खुलना, ढका न रहना।

राग कामोद

आजु उजियारी रैंन खुली हैं
जागि रही उज्जल दुति जित तित, कोउ उपमा न तुली हैं
तैसियैं फूलि फूलि द्रुम साखा, जमुनां कूल झुली हैं
'नागरिया' व्रज-चंद चंद्रिका, तहाँ भरि भरि भुजन जु ली हैं ॥१३॥

राग केदारौ

पिया के लोभ छोभ उपजायो
धीरज कहाँ मधुप कौं, मधु तैं कैसैं जात छुटायो
इत तजि याको मनत न दुहुँ दिस, रिस परत न धायो
'नागरीदास' हास मुख रोक्यो, लै उसास सिर नायो ॥१४॥

राग केदारो

परत प्रेम निधि पाइ रुचिर जहाँ
सुनि री सखी मेरो ज्यों जानत, जीभ धरो किधौं आँखिनि तहाँ
चित वित तरवनि तर, तिरीछौं तन तकि, किए फिरत छहाँ
'नागरीदासि' चरन जुग जीवनि, यह सुख मोकौं अनत कहाँ ॥१५॥

राग केदारो

मोहिं काज याही इक जिय सौं
सर्वसु अर्पि निपट मन अटक्यौ, प्रान भावती प्रिय सौं
मर्म बिथा मम उर की सजनी, गुदरि चतुर वर तिय सौं
सुनत सजल लोचन 'नागरीदास', उमगि लगावत हिय सौं ॥१६॥

राग (केदारो)

मोपर करत हैं सखि नेहु
हौं तो उर जब धरौं मृदुल पद, मानत धनि करि देहु
तू कहि मो अनुचर आतुर कौं, अधर सुधा दै, लेहु
'नागरिदास' अकुलाय अंक भरि, अँखियन बरस्यौ मेहु ॥१७॥

---

(१७) पद = पट (सु) ।
१५. पाइ = पैर । तरवनि = (पैर का) तलवा ।
१६. गुदरना = निवेदन करना ।

राग केदारो

मेरे नैंना ही यह जानैं
जेतिक भीर परत अवलोकत, ठौर ठौर छबि मांझ बिकानैं
रूप अगाध अवधि सखी अंग, रसना बपुरी कहा बखानैं
तन मन बूड़ि जात देखत ही, कहा होय उर भीतर आंनैं
सुधि बुधि बल बित चतुर चातुरी, कछु न सरैं कोटिक जो ठानैं
प्रान प्रिया सँमराए समुझियैं, कहा कहायैं आप सयानैं
हौं तो दारु पुतरी या कर नचवत, हित कर जैसैं जानैं
सरबस सुख थित जीवनि बल बित, 'नागरीदास' हम हाथ बिरानैं ।।१८।।

राग केदारो

छुरी चुरी एक सिर चूरा, नूपुर मंडित जावक जुत पग
अब अब अमित रूप गुन सागर, छबि आगर मेरे मनहि लग
गौर चरन जुग चारु चंद्र नख, अति रुचि रुचि पचि चित चातुर खग
'नागरीदासि' ज्यौं फनि मनि जीवनि, पाइ प्रिया परकासक मम जग ।।१९।।

राग केदारो

रूप निधान भावती अति लड़
जोई छिन जोई पल निकट पाइयत है जीवनि जन, सोई भागनि बड़
भाँति भाँति ठौर ठौर छबि, मम अँखियन मै परी रहत गड़
'नागरीदास' यह अकह बात है, हिय हसि मुझै चौंप चाय चड़ ।।२०।।

राग अडानौ

ललित सु डोरी कसि उकसी हैं नाभि ठौर,
लचकत लंक लोल, लहँगा को घेर हैं
सारी सेत पटली चुनावट चुनी हैं चोट,
मानौ खीर सागर तरंग की उरेर हैं
कंचुकी के कस की कसन, उकसन कुच,
नयन मनोज कोटि दामिनी उजेर हैं

---

१८. दारु = काठ । पुतरी = पुतली, पुत्तलिका, मूर्ति । बिराना = दूसरा, अन्य ।
१९ खगना = धँसना । फनि = सर्प । पाइ = पैर ।
२०. लड़=प्रिय । चड़=चाड़, चाव, चाह, चोप ।
२१. उरेर = उमड़न । उजेर = उजाला, प्रकाश ।

मंद गति आवत ठठकि हसि हेर हेर,
पीय मन होत महा आनँद के ढेर हैं ।।२१।।

राग विहागरौ । आन कवि कृत ।

दंपति रंग महल मधि गावत
तांनन मैं 'हां', 'न न' की बतियाँ, सुनत सखी सुख पावत
कबहुँक अधरनि अधर छुवा कै, मंद मंद मुसकावत
बिबस होय मोहन प्यारी कूँ, भुज भरि उर लपटावत
'श्री रसिक बिहारी' कौ सुख रंगी, निरखत नैंन सिरावत ।।२२।।

राग विहागरो

हसि हसि दोऊ बातनि करहीं
अधर खुलनि, चमकनि चौका की, लाड़-भरी बतरानि उच्चरहीं
कबहुँ कबहुँ रहि जात एक टक, बहुरि छकी अँखियाँ ढुरहीं
'नागरीदास' मोहनी मोहन, रीझि परसपर अंकनि भरहीं ।।२३।।

राग परज

तनक तनक बाजैं झनक चुरीन की औ,
गरैं हरवाई बात भनक सुहावती
टूटे हार फूलन के, छूटे उर बंधनि मैं,
दोऊ मुख चंदनि में सोभा सरसावती
लटपटी मूरति गुलाब जल भीजि रही,
बिगलित वार वास मदन बढ़ावती
रूप बस 'रसिक बिहारी' हसि हेरि हेरि,
फेरि फेरि भेटत भुजान भरि भावती ।।२४।।

राग परज

मेरी तू चतुर चिंतामनि
सुनि सुकुँवारि मम सुकृत पुंज फल, पलकनि की ओट होहु जनि

(२५) जनि = विनि (हस्त) ।
२२. सिराना = शीतल होना ।
२४. हरवाई = हल्की, मंद, धीमी । बिगलित = शिथिल ।

सर्वसु प्रान अधार रसिकनी, याही तें मानत आपुन धनि
'नागरीदासि' यह मंत्र मनोरम, रसना श्री राधा नाम रुचिर गनि ॥२५॥

राग परज

सुनि सखि उरज अन्यारे कोर
मम वच्छस्थल भेदि छेदि कैं, निसरत पैले ओर
कहि क्यो प्रेम सुमार समारे, चपल नयन चित चोर
अधर-सुधा प्यावत ही चेत्यो, औरहि नहीं निहोर
हौं न्यौंछावरि वेगि सुन्यौं, नूपुर किंकिनि की घोर
देखौ मद गज चाल छबीली, अलबेली बैस किसोर
मृदु मुसक्यांनि चुभि रही जिय मैं, नाक जलज-मनि ढोर
'नागरीदासि' उठि मिली अचानक, पोखे पिय तृषित चकोर ॥२६॥

राग परज

मेरो झूमत हथिया मद को
पिय हिय हिलग परी पग साँकल, मैमत अपनी सद को
सुरत नदी मरजादा ढाहत, मान गुमान अनुराग जलद को
'नागरीदास' विनोद मोद मृदु, आनँद वर विहार बेहद को ॥२७॥

राग परज

जिवत परसपर रूप रहचटैं
बिवस भूषन जुत अब अग्र छबि, परस सरस सेज समाज ठटैं
भोग सँजोगी भोगी बिलसत, प्रमुदित पुलकि अनुराग अटैं
चुंबन चल मुख मधु पी 'नागरीदास' लोभी लाल ललक न घटैं ॥२८॥

राग परज

पल पल पानिप अधिक बढ़ी री
हास हुलास आलिंगन चुंबन, नव नव चाइ चढ़ी री

---

(२७) जलद = उलद (मु)।
२६. अन्यारे = अनीदार, नोकीले। पैले = परला, उस ओर का। घोर = प्रबल ध्वनि। ढोर = लटक।
२७ सद = सदका। दान = मद।
२८. रहचटा = आतुरता पूर्ण लालसा, चसका।
२९. पानिप = कांति।

बर बिहार के रस समाज सजि, गुन गन फेर गढ़ी री
'नागरिदासि' बलि केतिक कोबिद, यह विधि कहाँ धौं पढ़ी री ॥२६॥

राग परज

लाड़ गरब की फूल गात मैं
ईषद् स्याम दसन मुख दमकन, उदित उदोत सुभग उरजात मैं
चंचल हार अलक उर कुंडल, मत्त होत मन दृष्टिपात मैं
'नागरीदासि' लाल उर आसन, बैठी चित्त मिलि अनेक घात मैं ॥३०॥

राग परज

नैननि मैं नैन मिलि, मन सौं मन, सखि तन सौं तन, रूप छयो
जिय सौं जिय, हिय सौं हिय लसि गसि, हसि हसि मुख मधु-पान दयो
रीझि भीजि छबि दरसि परसपर, नेह सहज सब ढाँकि लयो
बिमल बिनोद मोद मति दोऊ, 'नागरीदासि' गुन पलट भयो ॥३१॥

राग रामकली

प्यारी जू तैं मोहि मोल लियो
तेरी कृपा मदन दल जीत्यौ, तेरो जिवायो जियो
उमड़ी सेन महा मनमथ की, तैं अधरामृत दियो
श्री 'रसिक बिहारी' कहत दीन ह्वै, धनि स्यामा को हियो ॥३२॥

राग रामकली

अलक लड़ी अलबेली, नवरंग छबीली
सुरत रग अंग सिथल, अलबेले लाल संग खेली
अलबेली मौज बिलोके बिहारी, बिहारनि नेह नवेली
'श्री नागरीदास' नव कुज महल, अलबेली सग सहेली ॥३३॥

राग बिभास

बनि दुकूल बैठे परजंक
कमल नैंन अँग अँग छबि निरखत, प्यारी भरैं जु अक
धन्य धन्य पिय मानि अपनपौ, ज्यौ निधि पायौ रक
श्री 'रसिक बिहारी' यह सुख बिलसत, तहाँ निपट निरसंक ॥३४॥

---

(३३) नवकुंज महल = नव कुंज महल (हस्त, सु)।

३०. फूल = प्रफुल्लता, प्रसन्नता। ईषद = थोड़ा सा।

३४. परजंक = पलँग। बनी = सुशोभित, होना। दुकूल = साड़ी।

आन कवि कृत, लूर

पावस रितु बृंदाबन की दुति, दिन दिन दूनी दरसै है—छबि सरसै हैं
लूम झूम सावन घनो घन बरसै हैं
हरिया तरवर, सरवर भरिया, जमुनां नीर कलोलै हैं—मन मोलै हैं
प्यारी जी रो बाग सुहावणौ मोर बोलै हैं
आभा आभा बीज चमंकै, जलधर गहरौ गाजै है—रितु राजै है
स्यामा सुर मुरली रली बन बाजै है
'रसिक बिहारी' जी रो भीज्यौ पितांबर, प्यारी जी री चूनर सारी है, सुखकारी है
कुंजाँ कुंजाँ झिलरिया पिय प्यारी है ॥३५॥

राग सोरठ

हो झालो दे छै रसिया नागरपनां
सारा देखैं, लाज मरां छां, आवां किण जतनां
छैल अनोखा कह्यौ न मानै, लोभी रूप सनां
'रसिक बिहारी' नणद बुरी छैं, हो लाग्यो म्हारो मनां ॥३६॥

राग सोरठ

अरी यह कौन जमुनां तीर
द्रुम लता गहि देखि ठाढ़ो, ललित स्यांम सरीर
चरन पर चरन सोभित, वहु नख क्रांत उदोत
मनहु पंकज दलन पर, जगमगत जुगनू जोति
लपट रही हैं पगनि ह्वै ह्वै, जलज-लर छबि-पुज
ढिग महावर स्यामता मिल, होत मुक्ता गुंज
लसत पट कंचन तरें, जुग जान जंघ सुढार
ज्यौं 'व जमुना तीर पर, रवि झलक किरनन जार
बज्र कन हाटक जटित, कटि किंकिनी यह भाय
जानि कै ब्रजचंद उडगन, चढ़े कटि तट जाय
उरस पीन उत्तग पर, नग त्रिविधि हार बिहार
नील गिर मनि सिखर तैं, निरझरत त्रिवेनी धार

---

३५. लूमना = लटकना । प्यारी जी रो = प्यारी जी के । झिलरना = झूलना ।
३६. झालो देछै = ज्वाला देता है । सारा देखैं = सब देखते हैं । लाज मरां छां = लज्जा से मरी जाती हूँ । आवां किण जतनां = कितने उपाय करके आई हूँ । बुरी छैं = बुरी हैं ।

बाहु जुग साँचे भजी सी, लेप चंदन गरैं
जुवति धीरज धर्म को, बल दूर ही तैं हरै
कामध्वज फहरात, अंचल पीत-पट फहरात
निरख नहिं ठहरात हैं मन, लाज हिय हहरात
कंठ द्योत सुदेस मोती-लरन बिच दरसाय
गिरयो लखि छूत चिबुक ऊपर, रूप तृपत सुभाय
अधर मृदु मुसक्यात से, बिच दसन की चकचौंध
अरुन फूली साँझ मैं जानौं, उठत चपला कौंध
बिमल दर्पन से कपोलन, लग्यो मन ललचाय
अलक मनमथ फाँस कुंडल, परी झाईं आय
उच्च नासा पर सु बेसर, रह्यो मुक्ता झूल
ताहि लखि उपमा न आवैं, परत मन भ्रम भूल
मद बिघूर्नित नैंन सोहैं, सहज भौंहैं बक्र
जुवति मन बस मंत्र की लखि, भाल अवली अक्र
फब्यौ फेंटा सीस सुंदर, दाहने दिस ढन्यो
निरख पेच, कुपेच मैं मन, जात हैं धौं पन्यो
रतन अवली, मोर चंदा, सुमन गुच्छ सुरंग
बास बस चहुँघा मधुप लखि, लुटत कोटि अनंग
निकट मूर, कदंब कैं तर, महा मूरत मैंन
'दास नागर' निरख इक टक, रहत नाहिंन नैंन ॥३७॥

राग सोरठ

लाड़ी हठ माड़्यो जी मांझल रात
तिरछी लखै लजीला नैणां, बैणा बांकी बात
छिपी सौंह सुणि भी हां झिझकै, बिझकि दुरावैं गात
'नागरीदास' आस उमँगै पिय, हियैं ऊकलापात ॥३८॥

———

३७. जलज = मोती । लर = लड़ । गुज = घुंघची, रत्ती । जार = जाल, समूह । वज्र = हीरा । हाटक = सोना । सुदेस = सुंदर । बिघूर्नित = घूमते हुए ।

३८. लाडी = लाडली । माडना = ठाना । मांझल = मध्य । ऊकलापात = अकुलाहट ।

परिशिष्ट

१. प्रतीकानुक्रम

(क) नागरीदास रचित पदों की अनुक्रमणिका

नागरीदास जी के समस्त पदों की अनुक्रमणिका यहाँ एक साथ दी गई हैं। प्रारंभ वाले अंक समस्त पदो के क्रमाक है। अंत वाले अंक ग्रथो के क्रमाक है। पद मुक्तावली के अंको के पहले कोई संकेत नही दिया गया है। नागरीदास के इसमे आए पदों की कुल संख्या ४५७ है, जो अन्य सातो पद ग्रन्थों की पद-संख्या से अधिक है त इसीलिए इसके पदाकों के साथ ग्रंथ संकेत नही दिया गया है। अन्य ग्रंथों के संके। अंको के पहले दे दिए गए है। संकेत ए है :—

१. पद प्रबोध माला	प्र	४. ब्रज लीला	ब्रज
२. छूटक पद	छू	५. गोपी प्रेम प्रकाश	गो
३. बन जन प्रशसा	बन	६. राम चरित्र माला	राम
७. उत्सवमाला	उ		

पदमुक्तावली के शेपांश के लिए 'शे' शब्द प्रयुक्त हुआ है।

———

व

श

स

(ख) अन्य कवियों के पदों की अनुक्रमणिका

[अत मे दी हुई सख्याएँ ग्रन्थातर्गतीय पदाक है। अधिकाश रचनाएँ पद मुक्तावली मे सकलित है। पद मुक्तावली मे सकलित रचनाओ के पदाकों के साथ कोई ग्रथ-संकेत नही दिया जा रहा है। यदि रचनाएँ अन्य ग्रंथो मे संकलित है, तो इनका ग्रथ संकेत दे दिया गया है। ऐसे ग्रंथ 'राम चरित्र माला' एवं 'गोपी प्रेम प्रकाश' है। इनके संकेत क्रमश 'राम' एवं 'गो' व्यवहृत हुए है। शे' का अभिप्राय 'पद मुक्तावली शेषाश' है।]

अ. अज्ञात कवि पद-सूची

निम्नाकित ८ पदो मे कवि छाप नही है और यह निर्णय नही किया जा सका कि इनके रचयिता कौन है।

ब. ज्ञात कवि पद-सूची

१. अग्र

२. अनूप, हित

३५. जय गोपाल

३६. जुगल दास

३७. तुलसीदास

३८. दयाराम

३९. धोंधी

४०. ध्रुवदास

४१. नंददास

४२. नरहरदास

४३. नवल सखी

४४. नागरीदास, आचार्य

४५. नागरीदास राधावल्लभी

४६. नारायण

४७. नीलकंठ

४८. परमानन्ददास

४६. परसा

५०. पातीराम

५१ बिहारनिदास, बिहारीदास

५२ बिहारी या बिहारीलाल

५३. जन भगवान

५४. अलि भगवान

५५. भगवान

५६. भगवान हितु रासराय

५७. मदनमोहन

५८. माधुरी सखी

५६. माधो, लघु

६०. मानदास

६१. मीरा

६२. मुरलीधर

६३. मुरारिदास

६४. रघुनन्दन

६५. रसनिधि

६६. रसिक प्रीतम

६७. रसिक बिहारी वनीठनी

६८. राजसिंह

६९. रूप लाल, हित

७०. रूप सिंह

७१. लतीफ

७२. लाल

७३. वली, उर्दू कवि

७४. वल्लभ रसिक

७५. विजय सखी

७६. विट्ठल विपुल

७७. विद्यापति

७८. वीर

७९. वृंदावन

९२. सूरदास मदनमोहन

९३. हरिदास

९४. हरिनारायण स्याम दास

९५. हरि वल्लभ

९६. हित हरिवंश

शुद्धि-पत्र

[प्रथम संख्या पृष्ठ की, द्वितीय पदांक की एवं तृतीय पंक्तिकी सूचक है । टि का अर्थ है टिप्पणी । प्रथम शब्द अशुद्ध है, द्वितीय शुद्ध ।]

१४।३७।६	सुएड	सुण्ड
१७।५।४	तेते	ते ते
१८।११।४	भक्ति	अलि
१२।५	ानी करि	ब्रज आनी करि
टि ११।२	आगे	आनी
१९।१६।४	नगरिया	नागरिया
टि १४।	एक संख	एक अथ० =
टि १५।	प्रतिलिये	प्रतिलिपि
२०।टि।१	तिलकिया	किलकिया
१७।२	जगतौं	जगहो
२१।२।१	रहत	रहन
२२।३	गठरी	मठरी
२२।२८।२	को	की
२३।३२।२	प्रसारत	प्रकासत
२४।३४।३	आंडू	आड़ू
३७।२	उतकी	उनकी
१४	मागर	नागर
२५।३६।२	जोली	जो ली
४०।४	नागरीदास	नागरिदास
	भलो	भली
४१।४	इनको	इनकी
४३।४	नागरोदास	नागरीदास
	सति	सीत
२६।४५।१	नैंति	नौति
४७।२	नाव	नाव

२७।५०।१	बदर	बांदर
५१।३	रजकरत	रज करत
टि ५४	गाना	लगत
२८।टि५५।१	पर	पद ५१
२	रूपक	सूचक
	नीठाह	नीकाह
टि ५८	की	भी
३०।६४।२	इस	रस
६५।६	नित	नित्त
६८।१	सरिख	रसिक
१४	रचा	रचना
टि ६६	जमहं	जगह
३१।६६।११	लाखि	लखि
टि ६६।१	हकचक	हलचल
२	गरजैं	गाजैं
३३।२।४	धेनु कबहु	धेनुक चहु
३४।—।४	गोचारम	गो-चारन
५।११	सजल	सकल
३५।७।४	लगि	लगी
८।६	प्रननि	प्रानानि
टि ।१	दसवीं	आठवीं
३६।६।८	मोचत	मोचन
३७।११।५	त्रिमगी	त्रिभंगी
३८।१३।६	विफल	विकल
१४।७	अलक	अलकैं

३६।१५।६	चहैं	यहैं
४०।१७।११	अस	अरु
टि १७	रास्त	रास्ता
४१।१६।४	श्रमति	श्रमित
४३।–।२०	तेऊ	दोऊ
४४।– १६	कैसौं	कैसैं
१६	उनके	तथा उनके
४५।२।३	रुचिकारि	रुचि कारि
४	पसारी	पसारि
३।१	देखो	देख्यो
४७।११।३	चितवन	चितवत
टि ।५	जनत	जरत
४६।१६।५	भेंटो	मेटो
६	मेटो	भेंटो
१७।६	बीत	बीतै
५०।२२।८	रौति	रीति
टि १६।१	पेरखी	परेखो
५१।टि २४	हो	है
५२। ६।५	बटमास	षट मास
५४।३४।२	जो	जी
५५।टि ३७।८	मत	मात
५६।४१।३	हगनि	हग न
५७।४५।२	प्रति	प्रीति
६१।१।१	मगल	भए मगल
६२।४।८	करकसी	करक सी
६३।६।३	ढोकि	ठोकि
७।२	सुख	मुख
६४।७।१	धर्न	धर्म
७२।१८।३	श्रवन नि	श्रवननि
७६।–।१	क	की
२६।५	पैह	पैहौं
७८।३१।१	पर	पुर
८५।२०।४	छा	छाप
८७।२४।११	खाइ	खाई
६०।३४।६	भ्रव	भ्रुव
६३।५०।५	वापै	वापैं
६४।५४।४	ताक्कौ	ताकौ
६६।७६।४	का	को
१००।८२।१	अनुराग	अनुरागै
१०२।६५ २	गुजारन	गुंजारन
१०६।१२८ ४	रसानौं	बरसानौं
१२६।६	परयो	परयौ
१२०।११।८	अभृत	अमृत
१२३।१६।२	मे	में
२१।१	वृषघान	वृषभान
१२४।२४।१	बृषमान	वृषभान
१२६।टि२७।	मग्त	मग्न
१२८।–।८	सुवा	सुवा सारी
१३३। ।३	त	न
४	बसा	बसो
१३७।५०।७	पूली	फूली
१३८ ५२।१६	पॉवरी	पाँव री
१४१।६१।२	आइ	आई
१४६।७१।६	पतरिनि	पुतरिनि
१५३।६०।१०	अडित	अखडित

ख

१५५।६५।८	सभै	समै
१६०।१०६।३	धौ	कैधौं
१६६।पद।२	साए	सोए
१७४।१३७।११	गामिन	गामिनी
१७५।१३६।२	चाल	चलि
२०१।टि।२	भरिवा	भरि वा =
२०३।२१४।४	पूलनि	फूलनि
२१४।२४०४	पटुली	पुटली

२३४।टि।२	कैडै=	कै =कैसे
२३६।३४।४	पय	पिय
२४०।४३।२	मोइन	मोहन
२४४।५१।४	परत	परत है
२४७।६३।३	बूड़े	बुड़े
२५८।६०।२	राज	राजै
२६१।६६।४	बजाइ	वजाई
५	सल	सकल
२६३।६६।१२	मरली	मुरली
२६६।१०८।२	तबहूं	तब हूं
२७०।-।४	मरली	मुरली
११५।४	फंटा	फंदा
२७२।१२०।३	वंघु	बंधु
२७३।टि १२५।	अमांनी=०अयांनी=मूर्ख	
२७५।१२७।३	नागरो	नागरी
२७८।१३६।३	विद्रम	विद्रुम
२७६।१३७।१	उ	जू
१३६।१	ो	जो
२८२ १४८।१	आप	आय
२८४।१५८।१	झूमत	झूलत
२८५।१६२।२	गइ	गई
२८७।१६६।१	मघि	मधि
२६०।१७५।६	चंन	चदन
२६७।-।३	हुँनि	दुहुँनि
४	भ	भौंहैं
१०	दिखावा	दिखावौ
३००।-।७	कटाछ	कटाछैं
३०१।-।१३	स्रवन	स्रवन
१५	उरस	उरसि
३०३।२०१।६	छब	छबि
३०५।२०५।२	सकत	संकेत
२०७।१	दजना	दे जमुना
३०६।२०८।५	चितनि	चितवनि
३०८।२१५।२	सखी	सकी
३१२।२२४।४	पुतरिंन	पुतरिन
३१३।-।५	जिय.	जिय
३१६।२३६।३	लाभा	लोभी
टि २३६।१	किस	किन
२४०।१	योह ी	मोही
३२५। ७२।३	परतन	परत न
३०६।२७४।६	सुनि	सुनी
३२६ २८१।२	तेर	तेरैं
३३१।३८६।२	किसो री	किसोरी
२८७।३	माइ	माई
३३३।२६३।२	झांइ	झाईं
३३४।२६६।१	अरो	अरी
३	घाई	घाई
२६८।२	मैटौना	मैं टौना
३३५।३०१।२	गु घर न	गुरजन
३०२।२	इँदुरिया	इँडुरिया
३३६।३०५।२	गगरि	गागरि
३३६।टि।१	३०२, २६३, ३०४, २६४	
३४३।—।३	स ह	सौंह
३४५।—।५	सुख	मुख
३४६।३२८।१	म हन	मोहन
२	मोह ी	मोही
३२६।३	द्रम	द्रुम
३३१।८	कदन	कुदन
३४७।३३३।१	हौ	हो
३६२।टि।१	इस पंक्ति को हटा दे	
३७४।दोहा१।२	रत	हरत
५।२	वन	वदन
३७६।४११।२	बन	वदन
३८०।४२८।२	त्यारी	प्यारी
३८६।४५३।१	ढाढ़ी	ठाढ़ी